(२४) वातरक्तनिदान

(२५) स्तंभनिदान

(३६) प्रमेहपीडिकानिदान

(३७) मेदरोगकानिदान

(३८) उदरनिदान

(३९) शोथनिदान

(६४) नासारोगनिदान

(६५) नेत्ररोगनिदान

(६६) शिरोरोगनिदान

(६७) स्त्रिरोगनिदान

(६८) बालरोगनिदान

(६९) विषनिदान

	ग्रंथोंकी किमत			ट० ह०		
	रु०	आ०	पै०	रु.	आ.	पै.
नाडिज्ञानतरंगिणी और अनुपान तरंगिणी …. …. ….	१	०	०	०	२	०

वैद्यकल्पद्रुम पंडित रघुनाथप्रसाद कृत छपताहै जलदी तयार होगा.

संस्कृतपुस्तकानि.

सिद्धांतचंद्रिका …. …. …. …. ….	४	०	०	०	६	०
सारस्वत तीनोवृत्ती …. …. …. ….	०	१२	०	०	२	०
अमरकोश सटीक …. …. …. ….	१	४	०	०	६	०
सिद्धांत कौमुदी …. …. …. …. ….	५	०	०	०	१२	०
लघुकौमुदी …. …. …. …. …. ….	०	१०	०	०	२	०

वेदांत भाषा.

वृत्तिप्रभाकर …. …. …. …. …. ….	४	०	०	०	६	०
सुंदरविलास सटीक …. …. …. ….	२	०	०	०	४	०
विचारसागर सटीक …. …. …. ….	२	०	०	०	४	०
योगवासिष्ठ ६ प्रकर्ण …. …. ….	१५	०	०	२	०	०
योगवासिष्ठ वैराग्य व मुमुक्षु प्रकर्ण	०	१४	०	०	२	०
सारुक्तावळी …. …. …. …. …. ….	०	४	०	०	०	६
एकादशस्कंध …. …. …. …. ….	१	८	०	०	४	०

संस्कृत.

श्रीमहाभारत …. …. …. …. …. ….	६०	०	०	५	०	०
योगवासिष्ठ …. …. …. …. …. ….	२५	०	०	२	८	०

	ग्रंथोंकी किमत			ट० ह०		
	रु०	आ०	पै०	रु.	आ.	पै.
वाल्मीकिरामायणसटीक	१८	०	०	१	१४	०
श्रीमद्भागवतसटीक	१२	०	०	१	८	०
विजयध्वजीभागवत	१६	०	०	१	१२	०
सचूर्णिक भागवत	८	८	०	१	०	०
मूलभागवत	६	०	०	०	१२	०
देवीभागवतसटीक	१३	०	०	१	४	०
भागवतचूर्णिका (टाईप) ..	४	०	०	०	८	०
भागवतचूर्णिका (शिला) ...	३	८	०	०	८	०
अध्यात्म रामायण (टाईप)	४	८	०	०	७	०
अध्यात्म रामायण (शिला)	३	८	०	०	७	०
गणेशपुराण	७	०	०	०	१२	०
लिंगपुराण सटीक	९	०	०	०	१२	०
मार्कंडेयपुराण सटीक	४	८	०	०	८	०
विष्णुपुराण	६	०	०	०	८	०
हरिवंश सटीक (टाईपका)	७	०	०	१	२	०
श्रीकृष्णजन्मखंड (टाईप)	४	८	०	०	८	०
गर्गसंहिता	४	०	०	०	६	०
सत्योपाख्यान	१	८	०	०	४	०
नृसिंहपुराणोक्तश्रीमद्रामायण	०	८	०	०	१	०
पद्मपुराणांतर्गतरामचरित्र	०	६	०	०	१	०

श्रीयुत हरिप्रसाद भगीरथजी इनके पास नगद दामसें मिलेंगे.

॥ श्री ॥

माधवनिदान भाषा टीका.

॥ श्रीजयति ॥

नत्वाश्री मैथिलीकांतं देवदेवं जगद्गुरुम् ॥
आर्यावर्त्ति गिराकुर्वे रुग्विनिश्चय दीपिकाम् ॥ १ ॥

॥ दोहा ॥

ब्रह्मसंहिता कीन्हि विधि रची सृष्टी जब नाहि ॥
दक्षहिताहि पठाइ तिन दस्रन्ह दीन्ही चाहि ॥ २ ॥
तिनसे सुरपति पठि बहुरि अत्रि सुता दिन्ह दीन्ह ॥
तिन्ह पुनि निज निज तंत्र रचि जगत प्रसिद्ध सुकीन्ह ॥ ३ ॥
यह उपवेद अथर्व कर आयुर्वेद सुनाम ॥
मुनिन्ह विविधि विध तंत्र करि प्रकट कीन्ह सुखधाम ॥ ४ ॥
जिन उन तंत्रन्ह माहि चित पठनादि कहि तदीन्ह ॥
नहि तिनके हित ग्रंथ यह माधव प्रकट सुकीन्ह ॥ ५ ॥
रोगविनिश्चय नामतिहि टीका ललित सुदेश ॥
रोगविनिश्चय दीपिका वरनत कवि रमनेश ॥ ६ ॥

॥ अथ मूलग्रंथ प्रारंभः ॥

प्रणम्यजगदुत्पत्ति स्थिति संहार कारकम् ॥
स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं त्रैलोक्य शरणं शिवम् ॥ १ ॥
नाना मुनीनां वचनै रिदानीं समासतः सद्भिषजां नियो

गात् ॥ सोपद्रवारिष्टनिदानलिंगो निबध्यते रोगविनिश्चयोऽयं॥ २॥

ग्रंथकर्त्ता माधवाचार्य शंकरके नमस्काररूप मंगलाचरण करते हैं जैसे कि जो शंकर इस जगतके उत्पत्ति रक्षण औ प्रलयके कारण तथा स्वर्ग औ मोक्षकेभी देनेवाले तथा त्रैलोक्य रक्षक हैं उनको नमस्कार करिके औ सद्वैद्योंकी आज्ञासे अनेक मुनी जनौं के वाक्य संग्रह करिके संक्षेपसे जिसमे उपद्रव जो रोगमे रोगांतर अरिष्ट जो मरण सूचक चिन्ह निदान जो रोग होनेके कारण लिंग जो रोगौंका स्वरूप यें चिन्ह हैं ऐसा यह रोगविनिश्चय नाम ग्रंथ रचतेहैं ॥२॥

नानातंत्रविहीनानां भिषजामल्पमेधसाम् ॥
सुखं विज्ञातुमातंकमयमेव भविष्यति॥ ३ ॥

जो वैद्य अल्पबुद्धिवाले औ नाना प्रकारके ग्रंथौंका अध्ययन नही किया हैं उनको सुखसे रोग जाननेके वास्ते यही एक ग्रंथ होयगा याने वैद्यलोग इससे अछी तरह परिश्रमविना समुझैंगे॥२॥ वैद्यको रोग जानना योग्य हैं सो सुश्रुतने लिखा है. ॥श्लोक॥ रोगज्ञानार्थमेवादौयत्नः कार्यो भिषग्वरैः॥ सतितस्मिन् क्रियारंभः पुण्याय यशसे श्रियैः॥

अन्यच्च

रोगमादौपरीक्षेततनतोऽनंतरमौषधम् ॥ ततःकर्मभिषक्पश्चात्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥ अर्थ प्रथम वैद्योने रोग जाननेका प्रयत्न करना जब रोग निश्चय भया तब पुण्ययश और द्रव्य प्राप्तिके वास्ते उसका उपाय करना और भी कहते हैं कि प्रथम रोगकी परीक्षा करना फिरि औषधकी फिरि दोनौंको जानिके उपाय करना ॥ ३ ॥

अर्थ व्याधे र्ज्ञानाय पंचोपायानाह ॥

निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ॥
संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पंचधा स्मृतम् ॥ ४ ॥

अब रोगोंके जाननेके वास्ते

पांच उपाय कहते हैं जैसे कि निदान पूर्वरूप रूप उपशय औ संप्राप्ति रोग ज्ञानके वास्ते ये पांच प्रकार कहे हैं ॥ ४ ॥ इहां कोई संका करते हैं कि एक लक्षणहीसे रोग जाना जाता है तौ पांच क्यों कहते हैं जैसे कि चरकने कहा है कि निदान जाननेका प्रयोजन यह है कि जिस ते रोग पैदा होय उसका उस रोगमे त्याग करना पूर्व रूपकी चिकित्सा है जैसे वातिक ज्वरके पूर्वरूपमे घृतपान रूपसे तौ निश्चय प्रसिद्ध होता है उपशयसे पथ्यादिकहा नेम होता है संप्राप्तिसे साध्यासाध्यका निश्चय होता है सो सुश्रुतादिक ग्रंथौंसे निश्चय करना अथवा भावप्रकाश किंवा हमारे करे भये वैद्य कल्पद्रुममे परिभाषा प्रकरणमे देखना ॥ ४ ॥

निमित्त हेत्वायतन प्रत्ययोत्थानकारणैः ॥
निदानमाहुः पर्य्यायैः प्राग्रूपं येन लक्ष्यते ॥ ५ ॥
उत्पित्सु रामयोदोष विशेषेणानधिष्ठितः ॥
लिंगमव्यक्तमल्पत्वा द्व्याधीनां तद्यथायथम् ॥ ६ ॥

निदान और पूर्वरूप कहतेहैं जैसेकि निदानके नाम पांच कहेहैं वै जैसे कि निमित्तहेतु आयतन प्रत्यय उत्थान कारण औ निदान ॥ तथा जिस चिन्हसे उत्पन्न होनेवाला रोग जाननेमे आवै सो पूर्वरूप सोभी दो प्रकारका होताहै एकतौ वहकि जो वातादिक दोष चिन्हौंक-

रिके अप्रसिद्ध जैसेज्वरमे परिश्रम अचैन इत्यादिक सामान्य पूर्वरूप दूसराकि जिसमे वातादिकदोष प्रसिद्धदेषिपरैं जैसे वातज्वरपूर्वरूपमे जमुहा इनकीअधिकता ॥ ६ ॥

तदेव व्यक्ततां यातं रूपमित्यभिधीयते॥
संस्थानं व्यंजनं लिंगं लक्षणं चिन्हमाकृतिः॥ ७॥

जो पूर्वरूप कहा वही प्रसिद्ध होनेसे रूप कहतोहै उसीको संस्थान व्यंजन लिग लक्षण चिन्ह औ आकृतिभी कहतेहैं ॥ ७ ॥

उपशयमाह ॥

हेतु व्याधिविपर्यस्त विपर्यस्तार्थकारिणाम्॥
औषधान्नविहाराणा मुपयोगंसुखावहम्॥ ८॥
विंद्यादुपशयं व्याधेःसहि सात्म्यमिति स्मृतः॥
विपरीतोऽनुपशयो व्याध्यसात्म्यमिति स्मृतः॥ ९॥

उपशयकहतेहैं

जैसेकि हेतु विपरीतकारी व्याधि विपरीतकारी हेतुव्याधि विपरीतकारी तथाहेतु विपरीत्यर्थकारी व्याधि विपरीत्यर्थकारी औ हेतुव्याधि विपरीत्यर्थकारी जौ हरड इत्यादिक औषध भात इत्यादिक अन्न उठना बैठना परिश्रम इत्यादिकविहार इनकी जो सुखकारकयोजना उसको उपशय औ सात्म्यभी कहतेहैं तथा जो इनकी दुखदायक योजना उसको अनुपशय औ असात्म्यभी कहतेहैं जो पदार्थ माफकनिकरैसो उपशय औ जो अवगुणकरै वही अनुपशय अवइनके उदाहरण जैसे हेतुविपरीत औषधजैसे शीतहै कारण जिसका ऐसे कफज्वरमे सुंठि इत्यादिक उष्ण औषधशीतनाशक औ सुखदहै हेतु विपरीत अन्न जैसे श्रमानिलज्वरमे

मांसरस औ भातश्रमहर औ सुखकारक विहारजैसे दिनकेसोनेसे बढे भये कफकाशमन रातिकाजागना ॥ व्याधिविपरीत औषधजैसे अतीसारमे पाठादिकस्तंभन अन्न जैसे मसूरादिकस्तंभन अतीसारहीमे विहार जैसे उदावर्त्तमे कांखिके अधोवायुकानिकासना ॥हेतुव्याधिविपरीत औषध-जैसे वातशोथमे दशमूल यहवात औ शोथकाभी नाशक अन्न जैसे कफग्रहणीमे मठ्ठा कफ औ ग्रहणीकाभीनाशक विहार जैसे दिनके सोनेसे पैदाभई स्निग्धनिद्रा इसपररातिकाजागरण यहरुक्षहै सोतंद्रा औस्नि-ग्धताकाभीनाशकहै॥हेतुविपरीत्यर्थकारी याने हेतुके जो विपरीतके का-र्यकोकरै ऐसा औषध जैसे पित्तप्रधान जो पकिरहाहोय शोथ उसपर पित्तकारकउष्णलेप अन्नजैसे पित्तशोथमेदाहकारक अन्न विहार जैसे वातोन्मादमेत्रासदेना ॥ व्याधिका विपरीतार्थकारी औषधे जैसे कफमे मयनफलादिक वांतिकारक अन्नजैसे अतीसारमे रेचक दूध विहार जैसे वमनमे अंगूठावा कमलकी नाल मुखमेडारिके वमनकराना ॥ हेतु औ व्याधि इन दोनौंके विपरीत अर्थकेकरनेवाला औषध जैसे अग्निसे जलेपर उष्णअगर इत्यादिकौंका लेपन अन्नजैसे मदात्ययमे मद्यपान औ विहार जैसे कसरतजन्यमूढवातमे जळमे पैरनेरूपकसरत ऐसे जो औषधादिक दुककारक होयउनको अनुपशयजानना जिसतरह औषध अन्न औ विहारकहे तैसेही देशकालादिकभी जानना ॥ ९ ॥

संप्राप्तिमाह

यथा दुष्टेन दोषेण यथा चानुविसर्पता ॥
निर्वृत्ति रामयस्यासौ संप्राप्ति र्जाति रागतिः ॥ १० ॥
संख्याविकल्पप्राधान्यवलकालविशेषतः ॥
साभिद्यते यथात्रैव वक्ष्यंतेऽष्टौज्वराइति ॥ ११ ॥

संप्राप्ति कहते हैं

सो जैसेकि दुष्टभये जो वातादिक दोष जोवै स्थान छोडिके तथा ऊचे नीचे टेढे वांके अंग प्रत्यंगौंमे फैलिके पसार करिके जो रोगकी उत्पत्ति करते हैं उस उत्पत्तिको संप्राप्ति कहते हैं उसी संप्राप्तिको जाति औ आगति भी कहते हैं ॥ १० ॥ सो संप्राप्तिसंख्यां, विकल्प, प्राधान्य वल, औ काल इन भेदौं करिके पांच प्रकारकी है जैसे इसी ग्रंथमे संख्या कही कि ज्वर आठ प्रकारके ऐसेही अतीसार इत्यादिकौं की संख्या जानना ॥ ११ ॥

विकल्पमाह

दोषाणां समवेतानां विकल्पोंशांश कल्पना ॥

विकल्प जैसेकि जिस रोगमे वातादिक दोष तीनौ मिश्रित होयें तहां जो अंशांशकी कल्पना उसको विकल्प कहते हैं जैसेकि निदानादिकौं कौ देखना कि यह निदान याने रोग होनेका कारण संपूर्ण अंशौं करिके दोषौका वढानेवाला है कि कुछ कमती है जैसे कसैला रस रुक्षता शीतता औ लघुता इन सर्व अंशौं करिके वातवर्द्धक है इसी तरहसे चौराईभी वातवर्द्धक है औकास तृण यह रूखायन तथा शीत गुणही करिके वातवर्द्धक है तैसेही सीधु यह एक जातिका मद्य है सो केवल रूखेपना हीसे वातवर्द्धक है तैसे कटुक रस औ मद्य ये दोनौ कडुआपन खट्टापन तीक्ष्णपन औ उष्णता इन संपूर्ण गुणौं करिके पित्त वर्द्धक है तैसे हींग यह कटुता खटाई औ तीक्ष्णत्व इन तीनही गुण करिके पित्तवर्द्धक है औ अजमोदा यह तीक्ष्णत्व औ उष्णत्व ये दोइ अंशौं करिके पित्तवर्द्धक है औ तिल उष्ण अंशहीसे पित्तवर्द्धक है तथा मधुररस यह स्नेहगौरव मधुरता औ शीतलता इन संपूरण अंशौं करिके

कफवर्द्धक हैं भैसिका दूध यह स्निग्धता गुरुता औ मधुरता इन तीन अंश करिके तथा खिरिनी औ कसेरू ये शीतलता औ गुरुता इन दोई अंशौ करिके औ कमलकंद केवल एक शीतलताहीसे कफवर्द्धक है इसी रीतिसे और पदार्थौंको जानना जैसे पदार्थौंका विकल्प कहा वैसाही रोगौंकाभी निश्चे करना जैसेकि अमुक रोगमे कौनसा दोष संपूर्ण औ कौनसा न्यून है जैसे द्वंद्वज औ त्रिदोषज रोगमे देखना कि वातादिक दोषौंमे कौन तौ संपूर्ण है औ कौन न्यून है ॥

प्राधान्यमाह ॥

स्वातंत्र्य पारतंत्र्याभ्यां व्याधेः प्राधान्यमादिशेत् ॥ १२ ॥

प्रधानता कहते हैं ॥

स्वतंत्रतासे रोगकी प्रधानता औ परतंत्रतासे अप्रधानता जानना जैसे कि ज्वर स्वतंत्र सो प्रधान औ उसके ज्वराति सारादिक उपद्रव वे परतंत्र इसते अप्रधान हैं ॥ १२ ॥

बलकालावाह ॥

हेत्वादि कार्त्स्न्यावयवै र्बलाबलविशेषणम् ॥
नक्तं दिनर्तु भुक्तांशैर्व्याधिकालो यथामलम् ॥ १३ ॥

बलाबल ओ काल कहते हैं

जैसे कि जिस रोगमे निदान पूर्वरूप औ रूप इत्यादिक संपूर्ण होय वह रोग बलवान् औ जिसमे ये अल्प होय वह निर्बल है ॥ काल जैसे राति दिन वसंतादि ऋतु तथा आहार इनके अंशौं करिके याने आदि मध्य औ अंत करिके यथा दोष रोगौंका काल जानना अर्थात् वातादि जनित रोगौंके वृद्धिक्षय हेतुका समय जानना जैसेकि राति औ दिनके तीनि तीनि भाग किये तौ रातिके औ दिनके प्रथम भागौंमे कफ

मध्यमे पित्त अंत भागमे वायूका कोप काल है एसेही वसंत औ वर्षा कफका ग्रीष्म शरद पित्तका प्रावट औ हेमंत वायूका कोप काल है ॥ ऐसेही भोजन करते मात्रमे कफका मध्यमे याने पाचन कालमे पित्तका औ अंतयाने अन्न पचे पीछे वायुका कोप काल है ॥ १३ ॥

इति प्रोक्तो निदानार्थ स्तद्व्यासेनोपदिश्यते ॥
सर्वेषामेवरोगाणां निदानं कुपितामलाः ॥ १४ ॥
तत्प्रकोपस्यतुप्रोक्तं विविधाऽहितसेवनम् ॥
निदानार्थकरोरोगो रोगस्याप्युपजायते ॥ १५ ॥
तद्यथा ज्वरसंतापा द्रक्तपित्तमुदीर्यते ॥
रक्तपित्ता ज्ज्वरस्ताभ्यां श्वासश्चाप्युपजायते ॥ १६ ॥
प्लीहाभिवृद्ध्या जठरं जठराच्छोफएवच ॥
अर्शोभ्योजाठरं दुःखं गुल्मश्चाप्युपजायते ॥ १७ ॥
प्रतिश्याया दथो कासः कासात्संजायते क्षयः ॥
क्षयो रोगस्य हेतुत्वे शोषस्याप्युपलभ्यते ॥ १८ ॥

ऐसेनिदानका अर्थयाने संक्षपकहा अवउसको विस्तारकहतेहैं

कोपकोप्राप्तभये जो वातादिक दोष वेही सर्व रोगोंके कारणहैं औ उनके कोपका कारण अनेकप्र कारका अहित आहार विहारका सेवन कोई रोगभी रोगका निदानार्थकारी व्हैजाताहै सो जैसे ज्वरकेसंतापसे रक्त पित्त उत्पन्न होताहै रक्तपित्तसे ज्वर औ रक्त पित्त तथा ज्वरसे श्वासरोग उत्पन्नहोताहै ॥ प्लीहाके बढनेसे उदररोग उदररोगसे शोथ त-

थां अर्शरोगसेभी उदर औ गुल्महोता है प्रतिश्यायसे कास काससे क्षय-रोग बहक्षय शोषरोगका उत्पत्तिकारण व्है जाताहै ॥ १८ ॥

ते पूर्वं केवला रोगाः पश्चाद्धेत्वर्थकारिणः ॥
कश्चिद्धि रोगो रोगस्य हेतुर्भूत्वा प्रशाम्यते ॥ १९ ॥
नप्रशाम्यति चाप्यन्यो हेत्वर्थं कुरुतेपि च ॥
एवंकृच्छ्रतमा नृणां जायंते रोगसंकराः ॥ २० ॥
तस्माद्यत्नेन सद्वैद्यै रिच्छद्भिः सिद्धिमुत्तमाम् ॥
ज्ञातव्यो वक्ष्यते योयं ज्वरादीनां विनिश्चयः ॥ २१ ॥

जो रोग रोगका निदानार्थकारी होते हैं ते प्रथम केवल उत्पन्न होतेहैं फिरि दूसरे रोगोंके कारण व्है जातेहै उनमे कोईरोगतौ दूसरेको उत्पन्न करिके आप जाता रहताहै तथा कोई रोगका कारणभी होताहै औ आपभीबनारहताहै ऐसे अतिकष्टसाध्य वर्णसंकररोग मनुष्योंके शरीरोंमे उत्पन्नहोतेहैं जो जलदी पहिचाननेमे नही आतेहैं इसवास्ते उत्तमसिद्धि याने इसलोक औ परलोकका साधनरूप जो सिद्धि उसके इच्छा करनेवाले वैद्योंने यह रोगविनिश्चय जानना चाहिये जो कियह ज्वरादिकोंका निश्चय कहतेहैं सो ॥ २१ ॥

तत्रादौज्वरोत्पत्तिमाह

दक्षापमानसंक्रुद्ध रुद्रनिःश्वाससंभवः ॥
ज्वरोष्टधा पृथक् द्वंद्वसंघातागंतुजः स्मृतः ॥ २२ ॥

आदिमे ज्वरकी पैदा इसी कहै है

दक्ष प्रजापतने शंकरको अपमान यज्ञमे कियो तव शंकर क्रोध

युक्त श्वासाते ज्वरोत्पत्ति भई ते ज्वर आठ प्रकारके वातादिक जुदे जुदे दोष कर तीन द्वंद्वज तीन संनिपातज एक आगंतुक एक जैसे वातज्वर पित्तज्वर कफज्वर वातपित्तज्वर वातकफज्वर पित्तकफज्वर संनिपात अरु आगंतुक इनके रूप आगे कहेंगे ॥ २२ ॥

अथ ज्वर संप्राप्तिमाह

मिथ्याहारविहाराभ्यां दोषा ह्यामाशयाश्रयाः॥
बहिर्निरस्य कोष्ठाग्निंज्वरदास्यू रसानुगाः॥ २३॥

ज्वरकी प्राप्ति कहते है आमादिकमे दोष वातादिक रहते भए मिथ्याहार विहारसे दूषित रस धातुमे जाके जठराग्निको बाहेर निकालिके ज्वर दायक होते है ॥ २३ ॥

ज्वरस्य पूर्वरूप माह ॥

श्रमोरति विंवर्णत्व वैरस्यं नयन प्लवः॥
इच्छा द्वेषौ मुहुश्चापि शीतवातातपादिषु॥ २४॥
जृंभांगमर्दो गुरुता रोमहर्षो रुचि स्तमः॥
अप्रहर्षश्च शीतंच भवंत्यु त्पत्स्यतिज्वरे॥ २५॥
सामान्यतो विशेषात्तु जृंभात्यर्थं समीरणात्॥
पित्ता न्नयनयो र्दाह.कफा न्नान्नाभिनंदनम्॥ २६॥

जो ज्वरको पूर्वरूपहे सो कहते है ॥

सो ऐसेकि परिश्रम विना करे थकवाह मालूम होइ कुछ वस्तुमे ईर्ष्या नही अंगका रंग ओरका-ओर होइ जाई मुषमे कोईक वस्तु षाएए ये अछी लगे नही आसू भरि २ आवै कभी सीत आछो लगे कभी पवन अछी लगे कभी घाम सुहाइ नही कभी पौन अछी लगे कभी

सीत अछो न लगे जमुहाई आवैं शरीरमे टूटन मर्द्दनके सदृश पीडा भोत शरीरमे रोम खडे होई अन्नपे अरुचि आंखोंमे अंधेरी मनकी उदासीनता जाडा लगना ज्वर आनेके ए लक्षण हैं पूर्वरूप सर्व ज्वरके आनेका प्रकार विशेष करि वात ज्वरके पूर्व रूपमे भोत जमुहाई पितके ज्वरमे नेत्रकी जलन कफके ज्वरमे अन्न आछो न लगे अरुचि होई ॥ २६ ॥

ज्वर लक्षणं.

स्वेदा वरोधःसंतापः सर्वांग ग्रहणं तथा
युगपद्यत्र रोगेतु सज्वरो व्यपदिश्यते॥ २७॥

अब ज्वरको सामान्यरूप कहते हैं.

जिस रोगमे पसीना आवै नही अंग सब जकडेसे होई और देह तपै एक वार हीजो ऐसे होई तव इसको इन लक्षनोंसे कहना कि ज्वर है॥ २७॥

वातज्वर लक्षणं

वेपथुर्विषमो वेगः कंठोष्ठ मुखशोषणम् ॥
निद्रा नाशः क्षवः स्तंभो गात्राणां रौक्ष्य मेवच ॥२८॥
शिरो हृद्गात्र रुक् वक्र वैरस्यं बद्धविट्कता ॥
शूलाध्माने जृंभणंच भवंत्य निलजे ज्वरे॥ २९॥

वातज्वर लक्षणं

शरीर कांपै कभी ज्वर कमी और जास्ती कंठ मुष औ ओष्ट सूषैं छीक आवै नही निद्रा नाश गात्रमे रूखापन माथो हृदो औ सर्वांगमे पीडा मुखकी विरसता मलबंधा भया कष्टसे झाडा होई हृदेमे शूल तथा फूले जमुहाई ये लक्षण वातज्वरमे होते हैं॥ २९॥

अथ पित्तज्वर लक्षणं

वेग स्तीक्ष्णोतिसारश्च निद्राल्पत्वं तथावमिः॥
कंठोष्ठ मुख नासानांपाकःस्वेदश्चजायते॥ ३० ॥
प्रलापो वक्र कटुतामूर्छादाहो मदस्तृषा॥
पीत विण्मूत्र नेत्र त्वक् पैत्तिके भ्रमएवच॥३१॥

ज्वरका वेग तीक्ष्ण होई अतिसार नींद कम वांति कंठ मुष ओष्ट नाक ये पकैं पसीना आवै बहुत बकै मुख कडुवा मूर्च्छा दाह मद प्यास बहुत विष्टा मूत्र नेत्र त्वचा पीली पडना तथा भ्रम पित्तज्वरके लक्षण ये हैं॥ ३१॥

श्लेष्मज्वर लक्षणं

स्तैमित्यं स्तिमितो वेग आलस्यंमधुरास्यता॥
शुक्ल मूत्र पुरीष त्वक् स्तंभ स्तृप्ति रथापिवा॥ ३२॥
गौरवं शीत मुत्क्लेदोरोमहर्षो तिनिद्रता॥
प्रतिश्यायो रुचिः कासः कफजेक्ष्णोश्च शुक्लता॥ ३३॥

कफज्वर लक्षणं

जैसे आला कपडा देहमे लपेटा होई तैसा लगता रहै ज्वरका वेग मंद आलस मुह मीठो मूत्र विष्ठा त्वचा श्वेत हाथ पाउ जकडेसे भूष लगे नही अफ़ूरासो लगे देह भारी ठंड लगे उबकी आवैं रोम खडे होय अतिशय नींद आवे नाकसे कफ गिरे अरुचि खांसी औ आंषै श्वेत रहैं॥ ३२॥

वात पित्तज्वर लक्षणं

तृष्णा मूर्छा भ्रमो दाहो निद्रानाशः शिरोरुजा॥

कंठास्य शोषो वमथुरोमहर्षो रुचि स्तमः ॥ ३४ ॥
पर्वभेदश्च जृंभाच वातपित्त ज्वराकृतिः

जो ज्वरमे प्यास लगे मूर्च्छा भ्रम दाह निद्रा नाश शिरमे दरद कंठ मुष सूषे वमन होई रोमांच अरुचि नेत्रोंके अगाडी अंधेरी पर्व भेद औ जमुहाई ये लक्षण वात पित्तज्वरके हैं ॥ ३५ ॥

वात कफज्वर लक्षणं

स्तैमित्यं पर्वणां भेदोनिद्रा गौरवमेवच ॥ ३५ ॥
शिरोग्रहःप्रतिश्यायः कास स्वेदा प्रवर्तनम् ॥
संतापो मध्यवेगश्च वात श्लेष्म ज्वरा कृतिः ॥ ३६ ॥

ज्वरमे अंगपै ओढा कपडा लगा होई ऐसा जानि परे ओर संधि जोडनमे हडफूटन होई नींद बहुत शरीर जड सिरजकडा भया नाकसे कफ गिरना खांसी उठे स्वेद नही आवै अंगमै संताप होई ज्वरका वेग मध्यम सो वात कफज्वर जानना ॥ ३६ ॥

पित्त श्लेष्म ज्वरलक्षणं

लिप्त तिक्तास्यता तंद्रा मोहः कासो रुचि स्तृषा ॥
मुहुर्दाहो मुहुः शीतं पित्त श्लेष्म ज्वरा कृतिः ॥ ३७ ॥

जिस ज्वरमे मुख कफसे लिपा भया कडुवा रहे झपनीसी रहै मोह कास अरुचि तृषा वारंवार दाह शीत लगे उसको पित्त कफज्वर जानना ॥ ३७ ॥

संनिपात ज्वरलक्षणं

क्षणे दाहःक्षणे शीत मस्थि संधि शिरो रुजा ॥
सस्रावेकलुषेरक्ते निर्भुग्नेचापिलोचने ॥ ३८ ॥

सस्वनौ सरुजौ कर्णौ कंठः शूकैरिवावृतः ॥
तंद्रा मोहः प्रलापश्च कास श्वासो रुचिर्भ्रमः ॥ ३९ ॥
परिदग्धा खरस्पर्शा जिह्वास्रस्तांगतापरा ॥
ष्ठीवनं रक्त पित्तस्य कफेनो न्मिश्रितस्यच ॥ ४० ॥
शिरसोलोठनं तृष्णा निद्रा नाशो हृदि व्यथा ॥
स्वेदमूत्र पुरीषाणां चिरा दर्शन मल्पशः ॥ ४१ ॥
कृशत्वं नाति गात्राणां सततं कंठ कूजनम् ॥
कुष्टानां श्याव रक्तानां मंडलानांचदर्शनम् ॥ ४२ ॥
मूकत्वं स्रोतसांपाको गुरुत्व मुदरस्यच ॥
चिरा त्पाकश्च दोषाणां संनिपातज्वराकृतिः ॥ ४३ ॥

जिस ज्वरमे छनमे सीत क्षणमे दाह हाड सांधेमे पीडा माथो दूषे आंसू आवे धूमरे लाल घुसे भए नेत्रहो जाइँ कानोंमे शब्द तथा दूषे कंठमे फासँसी गडैं झपनी होइ मोह प्रलाप कास श्वास अरुचि भ्रम जीभ जलीसी खरखरित अंग शिथिल रक्त औ कफ मिश्रित पित्तका थूकना माथो हलावे प्यास लगै नींदका नास हृदयमे पीडा मलमूत्र भोत वेरसे अल्प उतरे थोरेसे सरीर कृश निरंतर कारवे पीला रंग मिश्रित श्याम लाल रंगके मंडल ओ फुंसिया शरीरमे दीपे वाक्य वंद नाक कान इनका पकना पेट फूले वातादिक दोपको पाक वहुत दिनोंमे होइसो संनिपात ज्वर जानना ॥ ४३ ॥

अथ संनिपातस्य त्रयोदश भेदानाह

एकोल्बण स्त्रयस्तेपुद्व्युल्बणाश्च तथेति षट् ॥

ष्युल्बणश्च भवेदेको विज्ञेयः सतु सप्तमः॥ ४४॥
प्रवृद्ध मध्य हीनैस्तुवात पित्त कफैश्च षट्॥

संनिपात ज्वर तेरे तरेका है

एक एक दोषकी अधिकतासे तीन औ दो दो दोषौंकी अधिकतासे तीन ऐसे छ तीनो दोषोंकी अधिकता करिके एक ऐसे सात ऐसेही वातादिक दोषोंके अधिक मध्य ओ हीन होनेसे छ जैसे वाताधिक मध्य पित्त हीन कफ १ अधिक वातमध्य कफहीन पित्त २ पित्ताधिक मध्य वातहीन कफ ३ पित्ताधिक मध्य कफहीन वात ४ कफाधिक मध्य वातहीन पित्त ५ कफाधिक मध्य पित्तहीन वात ६ एसे तेरा है

वातोल्बण लक्षणं

श्वासःकासः श्रमो मूर्छा प्रलापो मोह वेपथुः॥ ४५॥
पार्श्वस्य वेदना जृंभा कषायत्वं मुखस्यच ॥
वातोल्बणस्य लिंगानि संनिपातस्यलक्षयेत्॥ ४६
एवंविस्फारिकोनाम्ना संनिपातः सुदारुणः ॥

वाताधिक संनिपातमे श्वास कास भ्रम मूर्छा प्रलाप मोह पासुली पीडा कंपा जमुहाई मुषका स्वाद आमले सरीषा यह विस्फारिक संनिपात बडा दारुण है ४७

पित्तोल्बण लक्षणं

अतिसारो भ्रमो मूर्छा मुख पाकस्तथैवच॥ ४७॥
गात्रेच बिंदवो रक्ता दाहो तीव प्रजायते॥
पितोल्बणस्य लिंगानि संनिपातस्य लक्षयेत्॥४८॥
भिषग्भिःसंनिपातो यमाशुकारी प्रकीर्तितः॥

पित्ताधिक लक्षण जिसमे अतीसार भ्रम मूर्छा मुख पाक शरीरमें लाल विंदु अति दाह इन लक्षणोंसे पित्ताधिक संनिपात जानना आशुकारीभी कहते है

कफोल्वण लक्षणं

जडता गद्गदा वाणी रात्रौ निद्रा भवत्यपि ॥ ४९ ॥
प्रस्तब्धे नयने चैव मुखमाधुर्य मेवच ॥
कफोल्बणास्य लिंगानि संनिपातस्य लक्षयेत् ॥ ५० ॥
मुनिभिः संनिपातोयमुक्तःकंपन संज्ञिकः ॥

कफाधिक संनिपातमें नींद लेवे नही अंगमें जडता सिथल वोले एकटक देषे मुह मीठा रहे इसको कंपनभी संनिपात कहते हैं

वात पित्तोल्वण लक्षणं

वातपित्ता धिको यस्तु संनिपातः प्रकुप्यति ॥
तस्यज्वरो मदस्तृष्णा मुखशोषःप्रमीलकः ॥ ५१ ॥
आध्मानारुचितंद्राच कास श्वास भ्रम श्रमाः ॥
मुनिभिर्बभ्रु नामायं संनिपात उदाहृतः ॥ ५२ ॥

वातपित्ताधिक संनिपात

ज्वर मद याने नसासो चढार है उसमे तृषा मुख शोष नेत्र खुलैं नहीं पेट फूलै अरुचि तंद्रायाने नेत्रमे गूंगी कास श्वास भ्रम श्रम बिना थकवाई इसको बभ्रुनामभी संनिपात ऐभी कहते हैं ॥ ५२ ॥

वात श्लेष्मोल्बण लक्षणं

वातश्लेष्मा धिकोयस्य संनिपातःप्रकुप्यति ॥
तस्य शीतज्वरो मूर्छाक्षुत्तृष्णा पार्श्वनिग्रहः ॥ ५३ ॥

शूलमस्विद्यमानस्य तंद्राश्वासश्च जायते॥
असाध्यः संनिपातोयं शीघ्रकारी निगद्यते॥
नहिजीव त्यहो रात्र मनेना विष्ट विग्रहः ॥५४॥

वात कफाधिक सन्निपात जिसके कुपित होता है तिसको शीतज्वर मूर्छा क्षुधा तृषा पशुली जकडी भई शूल स्वेदविनातंद्रा औ श्वास उत्पन्न होत है यह शीघ्रकारी सन्निपात है इसमे रोगी एक दिन रात्रि जीवे है ॥ ५४ ॥

पित्तश्लेष्मोल्वण लक्षणं

पित्तश्लेष्मा धिको यस्य संनिपातः प्रकुप्यति॥
अंतर्दाहो बहिः शीतं तस्यतृष्णा प्रवर्द्धते॥५५॥
तुद्यते दक्षिणे पार्श्वे उरः शीर्ष गलग्रहः॥
ष्ठीवति श्लेष्म पित्तंच कृच्छ्रात्कोष्ठस्य जायते॥५६॥
विट्भेद श्वास हिक्काचवर्द्धते सप्रमीलकाः॥
ऋषिभि र्भल्लुनामायं संनिपात उदाहृतः॥५७॥

पित्त कफाधिक संनिपात ॥

जिस मनुष्यके पित्त कफाधिक संनिपात कुपित होता है उसके अंतःकरणमे दाह बाहेर शीत तृषा अधिक दहनी तरफकी पसुरियों मै पीडा तथा हृदे मस्तक गला जकडा कफ औ पित्तका थूकना सोभी मुसकिलसे मल फूटा भया श्वास हुचकीका बढना नेत्रोमे झांप इसको भल्लु संनिपातभी कहते हैं

वात पित्त श्लेष्मोल्बण लक्षणम्

सर्व दोषोल्बणो यस्य संनिपातः प्रकुप्यति॥
त्रयाणामपि दोषाणां तस्यरूपाणि लक्षयेत्॥ ५८॥
व्याधिभ्यो दारुण श्चैव वज्र शस्त्राग्नि संनिभः॥
केवलोछ्वास परम स्तब्धांग स्तब्धलोचनः॥ ५९॥
त्रिरात्रा त्परमेतस्य जंतोर्हरति जीवितं॥
तदवस्थंतु तंदृष्टा मूढोव्याहरते जनः॥ ६०॥
धर्षितो राक्षसैर्नून मवेलायां चरंतिये॥
अंबया ब्रुवतेकेचि द्यक्षिण्या ब्रह्मराक्षसैः॥ ६१॥
पिशाचै र्गुह्यकै श्चैव तथान्यैर्मस्तके हतं॥
कुलदेवार्चनाहीनं धर्षितं कुल दैवतैः॥ ६२॥
नक्षत्र पीडा मपरे गरकर्मेति चापरे॥
संनिपात मिमंप्राहु र्भिषजाः कूटपालकं॥ ६३॥

वात पित्त कफाधिक संनिपात लक्षण जिसको सर्व दोषाधिक संनिपात कुपित होता है तिसके अंगमे तीनौ दोषके लक्षण जानना यह संनिपात सर्व रोगोंसे दारुण है औ वज्र तथा शस्त्र औ अग्निके समान है इसते केवल उछ्वासही लेता है अंग औ नेत्र जैसे वैसे रहि जाते हैं यह उस रोगीके तीनि रात्रि पीछे प्राण लेता है ऐसे मनुष्यको देषिके मूर्ख लोग कहते हैं कि यह कहीं वेरा कुवेरा बाहिर गया होगा तहा राक्षसोंने पकडा होगा कोई कहै है देवीका दोष है कोई यक्षिणी ब्र-ह्मराक्षस पिशाच इत्यादिकनको दोष कहें हैं कोई मस्तक फिरा कहते

हैं कोई कुल देव दोष है पूजन नही किया उसका दोष कोई नक्षत्र पीडा कोई विष दोष कहते हैं औ वैद्य इसको कूटपालक संनिपात कहते हैं ॥ ६३ ॥

अथ प्रवृद्ध मध्यहीन वातादि जनित संनिपात ज्वराणां लक्षणं

प्रवृद्ध मध्यहीनैस्तु वात पित्तकफैश्चयः ॥
तेनरोगा स्तएवोक्ता यथादोष बलाश्रयाः ॥ ६४ ॥
प्रलापा याससंमोह कंपमूर्च्छारतिभ्रमाः ॥
एकपक्षा भिघातश्चतत्राप्येते विशेषतः ॥ ६५ ॥
एष संमोहनो नाम्ना संनिपातः सुदारुणः ॥

अब प्रवृद्ध मध्य औ हीन वातादि दोष जनित संनिपात ज्वरके लक्षण कहते हैं

जैसे जो संनिपात अतिवाताधिक मध्य वात औ हीनकफसे उत्पन्न होता है उस करिके जो वातादिकौंके दोष कहे हैं वेई वातादिकौं के बलाबल प्रमाणसे होते हैं औ विशेष करिके इसमे प्रलाप श्रम मोह कंपा मूर्छा अचैन भ्रम औ एक पक्षका अभिघात होता है याने एक तरफका अंग रहि जाइ है इस संनिपात ज्वरका संमोहक नाम है यह दारुण है

मध्य प्रवृद्ध हीनैस्तु वात पित्त कफैश्चयः ॥ ६६ ॥
तेनरोगा स्तएवोक्ता यथादोष बलाश्रयाः
मोह प्रलाप मूर्छाः स्युमन्यास्तंभः शिरोग्रहः ॥ ६७ ॥
कासः श्वासो भ्रम स्तंद्रा संज्ञानाशो हृदिव्यथा ॥
खेभ्योरक्तं विसृजति संरक्त स्तब्धनेत्रता ॥ ६८ ॥

तत्राप्येते विशेषाःस्युर्मृत्युरर्वाक् त्रिवासरात्॥
भिषग्भिःसंनिपातोयं कथितः पाकलाभिधः॥६९॥

जो मध्य वात पित्ताधिक औ हीनकफ करिके संनिपात ज्वर उत्पन्न होता है उस करिके यथाधिक वातादिक लक्षण होते हैं परंतु विशेष करिके मोह प्रलाप मूर्छा मन्यास्तंभ याने गर्दनका जकडना शिरोग्रह याने मस्तककी पीडा कास श्वास भ्रम तंद्रा संज्ञाका नाश ह्रदैमे पीडा औ इंद्रिय छिद्रोंसे रक्त पडना औ लाल तथा फटे भये नेत्र इस संनिपातसे तीनही दिनके भीतर मृत्यु होता है इस संनिपातका पाकल नाम है ६९

हीन प्रवृद्ध मध्यैस्तु वात पित्त कफैश्चयः॥
तेन रोगास्त एवोक्ता यथा दोष बलाश्रयाः॥ ७०॥
ह्रदयं दह्यतेचास्य यकृत् प्लीहांत्र फुप्फुसाः॥
पचंत्यत्यर्थं मूर्द्धाधः पूय शोणित निर्गमः॥ ७१॥
शीर्णदंतश्च मृत्युश्च तत्राप्येत द्विशेषतः॥
भिषग्भिः संनिपातोयं याम्यो नाम्ना प्रकीर्तितः॥७२॥

जो संनिपात हीनवात अति पित्त औ मध्यकफसे होता है उस करिके रोग तो कहै भए जो वातादि दोषौं करिके यथा दोष प्रमाणसे होते है परंतु विशेषकरिके उसका ह्रदय जलता है औ यकृत् प्लीहा आंतऔ फेफसाये अति सैपकि जातै हैं औ ऊर्ध्वद्वारा तथा अधोद्वारा ह्वै के पीव औ रक्त गिरता है औ दांत पडि जाते है इससे मनुष्य मरि जाता है इसका नाम याम्य है ॥ ७२ ॥

प्रवृद्ध हीन मध्यैस्तु वात पित्त कफैश्चयः॥

तेन रोगास्त एवोक्ता यथा दोषबलाश्रयाः ॥ ७३ ॥
प्रलापा याससंमोह कंपमूर्छारति भ्रमाः ॥
मन्यास्तंभेन मृत्युःस्या त्तत्राप्येतद्विशेषतः ॥ ७४ ॥
भिषग्भिःसंनिपातोयं क्रकचः संप्रकीर्तितः ॥ ७५ ॥

जो संनिपात वाताधिक हीनपित्त औ मध्य कफ करिके होता है उस करीके भी रोग यथाधिक दोषही होते है परंतु विशेष करिके प्रलाप भ्रम मोह कंपा मूर्छा अचैन भ्रम गर्द्दनका जकडना ये लक्षण होते है इससे मृत्यु होती है इसको क्रकच कहते है

मध्यहीन प्रवृद्धैस्तु वात पित्त कफैश्चयः ॥
तेन रोगास्त एवोक्ता यथा दोष बला श्रयाः ॥ ७६ ॥
अंतर्दाहो विशेषोत्र नचवक्तुंनशक्यते ॥
रक्तमालक्तके नैव लक्ष्यते मुखमंडनम् ॥ ७७ ॥
पित्तेना कर्षितः श्लेष्मा हृदयान्न प्रसिच्यते ॥
इषुणेवाहतंपार्श्वं तुद्यते खन्यते हृदि ॥ ७८ ॥
प्रमीलकः श्वास हिक्का वर्द्धतेच दिने दिने ॥
जिव्हा दग्धा खरस्पर्शा गलःशूकै रिवावृतः ॥ ७९ ॥
विसर्गंना भिजानाति कूजेच्चा पिकपोतवत् ॥
अतीव श्लेष्मणापूर्णःशुष्कवक्रोष्ठतालुकः ॥ ८० ॥
तंद्रा निद्राति योगार्ति हतयाग्नि हतद्युतिः ॥
नरतिं लभते नित्यं विपरीतानिचेच्छति ॥ ८१ ॥

आयम्यतेच बहुशो रक्तं ष्ठीवति चाल्पशः॥
एष कर्कटको नाम्ना संनिपातःसुदारुणः ॥ ८२ ॥

जो संनिपात मध्यवात हीनपित्त औ अधिक कफसे होताहै उससे रोग यथा दोषाधिकता प्रमाणहोता है परंतु अंतर्दाह ओर बोलने सकैनही मुषका लालरंगहो जाता है पित्तके जोरसे कफबाहिर निकलेनही पशुरीनमे तीरसेलगे ऐसे पीडा होती है खोदने औ छेदने सरीषी ह्रदैमे नेत्रमुंदेरहै श्वासहिचुकी दिनपै दिनबढै जीभ जलीसी ओर खरखरी गलेमे सीकुरभरेसे कबूतरसरीषा कूजता रहता है अति कफसे पूरित औ सुखेरहै मुष ओठ औ तालू जिसके ऐसाहोता है तथा तंद्रा निद्रा अधिक व्याकुल वाचाबंद तेजहीन चैननहीपडे सरीरमै ऐचातानीसी पीडा थोरा थोरा रक्तभी थूकता रहै इसका नाम कर्कट संनिपातहै.

हीन मध्यप्रवृद्धैस्तु वात पित्त कफैश्चयः॥
तेन रोगास्त एवोक्ता यथा दोष बलाश्रयाः ॥ ८३ ॥
अल्प शूलं कटि तोदो मध्येदाहो रुजाभ्रमः॥
भृशंक्लमः शिरोबस्ति मन्याह्रदय वाग्रुजः॥ ८४ ॥
प्रमीलकःकासश्वासहिक्का जाड्यंविसंज्ञता ॥ ॥
प्रथमोत्पन्नमेतंतु साधयंतिकदाचन॥ ८५॥
एतास्मिन् संप्रवृत्तेतु कर्णमूले सुदारुणः॥
पिडीकाजायते जंतो र्यथाकृच्छ्रेण जीवति॥ ८६ ॥
सवै दारक संज्ञोयं संनिपातः सुदारुणः॥
त्रिरात्रा त्परमे तस्य व्यर्थ मौषध कल्पनं॥ ८७॥

संनिपात जो हीनवात मध्य पित्त औ अति कफसे होता है उससे रोग तौ यथाधिक दोष नही के प्रमाणसे होते हैं परंतु थोडा थोडा शूल कमरमे पीडा अंग मध्यमे दाह पीडा तथा भ्रम अतिशै ग्लानि तथा मस्तक मूत्राशय ग्रीवा हृदे औ जिव्हामे पीडा नेत्रोंमे झांप श्वास कास हुचकी जडता संज्ञानाश ये लक्षण होता हैं इसके उत्पन्न कालमे इ-सको जो साधि सकै तो शकै अन्यथा असाध्य है इसके निवृत्त होने मात्रमे कानके पास एक फुरिया होती है औ वह मनुष्य असाध्य है कठिनसे जीवे वैदारिक संनिपात यह है तीन रात्र पीछे औषध न कर-नी असाध्य है.

अथ संनिपात मंजर्य्यां ॥

वातो ल्बणा दीनां संनिपात ज्वर विशेषणं ॥
त्रयोदशानां शीतांगा दीनित्रयोदश ॥
नामांतराणि लक्षणां तराणिच तद्यथा ॥
संधिक श्चांतक श्चैव रुग्दाहःश्चित्तविभ्रमः ॥
शीतांग स्तंद्रिकःप्रोक्तःकंठकुब्जश्च कर्णकः ॥ ८८ ॥
विख्यातो भुग्ननेत्रश्च रक्तष्ठीवी प्रलापकः ॥
जिव्हकश्चे त्यभिन्यासः संनिपाता स्त्रयोदश ॥ ८९ ॥

संनिपात मंजरीसमे लिषै हैं वाताधिक संनिपात ज्वर विशेष तेरह तिनके शीतांग इत्यादिक नाम औ लक्षण कहते हैं ते ऐसेकि संधिक १ अंतक २ रुग्दाह ३ चित्त विभ्रम ४ शीतांग ५ तंद्री ६ कंठ कुब्ज ७ कर्णक ८ भुग्न नेत्र ९ रक्त ष्ठीवी १० प्रलापक ११ जिह्व १२ औ अभिन्यास १३ ए तेरह

अथैतेषा मायुर्मर्यादा माह

संधिके वासराः सप्त चांतके दश वासराः ॥
रुग्दाहे विंशतिर्ज्ञेया वन्ध्यशौ चित्तविभ्रमे ॥ १० ॥
पक्षमेकंतु शीतांगे तंद्रिके पंचविशतिः ॥
विज्ञेयावासरा श्चैव कंठ कुब्जे त्रयोदश ॥ ११ ॥
कर्णकेच त्रयोमासा भुग्ननेत्रे दिनाष्टकं ॥
रक्तष्ठीवी दशाहानि चतुर्दशप्रलापके ॥ १२ ॥
जिव्हके षोडशाहानि कलाभिन्यास लक्षणे ॥
परमायु रितिप्रोक्तं म्रियते तत्क्षणादपि ॥ १३ ॥

इनते रोगकि आयुर्मर्यादा कहते हैं ॥

जैसेकि संधिककी मर्यादा सात दिन अंतककी दसदिन रुक्दाहके वीस दिन चित्त भ्रमके चोवीस सीतांगके १५ तंद्रिक २५ कंठ कुब्जके १३ कर्णकके ९० भुग्न नेत्रके ८ रक्तष्टीवीके १० प्रलापके १४ जिह्वकके १६ अभिन्यास १६ दिन इस प्रमाण आयु है तत्कालभी मरता है नियम नही ॥ १३ ॥

पूर्व रूप कृत शूल संभवं शोषवात बहुवेदना न्वितं ॥
श्लेष्म ताप बलहानि जागरं संनिपात मितिसंधिकंवदेत् १४

जिसके पूर्वरूपमे शूल मुषशोष वातपीडा अधिक कफ संताप बलकी हानि औ निद्राका नाश होई उस संनिपातको संधिक कहते है ॥ १४ ॥

दाहंकरोति परितापन मातनोति ॥
त्रेराहंददाति विदधाति शिरः प्रकंपं ॥

हिक्कांकरोति कसनं चसमाजुहोति
जानीहितं विबुधवर्जित मंतकाख्यं ॥ १५॥

जो संनिपात मोह मस्तक कंप हुचकी औ कास इन रोगौंका पेदा करनेवाला है उसको अंतक संनिपात जानो असाध्य है वैद्य चिकित्सा करते नही हैं ॥ १५ ॥

प्रलाप परितापन प्रबल मोह मांद्य भ्रमः
परिभ्रमण वेदना व्यथित कंठमन्याहनुः॥
निरंतर तृषा करः श्वसन कास हिक्का करः
सकष्ट तर साधनो भवति हंति रुग्दाहकः॥१६॥

जिसमे प्रलाप संताप मोह बुद्धि मंदत्व भ्रम अंगपीडा कंठ ग्रीव औ ढोडीमे पीडा निरंतर तृषा श्वास कास हुचकी ये लक्षण रुग्दाह संनिपातके हैं अति कष्ट साध्य प्राणघातक है ॥ १६ ॥

यदि कथमपि पुंसां जायते कायपीडा॥
भ्रम मद परितापो मोह वैकल्य भावः॥
विकल नयनहासो गीत नृत्य प्रलापी॥
त्यभिद धति नसाध्यं केपि चित्त भ्रमाख्यं॥ १७॥

चित्त भ्रम संनिपातमे भ्रम मद याने नसा संताप मोह विकलता नेत्र भयानक हांसी गावना नाचना औ बकना ये लक्षण होते है कोई आचार्य असाध्य कहते हैं ॥ १७ ॥

हिम सदृश शरीरो वेपथुःश्वास हिक्का
शिथिलित सकलांगः खिन्ननादो ग्रतापः॥

क्लमथु दवथु कास श्छर्घतीसार युक्त
स्त्वरित मरण हेतुः शीतगात्र प्रभावात्॥ ९८॥

जिसका शरीर बरफसरीषा ठंडा होई औ कंप श्वास हुचकी सर्वांग शिथिल शब्दहीन उग्रताप थक वाई नेत्रोंमे दाह षासी उठे वमन होई सांस चढे अतीसार ये लक्षण होई तो तुरतही मरि जाई यह सीतांग संनिपात है॥ ९८॥

प्रभूता तंद्रार्ति ज्वरकफ पिपासा कुलतरो भवेत्
श्यामा जिह्वा पृथुल कठिना कंठक वृता॥
अतीसार श्वास क्लमथु परितापः श्रुतिरुजा
भृशं कंठे जाड्यं शयन मनिशं तंद्रिकगदे॥ ९९॥

तंद्रिक लक्षण॥

जिसमे तंद्रा पीडा ज्वर कफ औ पिपाससे व्याकुल होय जीभ काळी मोटी कठिन औ कंटक युक्त होय तथा अतीसार श्वास थकवा ये संताप कानोंमे पीडा कंठ जड औ निरंतर नींद आवै सो तंद्रिक॥ ९९॥

शिरोर्ति कंठ ग्रहदाह मोह कंपज्वरो रक्तसमीरणार्त्तिः॥
हनुग्रह स्ताप विलाप मूर्छास्यात्कंठ कुब्जःखलुकष्टसाध्यः॥ १००॥

कंठ कुब्जके लक्षण

माथो दूषे गला रुंधै दाह मोह कंपाज्वर वातरक्तसंबंधी पीडा हनुग्रह संताप विलाप मूर्छा ये कंठ कुब्जमे होते हैं कष्ट साध्य है॥ १००॥

प्रलाप श्रुति ह्रास कंठ ग्रहांग व्यथा श्वास
कास प्रसेक प्रभावं॥ ज्वरं तापकर्णांतयोर्ग

हृत्पीडाबुधाः कर्णकं कष्टसाध्यं वदंति ॥ १०१ ॥

अनर्थक बकै कानोंसे थोडा सुनै गला रुधा होइ अंगमेपीडा श्वास कास मुषसेलार ज्वरहोइ संतापहोइ तथा कलेजेसे कानो पर्यंतपीडा उसको कर्णक संनिपात कहते है कष्ट साध्यहै ॥ १०१॥

ज्वरबला पचय स्मृति शून्यता श्वसन भुग्न विलोचन मोहितः॥ प्रलपन भ्रमवेपथु शोथवान् त्यजति जीवित माशुस भुग्नदृक् ॥ १०२॥

भुग्नदृग्लक्षण ॥

जिसमे ज्वर बलकी हानि स्मृतिनास श्वास नेत्रभीतर क्रोधसे भय मोह प्रलाप भ्रम कंपा सूजन ये लक्षण होय सो शीघ्र प्राणनासक भुग्नदृक् संनिपातहै ॥ १०२ ॥

रक्तष्ठीवी ज्वरवमि तृषा मोह शूलातिसार ॥ हिक्का ध्मानभ्रमण दवथु श्वास संज्ञाप्रणाशः॥ श्यामा रक्ताधिक तर रसना मंडलोत्थान रूपा॥ रक्तष्ठीवी निगदित इह प्राणहंता प्रसिद्धः॥ १०३॥

रक्तष्ठीवी संनिपातमे ज्वर वमन प्यास मोह शूल अतीसार हिचकी पेट फुलना भ्रम नेत्र जलना श्वास संज्ञाका नास जीभ अतिसे काली औ लाल उसमे चकत्ते पडे ऐसे रक्तष्ठीवी संनिपातमे होई तो प्राणनाश कहै ॥ १०३ ॥

कंपप्रलाप परितापन शीर्ष पीडा प्रौढ प्रभाव पवमान्यपरोन्य चिंता॥ प्रज्ञाप्रणाश विकल प्रचुर प्रवादः क्षिप्रंप्रयाति पितृपालपदं प्रलापी॥ १०४॥

कंपा प्रलाप संताप शिर पीडा वडाईकी वातें करे पवित्रतामे चि-त्त राषै दूसरेकी चिंता करे वुद्धिका नास व्याकुल रहै वहुत वके इस प्रलापक संनिपातसे वचे नही. ॥१०४॥

श्वसनकास परिताप विह्वलः कठिन कंटकवृतो
ति जिह्वकः॥ वधिर मूक वलहीन लक्षणो
भवति कष्टतरसाध्य जीव्हकः॥१०५॥

श्वास काससे संताडित होई ओर व्याकुल होई जिह्वामे कांटे होई वहिरा होई गूंगा होई वलहीन होई वह जिव्हक संनिपात है मनुष्य कठिनसे जीवै ॥ १०५॥

दोषत्रय स्निग्धमुखत्व निद्रावैकल्य निश्चेष्टन
कष्टवाग्मी॥वलप्रणाशः श्वसनादि निग्रहो
भिन्यासउक्तो ननुमृत्युकल्पः॥ १०६॥

त्रिदोषसे मुषमे चिकनाई औ निद्रा व्याकुलता निश्चेष्टा तथा वोलाकष्टसे जाइ वलकानास श्वासादिकका अवरोध इनसे अभिन्यास संन्निपात जानना॥ १०६॥

अथ साध्यासाध्य निर्णयः

संधिक स्तंद्रिकश्चैव कर्णकः कंठकुब्जकः॥
जिह्वकश्चित्तविभ्रंशः षट्साध्याः सप्तमारकाः॥७॥

अव इनमेसे संधिक १ तंद्रिक २ कर्णक ३ कंठकुब्ज ४ जिह्वक ५ चित्तविभ्रंश ६ ये छ साध्य हैं ओर सात असाध्य जानना॥ ७॥

सप्तमीद्विगुणायाव न्नवम्ये कादशी तथा॥
एषात्रिदोषमर्यादा मोक्षायच वधायच॥८॥

पित्तकफानिलवृद्ध्या दशदिवस द्वादशाहसप्ताहात्॥
हंति विमुंचति पुरुषं त्रिदोषतो धातुमल पाकात्॥९॥

अब त्रिदोष ज्वरकी मर्यादा कहैहै

कीवाताधिक त्रिदोषज्वरकी मर्यादा सात तथा चौदह दिनकी है पित्ताधिकको नव औ अठारह कफाधिकको ग्यारह औ बाइस दिनकी होती है औरभी कहते हैं पित्तकी वृद्धिसे दशदिन कफाधिकतासे बारा दिन औ वातवृद्धिसे सातदिनकी मर्यादा है इसमे जो धातुपाक भया तौ मरे मलपाकसे बचै ॥ ९ ॥

अथागंतुक ज्वरस्य निदानं

अभिघाताभि षंगाभ्या मभिचाराभिशापतः॥
आगंतु र्जायतेदोषै र्यथास्वंतंविभावयेत्॥ १० ॥

अथा गंतुक ज्वर लक्षण औ निदान

अभिघातसे याने चोटलगनेसे तथा अभिषंग याने भूतादिकौंके लगनेसे अभिचार याने मंत्रतंत्र प्रयोगसे अभिशाप याने गुरुइत्याकौंके शापते ऐसे आगंतुक ज्वर होत हैं उनकोभी यथा दोषजानना ॥ १० ॥

काम शोक भया द्वायुः क्रोधा त्पित्तं त्रयोमला.॥
भूताभिषंगा त्कुप्यंति भूतसामान्य लक्षणाः॥ ११ ॥

जोकहाकि यथा दोषजानना सो उसकाखुलासा करते हैं काम शोक औ भयसे वायूका कोप होता है औ क्रोधसे पित्त तथाभूताभिषंगसे तीनौ दोष कुपित होत है वेई दोषभूतौके सामान्य लक्षण हैं याने भूताभिषंगसेभी वेई लक्षण होते है ॥ ११ ॥

श्यावास्यता विषकृते तथातीसार एवच॥

भक्तारुचिः पिपासाच तोदश्च सहमूर्छया॥ १२॥

जो विषषानेवगेरे से ज्वर उत्पन्न होता है उसमे मुखपर श्यामता तथा अतीसार भोजनपर अरुची पिपास शरीरमे सूईछेदने सरीखी पीडा औ मूर्छा ये लक्षण होते है॥ १२॥

औषधी गंधजे मूर्छा शिरोरुग्वमथुस्तथा॥
कामजे चित्तविभ्रंशस्तंद्रालस्य मभोजनं॥
हृदये वेदना चास्य गात्रं चपरिशुष्यति॥ १३॥

जो औषधी सूंघनेसे ज्वर होता है उसमे मूर्छा मस्तकपीडा वांति ये लक्षणहोत है कामज्वरमे चित्तभ्रम तंद्रा आलस्य अन्नपर अरुचि हृदेमेपीडा औ शरीर सूषता है याने दुवला होता है॥ १२॥

मूर्छा गमर्दो हृट्नेत्र चापल्यंकुचवक्रयोः॥
स्वेदःस्याद्धृदिदाहश्च स्त्रीणां कामज्वरे भवेत्॥ १४॥

स्त्रीके कामज्वरका लक्षण कामज्वर स्त्रीके होनेसे मूर्छा अंगमे टूटनि नेत्रोमे चपलता कुच औ मुषमे पसीना हृदेमे दाह ये लक्षण होते है॥ १४॥

भूताभिषंगा दुद्वेगो हास्यरोदन कंपनं॥
केचिद्भूताभिषंगोत्थं ब्रुवते विषमज्वरं॥ १५॥

जो भूत बाधासे ज्वरहोता है उसमे चित्तको उच्चाट हंसना रोवना कांपना ये लक्षण होत है कितनेक आचार्य कहते है कि विषमज्वरभी भूताभिषंगसे है॥ १५॥

अथविषमज्वरस्य संप्राप्तिमाह

दोषोल्पो हित संमतो ज्वरोत्स्तष्टस्य वापुनः॥

धातुमन्यतमं प्राप्य करोतिविषमज्वरं॥ १६॥

अथ ज्वरकीप्राप्ति कहते है

अहित आहार विहारसे उत्पन्न भया वातादि अल्प दोषसो अथवा ज्वरगएपीछे जो अल्पदोषरहा सो सप्तधातुनमैसे कोईभी एक रक्तादिधातुमे प्राप्त होके विषमज्वर करता है ॥१६॥

विषम ज्वर लक्षणं

भालुकि तंत्रात् यः स्यादनियता कालात् ॥
शीतोष्माभ्यां तथैवच वेगतश्चापि ॥
विषमो ज्वरः सविषमऽस्मृत ॥ १७॥

अथ भालुकितंत्रसे विषमज्वरके लक्षण

जैसेकि जो ज्वर शीत औ उष्णकरिके तथा कालनियमविना प्राप्त होइ औ वेग करिके विषम होइ याने कभी कम कभी जादा वेग होइ सो विषमज्वर कहा है ॥ १७ ॥

विषमज्वर भेदाः

संततः सततोन्येद्यु स्तृतीयकचतुर्थकौ॥१८॥

अथ विषमज्वरके भेद कहे है

जैसेकि संतत सतत अन्येद्युः तृतीयक औ चतुर्थक ॥ १९ ॥

सप्ताहं वा दशाहं वा द्वादशाहं मथापिवा॥
संतत्यायो विसर्गीस्या त्संततःसनिगद्यते॥ १९॥

संततके लक्षण

जो सात दिन किंवा दश दिन अथवा बारह दिनतक निरंतर एक सरीषा रहिके उतरे सो संतत है इसमे वात प्रधान सात दिन पित्त प्रधान दशदिन कफ प्रधान बारह दिनपर्यंत एकसा रहिके जाता है॥१९॥

अहोरात्रे सततको द्वौकालावनु वर्तते ॥२०॥

सतत ज्वर एक रात्रि दिनभरमे दोबखत चढता औ उतरता है॥२०

तृतीयकस्तृतीयेन्हि चतुर्थेन्हि चतुर्थकः॥ २१ ॥

तृतीयक ज्वर औ चतुर्थकके लक्षण

तृतीयक तिसरे दिन चतुर्थिक चौथे दिन ॥ २१ ॥

द्वि दोषोल्बणस्य तृतीयकलक्षणं ॥

कफपित्ता त्रिकग्राही पृष्ठा द्वात कफात्मकः॥

वातपित्ता च्छिरोग्राही त्रिविधःस्यात्तृतीयकः॥२२॥

अब द्विदोषाधिक तृतीयकके लक्षण कहते हैं

जो तृतीयक कफ पित्तसे होता है सो प्रथम कमरके पिछाडी जहां तीन हाड इकठे हैं उसको पकडता है सो जो वात कफसे होता है सो प्रथम पीठसे चलता है ओर जो वात पित्तसे सो सिरसे होता है २२

चातुर्थिको दर्शयति प्रभावं द्विविधं ज्वरः॥

जंघाभ्यां श्लैष्मिकः पूर्वं शिरसो निलसंभवः॥२३॥

मध्यकायंतु गृह्णाति पूर्वं यस्तुसपित्तजः॥

विषमज्वर एवान्य श्चतुर्थक विपर्ययः॥ २४ ॥

समध्येज्वरयत्यन्हि आदावंते विमुंचति॥ २५॥

चातुर्थिक ज्वर दो प्रकारके

जो कफ जन्य है सो पिडुरिनसे चढता है पहिले ओर जो वातसे है सो माथेसे औ पित्तसे सो मध्य सरीरसे प्रथम होता है एक ओर विषमज्वर चातुर्थिकसे उलटा है सो बीचमे दो दिन ज्वर पैदा होइ है एक आदि अंतमे छोडता है॥ २५॥

त्वक्स्थौ श्लेष्मानिलौ शीत मादौजनयतोज्वरं॥
तयोःप्रशांतयोःपित्तमंतदाहं करोतिच॥ २६॥
करोत्यादौतथापित्तं त्वक्स्थंदाहमतीवच॥
तस्मिन्प्रशांते त्वितरौ कुरुतःशीतमंततः॥ २७॥

अथ शीतादिदाहादि ज्वरौंके लक्षण त्वचामे प्राप्त भये जो कफ औ वात वै कफज्वरके आगममे प्रथम शीत पैदा करते है जब वे शांत होत है तब अंतमै पित्त दाह करे है॥ २६॥ त्वचामे भया जो पित्त ज्वरागम तासमे अतिसे दाह करता है उसीके शांत होनेसे अंतमे कफ औ वात ये शीत उत्पन्न करते हैं॥ २७॥

द्वावेतौ दाह शीतादी ज्वरौ संसर्गजौस्मृतौ॥
दाह पूर्व स्तयोःकष्टः सुखसाध्य तमोपरः॥ २८॥

ये दोनौ दाहादिक औ शीतादिक ज्वर संसर्गी हैं याने द्विदोषज हैं इनमे दाहपूर्व कष्ट साध्य है औ शीत पूर्वक सुख साध्य है॥ २८॥

विदग्धेन्नरसेदेहे श्लेष्मपित्ते व्यवस्थिते॥
तेनार्द्धं शीतलंदेह मर्धमुष्णं प्रजायते॥ २९॥

देहमे जब अन्नरस याने आहारका सार दुष्ट ह्वैके जलि गया तब कफ औ पित्तभी दुष्ट ह्वैके स्थिति होते हैं इस वास्ते आधा ठंढा आधा गरम होता है॥ २९॥

कायेदुष्टं तथापित्तं श्लेष्माचांते व्यवस्थितः॥
तेनोष्णत्वं शरीरस्य शीतत्वं हस्तपादयोः॥ ३०॥

काये श्लेष्मायदादुष्टः पित्तं चांतेव्यवस्थितं ॥
शीतत्वंतेनगात्रेस्यादुष्णत्वं हस्तपादयोः ॥ ३१ ॥

जब पित्त कोठेमे दूषित ह्वैके रहै ओर हाथ पाउं वगैरेमे कफ रहै तब उस करिके मध्य शरीर पित्तसे गरम होइ औ हाथ पाउं वगैरे ठंढे ॥ ३० ॥ जब कोठेमे कफ दुष्ट होइ औ हाथ पावोंमे पित्त तब उस करिके मध्य शरीर ठंढा औ हाथ पाउं गरम होते हैं ॥ ३१ ॥

प्रलेपक लक्षणं ॥

प्रलिंपन्निवगात्राणि घर्मेण गौरवेनच ॥
मंदज्वर विलेपीच सशीतःस्यात्प्रलेपकः ॥ ३२ ॥
शुश्रुतात् ॥ प्रलेपकाख्यो विषमः प्रायशः क्लेशशोषिणः
ज्वराश्च विषमाः सर्वे प्रायः क्लेशाय शोषिणां ॥ ३३ ॥

अब प्रलेपकज्वर कहत हैं ॥

जिस ज्वरमे पसीना ओर भारीपना शरीरको मालूम होये ज्वर मंदो होइ ठंढ लगे सो प्रलेपक ज्वर है ॥ ३२ ॥ शुश्रुतमे लिषा है की जो प्रलेपक ज्वर है सो बहुत करिके क्लेस सहनकरनेवालौंके होता है औ जितने ज्वर हैं वै सब बहुधा करिके क्षयरोगवालौंके क्लेशहीके वास्ते हैं ॥ ३३ ॥

रसधातु गतज्वरमाह ॥

गुरुता हृदयो क्लेशः सदनं छर्घरोचकौ ॥
रसस्थेतु ज्वरे लिंगं दैन्यं चास्योपजायते ॥ ३४ ॥

रसधातु गतज्वर कहै हैं अंगका भारीपना मति लई अंग शिथिल वमन अरुचि औ दीनता ये लक्षण होइ उसको रस धातुगत ज्वर जानना ॥ ३४ ॥

मांसगत ज्वरमाह॥

पिंडको द्वेष्टनं तृष्णा सृष्टमूत्र पुरीषता॥
उष्मांतर्मोह विक्षेपौग्लानिःस्या न्मांसगे ज्वरे॥ ३५॥

मांसगतज्वरमे पिंडिरिनका ऐठना प्यास पेसाब औ झाडेका होना अंतर्दाह मोह हाथ पाउ इत्यादिकौंका फेंकना औ ग्लानि ए लक्षण होत हैं॥ ३५॥

मेदोगतमाह॥

भृशंस्वेद स्तृषा मूर्छा प्रलापच्छर्दिरेवच॥
दौर्गंध्या रोचकौ ग्लानिर्मेदस्थे चा सहिष्णुताः॥ ३६॥

मेदोगत ज्वरमे अतिशे पसीना प्यास मूर्छा प्रलाप वांति शरीरमे दुर्गंधि अरुचि ग्लानि असहनपना होता है॥ ३६॥

रक्त निष्ठीवनंदाहो मोहश्च्छर्दन विभ्रमौ॥
प्रलापःपिडिका तृष्णा रक्त प्राप्ते ज्वरे नृणां॥ ३७॥

रक्त थूकना दाह मोह उलटी भ्रम बडबड करना फोडा फुंसी औ तृषा ये लक्षण रक्तगतके हैं॥ ३७॥

भेदोस्थ्नां कूजनं श्वासो विरेक श्छर्दि रेवच॥
विक्षेपणंच गात्राणा मेतदस्थि गतेज्वरे॥ ३८॥

हडफूटनि कांखना श्वास झाडा उलटी हाथ पाउनका पटकना ये लक्षण हाडमे प्राप्त भए ज्वरमे होते हैं॥ ३८॥

मज्जा गतमाह॥

तमःप्रवेशनं हिक्का कासः शैत्यं वमिस्तथा॥
अंतर्दाहो महाश्वासो मर्मछेदश्च मज्जगे॥ ३९॥

मज्जागत ज्वरमे जैसे अंधकारमे गए होइ ऐसा मालूम होइ औ हिचकी कास ठंढ लगना वांति होना अंतर्दाह महाश्वास औ मर्मस्थानोमे छेदनेसरीखी पीडा होती है॥ ३९॥

शुक्रगतमाह॥

मरणं प्राप्नुया त्तत्र शुक्रस्थानगते ज्वरे॥
शेफसस्तब्धता मोक्षः शुक्रस्यतु विशेषतः॥ ४०॥

शुक्रगत ज्वरमे लिंगखडा होइ वीर्यपात होइ ये लक्षण होते हैं इससे मनुष्य मरता है॥ ४०॥

अथ जीर्णज्वर लक्षणं॥

यो द्वादशेभ्यो दिवसेभ्य ऊर्ध्वंदोषत्रयेभ्यो द्विगुणेभ्य ऊर्ध्वं॥ नृणां तनौ तिष्ठति मंदवेगो भिषग्भि रुक्तोज्वर एष जीर्णः॥ ४१॥ नित्यं मंदज्वरो रूक्षः शूनः कृच्छ्रेण सिध्यति स्तब्धांगः श्लेष्म भूयिष्टो नरोवात बलासकी॥ ४२॥

जीर्णज्वर कहते हैं

जो ज्वर बारह दिवसके ऊपर रहै औ वातज्वर चौदह दिन उपरांत पित्तज्वर वीस दिनके उपरांत कफज्वर अठाइस दिनके उपरांत रहै और ज्वरका वेग मंद होई इसको जीर्णज्वर कहते है वातबलासक ज्वर कहते हैं॥४१॥ जिसके सरीरमे नित्तही मंदज्वर शरीर रूखा औ सूजन अंगज कडा कफकी अधीकता ये लक्षण होइ सो मनुष्य अति कष्टसे आराम होइ है॥ ४२॥

अथ साध्यज्वर लक्षणं,

बलवत्स्वल्पदोषेषु ज्वरः साध्यो नुपद्रवः॥ ४३॥

साध्य लक्षण

जो मनुष्य बलवान है औ वाताधिक दोष अल्प हैं ऐसे मनुष्यके जो उपद्रव रहित ज्वर होइ तो साध्य होइ ॥ ४३ ॥

अथज्वरस्यो पद्रवानाह

श्वासो मूर्छा रुचि श्छर्दिस्तृष्णातीसार विड्ग्रहाः ॥
हिक्का कासांग दाहाश्च ज्वरस्योपद्रवा दश ॥ ४४ ॥

अब ज्वरके उपद्रव कह है जैसेकि श्वास मूर्छा अरुचि वांति पियास अतीसार विबंध हुचकी कास औ अंगमे दाह ये ज्वरके दश उपद्रव हैं ॥ ४४ ॥

सुखसाध्य ज्वरलक्षणं

संतापो भ्यधिको बाह्ये तृष्णा दीनांच मार्दवं ॥
बहिर्वेगस्य लिंगानि सुखसाध्यत्वमेवच ॥ ४५ ॥

सुखसाध्य बहिर्वेगी ज्वर सरीरके बाहेर संताप अधिक प्यास कम ये बहिर्वेगी ज्वरके लक्षण ॥ ४५ ॥

अंतर्दाहो धिकातृष्णा प्रलापःश्वसनं भ्रमः ॥
संध्यस्थि शूल मस्वेदो दोषवर्चो विनिग्रहः ॥
अंतर्वेगस्य लिंगानि कष्ट साध्यत्व मेवच ॥ ४६ ॥

जो ज्वरमे अंतर्दाह प्यास अधिक प्रलाप श्वास भ्रम संधि औ हाडोंमे शूल पसीनाका अभाव वात औ मलका अवरोध ये अंतर्वेगी ज्वरके लक्षण कष्ट साध्य हैं ॥ ४६ ॥

असाध्य ज्वरस्य लक्षणं ॥

ज्वरःक्षीणस्य शूनस्य गंभीरो दैर्घरात्रिकः ॥

असाध्यो बलवान् यश्च केशासीमंतकृत् ज्वरः॥४७॥

जो मनुष्य क्षीण सूजनयुक्त होइ बहुत दिनौका गंभीर औ बलवान शिरमे मांगकी जागा के केस उडायके मांगसी करै सो असाध्य ज्वर है॥ ४७॥

गंभीरज्वर लक्षणं

गंभीरस्तु ज्वरोज्ञेयो ह्यंतर्दाहेनतृष्णया॥
आनद्धत्वेन चात्यर्थं कास श्वासोद्गमेनयः॥ ४८॥

गंभीर ज्वरलक्षण॥

इस ज्वरमे अंतर्दाह प्यास बहुत वातादि दोष औ मलका विबंध औ श्वास तथा कासका उठना ये लक्षण होते हैं॥ ४८॥

असाध्य लक्षणानि॥

हेतुभिर्बहुभिर्जातो बलिभिर्बहु लक्षणः॥
ज्वरः प्राणांतकृद्यश्च शीघ्र मिंद्रियनाशनः॥ ४९॥
योत्हृष्टरोमारक्ताक्षो हृदि संप्राप्त शूलवान्॥
वक्रेणचैवोच्छ्वसिति तंज्वरोहंति मानवम्॥ ५०॥
हिक्का श्वास तृषायुक्त मूढं विभ्रांत लोचनम्॥
संततो च्छ्वासिनं क्षीणं नरं क्षपयतिज्वरम्॥ ५१॥
आरंभा द्विषमोयस्तु यस्यवादीर्घ रात्रिकः॥
क्षिणस्य चातिरूक्षस्य गंभीरोयस्य हंतितम्॥ ५२॥

असाध्य लक्षण

जो ज्वर बलवान् बहुत कारणौं करिके उत्पन्न भया होइ औ

शीघ्रही श्रवण नेत्र इत्यादि इंद्रियोंका नाशक होइ सो प्राण नाशक होता है ॥ ४९ ॥ जिस मनुष्यके ज्वरमे रोमांच होते हैं औ लाल नेत्र हृदेमे शूल होइ तथा मुषसे श्वास लेता होइ वह ज्वर उस मनुष्यको मारता ही है ॥५० ॥ जो मनुष्य हिचकी श्वास औ तृषायुक्त होइ औ संज्ञारहित होइ तथा जिसके नेत्र भ्रमित होइ वह निरंतर मुख हीसे श्वास लेता होइ तथा ज्वर पीडासे क्षीण भया होइ उसको वह ज्वर नाशही करता है॥५१॥ जो ज्वर आरंभकाल हीसे विषम होइ अथवा मरण चिन्हयुक्त होइ ऐसा गंभीर ज्वर याने रक्तादि धातुगतज्वर जो ज्वर करके क्षीण औ रूक्ष है उसे मनुष्यको मारता ही है ॥ ५२ ॥

अथ मंथर ज्वरमाह

क्षीरपाणिः॥ज्वरोदाहोभ्रमोमोहो ह्यतीसारोवमिस्तृषा॥
अनिद्राच मुखं रक्तं तालुजिह्वाच शुष्यति ॥ ५३ ॥
ग्रीवादिषु चदृश्यंतेस्फोटकाःसर्षपोपमाः ॥
घृताशनान्स्वेदरोधान्मंथरोजायतेनृणाम् ॥ ५४ ॥
अन्यच्चहारीतः॥ ज्वर स्तंद्राचतनुर्यस्य दंतोष्ठेषुचश्यामता॥
घ्राणजिह्वास्य कंठेषु रक्तताक्षिचकर्बुरम् ॥ ५५ ॥
मुक्ताहारो गलेयस्य सप्ताहाद्धार्यतेनचेत् ॥
तत्रसप्तदिनादर्वाक् स्फोटाःस्युः सर्षपोपमाः ॥ ५६ ॥

अब मंथर ज्वरलक्षण

क्षीर पाणि कहे हैं जैसेकि जिस व्याधिमे ज्वरदाह भ्रम मोह अतीसार वांति तृषा अनिद्रता मुषलाल तथा लाल जिह्वा सुषे ॥५३ ॥ गलेसे लेकर नीचे नीचे उतरते सरसो सारिखे छाले होइ यह मंथर है

सो तरुण ज्वरमे घी खानेसे पसीना रोकनेसे होता है ॥५४॥ औ हारीतके वाक्य हैं कि जिसके ज्वर तंद्रा दांत ओठ स्याम होइ नाक जीभ मुष कंठमे ललामी नेत्र कवरे ऐसे मनुष्यके॥५५॥जो सात दिनोंमे मोतियोंकी माला गलेमे न पहिरावे तौ एकीस दिनोंकेभीतर उसके अंगमे सरसो के समान छाले होते हैं ॥५६॥ इति माधवनिदाने ज्वर निदानं॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां ज्वरनिदान प्रकाशकः ॥

अथातीसार निदानं

गुर्वति स्निग्ध रूक्षोष्ण द्रवस्थूलाति शीतलैः॥
विरुद्धाध्यासनाजीर्यैं विषमैश्चातिभोजनैः॥ ५७॥
स्नेहाद्यै रतियुक्तैश्च मिथ्यायुक्तै विषैर्भयैः ॥
शोकदुष्टांबुमद्यातिपानैः सात्म्यर्तुपर्ययैः ॥ ५८ ॥
जलाति रमणौर्वेगविघातैः कृमिदोषतः॥
नृणांभवत्यतीसारो लक्षणंतस्यवक्ष्यते॥ ५९ ॥

अब अतीसारका निदान कहते हैं ॥

जैसेकि गरुये पदार्थ याने एक तो वह जो जलदी पचन न होइ दूसरा वह जो प्रमाणसे जादा॥५७॥ तथा स्निग्ध याने तर पदार्थ तथा रूखे गरम पतले स्थूल घेवर खाजा इत्यादिक तथा अति ठंढे विरुद्ध भोजन भोजनपे भोजन अजीर्ण विषम भोजन याने कम कधी जादा अथवा वखत वे वपत भए भोजन अति भोजन स्नेह स्वेदादिकौं के अति होनेसे या मिथ्या याने कम होनेसे विष भक्षण भए शोक दूषित जल अति मद्यपान प्रकृति विरुद्ध वा ऋतु विरुद्ध पदार्थोंके सेवन ते ॥

॥ ५८॥ जलमे बहु तरहनेसे झाडा पेसाब रोकनेसे कृमिदोष इत्यादिक कारणसे अती सार होता है तिसका लक्षण कहते हैं ॥ ५९ ॥

अथास्य संप्राप्ति संख्यांचाह

संशम्यापां धातुरग्निं प्रवृद्धो वर्चोमिश्रोवायुनाधः प्रणुन्नः ॥ सरत्यतीवातिसारं तमाहुर्व्याधिं घोरं षड्विधं तंवदंति॥६०॥ एकैकशः सर्वशश्चापिदोषैः शोकेनान्यःषष्ठआमेनचोक्तः॥६१॥

अब संप्राप्ति औ संख्या कहते हैं ॥

जैसेकि जलके धातु जो कफ रस मूत्र स्वेद मेद पित्त औ रक्त इत्यादिक वे अतिबढे भये जठराग्निको मंद करिके आप वायुका निकाला भया मल झाडेके रस्ते गिरता है उसको वैद्य अतीसार कहते हैं सो घोर रोग छ प्रकारका है ॥६०॥ एक एक दोषसे ३ संनिपातसे १ एक शोकसे एक आमसे ये छ प्रकारके हैं॥ ६१ ॥

अथ पूर्वरूपं ॥

हृन्नाभिपायूदरकुक्षितोदागात्रावसादानिलसंनिरोधाः॥ विट्संगमाध्मानमथाविपाको भविष्यतस्तस्य पुरःसराणि ॥६२॥

अब पूर्वरूप कहते हैं हृदै नाभि गुदा उदर औ कोखे इनस्थानोमे सुई छेदने तरह पीडा तथा अंग शिथिल अधोवायुका रुकावट तथा मलकाभी अवरोध पेटका फुलना औ अन्नका अछी तरे न पचना ये लक्षण अतीसारके हैं ॥ ६२ ॥

अथ वातातीसारलक्षणं ॥

अरुणं फेनिलं रुक्षमल्पमल्पं मुहुर्मुहुः॥
शकृदामंसरुक्शब्दं मारुतेना तिसार्यते ॥ ६३॥

वातातीसारमा झाडा लाल होता है फेन आव रुक्षा होय थोडा होय वारंवार कबि आम आवे कबि शब्द होय ये वातातीसारके लक्षण ॥ ६३ ॥

पित्तातीसारलक्षणं ॥

पित्तात्पीतं नीलमालोहितंवा
तृष्णा मूर्छा दाह पाको पपन्नम्

पित्तातीसारमे मल पीला नीला किंवा किंचित लाल होता है तथा तृषा मूर्छा दाह औ गुदेका पकना ये लक्षण होते हैं

कफातीसारलक्षणं ॥

शुल्कं सांद्रं श्लेष्मणा श्लेष्मयुक्तं
विस्रंशीतं त्दृष्टरोमामनुष्यः॥ ६४॥

कफातीसारमे मल सफेद गाढा कफयुक्त तथा कच्चे मांस तुल्य दुर्गंध औ ठंडा होइ है उस मनुष्यके रोम खडे होय आया करतेहैं ६४

संनिपातातीसारलक्षणं ॥

वाराह स्नेह मासांबु सदृशं सर्व रूपिणं॥
कृछ्रसाध्यमतीसारं विद्याद्दोषत्रयोद्भवं ॥६५॥

संनिपातातीसारमे मल सुअरकी चरबी वा मांसके धोवन सदृश तथा पूर्वोक्त सर्व लक्षणयुक्त होता है इस अतीसारको कष्ट साध्य जानना ॥ ६५॥

शोकातीसारलक्षणं

तैस्तैर्भावैःशोचतोल्पाशनस्य बाष्पोष्मावैवन्हि माविश्यजंतोः ॥ कोष्ठंगत्वा क्षोभयेत्तस्य रक्तं तच्चाधस्तात्काकणंतीप्रकाशं॥ ६६ ॥ निर्गच्छेद्दै विड्विमिश्रंत्वविड्वानिर्गंधवा गंधव द्वाति सारः॥ शोकोत्पन्नो दुश्चिकित्सोति मात्रं रोगो वैद्यैःकष्ट एषप्रदिष्टः॥ ६७॥

जिस मनुष्यके पुत्र मित्र स्त्रीधनादिक इष्ट पदार्थका नाश भया होइ उसको उन पदार्थनका शोकते अल्पाहार करते जो बाष्प नेत्र नासिका गले इनके पानी आनेसे शोक होता सरीर गरम सरीरका तेज सो अग्न्याशयमे जाय के अग्नि मंद करि कोठेमे रहि रक्तको क्षोभित कर इधर उधर निकालने लगता हैं तब वह रक्त नीचेंको जाइके गुंजा फल तुल्य लाल गुदा मार्ग ह्वैके निकलता है॥ ६६ ॥ ऐसे मलसहित वा मलरहित दुर्गंध युक्त वा गंधरहित निकसता है इसको शोकातीसार कहते हैं यह वडी कठिनतासे आराम करनेको अशक्य है कारन कि इहां केवल औषधसे आराम करना ह्वै नही सकता जब शोक मिटैगा तब वह अतीसारभी मिटैगा ॥ ६७ ॥

अथामातीसारलक्षणं

अन्नाजीर्णात्प्रद्रुताःक्षोभयंतःकोष्ठंदोषाधातु संघान्मलांश्च॥नानावर्णैनैकशःसारयंति शूलोपेतं षष्ठमेनं वदंति॥ ६८ ॥

अमातीसार लक्षणं

जैसेकि अन्नके अजीर्ण होनेसे सर्वत्र फैले भए जो वातादिक दोष वै कोठेको खलबला ते हुए रसादिक धातू औ पुरीषादिक मलौंको गुदमार्गसे अनेक रंगौंके निकालते हैं पेटमे मरोड दैके मल निकलै यह अमातीसार है ॥ ६८ ॥

अथाम पक्व लक्षणमाह

संसृष्टमेभिर्दोषैस्तुन्यस्तमप्स्ववसीदति ॥
पुरीषं भृशदुर्गंधि पिच्छिलंचामसंज्ञितं ॥ ६९ ॥
एतान्येवतुलिंगानि विपरीतानि यस्यवै ॥
लाघवंच विशेषेण तस्यपक्वं विनिर्दिशेत् ॥ ७० ॥

अब कच्चे औ पक्के अतीसारके लक्षण

जैसेकि जो वातादि दोषचिन्ह कहे उनसे मिश्रित जलमे डारनेसे बूडि जाइ मल दुर्गंधयुक्त औ चिकना होइ सो आम संज्ञिक कहैं कच्चा है ॥ ६९ ॥ तथा जिसके लक्षण उलटे होइ मलपानी पै उतराइ दुर्गंध चिकना न होइ विशेष कर सरीर तथा कोठेमे हलकापन होइ उसको पक्वातीसार कहते हैं ॥ ७० ॥

अथासाध्यलक्षणं

पक्वजांबवसंकाशं यकृत्पिंडनिभं तनुं ॥
घृत तैलवसा मज्जा बेसवार पयोदधि ॥ ७१ ॥
मांसधावनतोयाभं कृष्णंनीलारुणप्रभम् ॥
मेचकं कर्बुरं स्निग्धं चंद्रकोपगतं घनम् ॥ ७२ ॥
कुणपं मस्तु लुंगाभं सगंधं कथितं बहु ॥

तृष्णा दाह भ्रम श्वास हिक्कापार्श्वास्थि शूलिनं॥ ७३॥
संमूर्छारति संमोह युक्तं पक्वली गुदम्॥
प्रलापयुक्तंच भिषग्वर्जयेदतिसारिणम् ॥ ७४ ॥
अन्यच्च॥ असंवृत गुदं क्षीणं दुराध्मानमुपद्रुतम्॥
गुदेपक्के गतोष्माण मतीसारिण मुत्सृजेत्॥ ७५ ॥

अब असाध्य लक्षण

जैसे पका जामुनका फल तैसा रंग औ यकृतके पिंडतुल्य याने काला लाल मिश्रित तथा स्वच्छ थोडा घृत तेल बसायाने चरबी मज्जायाने हाडके भीतरका गूद्दा वेसवार याने पानीमे पीसा भया गरम मसाला दूध दही॥ ७१॥ मांसका धोवन काला औ नीला लाल रूखा काला धूमाकार कवरा चिकना मोरपंषके चंदो वनसो चित्रित गाढा ॥७२॥ सडे मुर्दोके गंध तुल्य माथेके भीतर मगजके तुल्य सोभी दुर्गंध पीव तुल्य बहुत ऐसा जिसका मल होइ तथा प्यास दाह भ्रम श्वास हुचकी पसुली औ हाडोंमे शूल ॥ ७३॥ मूर्छा मोह याने कार्याकार्यमे अज्ञान अचैन गुदा पका भया बडबड करे ऐसे अतीसारवालेको औषध न करना ॥ ७४॥ जिसका गुदा फैल गया वंद नहोइ क्षीण होइ पेट फूला रहै अतीसारके उपद्रव युक्त होइ गुदाके पकनेसे सरीरकी उष्णता रहित होइ ऐसे अतीसारवालेको दवा न देना॥ ७५॥

अथातिसारस्योपद्रवानाह

तृष्णादाहो रुचिः शोथः पार्श्वशूलो रतिर्वमिः॥
गुदपाकः प्रलाप श्वाध्मानंच श्वासकासकौ॥ ७६॥
मूर्छा रोधोमदः शूलं बहुवेगो ज्वरस्तथा॥

एतैरुपद्रवैर्जुष्ट मतीसारिण मुत्सृजेत्॥ ७७॥

अब अतिसारके उपद्रव कहते हैं

प्यास दाह अरुचि शोथ पसुलिनमे शूल अचैन वांति गुदाका पकना वडवड वकना पेट फूले श्वास कास ॥ ७६॥ मूर्छा मलमूत्र रुकि रुकिके होना न सासो चढा रहे शूल औ ज्वरकी प्रवलता ऐसे अति सारवालेकी औषधन करना असाध्यहे ॥ ७७॥

रक्तातिसारमाह

पित्तकृंति यदात्यर्थं द्रव्याण्यश्नातिपैत्तिके॥
तदोपजायतेऽभीक्ष्णं रक्तातीसार उल्वणम् ॥ ७८॥

अब रक्तातिसार

जव मनुष्य पित्तातिसारमे पित्तकारक वस्तु अतिसे खाताहै उसके खानेसे रक्तातिसार उत्पन्न होता है ॥ ७८ ॥

अथ प्रवाहिकामाह

वायुः प्रवृद्धो निचितं वलासं नुदत्यधस्तादहिता शनस्य ॥ प्रवाहतोल्पं वहुशो मलाक्तं प्रवाहिकां तांप्रवदंति तज्ज्ञाः॥ ७९॥ अथास्या वातादिभेदेन रूपाण्याह ॥ प्रवाहिका वातकृतास शूला पित्तात्सदाहा सकफा कफाच्च॥ सशोणिताशोणित संभवाच्चताःस्नेहरूक्ष प्रभवामतास्तु॥ तासामती सारवदादिशेच्च लिंगं क्रमंचाम विपक्कतांच॥ ८० ॥

अब प्रवाहिका कहते हैं

अहित पदार्थोंके सेवन करणेसे संचितभया जो कफ उस कफको

प्रमाणसे बढा भया वायु नीचे कोठे लेता है जब वह रोगी थोडासा कांपता है बहुतसा मल कफको वायु गिरा देता है ऐसे वारंवार होता है इसको प्रवाहिका कहते हैं ७९ अब इसको वातादि भेदों करिके रूप कहते हैं. वातजन्य प्रवाहिका शूलयुक्त होती है पित्तज दाह युक्त कफ जन्य कफयुक्त होती है तथा रक्तजमे रक्तयुक्त होती है उनकी उत्पत्ति अति रूक्ष अति स्निग्ध पदार्थ सेवनसे होती है इनके लक्षण क्रम औ पक्कापक्क भेद अतीसारके समान जानना ॥ ८० ॥

यस्योच्चारं विना मूत्रं सम्यग्वातश्च गच्छति॥
दीप्ताग्नेर्लघु कोष्ठस्य स्थितस्तस्यो दरामयः॥ ८१ ॥

॥ इतिश्री रु० अतिसार निदानं ॥ २ ॥

अवगत अतीसारके लक्षण

जिसको मल निकलेबिना लघु शंका साफ होइ औ अधो वायु भी खुलासा होइ अग्नि प्रदीप्त औ कोठा हलका होय उसका अतीसार गया ऐसा जानना ॥ ८१ ॥ इतिश्री मत्सु० सी०प० र० प्र० वि० रु० दी अतीसार निदान प्र०

अथ ग्रहणी निदानं

तत्र संप्राप्तिमाह॥ अतीसारे निवृत्तेपि मंदाग्नेरहिताशिनः॥ भूयः संदूषितो वन्हिर्ग्रहणीमभिदूषयेत्॥ १ ॥

अबग्रहणीका निदान

प्रथम संप्राप्ति कहैं है जैसेकि अतिसार निवृत्त भयेपर अथवा मध्यहीमे जो मंदाग्निवाला पुरुष अहित पदार्थोंका सेवन करै तौ उस आहार करिके अग्नि दूषित ह्वैके ग्रहणीको दूषित करता है ग्रहणी जो

पक्काशय आमाशयके बीचमे एक अन्नग्रहण करनेकी आंत है उसको कहते हैं ॥ १ ॥

अथतस्याः संख्या संप्राप्तिपूर्वक सामान्यलक्षणमाह

एकैकशाः सर्वशश्च दोषैरत्यर्थ मूर्छितैः ॥
सादुष्टा बहुशोभुक्त मामभेव विमुंचति ॥ २ ॥
पक्कं वासरुजं पूति मुहुर्बद्धं मुहुर्द्रवम् ॥
ग्रहणी रोग माहुस्त मायुर्वेद विदोजनाः ॥ ३ ॥

अब इसके संख्या औ संप्राप्तिपूर्वक सामान्य लक्षण कहते हैं एक एक दोषसे ३ संनिपातसे १ एसे इन अति बढे भए दोषौं करिके दुष्ट भई ग्रहणी खाए भये आहारको कच्चाही बहुतसा निकासि देती है ॥ २ ॥ अथवा पीडा औ दुर्गंध सहित पकेकोभी कधी बंधा औ कधी पतला गिराइ देती है उसको आयुर्वेदके जाननेवाले ग्रहणी रोग कहते हैं ॥ ३ ॥

अथास्याः पूर्व रूपं

पूर्वरूपंतु तस्येदं तृष्णालस्यं बलक्षयः ॥
विदाहो न्नस्यपाकश्च चिरात्कायस्य गौरवं ॥ ४ ॥

ग्रहणीके पूर्वरूपमे तृषा आलस बलका नास दूषिताग्नित्वके सबबसे अन्नका दग्ध होना औ देरमे पचना औ शरीरमै गरुई ये लक्षण होत हैं ॥ ४ ॥

वातग्रहणीमाह

कटु तिक्त कषायाति रुक्ष शीतादि भोजनैः ॥
प्रमिता नशना त्यध्व वेग निग्रहमैथुनैः ॥ ५ ॥

मारुतः कुपितो वन्हिमाच्छाद्यकुरुते गदान् ॥
तस्यान्नं पच्यतेदुःखं सूक्तपाकं खरंगता ॥ ६ ॥
कंठास्य शोषोक्षु तृष्णा तिमिरं कर्णयोः स्वनः ॥
पार्श्वोरु वंक्षण ग्रीवा रुगभीक्ष्णं विषूचिका ॥ ७ ॥
हृत्पीडा कार्श्यदौर्बल्ये वैरस्यं परिकर्तिका ॥
गृद्धिः सर्वरसानांच मनसः सदनंतथा ॥ ८ ॥
जीर्णेजीर्यति चाध्मानं भुंक्ते स्वास्थ्यमुपैतिच ॥
सवात गुल्म हृद्रोगप्लीहा शंकीच मानवः ॥ ९ ॥
चिराद्दुःखं द्रवंशुष्कंतन्वामं शब्दफेनवत् ॥
पुनः पुनः सृजेद्वर्चः कास श्वासार्दितोऽनिलात् ॥ १० ॥

अब वातजग्रहणी कहते हैं

जैसेकि कटुक तिक्त औ कषेले रूखे ठंडे पदार्थका षाना तथा थोरो भोजन अति उपवास बहुत रस्ता चलना मूत्रादिकौंका रोकना अति मैथुन ॥ ५ ॥ इनसे कुपित वायु जठराग्नि मंद करिके रोग उत्पन्न करता है वातज ग्रहणी होनेको होती है उसको अन्न बडे दुःखसे पचता है औ पाक खट्टा होता है अंग कर्कश ॥ ६ ॥ कंठ मुख सूखना भूष न लगना तथा प्यास न लगना तिमिर रोग याने दृष्टि मंद कानौंमे शब्द होना पसुरी छाती तथा जांघके उपर जोडमे गरदनमे वारंवार पीडा विषूचिका उलटी दस्तसे अन्न निकल जावे ॥ ७ ॥ हृदेमे पीडा खांसी दुर्बलता मुखकी विरसता गुदामे कतरने सरीसी पीडा सर्व मधुरादिक

रसौंकी इच्छा मनकी ग्लानि॥८॥अन्नके पाकसमै पचे परभी पेठ फुला रहै षानेसे सुख होना इस रोगमे वातगुल्म हृद्रोग प्लीहाकी संका मनुष्य करते हैं ॥ ९ ॥ इससे उनही रोगौंके समान पीडा रहती है बडे दुषसे तथा बडी देरमे कभी पतला कभी सूषा थोडा औ फेन तथा शब्द सहित वारंवार मल गिरता है वह मनुष्य वायुसे कास श्वाससे दुषी होता है ॥ १० ॥

पित्तग्रहणीमाह

कट्वजीर्णविदाह्यम्लक्षाराद्यैः पित्तमुल्बणं॥
आप्लावयन्हंत्यनलं तप्तं जलमिवानलम्॥ ११ ॥
सो जीर्णं नीलपीताभं पीताभः सर्पतेद्रवम्॥
पूत्यम्लोद्गारहृत्कंठदाहारुचितृडर्दितः॥ १२ ॥

पित्तग्रहणी कहै हैं

सोठ इत्यादिके अति खानेसे अजीर्णसे दाहकारक पदार्थ खटाई षार बढा भया पित्त जैसे गरम जल अग्निको बुझाता है तैसे जठराग्निको बुझाता मंद करता है तव पीला पडजाता है ११ अन्न पचा ओ नीला पतला ऐसा मल हगता है औ बहधुवैं धीडकार हृदेमे कंठका दाह अरुचि औ पियाससे पीडित होता है ॥ १२ ॥

अथ कफग्रहणीमाह

गुर्वतिस्निग्धशीतादिभोजनादतिभोजनात्॥
भुक्तमात्रस्यच स्वप्नाद्धंत्यग्निं कुपितः कफः॥ १३ ॥
तस्यान्नं पच्यते दुःखं हृल्लासश्छर्द्यरोचकाः॥
आस्योपदेहमाधुर्यकासष्ठीवनपीनसाः॥ १४ ॥

हृदयं मन्यते स्त्यान मुदरं स्तिमितंगुरु॥
दुष्टो मधुर उद्गारः सदनं स्त्रीष्वहर्षणम्॥ १५॥
भिन्नामश्लेष्म संसृष्टं गुरुवर्चः प्रवर्तनं॥
अकृशस्यापि दौर्बल्य मालस्यंच कफात्मके॥ १६॥

कफ ग्रहणी

उडद इत्यादिक सेवन ते अति स्निग्ध अति ठंढे इत्यादिकौंके खानेसे अति भोजनसे भोजनसे तुरत सोनेसे कफकोप करिके जठराग्निको मंद करता है॥ १३॥ तब उसको अन्न बहुत देरमे पचता है तथा पंछा वांति अरुचि मुष कफसेलिपा सरीषा मीठा कास थुक थुकी पीनस याने नाकसे कफ गिरना॥१४॥ हृदेमे जैसे कुछ पतला पदार्थ भरा होइ ऐसा मालूम होना पेट भीजा सरीषा वावंधा सरीषा गुम औ भारी डकार षराब औ मीठा अंग शिथिल मैथुन इछाका अभाव॥१५ भिन्न याने फुटा भया आंव औ कफ इन करिके मिला भया औ भारी एसे मलका गिरना सरीर पुष्ट है तोभी दुर्बलता देषनेमे पुष्ट औ चेष्टामे अशक्त सर्व कामोंमे आलसीपना कफजन्य ग्रहणीरोगके ये लक्षण हैं॥ १६॥

अथ संनिपात ग्रहणीमाह

पृथग्वातादि निर्दिष्ट हेतु लिंग समागमे॥
त्रिदोषं लक्षयेदेवं भिषग्बुध्या विचक्षणः॥ १७॥

संनिपात ग्रहणी कहते हैं

जो वातादिक दोष ग्रहणीके लक्षण कहे उन सबके एकत्र होनेको त्रिदोष ग्रहणी कहते हैं॥ १७॥

अथ ग्रहणी गदभेद संग्रहणी गदमाह

द्रवं घनं सितं स्निग्धं सकटी वेदनं शकृत् ॥
आमं बहु सपैछिल्यं सशब्दं मंद वेदनं ॥ १८ ॥
पक्षान्मासाद्दशाहाद्वा नित्यं वापि विमुंचति ॥
अंत्रकूजन मालस्यं दौर्बल्यं सदनं भवेत् ॥ १९ ॥
दिवा प्रकोपो भवति रात्रौ शांतिंच गच्छति ॥
दुर्विज्ञेया दुर्निवारा चिरकालानुबंधिनी ॥
साभवेदामवातेन संग्रह ग्रहणी मता ॥ २० ॥

अब ग्रहणीका भेद संग्रहणी

इस संग्रहणीमे पतला गाढा सफेद चिकना कमर पीड़ायुक्त मल तथा बहुत आम अति चिकना शब्दयुक्त औ पीडा कम ॥ १८ ॥ ऐसे पंद्रह दिनके महीना वा दस दिनसे अथवा नित्यही झाडा होता है जिसमे आंतौका गूंजना आलस दुर्बलता शिथिलता ये चिन्ह हैं ॥ १९ ॥ दिनको कोप रातिको शांति याने दिनको बहुत झाडे रातिको बंद यह रोग समुझनेसे निवारण करनेसेभी कठिन आता है क्योंकि बहुत दिनौका है या आमवातसे होता है कुछ दिन संग्रह करिके मलको निकासती है इस वास्ते संग्रहणी कहते है ॥ २० ॥

ग्रहण्या एव भेदं घटी यंत्राख्य रोगमाह

प्रसुप्तिः पार्श्वयोः शूलं तथा जलघटी ध्वनिः ॥
तं वदंति घटी यंत्र मसाध्यं ग्रहणी गदं ॥ २१ ॥
यैर्लक्षणैः स्त्रियतिना तिसारस्तैः स्यादसाध्यो ग्र

हणी गदोपि ॥ वृद्धस्य जायेत यदागदोयं देहस्तदा तस्यति नाशमेति ॥ २२ ॥

इति रुग्विनिश्चये ग्रहणी निदानं ॥ ३ ॥

ग्रहणीभेद घटीयंत्र कहते हैं

ग्रहणीमे नींद बहुत पसुलि यां दूखें झाडेमे जैसे पानीका घडा ढोला होइ ऐसा पतला दस्त सहित उसको घटीयंत्र रोग कहते हैं॥२१॥ इस ग्रहणीके साध्यासाध्य लक्षण अतीसार तुल्य जानना वृद्धको भई ग्रहणी मरणकारक है ॥ २२ ॥ इति श्रीमत्सु० सी० आ० पं० र० प्र० वि० रुग्विग्रहणी निदान प्रकाशः ॥ ३ ॥

अथार्शो रोग निदानं

पृथग्दोषैः समस्तैश्च शोणितात्सहजानिच॥
अर्शांसि षट् प्रकाराणि विद्याद्गुदवलित्रये॥ १ ॥

अथास्य संप्राप्ति पूर्वक रूपमाह

दोषा स्त्वङ्मांस मेदांसि संदूष्य विविधाकृतीन्॥
मासांकुरा नपानादौ कुर्वंत्यर्शांसितान्जगुः॥ २ ॥

अब अर्श रोग याने ब वासीर कहेत हैं न्यारे न्यारे तीनो दोष मिलिके तथा रक्तसे औ सहज ऐसे गुदाके तीनो चक्रोंपर अर्श रोग होता है ॥ १ ॥ अब संप्राप्ति पूर्वक लक्षण त्वचा मांस औ मेदको दूषित करिके वातादिक दोष अनेक प्रकारके मासके अंकुरोंकी गुदा इत्यादिमे उत्पन्न करते हैं उन अंकुरोंको अर्श कहते हैं गुदा इत्यादिक कहनेसे नासिकार्शकाभी बोध भया ॥ २ ॥

वातार्शो निदानमाह

कषाय कटु तिक्तानि रूक्षशीत लघूनिच॥

प्रमिताल्पाशनं तीक्ष्णं मद्यं मैथुनसेवनम् ॥ ३॥
लंघनं देश कालौच शीतौ व्यायाम कर्मच ॥
शोका वातातपस्पर्शो हेतुर्वातार्शसांमतः ॥ ४॥

अब वातसंबंधी ववासीर कहैं हैं

कसैला कटुक तिक्त रुषा ठंढा हलका प्रमानसे थोरा ऐसा आहार तथा तीक्ष्ण मदिरा याने आटेकी वनी भई सुरा दारु तिसका पीनां अति मैथुन ॥ ३ ॥ लंघन ठंढे देश औ कालकसरति इत्यादि परिश्रम शोक पवन धूपका स्पर्श जिसको लूवलगना कहते हैं ये वातार्श कारण हैं ॥ ४ ॥

अथ पित्तार्श निदानं

कट्वम्ललवणोष्णाति व्यायामोग्न्या तपप्रभाः ॥
देश कालाव शिशिरौ क्रोधो मद्यमसूयनं ॥ ५॥
विदाहि तीक्ष्ण मुष्णंच सर्वं पानान्न भेषजं ॥
पित्तोल्बणानां विज्ञेयः प्रकोपे हेतुरर्शसां ॥ ६ ॥

अब पित्तार्श कहैं हैं

कटुक अम्ल लवणा उष्ण पदार्थ कसरत अग्नि औ घामका तेज उष्ण देश तथा काल क्रोध मद्यपान परा ये सुषको देष सहन न करना ॥ ५ ॥ दाहकारक तीक्ष्ण उष्ण पीनेसे षानेसे औषध सेवन सर्व पित्त संबंधी अर्शकी उत्पत्तिकारक हैं ॥ ६ ॥

अथ कफजार्शो निदानं

मधुर स्निग्ध शीतानि लवणा म्लगुरूणिच ॥
अव्यायाम दिवास्वप्न शय्यासन सुखेरतिः ॥ ७॥

प्राग्वात सेवा शीतौच देशकालावचिंतनं ॥
श्लेष्मिकाणां समुद्दिष्ट मे तत्कारण मर्शसां ॥ ८ ॥

कफजन्य अर्शका निदान कहते हैं

मधुर स्निग्ध ठंढेलो न षटाई जड पदार्थ मेहनत किये बिना बेठे रहना दिनका सोना बहुत पडे रहना वा बैठ रहता ॥ ७ ॥ पूर्व दिसाका पवनसे वन ठंढे देश औ काल बेफिकरी ये सर्व कफार्श होनेका कारण हैं ॥ ८ ॥

अथ द्वंद्व संनिपातजार्शः कारणं

हेतु लक्षण संसर्गाद्विद्याद्दं द्वोल्बणानिच ॥
सर्वो हेतु स्त्रिदोषाणां सहजैर्लक्षणैः समं ॥ ९ ॥

अब द्वंद्वज संनिपातज अर्शके निदान जिस अर्शमे दो दोष मिश्रित लक्षण मिले तो द्वंद्वज औ त्रिदोष लक्षणसे त्रिदोषज सहजार्शके जो लक्षण है उन लक्षणो करिके युक्त त्रिदोषजन्य अर्श होता है ॥ ९ ॥

अथ पूर्वरूप माह

विष्टंभोंगस्य दौर्बल्यं कुक्षे राटोप एवच ॥
कार्श्यं मुद्गार बाहुल्यं सक्थि सादोल्पविट्कता॥१०॥
ग्रहणी दोष पांड्वार्ति राशंका चोदरस्यच ॥
पूर्व रूपाणि निर्दिष्टा न्यर्शसा मभि वृद्धये॥ ११ ॥

अब अर्शका पूर्वरूप कहते हैं

झाडा कबज अंगकी दुर्बलता को खोंका फूलना शरीर कृश डकार बहुत जांघोकी शिथिलता मलकी अल्पता ॥१०॥ तथा संग्रहणी पांडु इनसरीखी पीडा उदर रोगकी शंकाअर्ष रोगकी उत्पत्तिके वास्ते ये पूर्वरूप है ॥ ११ ॥

अथ वातार्शो लक्षणं

गुदांकुरा बह्वनिलाः शुष्काश्चिमि चिमान्विताः॥
म्लानाः श्यावारुणाः स्तब्धा विपदाः परुषा खराः १२
मिथो विसदृशा वक्रा स्तीक्ष्णा विस्फुटिता ननाः॥
बिंबी कर्कंधु खर्जूर कार्पासीफल संनिभाः॥ १३॥
केचि त्कदंब पुष्पाभाः केचित्सिद्धार्थ कोपमाः॥
शिरः पार्श्वां सकट्यूरू वंक्षणाभ्य धिकव्यथाः॥१४॥
क्षवथू द्गार विष्टंभ त्द्धृहा रोचकप्रदाः॥
कास श्वासाग्नि वैषम्य कर्णनाद भ्रमावहाः॥ १५॥
तैरार्तो ग्रथितं स्तोकं सशब्दं सप्रवाहिकं॥
रुक फेन पिच्छानुगतं विबद्ध मुपवेश्यते॥ १६॥
कृष्णत्वङ्‌ नख विण्मूत्र नेत्र वक्त्रश्च जायते॥
गुल्म प्लीहोदरा ष्ठीला संभवस्तत एवच॥ १७॥

वातार्शके लक्षण

वाताधिक गुंदाकुर गुदामे मासके अंकुर मस्से वै सुषे चिम चिमे याने जैसे सरसौ राई लगानेसे चिमचिमाहट होता है तैसी वेदनायुक्त म्लान याने कुह्मिला ये भए धूसर लाल मिश्रित रंगके स्तब्ध याने कठिन विसदृश याने चिकटई रहित कर्कश खरखरे॥ १२॥ कोई छोटे कोई वडे टेढे तीक्ष्ण याने नोकदार जिनके मुषफटे भए तथा कुंदरू वेर खजूर औ कपास इनके फलौंके सरीखे॥ १३॥ कोई कदंबके फुलसे कोई सफेद सरसोके सदृश तथा सिर पसुरी कंधे कमर जांघै

औ जो कमरकी संधि इनमे अधिक पीडा करनेवाले ॥ १४ ॥ तथा छीकडकार मलका अवरोध हृदयका जकडना अरुचि कास श्वास जठराग्निकी विषमता कर्णनाद औ भ्रमके प्राप्तकरनेवाले ॥ १५ ॥ इनमे सौं करिके पीडित मनुष्य गांठि गांठिसी बधा भया थोडा शब्द सहित वात प्रवाहिका चिन्ह सहित पीडा ओ फेना युक्त तथा जिसके पीछेसे पतला मांडसा निकले ऐसा औ बंधा भया मलका त्याग करता है ॥ १६ ॥ तथा त्वचा नख विष्ठा मूत्र नेत्र औ मुष ये उसके काले होते हैं इस रोगमे गुल्म प्लीहा उदर औ अष्ठीला याने जो नाभिके नीचे पत्थर सरीखी वायुकी गांठि होती है ये रोग होते हैं इनको वातार्शके उपद्रव जानना ॥ १७ ॥

अथ पित्तार्श लक्षणं

पित्तोत्तरा नीलमुखा रक्त पीता सितप्रभाः ॥
तन्व स्रस्राविणो विस्रास्तनवो मृदवः श्लथाः ॥ १८ ॥
शुक जिह्वा यकृत्खंड जलौका वक्र संनिभाः ॥
दाह पाक ज्वरस्वेद स्तृण्मूर्छा रति मोहदाः ॥ १९ ॥
सोष्माणो द्रव नीलोष्ण पीत रक्ताम वर्चसः ॥
यवमध्या हरित्पीत हारिद्रत्वङ्नखादयः ॥ २० ॥

अब पित्तार्शके लक्षण

जिस अर्शमे पित्त अधिक होई उसके मसे नीले मुषके तथा लाल पीले अथवा काले होते हैं औ उनसे पतला रक्त पडता है कच्चे मास सरीषी वासवाले पतले कोमल शिथिल ॥ १८ ॥ आकारमे सुवा

की जीभ सरीखे किंवा यकृतके टुकडे सरीषे वा जोकके मुषके सदृश होते हैं तथा ए उपद्रवभी करते हैं दाह पाक ज्वर पसीना प्यास मूर्च्छा अरुचि औ मोह ॥ १९ ॥ हाथ लगानेसे गरम लगते है पतला नीला गरम पीला लाल आम याने कच्चा ऐसा मल होता है वैमसे मध्यमे जब सरीषे ऊपर नीचे पतले तथा उन रोगीयों के हरे हरतालके वा रंग हरदीके रंगके समान चर्म नख नेत्र इत्यादिक होते हैं ॥ २० ॥

कफार्श लक्षणं

श्लेष्मो ल्बणा महामूला घनामंद रुजः सिताः ॥
उत्सन्नो पचिताःस्निग्धाःस्तब्धा वृत्तगुरु स्थिराः॥ २१॥
पिच्छिला स्तिमिताःश्लक्ष्णाःकंड्वाढ्याःस्पर्शनप्रियाः॥
करीरपनसास्थ्याभा स्तथा गोस्तन संनिभाः ॥ २२ ॥
वंक्षणा नाहिनः पायुवस्ति नाभ्यव कर्षिणः॥
सकास श्वास ल्हल्लास प्रसेका रुचि पीनसाः॥ २३ ॥
मेह कृच्छ्र शिरोजाड्य शिशिर ज्वर कारिणः॥
क्लैव्याग्निमार्दव छर्दिराम प्रायविकारदाः॥ २४ ॥
वसा भास कफप्राय पुरीषाः सप्रवाहिकाः॥
नस्रवंति नभिद्यंते पांडुस्निग्ध त्वगादयः॥ २५ ॥

कफज अर्श

अर्शमे जो मसे होते हैं वै महामूलक हैं उनकी जड गहिरी होती है नजीक एकसे एक मिले मंद वेदनायुक्त सफेद ऊंचे औ चौंडे जास्ती स्तब्ध याने कठिन औ चिकने गुलगुले वृत्त गोल गुदापर वजन होइ ऐसे भारी लगें है ॥ २१ ॥ पिछिल याने चिपचिपित स्तिमितभी जे

श्लक्ष्ण एकसे खजलीयुक्त छूना अच्छा लगे आकारमे करीरके फल औ कटहरके बीज समान गोस्तन सदृश ॥ २२ ॥ वंक्षण जांघकी औ पेटकी संधि तिसके जकडनेवाले तथा गुदा पेडु औ नाभिके आकर्षण करनेवाले इनके उपद्रव जैसेकि कास श्वास उबकाई लार गिरना अरुचि पीनस ॥ २३ ॥ प्रमेह मूत्र कृच्छ्र शिरका जकडना शीतज्वर नपुंसकता मंदाग्निता वांति तथा आम प्राय विकार जो अतीसारादिक इन रोगोंके करनेवाले ॥ २४ ॥ औ चर्वी सरीषा कफ मिला भया मलका कफ प्रवाहिका युक्त न वैस्रवैं याने उनमेसे रक्तादिकभी नही गिरता है औ न फटते हैं याने कठिन मल उतरनेसेभी फटते नहीं इस रोगिके त्वचा नख सफेद होते हैं ॥ २५ ॥

अथ संसर्ग संनिपातार्शो लक्षणं

संसर्गलिंगाः संसर्गाद्भवंतिहि द्विदोषजाः ॥
सर्वैः सर्वात्मका न्याहुर्लक्षणैः सहजानिच ॥ २६ ॥

अव संसर्गज याने द्वंद्व संनिपातज अर्श जैसेकि जिनमे दोदो दोषौंके चिन्ह मिलैं वै द्वंद्वज औ जिनमे सर्व चिन्ह मिलैं वे संनिपातज हैं ऐसा जानना तथा सहजार्शभी संनिपात तुल्यही होते हैं ॥ २६ ॥

अथ रक्तार्शो लक्षणं

रक्तोल्बणा गुदेकीलाः पित्ताकृति समन्विताः ॥
वटप्ररोह सदृशा गुंजा विद्रुम संनिभाः ॥ २७ ॥
तेत्यर्थं दुष्टमुष्णंच गाढविट्क प्रपीडिताः ॥
स्रवंति सहसारक्तं तस्य चाति प्रवृत्तितः ॥ २८ ॥
भेकाभः पीड्यते दुःखैः शोणित क्षय संभवैः ॥

हीनवर्ण बलोत्साहो हतौजाः कलुषेंद्रियः॥ २९ ॥
विट्श्यावं कठिनं रूक्ष मधो वायुर्न गच्छति॥ ३०॥

अब रक्तजन्य अर्श रक्ताधिक व वासीरके मस्से हैं वे पित्त ववासीरके मसोंके समान होतेहैं वटकी जटाके अग्रमे जैसे टुंनगे होतेहैं वैसे घुंघची मूंगा इनके समान ॥ २७ ॥ वैमसे अति कठिन मल निकलनेसे पीडित ह्वैके दूषित औ गरम रक्त छोडते हैं उस रक्तके अति निकलनेसे मनुष्य ॥ २८ ॥ मेडुका सरीषा पीला तथा रक्त क्षयजन्य दुखसे पीडित होता है जब उसका वर्ण बल उत्साह औ तेज नष्ट ह्वै जाता है सर्वेंद्रिय शक्तिरहित होती हैं ॥ २९ ॥ तब उसका मल धूसर कठिन औ रूखा होता है अधो वायुभी नही निकलता है ॥ ३० ॥

अथास्य रक्तार्शो निदानस्य वातादि भेदेन लक्षणं

तनुचारुणवर्णंच फेनिलंचा सृगर्शसां॥
कट्यूरुगुद शूलंच दौर्बल्यं यदि वाधिकं॥ ३१ ॥
तत्रानु बंधो वातस्य हेतुर्यदिच रुक्षणम्॥ ३२॥

रक्तार्श निदान वातादि भेदसे अर्श रोगका पतला रक्त लाल फेन युक्त तथा कमर जांघे गुदामे शूल अधिक दुर्बलता होइ ॥ ३१ ॥ तौ वातसंबंधी रूखा पदार्थ हेतु जानना ॥ ३२ ॥

अब कफानुबंधी रक्तार्श लक्षणं

शिथिलं श्वेत पीतंच विट् स्निग्धं गुरु शीतलं॥
यद्यर्शसां घनंचा सृकूतं तुम त्पांडुपिच्छिलम्॥ ३३॥
गुदंस पिच्छं स्तिमितं गुरु स्निग्धंच कारणं

श्लेष्मानुबंधो विज्ञेय स्तत्र रक्तार्श सांबुधैः॥ ३४॥

अब कफसंबंधी रक्तार्श लक्षण

रक्तार्श बालेका मल शिथिल सफेद मिश्रित पीला स्निग्ध भारी ठंढा होइ रक्त गाढा बीचबीच डोरा सरषे तंतू पांडुवर्ण औ चिकना॥३२ गुदा औ चिम चिम औ स्थिर होइ तहां कारणभी जड पदार्थ औ चिकने होइ तिस रक्तार्शमे कफका संबंध जानना पित्त संबंधी रक्तार्श क्योन कहा तहां कहते हैं कि रक्त औ पित्तके समान लक्षण प्रथमही कहा रक्तार्शके लक्षण पित्तार्शके समान है इसते न कहा॥ ३४॥

ननु गुद देश दुष्ट्या गुदजस्योत्पादना त्कथं॥
सर्व देहे कृशत्वादि रूपा दृष्टि रित्याह॥
पंचात्मा मारुतः पित्तं कफो गुदवलित्रये॥
सर्व एव प्रकुप्यंति गुदजानां समुद्भवे॥ ३५॥
तस्मादर्शांसि दुःखानि बहु व्याधि कराणिच॥
सर्व देहोपतापी निप्रायः कृच्छ्र तमानिच॥ ३६॥

अहो गुदा मात्र दूषित होनेसे गुदरोग होना चाहिए सर्व देहमे कृशत्व इत्यादिक क्यों होत है तहां कहते हैं के पंचात्मा वायु पंचात्मा पित्त पंचात्मा कफ ये तीनो पांच पांच प्रकारके हैं ये सर्व अर्शकी उत्पत्तिमे गुदाके तीनौ चक्रमे कुपित होते हैं ये तीनौ सर्व देहमे रहते हैं इस वास्ते अर्श रोग सर्व देहमे अनेक रोगौंको करनेवाले दुषदायक औ सर्व देहके तपानेवाले तथा बहुधा करिके कष्ट साध्य हैं॥ ३५॥ वातादिक पांच पांच प्रकारके कहे उनका खुलासा यह कि प्राण अपान व्यान उदान समान भेदसे वायु पांच प्रकारका तिनके स्थान औ कर्मयेकि॥ ३६॥

हृदिप्राणो गुदेपानः समानो नाभि संस्थितः॥
उदानः कंठ देशेच व्यानः सर्व शरीरगः॥ ३७॥

हृदेमे प्राण गुदामे अपान नाभिमे समान कंठमे उदान सब सरीरमे व्यान प्रथम प्राणकर्म कहते हैं॥ ३७॥

यो निलो वक्त्र संचारी सप्राणो नाम देह धृक्॥
सोन्नं प्रवेश ये दंतः प्राणांश्चैवावलंबते॥
कुपितः कुरुते चापि हिक्का श्वासादिकान् गदान्॥ ३८

अर्थ—जो वायु मुषसे संचार करता वोही देह धारक प्राण है वोही अन्नकोभी आधार देता है कुपित होनेसे हुचकी श्वास होती है॥ ३८॥

उदानो नाम यस्तूर्ध्व मुपैति पवनोत्तमः॥
तेन भाषित गीतादि विशेष श्चाभि वर्तते॥
ऊर्ध्व जत्रुगतान् रोगान्करोति कुपितश्चसः॥ ३९॥

अर्थ—उदान वायु ऊर्ध्व प्राप्त होता है बोलना गाना इनको करता है कुपित उदान वायु जत्रुके ऊपर मुषादिकमे रोग करता है ३९

आम पक्वाशयचरः समानोग्नि सहायवान्॥
अन्नं पचति तज्जांश्च विकारान् प्रव्य नक्तिसः॥
गुल्माग्नि सादाती सारान् प्रणश्च करोतिसः॥ ४०॥

अर्थ—जो समान नामका वायु आमाशय औ पक्वासयके बीचमे रहता है सो अग्निका सहायक अन्न पचाइ रस मूत्रादि मलोंका न्यारे न्यारे करता है कुपित होनेसे गुल्ममंदाग्नि अतीसार ये रोग पैदा करता है॥ ४०॥

पक्काशयाश्रयो पानः कालेकर्षति चाप्यधः॥
वातमूत्र पुरीषाणि शुक्र गर्भार्तवाणिच॥
क्रुद्धश्च कुरुते रोगान् घोरान् बस्ति गुदाश्रयान॥४१॥

अर्थ—जो अपान वायु पक्काशयमे रहिके समै समैपर वातमूत्र मलवीर्य गर्भ औ रज इनको नीचेके तरफ खैंचिके काढता है सो कुपित भया तौ बस्ति याने पेडू औ गुदासंबंधी घोर रोग पैदा करे॥४१॥

सर्व देह चरोव्यानो रस संवाहनोद्यतः॥
स्वेदास्रक् स्रावण श्चायं पंचधा चेष्ट यत्यपि॥४२॥
क्रुद्धश्च कुरुते रोगान् प्रायशः सर्व देहगान्॥

अर्थ—जो व्यान नाम वायु है सो सर्व देहमे संचार करनेवाला पसीना औ रक्तकाभि चलानेवाला तथा पंच प्रकारसे यहि चेष्टा करता है जो कुपित होता है तौ बहुधा सर्व देहमे रोग करते है॥४२॥

शुक्रदोषान् प्रमेहांश्च ध्मानापान प्रकोपजान्॥
युगपत् कुपिताश्चामी देहं हन्युर संशयं॥४३॥

अर्थ—शुक्र दोष प्रमेह व्यान अपानके कोपसे होते है जो ये पांचौ कुपित होइ तो निश्चै देहका नाश करै॥४३॥

इति पंचात्मको वायु रुक्तकार्य करोभवेत्॥
रजो गुणमयः सूक्ष्मः शीतो रूक्षो लघु श्चलः॥
एवं पित्तमपि पंचात्मकं भवति॥४४॥

अर्थ—ऐसे पंचात्मक वायु प्रथम कहे भये कार्योंको करता है यह रजोगुणमय सूक्ष्म ठंढा रुखा हलका चलनेवाला ऐसे पित्तभी पंचात्मक कहे सो कहते हैं॥४४॥

पाचकं भ्राजकं चैव रंजका लोचके तथा॥
साधकं चैव पंचेति पित्तनामान्यनुक्रमात्॥ ४५॥

अर्थ—पाचक भ्राजक रंजक आलोचक औ साधक ये अनुक्रमसे पांच नाम पित्तके हैं॥ ४५॥

अथैषां कर्माण्याह

स्वाश्रयेपाचकं पित्त मग्निरूपंतिलोन्मितं॥
भ्राजकं कांति कृघत्तुले पाभ्यं गादि पाचकं॥ ४६॥
रंजकंतु य कृत् प्लीहो स्तद्रसंशोणितं नयेत्॥
आलोचक मुभेनेत्रे रूप दर्शनकारितत्॥ ४७॥
साधकं हृदये तिष्ठन्मेधाप्रज्ञा करंचतत्॥
पित्त मुष्णं द्रवं पीतं नीलं सत्व गुणोत्तरं॥
कटुतिक्त रसं ज्ञेयं विदग्धं चाम्लतां व्रजेत्॥ ४८॥
एवं कफोपि पंचात्मकः॥

अब इन पित्तोंके कार्य कहते हैं

जो पाचकाशयमे पाचक नाम पित्त अग्निरूप तिलके प्रमाण रहता है सो अन्नको पचाता है भ्राजक नाम पित्त सो त्वचामे रहता है लेप तथा अभ्यंगादिकोंका पाचन करता है औ कांतिको देता है॥ ४६॥ जो रंजक पित्त है सो यकृत् प्लीहामे रहता है रसका रक्त करता है जो आलोचकपित्त है सो दोनौ नेत्रोमे रहता रूपको देषाता है॥ ४७॥ साधक पित्त हृदेमे रहिके बुद्धि औ स्मृतिको करता है अथवा धारण शक्ति औ बुद्धिको करता है यह सर्व रूप पित्त गरम प-

तला पीला नीला सत्वयुक्त कटुक औ तिक्त रस है जो यह जलि गया तौ षट्टा है जाता है ॥ ४८ ॥ ऐसेही कफभी पंचात्मक है जैसेकि

आलंबकः क्लेदको बोधक स्तर्पकः श्लेषक श्चेति एतेषां कर्माण्याह ॥ श्लेष्मातु पंचधोरस्थ स्त्रिक संस्थः स्ववीर्यतः ॥ हृदय स्थान वीर्याच्चतत एवा-म्ल कर्मणा ॥ ४९ ॥

कफनाम्ना मशेषाणां यत्करोत्य वलंबनं ॥
अतोऽवलंबक श्लेष्मा यस्त्वामाशय संस्थितः॥५०॥
क्लेदकः सोन्न संघात क्लेदनात् रसबोधनात् ॥
बोधको रसनस्थस्तु शिर संस्थोक्षि तर्पणात् ॥
तर्पकः श्लेष्मकः संधि श्लेषणात् संधि संस्थितः॥५१॥
उरः कंठ शिरः संधि पर्वाण्यामाशयोरसः ॥
मेदो घ्राणंच जिह्वाच कफस्थान मुरोम्टशमिति॥५२॥

दोषत्रयाणां पंचात्मकत्वं सिद्धं यतस्त्रयाणां पंचा-त्मकत्वेन सर्व देहे व्यापित्वं ततश्चाशों रोगस्य गुदस्थि-तत्वेपि सर्व देहे कृशत्वादिकस्यापि संभवःस्यात् ॥

अर्थ—आलंबक क्लेदक बोधक तर्पक श्लेषक ऐसे पांच ना-मक कफ है तहां इनके कर्म कहते हैं श्लेष्मा पांच प्रकारका है तहां हृदे औ त्रिक स्थानके पराक्रमसे॥४९॥जो सर्व कफोंके स्थान है उनको अवलंबन देता है इस वास्ते इसको अवलंबक कहते है ॥ ५० ॥

जो आमाशयमे रहनेवाला है सो अन्नका क्लेदन करता है याने भि जाता है इस वास्ते इसको क्लेदक कहते है ॥ ५१ ॥

जो जिह्वामे रहिके मधुरादिक रसौंका बोधन करता है उसे इसी वास्ते बोधक कहते है जो माथेमे रहिके नेत्रौंको तृप्त करता उसको तर्पक कहते है जो संधिनमे रहके संधिनका श्लेष्म मिलाप करता है उसको श्लेष्मक कहते है ॥ ५२ ॥

यद्यपि हृदा कंठः शिर संधि और आमाशय वक्षस्थल मेद नासिका औ जिह्वा ये कफके स्थान है तौभि हृदा विशेष स्थान है ऐसे तीनो दोषोका पंचात्मकसे सर्व देहमे व्यापित्व है इसते अर्श रोगके गुदाहीमे स्थितत्वसे सर्व देहका कृशत्व इत्यादिकौंकाभी संभव होगा.

अथ सुखसाध्य लक्षणं

बाह्यायांतु बलौजाता न्येक दोषो ल्बणानिच॥
अर्शांसि सुखसाध्यानि नचिरोत्पतितानिच ॥ ५३ ॥

अब सुखसाध्य लक्षण कहे है जो बाहिरके चक्रमे पेदा भये होइ औ एक दोषजन्य होइ वे सुखसाध्य है परंतु बहुत दिननके न होइ ॥ ५३ ॥

कष्ट साध्य लक्षणं

द्वंद्वजानि द्वितीयायां बलौयान्या श्रितानिच ॥
कृछ्र साध्यानि तान्याहुः परि संवत्सराणिच ॥ ५४ ॥

अब कष्ट साध्य अर्श जो अर्श द्वंद्वज औ दूसरे चक्रमे है तथा जिनके होनेकौ एक वर्ष व्यतीत भए होवेभी कष्टसाध्य है ॥ ५४ ॥

साध्यासाध्यान्याह सहजानि त्रिदोषाणि ॥

यानि चाभ्यंतरा वलिं जायंते र्शांसि ॥
संश्रित्य तान्य साध्यानि निर्द्दिशेत् ॥ ५५॥
हस्ते पादे मुखे नाभौ गुदे वृषण यो स्तथा ॥
शोथो हृत्पार्श्व शूलंच यस्या साध्योर्शसो हिसः॥५६
ज्वरांग हृत्तृषा छर्द्दि संमोहा रुचि पीडितं ॥
गुदास्य पाकातीसार युक्तं चात्य स्रस्राविणं ॥ ५७॥
हन्युरर्शांस्य साध्यानि सहजानि ब्रुवेऽधुना ॥
शुक्र शोणित दोषेण पित्रो रेव भवंतिहि ॥ ५८॥
वातादि दोषत स्तासां लक्षणानि विनिश्चयेत् ॥
परुषाणि विशेषेण पांडू न्यंतर्मुखानिच ॥ ५९ ॥
दुर्द्दर्शनानि तानिस्युर्दारुणा निच तैर्युतः ॥
शिरा संतत गात्रःस्या त्क्षीणरेताः कृशोल्पभुक् ॥ ६० ॥
क्रोधनोल्प प्रजोल्पाग्निर रोचक निपीडितः ॥
शिरोक्षि श्रवण घ्राण रोगी क्षामस्वर स्तथा ॥ ६१॥
हृदयोपले पाटोपौ सततं चांत्र कूजनं ॥
भवंति तस्ययो याव ज्जीवेत्तावन्न मुच्यते ॥ ६२॥

अब असाध्य लक्षणानि जो अर्श सहज याने जन्म लेते हीमे संगही पैदा भये तथा त्रिदोषज औ जो अंदरके तीसरे चक्रमे उत्पन्न भये हैं वे असाध्य हैं ॥ ५५ ॥ जिनके हाथ पाइ मुख नाभि गुदा औ अंडकोशमे सूजन होइ तथा हृदय औ पसुलिनमे शूल होइ वह अर्श रोगी असाध्य है ॥ ५६ ॥ अर्श रोगी ज्वर अंगमे पीडा पियास वांति

मोह याने चित्त भ्रम औ अरुचि इन करिके पीडित तथा गुदाका मुख पका होइ अतिसार होइ औ अतिशय रक्त गिरता होइ उसको वै अर्श नाश करते हैं ॥ ५७॥ सहजके लक्षण माताका रजदोष औ पिताके वीर्य दोषसे सहज अर्श होते हैं ॥ ५८ ॥ उनकेभी लक्षण वातादिक दोषों करिके निश्चय करना तहा विशेष यह है कि वै कठिन पांडुवर्ण उनके मुष अंदरकी तरफ देषनेमेभी आवै यानै आवै ॥ ५९ ॥ ऐसे दारुण मसौं करिके युक्त जो मनुष्यसो ऐसा रहता है कि उसकी नसै न्यारी न्यारी दीखती हैं तथा वीर्य क्षीण कृश थोडा आहार॥६०॥ क्रोधी अल्प संतान मंदाग्नि अरुचिसे पीडित मस्तक नेत्र कान नाक इनका रोगी बारीक अवाजवाला होता है ॥ ६१ ॥ तथा उसके हृदेमे कुछ लेप किया होइ ऐसा उसको मालूम पडे पेट फुलै निरंतर आंतैं कूजती रहैं जबतक जीवे तबतक अर्शरोग न छूटे ॥ ६२ ॥

अथासाध्य लक्षणस्य याप्य प्रत्याख्येय भेदेन द्वैविध्यमाह

शेषत्वादिति शेषत्वा दायुषस्तानि चतुष्पादसमन्विते॥
याप्यंते दीप्त कायाग्नेःप्रत्याख्येया न्यतोऽन्यथा॥६३॥

अब जो असाध्य कहैं

उन्हीके याप्य औ प्रत्याख्येय करिके दो प्रकार कहते हैं जो रोगी चतुष्पाद संपन्न याने श्रेष्ठ वैद्य औषध सामग्री परिचारक औ सावधान रोगी चारौ योग्य होइँ तहांभी जठराग्नि प्रदीप्त होइ तो जहांतक आयुष्य शेष होइ तहांपर्यंत जाबता करना ऐसा न होइ तो औषध न करना ॥ ६३ ॥

अथ यदुक्त मपानादौ दोषा मांसाकुरान् कुर्वंति तान्यर्शांसि जगुः

तत्रादि शब्दोक्तानाह

मेढ्रादिष्वपिवक्ष्यंते यथास्वं नाभि जानितु ॥
गंडूपदास्य रूपाणि पिच्छिलानि मृदुनिच ॥ ६४ ॥

अब जो कहाथाकि अपानादिकमे वातादि दोष मांसके अंकुर उत्पन्न करते हैं उनको अर्श कहते हैं तहां आदि शब्दसे लिंगादिकमें विजानना सो स्पष्ट करते हैं जैसेकि वै अर्शयथा स्थान जैसे लिंगार्श ऐसेही आदि शब्दसे नेत्रार्श नासार्श जानना इहां चरकवाक्य लिखते हैं

केचित्तु भूयांशमे वदेश मुपदिशंत्यर्शसां शिश्नम
पत्य पथं गलमुख नासिका कर्णाक्षि वर्त्मानि त्वक्च ॥

अर्थ—कोई कहते हैंकि लिंग गला मुष नासिका कान औ नेत्रकी पलकें तथा त्वचामे अर्शके स्थान हैं तहा नाभिमे ओ अर्शके मसे होत है उनका आकारके चुहाके मुष सरीखा आकार होता है वै चिकने तथा कोमल होते हैं ॥ ६४ ॥

अथ चर्मकील माह

व्यानो गृहीत्वा श्लेष्माणं करोत्यर्शस्त्व चोवहिः ॥
कीलोपमं स्थिर खरं चर्म कीलंतु तंविदुः ॥ ६५ ॥
वातेन तोदः पारुष्यं पित्तादसित रक्तता ॥
श्लेष्मणा स्निग्धता तस्य ग्रथितत्वं सवर्णता ॥ ६६ ॥
इत्यर्शो निदानं ॥

अब चर्मकीलके लक्षण

वा निदान कहते हैं व्यान वायु कफको ग्रहण करिके त्वचाके

बाहिर याने गुदाका मुख छोडके चमडेपर कील सरीषा स्थिर औ खर-
खरा मांसका अंकुर पेदा करता है उसको चर्मकील कहते हैं ॥ ६५ ॥
जो वायुसे चर्मकील होइ तौ सुईच्छेदनेसे सरीषी पीडायुक्त औ कठिन
होती है पित्तसे किंचित काला लाल कफसे चिकना गाठसीबंधी भयी
उन्हांका रंग वहांके चमडेके समान होता है ॥ ६६ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां
रुग्वि निश्चय दीपिकायां मर्शो निदान प्रकाशः ॥ ४ ॥

अथाग्नि मांद्यादि रोगानाह

मंद स्तीक्ष्णो ऽथविषमः समश्चेति चतुर्विधः ॥
कफ पित्ता निलाधिक्या त्तत्साम्या ज्जाठरो नलः ॥ १ ॥

अब अग्नि मांद्यादि रोग कहे हैं

मंद तीक्ष्ण विषम औ सम ऐसे कफपित्त औ वायु इनकी अधि-
कतासे औ समतासे जठराग्नि चार प्रकारका होता है तहां कफकी अ-
धिकतासे मंद पित्तकी अधिकतासे तीक्ष्ण वायुकी अधिकतासे विषम
औ तीनोकी समतासे सम रहता है ॥ १ ॥

विषमो वातजान् रोगां स्तीक्ष्णः पित्तनिमित्तजान् ॥
करोत्यग्नि स्तथा मंदो विकारान् कफ संभवान् ॥ २ ॥
समा समाग्ने रसिता मात्रा सम्य ग्विपच्यते ॥
स्वल्पापि नैवमंदाग्नेर्विष माग्नेस्तु देहिनः ॥ ३ ॥
कदाचि त्पच्यते सम्य क्कदाचिन्न विपच्यते ॥
मात्राति मात्राप्यशिता सुखं यस्य विपच्यते ॥
तीक्ष्णाग्नि रितितं विद्या त्समाग्निः श्रेष्ठ उच्यते ॥ ४ ॥

विषमाग्नि यह वायु संबंधी असी प्रकारके रोगोंको करता है ती- क्ष्ण पित्तसंबंधी चालीस रोगोंको करता है ॥ २ ॥ जो समाग्नि मनुष्य है उसको उचित आहारकी मात्रा अछी तरहसे पचन होती है मंदा- ग्निको किंचितभी पचता नही॥३॥ विषमाग्निको कभी पचता है औ कभी नही औ जिसको मात्रा अति मात्रा याने कैसाभी अजीर्ण करनेवाला या उचित आहार करे सो सुखसे पचता है उसको तीक्ष्णाग्नि जानना इनमे समाग्नि श्रेष्ठ है ॥ ४ ॥

अथ भस्मक रोगमाह चरकात

नरे क्षीण कफे पित्तं कुपितं मारुतानुगं॥
सोष्मणा पाचकस्थाने बलमग्नेः प्रयच्छति॥५॥
तदालब्ध बलो देहं रूक्षयेत्सा निलोनलः॥
अभिभूय पचत्यन्नं तैक्ष्ण्यादाशु मुहुर्मुहुः॥६॥
पक्वान्नंच ततोधातून शोणितादीन् पचत्यपि॥
ततोदौर्बल्य मातं कं मृत्युंचोपनये न्नरं॥७॥
भुंक्तेन्नं लभते शांतिं जीर्णमात्रे प्रताम्यति॥
तट् कास दाह मूर्छाःसुर्व्याधयो त्यग्निसंभवाः॥८॥

इति रुग्वि० मंदाग्नि भस्मकयोर्निदानं

अब चरक संहितासे भस्मक रोग लिखते हैं

जिस मनुष्यका कफ क्षीण होगया उसके वायुसे मिला भया पित्त कुपित ह्वैके सरीरकी गरमीके साथ पाचक स्थानमे जठराग्निको बल देता है ॥५॥ तब वह अग्नि बलपाया भया पवनका सहाइक ह्वै के

देहको रूक्ष करता है औ वारंवार अति शीघ्रही अन्नका पाचन करता है ॥ ६ ॥ जब अन्न पचा तब रक्तादिक धातुनको पचाता है तिस पीछे दुर्बलता औ मृत्युकोभी प्राप्त होता है ॥ ७ ॥ इस भस्मकरोगवाला मनुष्य भोजन करनेसे कुछ देर शांत रहता है औ पचेपर दुखी होता है तथा इस रोगसे तृषा कास दाह औ मूर्छा ये रोग उत्पन्न होते हैं ॥८॥

इति श्रीमत्सु० सी० आ० पं० र० प्र० वि० रुग्वि दीपिकायां मंदाग्नि भस्मकयोर्निदान प्रकाशः

अथा जीर्ण रोगमाह

आमं विदग्धं विष्टब्धं कफ पित्तानिलै स्त्रिभिः ॥
अजीर्णं केचिदिच्छंति चतुर्थं रसशेषतः ॥ १ ॥
अजीर्णं पंचमं केचि न्निर्दोषं दिन पाकिच ॥
वदंति षष्ठं चाजीर्णं प्राकृतं प्रतिवासरं ॥ २ ॥

अब अजीर्ण रोग कहते हैं जैसेकि कफ पित्त वायु इन तीनौं करिके क्रमसे आम विदग्ध औ विष्टब्ध ए तीनोसे अजीर्ण होता हैं जैसे कफसे आमा जीर्ण याने जिसमे अन्न कच्चा रहता है पित्तसे विदग्ध जिसमेकि अन्न जलि जाता हैं ऐसेही वायुसे विष्टब्धा जीर्ण होता है जिसमे आहार बंधिसा जाता है १ ऐसेही एक रस शेषा जीर्ण चोथा है जिसमै अन्न रसका अपच रहता है ऐसाही एक पांचवा अजीर्ण दिन पाकि होता है जिसमे आठ पहरसे आहार पचता है इस अजीर्णमे पेट फुलना इत्यादिक दोष नही इसे वास्ते यह निर्दोष है परंतु जब तककी शुद्ध डकार वगैरे अन्नपाक चिन्ह न दीषैं तब तक भोजन निषिद्ध है इसी तरहसे एक प्राकृत अजीर्ण है यह स्वभावहीसे नित्य

रहता है इसकी शांतिके वास्ते शतपद गमन वामांग शयन इत्यादिक उपाइ हैं यह विकारकारक नही है ॥ २ ॥

अथाजीर्णस्य निदानमाह

अत्यंबुपाना द्विषमाशनाच्च संधारणात्स्वप्न विपर्य याद्वा ॥ कालेपि सात्म्यं लघुचापि भुक्त मन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥ ३ ॥

अजीर्णके निदान

बहुत पानी पीनेसे विषम आहारसे मलमूत्रके अवरोधसे दिनको सोना रातिका जागना यह स्वप्न विपर्यय है इससे इन कारणों करिके पथ्य औ हलका तथा भोजनकालमेभी करा भया आहार पचता नही ॥ ३ ॥

कायिकं निदानमभिधायमान सरज स्तमो दोषमाह

ईर्षाभय क्रोध परिप्लुतेन लुब्धेन रुग्दैन्यनि पीडितेन ॥ प्रद्वेष युक्तेनच सेव्यमान मन्नं नसम्यक् परिपाकमेति ४

अजीर्णके कायिक निदान कहै

अब मानसिक निदान जो रजोगुण तमोगुणसे होते हैं सो कहते हैं जैसेकि ईर्षा जो पराई संपदाको देषिके न सहन करना भय जो शत्रु इत्यादिकौंसे डर तथा क्रोध इन करिके व्याप्त तथा लोभयुक्त जिसका चित्त है तथा शोक औ दीनता करिके पीडित मनुष्यने किया जो भोजनसे अछी तरहसे पचता नही ॥ ४ ॥

अथैषां लक्षणान्याह

तत्रामे गुरुतो क्लेदः शोफो गंडाक्षि कूटगः ॥
उद्गारश्च यथाभुक्तम विदग्धः प्रवर्तते ॥ ५ ॥
विदग्धे भ्रम तृण्मूर्छाः पित्ताच विविधारुजः ॥
उद्गारश्च सधूमाम्लः स्वेदो दाहश्च जायते ॥ ६ ॥
विष्टब्धः शूल माध्मानं विविधा वात वेदनाः ॥
मलवाताऽप्रवृतिश्च स्तंभोमोहोंग पीडनं ॥ ७ ॥
रसशेषेन्न विद्वेषो हृदया शुद्धि गौरवं ॥
ग्लानिगौरव विष्टंभ भ्रम मारुत मूढता ॥
विबंधश्च प्रवृत्तिश्च सामान्या जीर्णलक्षणम् ॥ ८ ॥

इन अजीर्णनके लक्षण

तहां आमाशय जीर्णमे शरीर औ पेटका भारीपना उवकाई गाल नेत्रमे सूजन जैसा अन्न खाया होय वैसीही खट्टेपन विना औ धुवाँ इंधि विनाडकार आवै ॥ ५ ॥ विदग्ध अजीर्णमे भ्रम पियास तृपा मूर्छा पित्तसे होनेवाले अनेक प्रकारके रोग धुवैंधी औ खट्टी डकार पसीना औ दाहभी होता है ॥ ६ ॥ विष्टब्ध अजीर्णमे शूल पेटका फूलना तथा अनेक प्रकारके वातरोग मल औ वायुका अवरोध शरीर जकडना मोह औ अंगका टुषना होता है ॥ ७ ॥ रस शेष अजीर्णमे अन्नपर अनिच्छा हृदयकी अशुद्धता याने जडत्वादिक मालूम होना औ शरीर तथा पेटभारी मालूम होना ऐसेही सामान्य अजीर्णमे ग्लानि भारीपन कवजि यत भ्रम अधो वायुका अवरोध मलादिकका रुका वटवा प्रवृत्ति अति होती है ॥ ८ ॥

अजीर्णोपद्रवानाह

मूर्छा प्रलापो वमथुः प्रसेकः सदनं भ्रमः॥
उपद्रवा भवंत्येते मरणं चाप्य जीर्णतः॥ ९॥

अब अजीर्णके उपद्रव कहते हैं

मूर्छा बडबड बकना उलटी मुषसे लार गिरना सरीर सिथिल होना औ भ्रम ये अजीर्णसे उपद्रव होते हैं औ मरणभी होता है ॥ ९ ॥

अजीर्णोत्पत्ति माह

अनात्मवंतः पशुवद्भुंजते येऽप्रमाणतः॥
रोगा नीकस्यत्तेमुल मजीर्णं प्राप्नुवंतिहि॥ १० ॥
रोगानीक हेतुत्वे प्रमाणमाह भेदः॥
प्रायेणाहार वैषम्या दजीर्णं जायते नृणां॥
तन्मूलो रोगसंघात स्तद्विनाशा द्विनश्यति॥ ११ ॥

इति रुग्वि अजीर्ण निदानं

जिनके अजीर्ण होता है ऊन लोगोंको देषाते हैं जे मनुष्य अपने सुषको न समुझे पशूनकी तरहषाते बे प्रमान उनको अजीर्ण होता है यह अजीर्ण सर्व रोगोका कारण है ॥ १० ॥ तहां प्रमाण भेद ऋषि देते है बहुधा आहारकी विषमतासे मनुष्यनके अजीर्ण होता है अजीर्णसे सर्व रोग उत्पन्न होते है अजीर्ण नास होनेसे सर्व रोग नष्ट होते हैं॥ ११

इतिश्री मत्सु० सी० आ० पं० र० प्र० वि० रुग्वि० टी० अजीर्ण निदान प्रकाशः

विशूचिका माह

अजीर्णं मामं विष्टब्धं विदग्धंच यदीरितं॥

विषूच्य लसकौ तस्मा द्भवेच्चापिविलंबिका॥ १॥

अब विशूचिकादिक रोग कहते हैं

आम विष्टब्ध औ विदग्ध अजीर्ण कहे उनसे विशूची अलसक औ विलंबिका ये रोग होते हैं॥ १॥

विशूची लक्षणमाह

शूचीभि रिवगात्राणि तुदन्स त्तिष्ठते निलः॥
यत्रा जीर्णेनसा वैद्यैर्विशूचीति निगद्यते॥ २॥
नतां परिमिता हारा लभंते विदितागमाः॥
मूढास्ता मजितात्मानो लभंतेऽशन लोलुपाः॥ ३॥

अस्याः लक्षणं

मूर्छातिसारो वमथु पिपासा शूल भ्रमो द्वेष्ट नजृंभदाहाः॥ वैवर्ण्यकंपौ हृदये रुजश्च भवंति तस्यां शिरसश्च भेदः॥॥ ४॥

अब विशूचिका कहते हैं

जिस अजीर्णमे अंगमें वायु रहिके सुई छेदने सरीषी पीडा करता है उसको वैद्य विशूचिका कहतेहैं॥२॥ उंसको वैद्य शास्त्रके जाननेवाले माफिक आहार करते है वैनही प्राप्त होते हैं औ जो मूर्ष खानेके लोभी हैं वई प्राप्त होते हैं॥ ३॥ उसके लक्षण येकि मूर्छा अतीसार उलटी पियास शूल भ्रम पिडरियोका ऐंठना जमुहाई दाह अंगका रंग बेरंग होना शरीरका कांपना ह्रदेमे पीडा औ माथेमे फूटनेसरीखी पीडा होती है॥ ४॥

अथालसक लक्षणमाह

कुक्षिरा नह्यतेत्यर्थं प्रताम्येत्परिकूजति॥
निरुद्धो मारुतश्चैव कुक्षावु परिधावति॥ ५॥
वात वर्चो निरोधश्च यस्यात्यर्थंभवेदपि॥
तस्यालसकमाचष्टे तृष्णोद्गारौ तुयस्यच॥ ६॥

जिस रोगमे कोखै बहुत फूलैं औ रोगी व्याकुल होइ तथा कोखै औ अधो वात नीचेको तौ जाई न सकै परंतु कोखिके ऊपरकौ चढै याने हृदै कंठादिकको प्राप्त होई॥ ५॥ अधोवात औ मलका अवरोध अतिशय होइ तथा पियास औ डकार जिसके जादा होइ उसके अलसक रोग जानना॥ ६॥

अथ बिलंबिकामाह

दुष्टंतु भुक्तं कफमारुताभ्यां प्रवर्तते नोर्ध्व मधश्च यस्य॥ विलं बिकांतां भृशदुश्चिकित्स्या माचक्षते शास्त्रविदः पुराणाः॥ ७॥

जिसके कफ औ वायुसे दूषित अन्न पचै नही ऊपर नीचे कही न जाई याने उलटीभी न होइ औ न झाडा होइ बीचहीमे रहिके दुष देइ उसको बिलंबिका कहते हैं यह दुषसे जीतनेमे आती है इसका दुसरे तंत्रोमे दंडालसकभी नाम है अलसक औ बिलंविकामे दोष कोप तौ तुल्य है परंतु अलसकमे तीव्र शूलादिक वेदना होती है विलंबिकामे नही॥ ७॥

एव मजीर्ण जन्यन न्विशूचिकादीन् रोगान॥
भिसंधाया जीर्ण जन्यस्यतस्य कार्यंतराण्यमाह॥

यत्रस्थ मामंविरुजेत्तमेव देशं विशेषेण विका रजातैः॥ दोषेण येनावततं शरीरं तल्लक्षणै राम समुद्भवैश्च॥८॥

ऐसे अजीर्णसे पेदा भए विशूच्यादिक रोग कहिके उस अजीर्णसे उत्पन्न भये हुए आमके ओरभी कार्य कहते हैं जैसेकि जिस दोष करिके शरीर व्याप्त है उसी वातादिक दोषके जो पीडा दाह गौरवादिक दोष ऐसेही आमके दोषौं करिके जहा शरीरमे आम रहता है उसी ठिकाने जो रोगमात्र उत्पन्न होता है उसको वहै आम पीडा करता है याने जिसकिभी ठेकाने आम रहता है उहां जो फोडा इत्यादिक रोग होता है उसको वातादिक दोषचिन्हयुक्त पीडा करते हैं ॥ ८ ॥

अथ विशूच्य लसकयो रसाध्य लक्षणमाह

यः श्यावदंतोष्ट नखोल्य संज्ञो वम्यर्दितोभ्यंतर जातनेत्रः॥क्षामस्वरःसर्व विमुक्त संधिःयायान्नरःसो पुनरागमाय॥ ९ ॥ निद्रानाशोऽरतिः कंपो मुत्रा घातो विसंज्ञता॥ अमि उपद्रवाःख्याता विषूच्या मतिदारुणाः॥१०॥

अब विषूचिका अलसकके असाध्य लक्षण कहते है

जिसके दांत ओठ औ नष काले ह्वै गये होइ चेतना कमती रही होइ उलटी होते होते नेत्र अंदरको बैठि गये होइ स्वर क्षीण भया होइ सर्व संधियां ढीली भई होइ वह मनुष्य मृत्युहीको पावै ॥ ९ ॥ नि[illegible] सर्वत्र उदासी उदासी सरीरमे कंपा मूत्रा घात औ अचे- होती हैं । [illegible]चिकामे महादारुण उपद्रव हैं ॥ १० ॥

अथ जीर्णाहार लक्षणं

उद्गार शुद्धि रुत्साहो वेगोत्सर्गौ यथोचितः॥
लघुता क्षुत्पिपासाच जीर्णाहारस्य लक्षणं॥ ११॥
इत्यजीर्णादि रोगनिदानं॥

अब अच्छी रीतसे पचे भए आहारके लक्षण कंहते हैं

शुद्ध डकारका आना मनमे उत्साह झाडा पेशाव साफ शरीर हलका औ भूष पियासका लगना ये लक्षण आहार अछी तरह पचेके हैं इतिश्री मत्सु० सी० आ० पं० र० प्र० वि० रु० टी० अजीर्णादि रोगनिदान प्रकाशः॥ ११॥

अथ कृमि निदानमाह

तत्रकृमिभेदानाह कृमयस्तु द्विधाप्रोक्ता बाह्या
भ्यंतर भेदतः॥ बहिर्मल कफा स्रग्विड् जन्मभेदा
च्चतुर्विधाः॥ १॥ नामतो विंशति विधाबाह्या स्त
त्र मलोद्भवाः॥ तिल प्रमाण संस्थान वर्णाः केशां
बराश्रयाः॥ २॥ बहुपादाश्च सूक्ष्माश्चयूका लि
क्षाश्च नामतः॥ द्विधाते कोठ पिटका कंडू गंडान्प्र
कुर्वते॥ ३॥

अब कृमि रोगका रूप कहे है

तहां कृमिनके भेद सरीरके बाहेर भीतर कृमि दो प्रकारके फिर बाहिरका मैल कफ रक्त औ विष्ठामे जन्मके भेदसे चार प्रकारके हैं १ फिरि नामसे वीस प्रकारके हैं जो वाहेर सरीरके मलसे होते हैं व ति-

लके बरोबर शरीर औ रंगमेभी तिल तुल्यही होते हैं सो वै केश औ वस्त्रौंमे रहते हैं ॥ २ ॥ बहुत पाउंवाले तथा सूक्ष्मभी हैं नाम उनके यूका औ लिषा है जुवा लीषैं ये दोनौ कोठरोग फुंसी कंडू औ सरीरमे गाढैं सी पेदा कर देत हैं ॥ ३ ॥

अथ कारणमाह

अजीर्ण भोजी मधुराल्म नित्योद्रव प्रियः पिष्ट गुडोप भोक्ता॥ व्यायाम वर्जीच दिवा शयश्च विरुद्ध भुग्ना लभते कृमींश्च ॥ ४॥ माष पिष्टान्न लवण गुडशाकै पुरिषजाः॥ मांसमत्स्य गुड क्षीर दधि शुक्तैः कफो द्भवाः॥ विरुद्धा जीर्ण शाकाद्यैः शोणितोत्था भवंतिहि ॥ ५॥

कृमी रोगकी उत्पत्ति

अजीर्णमे भोजन करनेवाला औ मधुर खट्टे पदार्थ खानेसे पतले पदार्थ तथा फरा इत्यादिक गुडके षानेसे कसरतसे मेहनत न करनेसे दिनके सोनेसे क्षीर मत्स्य ऋतु विरुद्ध प्रकृति विरुद्ध विरुद्ध भोजनसे कृमि उत्पन्न होते हैं ॥ ४ ॥ उरदके पदार्थसे तथा फरा इत्यादि पदार्थ लोन गुड औ शाक इनके अति सेवनसे विष्ठामे कृमि होते हैं मांस मच्छी गुड दूध दही औ सिरका इनसे विरुद्ध आहार अजीर्ण औ कच्चा चनेका शाग इनके षानेसे रक्तमे कृमि होते हैं ॥ ५ ॥

अथाभ्यंतः कृमि लक्षणमाह

ज्वरो विवर्णता शूलं हृद्रोगश्छर्दनं भ्रमः॥ भक्तद्वेषो तिसारश्च संजात कृमि लक्षणम्॥ ६॥

अब पेटमे कृमि हुये के लक्षण कहते हैं अंगमे ज्वर शरीरका रंग बे रंग शूल ह्रदैमे पीडा उलटी भ्रम अन्नपर द्वेष औ अतीसार ये पेटमे कृमि होने ते लक्षण होतेहैं ॥ ६ ॥

कफजानां स्वरूपमाह

कफा दामाशये जाता वृद्धाः सर्पंतिसर्वतः॥
पृथुर्वध्र्मनिभाः केचित्केचिद्गंडू पदोपमा॥ ७॥
रुढधान्यां कुरा कारा स्तनु दीर्घा स्तथाणवः॥
श्वेतास्ताम्रा वभासाश्च नामतः सप्तधास्तुते॥ ८॥
अंत्रादा उदरावेष्टा ह्रदया दामहारुजः॥
चुरवो दर्भ कुसुमाः सुगंधास्तेचकुर्वते॥ ९॥
ह्रल्लास मास्य स्रवणम विपाक मरोचकं॥
मूर्छा छर्दि ज्वरानाह कार्श्य क्षवथु पीनसान्॥ १०॥

अब कफजन्य कृमि कहते हैं

कफसे आमाशयमे कीडा होते हैं वे बढिके चारो तरफको फैलते हैं इनमेसे कोई तो मोटी चमडेकी बाधीके समान कोई कंचुआके समान ॥ ७॥ कोई जमे भये अन्नके अंकुर समान कोई बारीक औ लंबे कोई अति छोटे उनमे कोई सफेद कोई ललामीलिए सफेद वे नामसे सात प्रकारके ॥ ८ ॥ जैसे अंत्राद उदरा वेष्ट ह्रदया दमहा कुरु चुरु दर्भ कुसुम औ सुगंध ॥ ९ ॥ वे कहे भए कीडे जव कुपित होते हैं तव उबकाई मुखसे लार गिरे अन्न न पचे अरुचि मूर्छा वांति ज्वर पेट फूटना कृशता छीक पीनस इत्यादिक होते है ॥ १० ॥

अथ रक्तज कृमि लक्षणमाह

रक्तवाही शिरास्थाना द्रक्तजा जंतवोर्णवः॥
अपादा वृत ताम्राश्च सौक्ष्मा त्केचिददर्शनाः॥ ११॥
केशादा लोमविध्वंसा लोम द्वीपा उदुंवराः॥
षट्ते कुष्टैक कर्माणः सहसौ रसमातरः॥ १२॥

अब रक्तज कृमिके लक्षण

रक्त वहनेवाली नसौ मे रहते है वे रक्तजकृमि बारीक होते है उनके पाउं नही होते है गोल ओ लाल होत है उनमे कोई अति बारीकपनेसे देषनेमे नही आते है उनके नाम॥ ११॥ केशाद लोम विध्वंस लोम द्वीप उडुंवर औ रस औ माता ये छइ उका कर्म मुख्यकुष्ट हीका करना है दाद खाजसे लेके कुष्टपर्यंत करनेवाले येई है॥ १२॥

अथ पुरीषजकृमि स्वरूपमाह

पक्वाशये पुरीषोत्था जायंते धोविसर्पिणः॥
वृद्धाः संतो भवे युश्चते यदामाशयो न्मुखाः॥ १३॥
तदास्यो द्गार निश्वासा विट्गंधा नुविधायिनः॥
पृथु वृत्त तनुस्थूलाः श्याव पीत सिता सिताः॥ १४॥
ते पंचनाम्ना कृमयः कहोरुक मकेरुका.॥
तौ सुरादा मलूख्याता अलेलिहा जनयंतिते॥ १५॥
विट्भेद शूल विष्टंभ कार्श्य पारुष्य पांडुताः॥
रोमहर्षाग्नि सदनं गुदकंडूं विमार्गगाः॥ १६॥

इति रुग्विनिश्चये कृमि निदानं

अब मलजन्य क्रमीनके स्वरूप कहते हैं

पक्काशय जो विष्टामे जो कीडा पेदा होते है वे नीचेको चलने वाले होते है जब वे बहुत बढिके आमाशयके सन्मुष चलते हैं ॥ १३॥ तब नर नके डकार औ सासमे विष्टाका वास आता हे वे कीडे लंबे गोल बारीक ओ मोटेभी धूसरे रंगकें कोईपीले सेत काले होते है॥१४॥ उनके नाम पांच है कसे रुकमसे रुक सौंसुर आमलून औ लेलि हये सर्व कीडे झाडेमे रहि कुमार्गी ॥ १५॥ मलका फूटना शूल कवजियत कृशता रुक्षता पांडुता रोमांच मंदाग्नि गुदामे षाज उत्पन्न करते है ऐसे ये जुवा औ लीष दो बाहिरके तथा अठारह अंदरके क्रमिनके नाम उनमेसे केतनेक नाम तो अर्थयुक्त है औ केतनेक रुढी ॥ १६ ॥

इतिश्री मत्सु० सी० आ० पं० र० प्र० विर० रुग्वि० दी० क्रिमिनिदान प्रकाशः

अथ पांडुरोगमाह

पांडुरोगाः स्मृताः पंचवात पित्त कफैस्त्रयः ॥
चतुर्थः संनिपातेन पंचमो भक्षणान्मृदः ॥ १ ॥
व्यवाय मम्ल लवणानि मद्यं मृदं दिवा स्वप्न मती व तीक्ष्णं ॥ निषेव्य मानस्य समेत्यरक्तं कुर्वंति दोषा स्त्वचि पांडुभावं ॥ २ ॥

अब पांडुरोग पंच तरेका

वातपित्त कफ इनसे ३ चोथा संनिपात पांचमा मृत्तिका पानेसे ये उत्पत्ति ॥ १ ॥ अति मैथुनसे अति खट्टासे अति लोन ऐसेही मदिरा मृत्तिका दिनकी निद्रा तीक्ष्ण पदार्थ इनके सेवन ते वातादिक दोष रक्तमे प्राप्त होके त्वचामे पांडुता करते है ॥ २ ॥

अथ पूर्वरूपमाह

त्वक् स्फोटनं ष्ठीवन गात्रसाद मृद्भक्षण प्रेक्षण कूटशोथाः॥ विण्मूत्र पीतत्व मथा विपाथो भविष्य त स्तस्यपुरः सराणि॥ ३॥

पांडुरोग होनेके समे प्रथम त्वचा फूटना थूकना बहुत अंग शिथिलता मृत्तिका खाना औ नेत्रोपर सूजनि विष्टा मूत्रमे पीलास अन्न पचे नही ये लक्षण जानना॥ ३॥

अथास्य दोष भेदेन रूपाण्याह

त्वङ्मूत्र नयना दीनां रूक्ष कृष्णा रुणप्रभा॥
वात पांड्वामये कंपतो दानाह भ्रमादयः॥ ४॥
पीत मूत्र शकृन्नेत्रो दाह तृष्णा ज्वरान्वितः॥
भिन्नविट्कोति पीताभः पित्तपांड्वामयीनरः॥ ५॥
कफ प्रसेक श्वयथु तंद्रालस्यातिगौरवैः॥
पांडुरोगी कफच्छुक्लैस्त्वङ्मूत्र नयनाननैः॥६॥
ज्वरा रोचक हृल्लास छर्दितृष्णा क्लमान्वितः॥
पांडुरोगी त्रिभिर्दोषै स्याज्ज्योक्षीणो हतेंद्रियः॥ ७॥

अब इस पांडुरोगके वातादि दोष भेदसे रूप कहते है

तहां वात पांडुरोगीके त्वचा मूत्र औ नेत्रादिकौमे रूखापन कालापन औ ललामी होती है तथा शरीरका कांपना औ सुई छेदने सरीषी पीडा पेट फूलना औ भ्रम इत्यादिक चिन्ह होते है॥ ४॥ पित्तसंबंधी पांडुरोगवालेके मूत्र विष्टा औ नेत्र पीले तथा दाह तृषा औ ज्वरयुक्त

रहता है मल पतला फूटा भया शरीर अति पीला रहता है ॥ ५ ॥ कफ पांडुरोगीके मुषसे कफ गिरे शरीर सूजन नेत्र झपेरहे सरीर भारी आलस तथा त्वचा मूत्र नेत्र मुष ये सेत होते है ॥ ६ ॥ त्रिदोष पांडुरोगीके तीन दोष ज्वर अरुचि उबकाई व मन प्यास व्याकुलता छीनता जिसकी इंद्रिया आपआपके विषयोको छोडि बेठी होई उस पांडुरोगकी चिकित्सा न करना असाध्य है ॥ ७ ॥

अथ मृत्तिका जनित पांडुरोगमाह

मृत्तिकादन शीलस्य कुप्यत्यन्य तमो मलः॥
कषाया मारुतं पितं मूषरा मधुरा कफं॥ ८ ॥
कोपय न्मृद्र सादींश्चरौक्ष्या द्भुक्तंच रूक्षयेत्॥
पूरयत्य विपक्कैव श्रातांसि विनिरुध्यपि॥ ९ ॥
इंद्रियाणां बलं हत्वा तेजो वीर्यौजसी तथा॥
पांडुरोगं करोत्याशु बल वर्णाग्निनाशनं॥ १० ॥

मृत्तिकासे उत्पन्न भए पांडु लक्षण कहे हैं मनुष्य मृत्तिकाके पानेसे एक दोषके कोपसे पांडु हो जाता है कषेली माटीसे वायु कोप करत षारी षानेसे पित्तकोप कछु मधुर है सो ८ कफको कुपित करती है तथा यह मृत्तिका आ पके रूखेपनेसे रसादिक धातुनको ओ खाये भये आहारकोभी रूखा कर देती है औ आपके विना रस रक्तादिक बहनेवाली नाडियोके छिद्र भरिके बंद कर देती है ॥ ९ ॥ तथा इंद्रियोका बल सरीरकी कांति वीर्य अंतःकरणकी शक्ति शरीर बल वर्ण औ जठराग्नि इनका यह पांडुरोग नाश करता है ॥ १० ॥

शूनाक्षि कूट गंडभ्रूः शून पान्नाभि मेहनः॥

कृमि कोप्येति सार्येत मलंसा रक्तकफान्वितं ॥ ११ ॥

इस रोगीके नेत्रके ऊपर गालौके भौंहौ के उपर पायोपर नाभि औ लिंगपर सूजन कोठेमे कीडे जिसते कफ रक्त मिश्रित मल वारंवार झाडेसे जाता है ॥ ११ ॥

अथा साध्य लक्षणमाह

पांडु रोग श्चिरोत्पन्नः खरीभूतो न सिध्यति ॥
कालप्रकर्षा च्छूनांगो योवा पीतानिपश्यति ॥ १२ ॥
बद्धाल्पं विट सहरितं सकफं यो तिसार्यते दीनः॥
श्वेतादि दिग्धांग श्छर्दि मूर्छा तृडन्वितः ॥ १३ ॥
सनास्य रक्त् क्षयाघस्तु पांडुः श्वेतत्व माप्नुयात् ॥
पांडुदंत नखो यश्च पांडुनेत्र श्च यो भवेत् ॥
पांडु संघात दर्शीच पांडुरोगी विनश्यति ॥ १४॥
अंतेषुशून्यं परिहीन मध्यं म्लानं तथां तेषुच मध्य शून्यं॥ गुदेच शेफस्यथ मुष्कयोश्च शूनं मताम्यं तम संज्ञकल्पं विवर्जये पांडुकिनं यशोर्थी तथा तिसार ज्वरपीडितंच॥ १५॥

अब पांडुरोग असाध्य कहते है

जो पांडुरोग बहुत दिन रहा तब जरिया जात है यावद्ध वह असाध्य है अंगमे सूजन होइ सब वस्तु पीली देषाइ है॥ १२॥ तथा हरो और कफ मिश्रित बहुत थोरा देषे बहुत झाडे जाइ अंग सफेद होइ उलटी मूर्छा पियास लगे ॥ १३ ॥ जो रक्तक्षयसे पांडुरोगी सफेद भया होइ

तथा दांत नष नेत्र पांडुवर्ण होइ वस्तु सब पांडुवर्ण देषता तो उसी रोगसे मरे यह निश्चे है॥ १४ ॥ जिसके हाथ पायेमे सूजन मध्य शरीर कृश तथा सूजन मध्यमे हाथ पाइ कृश गुदा लिंग भग अंडकोश इनमे सूजन पीडासे पीडित अचेत तथा अतीसार औ ज्वर करिके पीडित होइ एसे पांडुरोगीको यशस्वी वैद्य त्याग करे॥ १५॥

अथ पांडुरोगस्या वस्था विशेष भूतां कामलामाह

पांडुरोगी तुयोत्यर्थं पित्तलाना निषेविते॥
तस्य पित्त मसृग्मांसं दग्ध्वा रोगाय कल्पते॥१६॥
हारिद्र नेत्रःसुभृशं हारिद्रत्वङ्नखा ननः॥
रक्त पीत शकृन्मूत्रो भेक वर्णो हतेंद्रियः॥ १७ ॥
दाहा विपाक दौर्बल्य सदना रुचि कर्षितः॥
कामला बहु पीतैषा कोष्ठशाख श्रयामता॥१८॥

अब पांडुरोग हीकी अवस्थांतर कामला कहत है

पांडुरोगी पित्तकारक वस्तु सेवन करने ते पित्त रक्तमासको जारके रोग करता है॥ १६ ॥ उसते नेत्र त्वचा नख मुष हरदीसे दीषे है मल मूत्र लाल होइ है रंग पीले मेडकका समान होता है इंद्रियनमै शिथिलता॥१७॥ दाह अन्न अपचन दुर्बलता अरुचिसे पीडित होता है इस रोगका नाम कामला है इसमे पित्त अधिक होता है कामला दो प्रकार एक कोष्टाश्रित दूसरी शाखाश्रित रक्तादि धातु नेम रहनेवाली॥ १८॥

अथ कोष्ठाश्रितां कामलामाह

कालांतरा तरी भूता कृच्छ्रास्या त्कुंभ कामला॥१९॥

अथास्या अरिष्ट लक्षणमाह

छर्द्यरोचक हृल्लास ज्वरक्लम निपीडीतः॥
नश्यतिश्वास कासार्तो विट्भेदी कुंभकामली॥२०॥

जो कोष्टाश्रित कामला है उसका स्वरूप कहते है वही कामला बहुत कालसे कठिन होके कुंभ कमला होती है कुंभनाम कोठेका है उसमे रहीको कुंभकामला कहते है॥ १९॥ अब असाध्य कामला कहते है जिस कुंभकामला बालेको उलटी अरुचि उवकाई ज्वर घवराहट श्वास कास मल फूटासा पतला होनेसे मनुष्य जीता नही॥ २०॥

अथोभयो रपि कामलयो ररिष्ट लक्षणमाह

कृष्ण पीत शकृन्मूत्रो भृशं शूनश्च मानवः॥
सरक्ताक्षि मुख छर्दि विण्मूत्रो यश्च ताम्यति॥२१॥
दाहा रुचि तृडानाह तंद्रा मोह समन्वितः॥
नष्टाग्निःसंज्ञःक्षिप्रंहि कामलावान् विपद्यते॥२२॥

अब दोनो कामला साध्य कहे है जिसके मल मूत्र पीले रंग मिश्रित हो गये अंगमे सूजन बहुत तथा नेत्र मुष वांति विष्टो लाल होइ वा पीले होइ ओ व्याकुल होइ॥ २१॥ दाह अरुचि तृषा पेट फूले झपकी मूर्छा अग्नि चेतना नष्ट भये होइ सो रोगी अवश्य मरे जीवे नही॥ २२॥

अथ पांडुरोगस्यैव भेदं हलीमक माह

यदातु पांडोः वर्णःस्याद्धरितःश्यावपीतकः॥
बलोत्साहःक्षयस्तंद्रा मंदाग्नित्वंमृदु ज्वरः॥२३॥

स्त्रीष्व हर्षों गमर्दश्च दाह स्तृष्णा रुचिर्भ्रमः॥
हलीमकं तदा तस्य विद्या दनिल पित्ततः॥२४॥

अब पांडुरोगहीका भेद हलीमक कहते है

जब पांडुरोगमे मनुष्य हरा धूसर औ पीतवर्णका होय तथा बल औ उत्साह करिके रहित होय झपकी मंदाग्नि बारीक ज्वर॥ २३॥ स्त्री संगकी इच्छा नही अंग मरोड शिथिलता पियास अरुचि औ भ्रम ये लक्षण होय तब हलीमक रोग जानना यह वातपित्तसे उत्पन्न होता है॥ २४॥

अथ पांडो रेव भेदं पानकी रोगमाह

संतापो भिन्न वर्चस्त्वं बहिरं तश्च पीतता॥
पांडुता नेत्रयो र्यस्य पानकी लक्षणं भवेत्॥ २५॥

इति रुग्विनिश्चये पांडुरोग निदानं

अब पांडुरोगकाही भेद पानकी रोगके लक्षण कहते हैं जिस पांडुरोगमे शरीरमे संताप मल फुटा औ पतला बाहेर त्वचादिकमे औ अंदर मलादिकमे पीलापन नेत्रमे पांडुवर्ण उसको पानकी कहते हैं॥ २५॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां पांडुरोग निदान प्रकाशः॥ ९॥

अथ रक्तपित्त निदानमाह

घर्म व्यायाम शोकाध्व व्यवायै रति सेवितैः॥
तीक्ष्णो ष्णक्षार लवणैर म्लैः कटुभि रेवच॥ १॥
पित्तं विदग्धं स्वगुणै र्विदहत्याशु शोणितं॥

ततः प्रवर्त्तते रक्त मूर्ध्वंचा धोद्विधा पिवा ॥ २ ॥
ऊर्ध्वंना साक्षि कर्णास्यैर्मेढ्र योनि गुदैरधः ॥
कुपितं रोम कूपैश्च समस्तै स्तत्प्रवर्त्तते ॥ ३ ॥
आमाशया द्व्रजे दूर्ध्व मधः पक्वाशया द्व्रजेत् ॥
विदग्धयो र्द्वयोश्चापि द्विधा मार्गं प्रवर्त्तते ॥ ४ ॥

अब रक्तपित्तका निदान कहते हैं

घाममे रहना कसरत इत्यादि मेहनत शोक रस्ता चलना औ मैथून तीक्ष्ण पदार्थ उष्ण पदार्थ क्षार लवण खटाइ औ सुंठि इत्यादिक कटुक पदार्थ इनके अति सेवनसे ॥ १ ॥ पित्त जला भया आपके गुणें करिके रक्तको जलाता है तब वह रक्त ऊर्ध्व किंवा अधो मार्ग अथवा दोनौ मार्गसे निकलने लगता है ॥ २ ॥ तहां ऊर्ध्व मार्ग तौ नासिका नेत्र कान औ मुख मार्गसे औ लिंगयोनि तथा गुदा द्वैके अधो मार्गसे जो अति कुपित भया तौ सर्व रोमरोमके छिद्रोंसे निकलने लगता है ॥ ३ ॥ जो ऊर्ध्व मार्गसे निकलता है वह आमाशयसे औ जो अधो मार्गसे निकलता है वह पक्वाशयसे तथा जब दोनौं ठेकाने जलने लगते हैं तब सब ओर निकलता है ॥ ४ ॥

पूर्वरूप माह

सदनं शीत कामित्वं कंठ धूमायनं वमिः ॥
लोह गंधिश्च निःश्वासो भवंत्यस्मिन् भविष्यति ॥ ५ ॥

अब पूर्वरूप कहते हैं

इस रक्त पित्तके होनेके समयमे अंग शिथिल ठंढे पदार्थपर इच्छा कंठमे धुआँ निकलने सरीखी पीडा वांति औ उच्छ्वास लेनेमे तपे

भये लोहसरीखी वास आता है ॥ ५ ॥

अथ श्लैष्मिक माह

सांद्रंस पांडुस स्नेहं पिच्छिलंच कफान्वितम् ॥ ६ ॥

अब कफयुक्त रक्तपित्तके लक्षण कहते हैं

जो रक्तगाढा पांडुवर्ण चिकना गुलगुलित ऐसा निकलै वह कफ युक्त जानना ॥ ६ ॥

वातिकमाह

श्यावा रुणं सफेनंच तनु रूक्षंच वातिकं ॥ ७ ॥

अब वातयुक्त कहते हैं

जो रक्त धूसर लाल फेनयुक्त पतला औ रूखा होय सो वात दूषित जानना ॥ ७ ॥

पैत्तिकमाह

रक्त पीत कषायाभं कृष्णं गोमूत्र सन्निभं ॥
मेचकां गार धूमाभ मंजनाभंच पैत्तिकं ॥ ८ ॥

पैत्तिक कहते हैं जो रक्त लाल पीला खैर इत्यादिकोंके काढे सरीखा होय किवा काला गोमूत्र सरिखा चिकने मणि सरीखा काला अंगारसरीखा धुआँ सरीखा औ सुरमा सरीखा होय तौ पित्त दूषित जानना ॥ ८ ॥

अथ संसर्ग सन्निपात जनित् रक्त पित्तान्याह

संसर्ग लिंगं संसर्गात् त्रि लिंगं सन्नि पातिकं ॥ ९ ॥
ऊर्ध्वगं कफसं स्तृष्ट मधोगं मारुतानुगं ॥
द्विमार्गं कफ वाताभ्यां मुभाभ्या मनुवर्त्तते ॥ १० ॥

अब द्विदोष औ सन्निपातजन्य रक्तपित्त कहते हैं

जिसमे दो दो दोषके लक्षण मिलैं वह द्विदोषज औ जिसमे तीनौ दोषौंके चिन्ह मिलैं सोवि सन्नि पातिक जानना ॥९॥ जो कफ मिश्रित दूषित है वह ऊर्ध्व मार्गसे निकलता है तथा जो वातिक है वह अधो मार्गसे औ जो कफवात दूषित है वह दोनौ मार्गसे निकलता है ॥ १० ॥

अथ मार्ग प्रवृत्या तस्य साध्यासाध्यत्वमाह

ऊर्ध्वं साध्य मधो याप्य मसाध्यं युगपद्गतं ॥ ११ ॥

तत्र हेतुमाह

एकमार्गं बलवतो नाति वेगं न वोत्थितं ॥
रक्तपीत्तं सुखे काले साध्यं स्यान्नि रुपद्रवम् ॥ १२ ॥

अब मार्ग प्रवृत्ति करिके उसका साध्यासाध्यत्व कहते हैं

ऊर्ध्व गामि साध्य अधो गामी याप्य दोनौ मार्ग जानेवाला असाध्य जानना ॥ ११ ॥ तहां कारण कहते हैं जो रोगी बलवान औ रक्त पित्त एक मार्ग गामी मंद गतिसे बहनेवाला थोडे दिनका शीत कालमे भया ओ जो अगाडी कहैंगे उन उपद्रवौं करिके रहित है सो साध्य जानना ॥ १२ ॥

अथ दोष भेदैः साध्यासाध्यत्व माह

एकदोषा नुगं साध्यं द्विदोषं याप्य मुच्यते ॥
यत्त्रि दोष मसाध्यं स्यान्मंदाग्ने रति वेगवत् ॥
व्याधिभिः क्षीण देहस्य वृद्धस्या नश्नतश्चयत् ॥ १३ ॥

अब दोष भेदौं करिके साध्यासाध्यत्व कहते हैं

एक दोष जन्य साध्य द्विदोष जन्य याप्य त्रिदोष जन्य मंदाग्नि वालेके अति वेगवाला जिसके रोगसे देह क्षीण भया होय वृद्धके औ जो अन्न खानेसे रहि गया होय उसके रक्तपित्त असाध्य है ॥ १३ ॥

अथोपद्रवानाह

दौर्बल्य श्वास कास ज्वर वमथु मदाःपांडुता दाह मूर्च्छा भुक्ते घोरो विदाह स्त्वधृतिरपि सदा हृद्य तुल्याच पीडा ॥ तृष्णा कोष्ठस्य भेदःशिरसिच तपनं पूतिनिष्ठी वनत्वं भक्त दोषा विपाको विकृति रपि भवेद्रक्त पित्तोपसर्गाः ॥ १४ ॥

अब उपद्रव कहते हैं

दुर्बलता श्वास कास ज्वर वांति नसा सरीखा रहना पांडुता दाह मूर्च्छा भोजन किये पर घोर दाह सदा अधीरता हृदयमे अति पीडा पियास मल फूटा औ पतला मस्तक तपना थूकमे दुर्गंध अन्नपर द्वेष अन्नका न पचना औरभी विकार होते हैं ये रक्तपित्तके उपद्रव हैं॥ १४

अथ विकृति रूपत्वेना साध्यत्वमाह

मांस प्रक्षाल नाभं क्वथित मिवच यत्कर्दमांभोनिभंवामेदःपूयास्र कल्पं यकृ दिव यदिवा पक्व जंबू फलाभं ॥ यत्कृष्णं यच्चनीलं भृशमति कुणपं यत्र चोक्ताविकारास्त द्वर्ज्यं रक्तपित्तं सुरपतिधनुषा यच्च तुल्यं विभाति ॥ १५ ॥

अन्यच्च

येन चोपहतो रक्तंरक्त पित्ते नमानवः॥
पश्ये दृश्यं वियच्चापी तच्चा साध्यम संशयम्॥ १६॥
लोहितं छर्दये यस्तु बहुशो लोहिते क्षणः॥
लोहितो द्गार दर्शींच म्रियते रक्त पैत्तिकः॥ १७॥

इति रक्तपित्त निदानं

अब विकार रूपसे असाध्य कहते हैं जो रक्त मासके धोवन सरीखा सडे काढा सरीखा की चडके पानी सरीखा अथवा मेद पीव औ रक्त मिला सरीखा अथवा यकृत् सरीखा पके जा मुनिके फल सरीखा जो काला जो नीला मुरदेकी दुर्गंधयुक्त जो इंद्रके धनुष तुल्य रंग बिरंगा होय॥ १५॥ जिस रक्तमे ये कहे भये विकार होयँ वह असाध्य है॥ १६॥ औरभी कहते हैं जिस रक्त पित्तसे ग्रसित भया मनुष्य सर्व उलटीमे बहुत रक्त ओके नेत्र लाल होय डकारके संगभी रक्त निकसता दीखै सो रक्तपित्तवाला निश्चय मरै॥ १७॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां रक्तपित्त निदान प्रकाशः॥ ९॥

अथ राजयक्ष्म निदानमाह

वेगरोधा त्क्षयाच्चैव साहसा द्विषमाशनात्॥
त्रिदोषो जायते यक्ष्मागदो हेतु चतुष्टयात्॥ १॥

अब राजयक्ष्माका निदान कहते हैं

जैसेकि वेगके रोकनेसे इहाँ वेगके बलवात मूत्र औ मलही काले नासो भरद्वाज संहितामे प्रमाण है

यथा

वातमूत्रपूरीषाणांह्री भयाद्यैर्यदानरः॥
वेगं निरोधयेत्तेन राजयक्ष्मादिसंभवः॥ १॥

अर्थ—लज्जा औ भय इत्यादिक कारणौं करिके जब मनुष्य अधो वायू मूत्र औ मलके वेगको रोंकता है तब उसके राजयक्ष्मा इत्यादिक रोग होते हैं तथा क्षयसे याने धातुक्षयसे इस धातुक्षयके कारण येकि अति लंघन अति मैथून इत्यादिक तथा साहस के कामसेभी राजयक्ष्मा होता है साहस याने जो अपनेसे ह्वै न सके उस कामका येक बारगी करि उठाना जैसे बलवानसे बखेडा जादा वजनका उठाना इत्यादिक औ विषमाशनसेभी राजयक्ष्मा होता है विषमाशन जो कधीं बहुत कधीं थोडा कधीं अबेरा कधीं सबेरेका खाना यह विषमाशन अनेक रोगौंका करनेवाला है सो चरक ऋषि लिखते हैं

यथा

विविधान्यन्नपानानि वैषम्येण समश्नतः॥
जनयंत्यामयान् घोरान् विषमान्मारुतादयः॥
स्रोतांसि रुधिरादीनां वैषम्याद्विषमं गताः॥
वृद्धा रोगाय जायंते पुष्यंतिच नधातवः॥

इति ऐसे वेगके रोकनेसे क्षयसे साहससे औ विषमाशनसे ये चारि कारणौंसे त्रिदोषजन्य राजयक्ष्मा होता है जो ये चारि कारण कहे इनहीके अंतर्गत अनेक कारण हैं ऐसा जानना॥ १॥

अथास्य नामानि तन्निरुक्तिश्चाह

क्षयः शोषो राजयक्ष्मा रोगराडिति कीर्तितः॥

तत्र निरुक्ति माह सुश्रुतः॥
संशोषणा द्रसादीनां शोष इत्यभिधीयते॥
क्रिया क्षयकरत्वाच्च क्षय इत्युच्यते जनैः॥
राज्ञश्चंद्र मसो यस्माद भूदेष किलामयः॥
तस्मात्तं राजयक्ष्मेति केचिदाहुर्मनीषिणः॥
रोगेषु राजते यस्मात तोऽयं रोगराडिति॥

अब राजयक्ष्माके नाम औ नामौंके अर्थ सुश्रुतसे कहते हैं

वै जैसेकि क्षय शोष राजयक्ष्मा औ रोगराट् तहाँ जिसवास्ते कि यह रसादिक धातुनको शोषि लेता है इसते शोष नाम है सर्व इंद्रियौंकी जो क्रिया शब्द स्पर्शादिक तिनका क्षय करताहै इसते क्षयनाम है सर्वका राजा जो चंद्रमा उनके प्रथम भयाथा इसते राजयक्ष्मा कहते है औ सर्व रोगौंमे अति कठिन विराजमान है इसते रोगराट् नाम है

अथ यक्ष्मणः संप्राप्तिमाह

कफ प्रधानैर्दोषैस्तु रुद्धेषु रसवर्त्मसु॥
अति व्यवा यिनो वापि क्षीणे रेतस्य नंतराः॥
क्षीयंते धातवः सर्वे ततः शुष्यतिमानवः॥ २॥

अव संप्राप्ति कहते हैं

कि कफको मुख्य करिके कफवात औ पित्त ये कुपित भये हुये रस वहनेके जो मार्ग है उनको रोंकि लेते हैं जव रसमार्ग रुका तव रक्तादिक नकाभी वढना वंद भया तव वह मनुष्य सूखने लगता है इहाँ चरकने कारण कहा है सो कहते हैं

रसः स्रोतः सुरुद्धेषु स्वस्थानस्थो विदह्यते ॥ सऊर्ध्वं कास वेगेन बहुरूपः प्रवर्त्तते इति ॥ अर्थ—जब रस बहनेकी नाडी बंद होती हैं तब वह रस अपने स्थानहीमे रहिके जलता है सोजला भया खांसीके वेगसे मुखके रस्ते अनेक रंगका निकलने लगता है जब रस क्षय भया तब उस ते उत्पन्न होनेवाले जो रक्त मांस मेद हाड मज्जा औ वीर्य येभी क्रमसे क्षीण होते हैं यह अनुलोम क्षय कहा याने क्रमसे कहा अब प्रति लोमसे कहते हैं कि जो बहुत मैथुन करता है उस अति मै-थुनसे वीर्य क्षीण होता है औ उसके क्षीण होनेसे फिरि मज्जादिक धातू क्षीण होते है इहां कोई शंका करते हैं कि रस क्षीण होनेसे धातु क्षीण होना तौ योग्य है क्योंकि वह सब धातुनका मूल है औ वीर्यकी उत्पत्ति सबसे पीछे है इसके क्षयसे दूसरौंका क्षय कैसे होयगा सत्य है परंतु वीर्यकी क्षीणतासे वायु कुपित होता है वह वायु मज्जाको सुखाये पीछे अस्थि इत्यादिकौंका क्षय करता है ऐसे वीर्यके क्षयसे सर्व धातुनका क्षय होता हैं ॥ २ ॥

पूर्वरूपमाह

श्वासांग साद कफ संस्रवतालु शोष च्छर्यग्नि साद मद पीनस कास निद्राः॥ शोषे भविष्यति भवंति सचापि जंतुःशुक्ले क्षणो भवति मांसपरो रिरंसुः॥ ३॥ स्वप्नेषु काकशुक शल्लक नीलकंठ गृध्रा स्तथैव कपयः कृकला सकाश्च॥तंवाहयंति सनदी

विंजलाश्च पश्ये च्छुष्कां स्तरून् पवन धूम दवार्दि तांश्च॥ ४॥

अव पूर्वरूप कहते हैं

क्षयरोग होनेके समयमे प्रथम कालमे श्वास अंग शिथल कफका गिरना तालूका सूखना वांति मंदाग्नि मद सरदी लगना याने नाक वहना खाँसी आना औ निद्रा अधिके ये लक्षण होते हैं औ उस मनुष्यके नेत्र सफेद मांस खानेकी औ स्त्री प्रसंगकी इच्छा करता रहता है ॥ ३॥ तथा स्वप्नमे देखैकि अपनेको कौवा सुआसेही नीलटांस गिद्ध वानर ओ गिरगिट पीठपर वै गरिके लिये फिरते हैं याने इनपर आपको सवार देखै तथा सूखी नदी देखै तथा वायु धुआँ औ दवाग्नि करिके विध्वंसित सूखे वृक्ष देखै है ॥ ४ ॥

अथ त्रिरूप लक्षणमाह

अंस पार्श्वाभि तापश्च संतापः करपादयोः॥
ज्वरः सर्वांग गश्चेति लक्षणं राजयक्ष्मणः॥ ५॥

अव त्रिरूप क्षयके लक्षण कहते हैं

जैसेकि कंधे औ पसुरिनका तपना १ हाथ औ पायनका जलना २ औ सव अंगमे ज्वर ३ ये तीनौ लक्षण राजयक्ष्माके कहे हैं॥५॥

अथ तस्यैव षड्रूपाण्याह

भक्तद्वेषो ज्वरः श्वासः कासः शोणित दर्शनं॥
स्वरभेदश्च जायंते षड्रूपे राजयक्ष्मणि॥ ६॥

अव इसी क्षयके छ रूप देखाते हैं भोजनपर द्वेष ज्वर श्वास कास

थूकनेमे रक्त गिरना औ बोलतेमे शब्द घरघराना षड्रूप क्षयके ये छ लक्षण होते हैं ॥ ६ ॥

अथ दोष भेदादेका दश रूपाण्याह

स्वरभेदोऽनिलाच्छूलं संकोच श्वांस पार्श्वयोः ॥
ज्वरो दाहोऽतिसारश्च पित्ताद्रक्तस्य चागमः ॥ ७ ॥
शिरसः परिपूर्णत्वम भक्तच्छंद एवच ॥
कासःकंठस्य चोध्वंसो विज्ञेयः कफ कोपतः ॥ ८ ॥

अब दोषभेदसे ग्यारह रूप कहते हैं

वायुकी अधिकतासे स्वर भंग शूल कंधे औ पसुरिनमे खिचाव रहता है—पित्त अधिक होनेसे ज्वर दाह अतिसार औ मुखसे रक्त गिरना ॥७॥ कफाधिकसे शिर भरा सरीखा भोजनपर अरुचि कास औ गला पडना ये लक्षण होते हैं ऐसे ये ग्यारह रूप ॥ ८ ॥

अथ साध्यासाध्यत्व माह

एकादशभि रेभिर्वा षड्भिर्वापि समन्वितं ॥
जह्याच्छोषार्दितं जंतु मिच्छन्सु विपुलं यशः ॥ ९ ॥

अब साध्यासाध्य लक्षण कहते हैं

ये जो स्वर भंगादिक ग्यारह लक्षण कहे तिन करिके युक्त अथवा भोजन द्वेष इत्यादिक छ लक्षण करिके युक्त क्षयरोगीकी चिकित्सा न करना जो कि श्रेष्ट यशकी चाहना होय तौ ॥ ९ ॥

सर्वै रर्द्धै स्त्रिभिर्वापि लिंगैर्मांस बलक्षयैः ॥
युक्तो वर्ज्य चिकित्स्यस्तु सर्व रूपोऽप्यतोऽन्यथा ॥ १० ॥

जो ये सर्व लक्षण कहे तिन सब करिके अथवा छ करिके किंवा

तीनही चिन्हों करिके युक्त तथा मांस क्षय औ बलक्षयके लक्षणों करि के युक्त होय तौ उसको औषध न देना औ जो मांस बलक्षय चिन्ह युक्त नहो औ यक्ष्माके सर्व चिन्हयुक्तभी हो तौ ईश्वराधीन कहिके औषध देना अथ बलमांस क्षय लक्षणमाह भरद्वाजः

तत्रमांस क्षय लक्षणं

गंडौष्ठ कंधरा स्कंध वक्षो जठरा संधिषु ॥ उपस्थप्रोथ पिंडिषु शुष्कता गात्र रूक्षता ॥ तोदोधमन्यः शिथिला भवेयुर्मांस संक्षये ॥ बलक्षय लक्षणंच यथा ॥ गौरवं स्तब्धता गात्रे मुखम्लानिर्विवर्णता ॥ तंद्रा निद्रा वातशोथो बलव्यापत्ति लक्षणं ॥ अर्थ—बल औ मांसक्षयके लक्षण भरद्वाज ऋषि कहते हैं मांस क्षय होनेसे गाल ओंठ गरदन कंधे छाती पेट संधि लिंग कमर औ पीडरी इनमे सूखापन शरीर रूखा औ सुई छेदने सरीखी पीडा तथा नसै शिथिल होती हैं औ बलक्षय होनेसे शरीरमे गरु अई जडता मुख मलिन वर्ण विवर्ण झपकी निद्रा जादे औ वात शोथ होता है ॥ १० ॥

अन्यच्च

महाशिनं क्षीयमाण मतीसार निपीडितं ॥
शून मुष्कोदरं चैव यक्ष्मिणं परिवर्जयेत् ॥ ११ ॥
शुक्लाक्ष मन्न द्वेष्टार मूर्द्ध्वश्वास निपीडितं ॥
कृच्छ्रेण बहु मेहंतं यक्ष्मा हंतीह मानवं ॥ १२ ॥

औरभी कहते हैं

जो खाता बहुत औ दिन दिन प्रति क्षीण होता जाता है तथा अतिसार करिके पीडित है औ अंडकोष तथा उदरमे सूजनि होय उ-

सको औषध न देना ॥ ११ ॥ जिसके नेत्र सफेद अन्न न खाय सकता होय ऊर्ध्व श्वास करिके पीडित होय मूत्रकृच्छ्र करिके युक्त वारंवार लघुशंका करता होय वह मनुष्य क्षयरोगसे मरता है ॥ १२ ॥

अथ चिकित्स्या माह

ज्वरानुबंध रहितं बलवंतं क्रियासहं ॥
उपक्रमे दात्मवंतं दीप्ताग्नि मकृशं नरं ॥ १३ ॥

अब जो रोगी चिकित्साके योग्य होता है उसके लक्षण जैसेकि जो ज्वरके संबंधसे रहित औ बलवान औषधका सहनेवाला तथा पथ्य करनेवाला औ जिसकी जठराग्नि प्रदीप्त तथा वह कृष न होय उसकी चिकित्सा करना ॥ १३ ॥

व्यवाय शोक वार्द्धक्य व्यायामाध्व प्रशोषितान् ॥
व्रणोरःक्षतसंज्ञौच यक्ष्मिणो लक्षणैः श्रृणु ॥ १४ ॥

अब जो मैथुनादिकसे क्षीण होते हैं उनके लक्षण कहते हैं मैथुन वृद्धपना कसरत रस्ता चलना व्रण औ उरः क्षत इनसे जो क्षयरोगी होते हैं उनके लक्षण सुनौ ॥ १४ ॥

अथ व्यवाय शोषिणो लक्षणमाह

व्यवाय शोषी शुक्रस्य क्षयलिंगै रुपद्रुतः ॥
पांडुदेहो यथा पूर्वं क्षीयंते चास्य धातवः ॥ १५ ॥

अब व्यवाय शोषवालेका लक्षण कहते हैं

व्यवाय याने मैथुनसे जो क्षीण भया होता है सो वीर्य क्षीणके लक्षणौं करिके पीडित होता है तथा उसका देह पांडुवर्ण होता है औ उसकी धातु यथापूर्व क्षीण होते है जैसे वीर्य क्षीण होनेसे मज्जा म...

ज्जासे अस्थि अस्थि पीछे मेद मेदसे मांस फिरि रक्त फिरि रस ऐसे अब जो कहाकि वीर्य क्षयके लक्षणों करिके पीडित होता है वै लक्षण भाव प्रकाशसे कहते हैं

तद्यथा

शुक्रक्षयेरतेऽशक्तिर्व्यथा शेफसि मुष्कयोः॥
चिरेण शुक्रसेकः स्यात्सेके रक्ताल्प शुक्रता॥

अर्थ—वीर्यके क्षीण होनेसे मैथुनमे अशक्ति तथा लिंग औ अंडकोशमे पीडा वीर्यका पडना बडी देरसे औ पडनेसे रक्त औ थोडा वीर्य पडै है॥ १५॥

शोक शोषिणमाह

प्रध्मान शीलः स्रस्तांगः शोक शोष्य पितादृशः॥
विना शुक्र क्षयकृतैर्विकारै रुप लक्षितः॥ १६॥

शोक शोषी मनुष्य चिंतापरायण तथा शिथिल शरीर औ रक्षण वीर्य क्षय विना जो प्रथम व्यवाय शोषी कहा उसीके लक्षणयुक्त होता है॥ १६॥

जरा शोषिणमाह

जरा शोषी कृशो मंद वीर्य बुद्धि बलेंद्रियः॥
कंपनोऽरुचिमान् भिन्न कांस्यपात्र हतस्वरः॥ १७॥
ष्ठीवति श्लेष्मणा हीनं गौरवा रुचि पीडितः॥
संप्रस्रुतास्य नासाक्षः शुष्क रुक्ष मलच्छविः॥ १८॥

अब जरा शोषीके याने वृद्धपनेसे क्षीण भयेके लक्षण कहते हैं जैसेकि जरा शोषी मनुष्य कृश तथा उसके वीर्य बुद्धि बल औ इंद्रि-

र्या ये मंद होते हैं शरीरमे कंपा अरुचि मान याने शरीरकी कांतिहीन वाला औ जैसा फूटा कांसेका पात्र बजै तैसा स्वर ॥ १७ ॥ थूकनेके समय खखारिके कफ निकारना चाहै तौभी न निकलै शरीरकी गरुअई तथा अरुचि करिके पीडित मुख नासिका औ नेत्रौंसे पानी पडता रहै तथा मल सूखा ओरूखा होता है ॥ १८ ॥

अध्व शोषिणमाह

अध्व प्रशोषी स्रस्तांगः संभ्रष्ट परुषच्छविः॥
प्रसुप्त गात्रा वयवः शुष्क क्लोमगलाननः॥ १९॥

जिस मनुष्यको बहुत मार्ग चलनेसे राजयक्ष्मा भया होय उसका अंग शिथिल औ देहका रूप ऐसाकि जैसे भुजा भया औ रूखा तथा सब अंग सोयभये याने स्पर्शज्ञानहीन तथा उसका क्लोम याने पियासका स्थान गला औ मुख सूख रहैगा ॥ १९ ॥

व्यायाम शोषिणमाह

व्यायाम शोषी भूयिष्ठ मेभिं रेवसमन्वितः॥
लिंगै रूरः क्षय कृतैः संयुक्तश्च क्षतं विना॥२०॥

जो मनुष्य व्यायाम याने कसरत कुस्ती करनेसे क्षीण होता है उसमे जो लक्षण अध्व शोषीके कहे वे उसमे अधिक होते हैं औ क्षत लक्षण विना उरः क्षतकेभी लक्षणयुक्त होता है

क्षतलक्षण सुश्रुत कहे है सो कहते हैं

यथा तस्यो रसिक्षते रक्तं भूपः श्लेष्माच गच्छति॥ कासमान श्छर्दयेच्च पीत रक्ता सिता रुणम्॥ संतप्त वक्षसोऽत्यर्थं दयनात् परिताम्यति॥ दुर्गंधौ च्छ्वास वदनो भिन्न वर्ण स्वरोनरः॥ अर्थ—जिस मनुष्यके

उरस्थलमे क्षत याने घाव होता है उसके खांसनेसे वारंवार मुखसे रक्त औ फक गिरता है तथा खांस तेपर उलटीभी करि देताहै सो उलटीका रंग पीला लाल काला औ किंचित लाल याने गुलाबी रंग होता है उसकीछाती तपती रहती है औ दवने वगैरेसे वह व्याकुल होता है उच्छ्वास औ मुखमे दुर्गंध आता है तथा उसका वरण औ स्वर बदलि जाता है॥ २० ॥

व्रण शोषिणमाह

रक्तक्षया द्वेद नाभि स्तथैवाहार यंत्रणात्॥
व्रणि नश्च भवेच्छोषः सचासाध्य तमो मतः॥२१॥

व्रण शोषी कहते हैं जिसके घावसे रक्त बहुत जाता है उसके रक्तके क्षयसे औ पीडासे तथा आहार न करने जानेसे शोषरोग होता है सो अति असाध्य है॥ २१ ॥

अथ सनिदान मुरः क्षतमाह

धनुषा यस्य तोत्यर्थं भारमुद्व हतो गुरुं॥
युद्ध्मानस्य बलिभिः पततो विषमोच्चतः॥ २२॥
वृषं हयं वा धावंतं दम्यं चान्यं निगृह्णतः॥
शिला काष्ठाश्म निर्घातान् क्षिपतो निघ्नतःपरान्॥२३
अधीयानस्य चात्युच्चैर्दूरंवा व्रजतो द्रुतं॥
महानदींवा तरतो हयैर्वा सहधावतः॥ २४॥
सहसोत्पततो दूरं तूर्णं वाति प्रनृत्यतः॥
तथान्यैः कर्मभिः क्रूरैर्भृशा मभ्याहतस्यवात॥ २५॥

विक्षते वक्षसिव्याधिर्बलवान् समुदीर्यते ॥
स्त्रीषु चाति प्रसक्तस्य रूक्षाल्प प्रमिताशिनः ॥ २६ ॥
उरो विरुज्यतेऽत्यर्थं भिद्यतेथ विभज्यते ॥
प्रपीड्यते ततः पार्श्वे शुष्यत्यंगं प्रवेपते ॥ २७ ॥
क्रमा द्वीर्यं बलं वर्णो रुचि रग्निश्चहीयते ॥
ज्वरो व्यथा मनो दैन्यं विड्भेदोऽग्नि वध स्तथा ॥ २८ ॥
दुष्टः श्यावोऽथ दुर्गंधः पीतो विग्रथितो बहुः ॥
कास्य मानस्य चाभीक्ष्णं कफः सास्रः प्रवर्त्तते ॥
सक्षतः क्षीयतेऽत्यर्थं तथा शुक्रोजसोः क्षयात् ॥ २९ ॥

अब निदानसहित उरःक्षत कहते हैं

जो मनुष्य धनुष खीचने चलानेमे जादा परिश्रम करता है किवा अपनी शक्तिसे जादा भार लैके चलता या उठाता है या अपनेसे अति बलवानसे कुस्ती करता है या विषमस्थान याने ऊंचा खाली जमीनपर या ऊंचेसे पडै ॥ २२ ॥ अथवा बैल वा घोड़ा हाथी इत्यादिकनको दौडतेमे पकडै तथा शिला याने मोटी शिला औ काठ तथा वडा पत्थर उठायके फेंकै ॥ २३ ॥ किवा कोई शत्रुको मारै या उंचे स्वरसे अध्ययन करै या दूरतक दौडता जाय या बडी नदीमे पैरे वा घोडेके बरोवर दौडै ॥ २४ ॥ वा सहसा दूरसे आयके खडा रहै या जलदी जलदी नाचै ऐसेही औरभी क्रूरकर्म करै ॥ २५ ॥ अथवा कुछ वडी चोट छातीमे लगै उससे अंदर उर याने छाती फटि जाती है उसमे उरः क्षत नाम बलिष्ट रोग उत्पन्न होते है तथा जो रूखा औ थोडा माफिक

भोजन करता है औ मैथुन जादा करता है ॥ २६ ॥ उसकीभी छाती अंदर विदीर्ण है के छेदने औ फटनेसरीखी पीडा होने लगती है फिरि उसते पसुलियांभी दुखने लगती हैं औ अंग सूखने लगता है उसते वह मनुष्य कांपनेभी लगता है ॥ २७ ॥ फिरि क्रमसे वीर्य औ बलवर्ण रुचि औ जठराग्निभी क्षीण होने लगते हैं तब ज्वर पीडा मनमे उदासी मलका फूटना औ जठराग्निका नाश होता है ॥ २८ ॥ फिरि उसके खांसनेसे दूषित धूसर दुर्गंध युक्त पीला गंठीला ऐसा कफ रक्तमिश्रित औ बहुत पडता है तब वह रोगी अति क्षीण होने लगता है औ वीर्य तथा पराक्रमकेभी क्षीणपनेसेभी क्षीण होता है ॥ २९ ॥

क्षीणस्य पूर्वरूपमाह

अव्यक्तं लक्षणं तस्य पूर्व रूपमिति स्मृतम् ॥
उरोरुक् शोणित च्छर्दिः कासो वैशेषिकः क्षते ॥ ३० ॥

क्षीणका पूर्वरूप कहते हैं

इस उरःक्षतका जो अप्रसिद्ध लक्षण है वही पूर्वरूप जानना इसमे छातीमे पीडा रक्तकी उलटी औ क्षय कासते कास जादा आता है ॥ ३० ॥

अथ क्षीणस्य रूपमाह

क्षीणे सरक्त मूत्रत्वं पार्श्व पृष्ठ कटीग्रहः ॥ ३१ ॥

अब क्षीणकारूप कहते हैं

वीर्य औ ओज याने पौरुषके क्षीण होनेसे रक्तसहित मूत्र आता है तथा पसुली पीठ औ कमर ये जकडि जाते हैं ॥ ३१ ॥

अथ साध्य याप्या साध्यत्व माह

अल्प लिंगस्य दीप्ताग्नेः साध्यो बलवतो नवः ॥

परि संवत्सरो याप्यः सर्व लिंगं विवर्जयेत् ॥ ३२ ॥

अब साध्य याप्य औ असाध्यके लक्षण कहते हैं

जिसमे थोडे लक्षण मिलैं औ रोगीका जठराग्नि प्रदीप्त होय तथा वह बलवान होय औ रोगभी थोडेही दिनौंका होय सो साध्य होता है तथा एक वर्ष पीछे याप्य होता है औ सर्व लक्षणौं करिके जो युक्त है सो असाध्य होता है ॥ ३२ ॥

॥ इति राजयक्ष्म रोग निदानं ॥

अथ चिकित्सामाह भावप्रकाशात्

बलिनो बहु दोषस्य पंचकर्माणि कारयेत् ॥
यक्ष्मिणः क्षीण देहस्य तत्कृतंस्या द्विषोपमम् ॥ १ ॥
शुक्रायत्तं बलं पुंसां मलायत्तंहि जीवितं ॥
तस्माद्यत्नेन संरक्षे द्यक्ष्मिणो मलरेतसी ॥ २ ॥

अब भावप्रकाशते चिकित्सा कहते हैं

जैसेकि जो क्षयरोगी बलवान होय औ बहुत वातादि दोषयुक्त होय तौ वमनादिक पंच कर्म कराना जो वह क्षीण होय तौ ये पंचकर्म उसको विष तुल्य हैं ॥ १ ॥ इहां कारण कहते हैं कि मनुष्योंका जो बल है सो वीर्यके स्वाधीन है औ जीवन मलके स्वाधीन है इस वास्ते क्षयरोगीके मल औ वीर्यकी रक्षा बडे प्रयत्नसे करना ॥ २ ॥

अथ कास निदानं संप्राप्ति चाह

धूमोपघाता द्रजस स्तथैव व्यायाम रूक्षान्न निषेवणाच्च ॥ विमार्ग गत्वा दथ भोजनस्य वेगावरो धात्क्षुवथो स्तथैव ॥ ३ ॥ प्राणोह्यु दाना नुगतः

प्रदुष्टः संभिन्न कांस्य स्वनतुल्य घोषः॥ निरेति व क्त्रात्सहसा सदोषो मनीषिभिः कास इति प्रदिष्टः॥४॥

अब कासरोगका निदान कहते हैं

सो जैसे धुआँ औ रज मुख नासिका द्वारा प्रवेश होनेसे कसरत इत्यादिक परिश्रमसे रूखा अन्न खानेसे अति शीघ्रतासे भोजन करनेसे मलमूत्र औ छीकके रोंकनेसे ॥ ३ ॥ दूषित प्राण वायु उदानसे मिलिके वातादिक दोषसहित जैसा फूटा कांसेका पात्र बजै ऐसे शब्दवान सहयाने यक बारगी मुखसे निकरता है उसको वैद्य लोग कास कहते हैं ॥ ४ ॥

संख्यामाह

पंचकासाः स्मृतावात पित्तश्लेष्म क्षत क्षयैः॥ क्षयायो पेक्षिताः सर्वे बलिन श्चोत्तरोत्तरं॥ ५॥

कासकी संख्या कहते हैं

कास पांच प्रकारका है जैसे वातकास पित्तकास कफकास क्षतकास औ क्षयकास ये सर्व कास शीघ्र औषध किये विना क्षयरोगको करनेवाले होते हैं इनमे एकसे एक उत्तरोत्तर बलवान हैं जैसे वातकाससे पित्तकास पित्तकाससे कफ कफसे क्षत क्षतसे क्षयकास बलवान जानना ॥ ५ ॥

पूर्वरूपमाह

पूर्व रूपं भवेत्तेषां शूक पूर्ण गलास्यता॥ कंठे कंडूश्च भोज्याना मवरोधः प्रजायते॥ ६॥

अब पूर्वरूप कहते हैं

जो पांचौ कास कहे उनके पूर्वरूपमे याने उत्पन्न कालमे गलेमे औ मुखमे सींकुर भरे सरीखे मालूम होयँ तथा कंठमे खाज औ भोजनका अवरोध होता है ॥ ६ ॥

अथ वातकास लक्षणं

हृच्छंख पार्श्वोदर मूर्द्धशूली क्षामाननः क्षीणब ल स्वरौजाः॥ प्रसक्त वेगस्तु समीरणेन भिन्नः स्व रः कासति शुष्कमेव ॥ ७॥

अव वातकासका लक्षण कहते हैं

वातकासमे हृदय कनपटी पसुरी पेट औ मस्तकमे शूल मुख मलिन बल स्वर औ तेजशक्ति क्षीण तथा निरंतर खांसीका वेग औ घरघरे शब्दयुक्त होता है औ सूखा खांसता है ॥ ७॥

पित्तकास माह

उरो विदाह ज्वर वक्त्रशोषै रभ्यर्दित स्तिक्तमुख स्तृ षार्त्तः॥ पित्तेन पीतानि वमेत्कटूनि कासेत्स पांडुः परिदह्यमानः॥ ८॥

पित्तकास लक्षण कहते हैं

पित्तकाससे छातीमे दाह ज्वर मुखका सूकना इन करिके व्याकुल मुख कडुआ पिआस कफ पीला औ कडुवा खांसी लेतेमे पांडुवर्ण औ अंगमे दाह होना ॥ ८ ॥

कफकासमाह

प्रलिप्य मानेन मुखेन सीदन् शिरो रुजार्त्तः कफ

पूर्णदेहः॥ अभक्तरुग्गौरव कंडुयुक्तः कासे द्दशं सांद्रकफःकफेन॥ ९॥

अब कफकास लक्षण कहते हैं

कफ काससे मुखमे कफ लपटा रहता है उससे व्याकुल तथा मस्तक पीडासे व्याकुल देह कफसे जकडा भया अन्नपर अरुचि शरीरमे गरु अई औ खाज औ खांसतेमे गाढा औ बहुतसा कफ गिरै॥९

क्षतकासमाह

अति व्यवाय भाराध्व युद्धाश्वगज विग्रहैः॥
रूक्षस्योरःक्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत्॥ १०॥
सपूर्वं कासते शुष्कं ततः ष्ठीवेत्स शोणितं॥
कंठेन रुजताऽत्यर्थं विरुग्नेनेव चोरसा॥ ११॥
सूचिभि रिव तीक्ष्णाभि स्तुद्यमानेन शूलिना॥
दुःखस्पर्शेन शूलेन भेदपीडाभि तापिना॥ १२॥
पर्वभेद ज्वरश्वास तृष्णा वैस्वर्य पीडितः॥
पारावत इवाकूजन् कासवेगात्क्षतो द्भवात्॥ १३॥

क्षतकास कहते हैं

अति मैथुन अति भार अति मार्ग चलना अतिशय युद्ध औ चंचल हाथी घोडोंका वश करना इन कारणोंसे रूक्ष पुरुषकी छाती भीतर घाउ ह्वैके वायु उसमे प्रवेश करिके कास उत्पन्न करता है॥१० वह रोगी प्रथमतौ सूखा खांसता है फिरि खांसनेसे रक्त थूकता है कंठमे अति पीडा छातीमे फटनेसरीखी पीडा औ उसी छातीमे॥ ११॥

सुई कोंचने सरीखी पीडा छातीमे हाथ न लगाया जाय पसुरीनमे ऐसी पीडाकि जानौ पसुरी फूटि जायगी ॥ १२ ॥ पोरनमे फूटनि ज्वर श्वास पियास औ स्वरभंग इन करिके पीडित तथा इस क्षतकासके वेगसे कबूतर सरीखा कूजता है ॥ १३ ॥

क्षयकासमाह

विषमा सात्म्य भोज्याति व्यवाया द्वेग निग्रहात् ॥
घृणिनां शोचतां नृणां व्यापन्नेऽग्नौ त्रयोमलाः ॥
कुपिताः क्षयजं कासं कुर्युर्देह क्षयप्रदं ॥ १४ ॥
सगात्र शूलज्वरदाह मोहान् प्राणक्षयं चोप लभे
तकासी ॥ शुष्कं विनिष्ठीवति दुर्बलस्तु प्रक्षीण मां
सो रुधिरं सपूयं ॥ तं सर्व लिंगं भृश दुश्चिकित्स्यं
चिकित्सितज्ञाः क्षयजं वदंति ॥ १५ ॥
इत्येष क्षयजः कासः क्षीणानां देहनाशनः ॥
साध्यो बलवतां वास्यायाप्यस्त्वेवं क्षतोत्थितः ॥ १६ ॥
नवौ कदा चित्साध्येतामपि पादगुणा न्वितौ ॥
स्थविराणां जरा कासाः सर्वे याप्याः प्रकीर्त्तिताः ॥
त्रीन्पूर्वान् साधयेत्साध्यान्याप्यैर्याप्यांस्तुयापयेत् १७

क्षयकास कहते हैं

विषम भोजन कुपथ्य भोजन अति मैथुन मलमूत्रादिकौंका वेग रोकना इन कारणौंसे दया औ शोच करनेवाले मनुष्योंका अग्नि मंद होनेसे तीनौ दोष कुपित हैके देहके क्षय करनेवाले क्षयकासको उत्पन्न

करते हैं तब वह मनुष्य अंगशूल ज्वर दाह औ मोह तथा मृत्युकोभी प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ तथा दुर्बल हुआ भया ओ नित्यप्रति सूखता जाता है तथा मांस क्षीण हुआ भया पीब औ रक्त थूकता है उस सर्व चिन्हयुक्त औ औषध क्रियाके योग्यभी नही ऐसे कासको क्षय जन्य कहते हैं ॥ १५ ॥ यह क्षयकास क्षीण मनुष्योंका प्राण नाशक कदाचित् बलवानके होय तौ साध्य जानना ऐसेही क्षतजन्य याप्य है ॥ १६ ॥ ये दोनौं जो वैद्यादिक चारौ पाये युक्त होयँ औ ये न ये होय तौ कदाचित् साध्य होयँ वृद्धौंके जरा कास याप्य हैं इन सबमे तीनि साध्यको साधना दो याप्यको जतनमात्र करते रहना ॥ १७ ॥

इति कास निदानं

अथ हिक्का श्वास निदानमाह

विदाहि गुरुविष्टंभि रूक्षाभिष्यंदि भोजनैः॥
शीत पानाशन स्थान रजो धूमा तपानिलैः॥ १ ॥
व्यायाम कर्मभाराध्ववेग घाता पतर्पणैः॥
हिक्का श्वासश्च कासश्च नृणां समुप जायते॥ २ ॥

अब हुचकी औ श्वासका निदान कहते हैं

विदाहकारक पदार्थ भारी पदार्थ कबजियत कारक पदार्थ रूक्ष कफकारक ऐसे भोजन तथा शीत पीनेके पदार्थ खानेके पदार्थ औ रहनेके स्थान तथा धूरि धुआँ धूप औ पवनसे ॥ १ ॥ कसरत वगैरे मेहनतसे बोझ उठानेसे अति रस्ता चलनेसे झाडा पेशावरोकनेसे लंघन [illegible]गने उपवास इनसे हुचकी श्वास औ कासरोग होते हैं ॥ २ ॥

हिक्का संप्राप्तिमाह

मुहुर्मुहुर्वायु रुदेति सस्वनो यकृत्प्लिहां त्राणि मुखादि वाक्षिपन् ॥ सघोषवानाशु हिनस्त्यसून्यत स्ततस्तुहिक्केत्यभि धीयते बुधैः ॥ ३ ॥

हुचकीकी संप्राप्ति कहते हैं

दूषित प्राण वायु वारंवार रहिक ऐसा शब्द करता भया औ मानौ यकृत औ प्लीहाको मुखके रस्ते बाहेर काढि डारैगा ऐसे जो मुखसे निकलता है उसको हिक्का याने हुचकी कहते है यह हुचकी तत्काल प्राणनाशक है ॥ ३ ॥

संख्यामाह

अन्नजां यमलां क्षुद्रां गंभीरां महतीं तथा ॥
वायुः कफेना नुगतः पंचहिक्काः करोतिहि ॥ ४ ॥

संख्या कहते हैं

अन्नजा यमला क्षुद्रा महती औ गंभीरा ऐसे इन पांच प्रकारकी हुचकी पैदा करता है ॥ ४ ॥

पूर्वरूपमाह

कंठोदरे गुरुत्वंच वदनस्य कषायता ॥
हिक्कानां पूर्व रूपाणि कुक्षेराटोप एवच ॥ ५ ॥

पूर्वरूप कहते हैं

हुचकीके उत्पन्न कालमे कंठ औ पेटमे भारीपना मुख कसैला औ कोखोंका फूलना होता है ॥ ५ ॥

अन्नजामाह

पानान्नै रति संभुक्तैः सहसा पीडितोऽनिलः॥
हिक्कये दूर्ध्वं गोभूत्वातां विद्या दन्त जांभिषक्॥६॥

अन्नजाहिक्क लक्षण

जो अतिशय करिके किये भये पान औ आहार तिन करिकै अतिशय पीडित प्राण वायु एकाएकी ऊर्ध्व गति व्हैके हुचकी पैदा करता है उस हुचकीको अन्नजा कहते हैं॥ ६॥

यमलामाह

चिरेण यमलैर्वे गैर्या हिक्का संप्रवर्त्तते॥
कंपयंती शिरोग्रीवां यमलांतां विनिर्दिशेत्॥७॥

जो हुचकी रहि रहिके कुछ देरसे दो दो एकदम मस्तक औ ग्रीवाको कंपावती भई आवै उसको यमला कहते हैं॥ ७॥

गंभीरामाह

नाभि प्रवृत्ताया हिक्का घोरा गंभीर नादिनी॥
अनेकोपद्रव वती गंभीरा नामसा स्मृता॥८॥

जो हुचकी नाभिसे प्रवृत्त होय औ गंभीर होय घोर नाद करनेवाली तथा अनेक उपद्रवयुक्त होय वह गंभीरा॥ ८॥

प्रकृष्ट कालैर्या वेगैर्मंदैः समभि वर्त्तते॥
क्षुद्रिका नामसा ज्ञेया जत्रुमूला त्प्रधावति॥ ९॥

क्षुद्रिकाके लक्षण

जो हुचकी जलदी जलदी औ मंद वेगसे तथा जत्रुके मूलस उपर वेग करै उसको क्षुद्रिका कहते हैं॥ ९॥

महतीमाह

मर्माण्युत्पीडयंतीच सततं याप्रवर्त्तते ॥
महा हिक्केति साज्ञेया सर्व गात्र विकंपिनी ॥ १० ॥

महाहिक्का कहते हैं

जो हुचकी सर्व मर्म स्थानोंको पीडित करती भयी औ सर्व अंगको कंपावती भयी प्रवर्त्त होती है उसको महा हुचकी कहते हैं ॥ १०

असाध्य लक्षणमाह

आयम्यते हिक्कतो यस्य देहो दृष्टि श्चोर्ध्वं ताम्यते य श्च नित्यं ॥ क्षीणोऽन्न द्विट् क्षौतिय श्चाति मात्रं तौ द्वौ चांत्यौ वर्जये द्धिक्कमानौ ॥ ११ ॥
अति संचित दोषस्य भक्त द्वेष करस्यच ॥
व्याधिभिः क्षीण देहस्य वृद्धस्याति व्यवायिनः ॥ १२ ॥
आसां यासा समुत्पन्ना हिक्काहंत्या शु जीवितं ॥
यमिकाच प्रलापार्त्ति मोहतृष्णा समन्विता ॥ १३ ॥

असाध्य लक्षण कहते हैं

हुचकी लेनेमे जिसकी देह पसरि जाय दृष्टि ऊपरको फैलिजाय औ जो व्याकुल ह्वै जाय सो तथा जो क्षीण अन्नपर अप्रीतिवाला तथा जिसको छींकैं बहुत आवैं वै दोनो औ गंभीरा तथा महतीवाले ये हुचकीवाले असाध्य है ॥ ११ ॥ जो इनमेसे कोईसीभी हुचकी अति संग्रहीत वातादि दोषवालेके तथा अन्नारुचिवालेके तथा जिसका देह रोगोंसे क्षीण भया होय उसके तथा वृद्ध औ अति मैथुनवालेके १२

उत्पन्न भई होय तौ उसके प्राणोंको हरती है इसी तरहसे जो प्रलाप पीडा मोह पियास युक्त यमिका होय वहभी असाध्य जानना ॥ १३॥

साध्यासाध्यां यमिकामाह

अक्षीणश्चाप्य दीनश्च स्थिरधात्विंद्रियश्चयः॥
तस्य साधयितुं शक्या यमिकाहंत्यतोऽन्यथा॥ १४॥

इतिहिक्का

यमिकाके साध्यासाध्य लक्षण

जो मनुष्य क्षीण नहीं औ प्रसन्न है तथा जिसके धातु औ इंद्रिय स्थिर हैं उसकी यमिका साध्य नही तौ असाध्य जानना याने क्षीण अप्रसन्न औ धातु इंद्रिय स्थिर नही उसकी असाध्य होती है१४

इतिश्री मत्सु० सी० पं० र० प्र० वि० रु दी० हिक्का निदान प्रकाशः ॥ १२ ॥

अथ श्वासमाह

महोर्ध्वच्छिन्नतमकक्षुद्रभेदैश्च पंचधा ॥
भिद्यते समहा व्याधिः श्वास एको विशेषतः॥ १॥

अब श्वास कहते हैं

एकही श्वास महाश्वासादिक भेदसे पांच प्रकारका होता है यह महारोग है वे भेद जैसेकि महाश्वास ऊर्ध्वश्वास छिन्नश्वास तमकश्वास औ क्षुद्रश्वास ऐसे ये पांच ॥ १ ॥

अथ पूर्वरूपमाह

प्राग्रूपं तस्य हृत्पीडा शूलमाध्मान मेवच ॥
आनाहो वक्त्र वैरस्यं शंख निस्तोद एवच॥ २॥

अब पूर्वरूप कहते हैं

श्वास उत्पन्न होनेके समयमे प्रथम हृदयमे पीडा शूल पेट फू-
लना औ पेट तनना मुख बे स्वाद औ कन पटिनमे छेदने सरीखी
पीडा ॥ २ ॥

संप्राप्तिमाह

यदा स्रोतांसि संरुध्य मारुतः कफ पूर्वकः॥
विष्वग्व्रजति संरुद्ध स्तदा श्वासान्करोतिसः ॥ ३ ॥

संप्राप्ति कहते हैं

जैसेकि जब कफयुक्त वायु उस कफ करिके रुका भया प्राण ज-
ल औ अन्नवहनेवाली नाडिनको रोंकिके चारौ तरफको निकलने ल-
गता है तब श्वासोंको उत्पन्न करता है ॥ ३ ॥

अथ महाश्वास लक्षणमाह

उद्धूयमान वातोयःशब्द वद्दुः खितो नरः॥
उच्चैः श्वसिति संरुद्धो मत्तर्षभ इवा निशं॥ ४ ॥
प्रणष्ट ज्ञान विज्ञान स्तथा विभ्रांत लोचनः॥
विवृता क्षाननो बद्ध मूत्र वर्चा विशिर्ण वाक्॥ ५ ॥
दीनः प्रश्व सितं चास्य दूरा द्विज्ञायते भृशम्
महाश्वासो पसृष्टश्च शीघ्रमेव विपद्यते॥ ६ ॥

महाश्वास लक्षण

जिस मनुष्यका प्राण वायु शब्द करता भया ऊर्ध्व गतिको प्राप्त
होय उसते वह दुखी होय तथा जैसे रुंधा भया मस्त सांड श्वासैं लेता
है तैसे निरंतर श्वासैं लेइ ॥ ४ ॥ तथा उसका ज्ञान जो शास्त्र औ

विज्ञान जो उसके प्रयोजनका निश्चय सोभी नष्ट होता है नेत्र भ्रमिष्ट होय हैं औ फैले होय हैं तथा मुखभी पसरा होय है मल औ मूत्रका रुकावट स्वर फटा भया ॥ ५ ॥ मन उदास श्वासका शब्द दूर हीसे सुनि पडै वह महाश्वास करिके पीडित है ऐसा जानना वह शीघ्रही मरता है ॥ ६ ॥

ऊर्ध्व श्वासमाह

ऊर्ध्वं श्वसिति योदीर्घं नच प्रत्याहरत्यधः॥
श्लेष्मा वृत मुख स्रोतः क्रुद्धगंधवहार्दितः॥ ७॥
ऊर्ध्व दृष्टिर्विपश्यंश्च विभ्रांताक्ष इतस्ततः॥
प्रमुह्य न्वेदनार्त्तश्च शुष्कास्यो रति पीडितः॥ ८॥
ऊर्ध्वश्वासे प्रकुपिते ह्यधः श्वासो निरुध्यते॥
मुह्यत स्तम्यत श्चोर्ध्वं श्वास स्तस्यैं वहंत्य सून्॥ ९॥

ऊर्ध्वश्वास लक्षण कहते हैं

जो मनुष्य क्रुद्धित वायु करिके पीडित औ जिसका मुख तथा सवनाडीं कफ करिके ढकी हैं ॥ ७ ॥ औ वह ऊपर कोतौलंबी श्वास छोडता है परंतु नीचेको खींचत नहीं तथा भ्रमिष्ट नेत्रौंसे ऊपर कोजिधर उधर देखता होय तथा वेदनासे मोहको पाय रहा होय मुख सूखा रोगसे पीडित होय॥ ८॥ तिसके ऊर्ध्व श्वासके कुपित होनेसे नीचेकाभी रुकि जाता है तब मोहको औ दुख पावते भये उस मनुष्यके प्राण वह ऊर्ध्वश्वास हरता है ॥ ९ ॥

अथ छिन्नश्वास माह

यस्तु श्वसिति विच्छिन्नं सर्वप्राणेन पीडितः॥

नवा श्वसितिदुःखार्त्तो मर्मच्छेद रुगर्दितः ॥ १० ॥
आनाह स्वेदमूर्छार्त्तो दह्यमा नेन वस्तिना ॥
विप्लुताक्षः परिक्षीणः श्वसन् रक्तैक लोचनः ॥ ११ ॥
विचेताः परिशुष्कास्यो विवर्णः प्रलपन्नरः ॥
छिन्नश्वासेन विच्छिन्नः सशीघ्रं विजहात्यसून् ॥ १२ ॥

जो मनुष्य सर्वशक्ति करिके पीडित भया हुआ रहि रहिके श्वासलेइ अथवा हृदयादिक मर्मस्थानौंमे काटने छेदने सरीखी पीडासे दुखित होनेसे नभी श्वासलेइ ॥ १० ॥ तथा पेटका तनना औ पसीना औ मूर्छासे तथा पेडूकी जलनिसे पीडित नेत्र पानीसे भरेभये क्षीणनेत्र लाल ऐसाभया हुआ श्वासैंलेइ ॥ ११ ॥ चेतना रहित मुखसूखा रूपकरूप प्रलापयुक्त इस छिन्नश्वासकरिके व्याकुल ऐसा मनुष्य मत्युको पावताहै ॥ १२ ॥

तमकमाह

प्रतिलोमो यदावायुः स्रोतांसिप्रतिपद्यते ॥
ग्रीवांशिरश्चसंगृह्य श्लेष्माणं समुदीर्यच ॥ १३ ॥
करोति पीनसं तेन रूद्धो घुर्घुरकं तथा ॥
अतीव तीव्रवेगंच श्वासं प्राण प्रपीडकं ॥ १४ ॥
प्रताम्यति सवेगेन त्रस्यते सन्निरुद्ध्यते ॥
प्रमोहं कासमान श्च सगच्छति मुहुर्मुहुः ॥ १५ ॥
श्लेष्मणा मुच्यमानेन भृशं भवति दुःखितः ॥
तस्यैव च विमोक्षांते मुहूर्त्तं लभते सुखं ॥ १६ ॥

तथा स्यो ध्वंसते कंठः कृच्छ्रा च्छक्नोति भाषितुं ॥
नचापि निद्रांलभते शयानः श्वास पीडितः॥ १७॥
पार्श्वेतस्या वगृह्णाति शयानस्य समीरणः॥
आसीनो लभते सौख्य मुष्णंचैवा भिनंदति॥ १८॥
उच्छ्रिताक्षो ललाटेन स्विद्यता भृशमार्त्तिमान्॥
विशुष्कास्यो मुहुः श्वासो मुहुश्चैवा वधम्यते॥१९॥
मेघांबु शीतप्राग्वातैः श्लेष्मलैश्च विवर्द्धते॥
सयाप्य स्तमकः साध्यो यदिवास्या न्नवोत्थितः॥२०॥

तमक श्वास लक्षण जैसेकि जबवायु मार्ग छोडिके कुमार्गीव्है के नाडियों मे प्राप्तहोताहै तब गरदन औ शिरको जकडिके औ कफको बढायके ॥ १३ ॥ पीनस याने नाकसे कफबहना इसकी सरदी लगीहै ऐसा भीकतेहै उसरोगको उत्पन्नकरताहै फिरि उह वायु उसकफसे रूकाभया कंठमे घुरघुरशब्द करताहै औ प्राणौंका याने प्राणौंका स्थानजो हृदय उसके पीडित करने वाले श्वासको उत्पन्न करताहै॥१४॥तब वह मनुष्य व्यथाको प्राप्तहोताहै औ खांसताहै उसते त्रासपावतहै औ निश्चेष्टव्है जाताहै खांसते खांसते वारंवार मूर्च्छितहोताहै ॥ १५॥ जब उसखासने से कफनही छूटताहै तब बडादुखीहोताहै फिरिजब वहछुटि जाताहै तवएक मुहूर्त्तसुखी रहताहै॥ १६ ॥ कंठमे निरंतर खसरखसाहटरहताहै उसते अति कष्टसे बोलाजाताहै उस श्वाससे पीडितको सोनेसे नीदनही लगती है ॥ १७॥ कारण जबवहसोता है तव उसकी पसुलियोंको वायु भरिके जकडिलेताहै तब बैटनसे सुखीहोता है औ उष्णपदार्थ याने गरमागरम पदार्थकी इच्छाकरता है॥ १८ ॥ नेत्रऊंचे रहते है

मस्तकमे पसीना मुख सूखता है इनसे पीडित भया हुआ वारंवार श्वास लै लैके जैसे हाथीपर बैठा हलै वैसा हालता है वह श्वास ॥ १९ ॥ मेघ छावनेसे वर्षा होनेसे ठंढसे पूरबके पवनसे औ कफकारक आहार विहारसे बढता है वह तमक याप्य है जो किनवा होय तौ साध्यभी होय तौ संशय नही ॥ २० ॥

प्रतमक लक्षणं

ज्वर मूर्च्छा परीतस्य विद्यात्प्रतमकंतुतं ॥

अन्यच्च

उदावर्त्त रजो ऽजीर्ण क्लिन्नकाय निरोधजः ॥ २१ ॥
तम सावर्द्धते ऽत्यर्थं शीतैश्चाशु प्रशाम्यति ॥
मज्जत स्तम सी वास्यविद्या त्प्रतमकं तुतं ॥ २२ ॥

प्रतमक लक्षण जो तमक लक्षण हैं उनहीमे ज्वर मूर्छायुक्त होनेसे प्रतमक ऐसे एक कोईका मत दूसरे कहते हैं कि उदावर्त्त रज याने अजीर्ण औ शरीरके अति वृद्ध होनेसे तथा मलादिकौंके रोंकनेसे जो उत्पन्न होता है ॥२१॥ औ तमक करिके इहां उष्ण पदार्थ जानना सो यह श्वास तमसा याने उष्ण पदार्थ उससे बढता है औ शीत पदार्थौंसे शांत होता है तथा इस श्वासवालेको ऐसा मालूम होताहै कि मै बडे अंधकारमे प्राप्त भया हौं इस श्वासको प्रतमक कहते हैं ॥ २२ ॥

अथक्षुद्रश्वासं चैतेषांसर्वेषां साध्या साध्यत्वमाह

रूक्षा यासोद्भवः कोष्ठे क्षुद्रो वात मुदीरयेत् ॥
क्षुद्रश्वासो नसोऽत्यर्थं दुःखेनां गप्रबाधकः ॥ २३ ॥

हिनस्ति नसगात्राणि नदुःखाय यथेतरे ॥
नच भोजन पानानां निरुणद्ध्यु चितांगतिं ॥ २४ ॥
नेंद्रियाणां व्यथांचापि कांचिदापादये द्रुजं ॥
ससाध्य उक्तो बलिनः सर्वेचा ऽव्यक्तलक्षणा. ॥२५॥
क्षुद्रः साध्यतम स्तेषां तमकः कृच्छ्रउच्यते ॥
त्रयः श्वासा नसिद्ध्यंति तमको दुर्बलस्यच ॥ २६ ॥
कामंप्राणहरारोगा बहवो नतुते तथा ॥
यथाश्वास श्च हिक्काच निहतः प्राण माशुवै ॥२७॥

इतिश्वासनिदानं

अब क्षुद्रश्वास चिन्ह औ सर्वश्वासोंके साध्यासाध्य लक्षण कहतेहैं

रूक्ष आहारा विहार औ परिश्रमसे क्षुद्र श्वास उत्पन्न होता है वह कोठेमे वायूको बढाता है वह श्वास अतिदुखसे अंगपीडा कारक नही है ॥ २३ ॥ वह शरीरकाभी नाशक जैसेदूसरे हैं तैसानही है औ जो खानेपीनेकी उचित गति है उसकोभी बंद नही करता है ॥ २४ ॥ तथा इंद्रियोंकी पीडा औ नकोईदूसरे रोगको उत्पन्न करता है सो क्षुद्र श्वास सुखसाध्य है औ जो बलवानके होय औ उनके लक्षण प्रसिद्ध न भये होय तहा तक सर्व साध्य होते है ॥ २५ ॥ उन सबनमे क्षुद्र अतिसुख साध्य औ तमक कष्टसाध्य तथा महाश्वास ऊर्ध्वश्वास औ छिन्नश्वास येतीनौ असाध्यहोते है ऐसेही दुर्वलमनुष्यके तमक असाध्यहोता है ॥ २६ ॥ यद्यपी बहुतसे रोग प्राणनाशक हैं तथापि वै वैसे नही जैसे श्वास औ हुचकी येतत्काल प्राणनाशक हैं ॥ २७॥ इतिश्री

मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां श्वास निदानप्रकाशः ॥ १३ ॥

अथस्वरभंग निदानमाह

अत्युच्च भाषण विषाध्ययनाभिघात॥
संदूषणैः प्रकुपिताः पवनादयस्तु॥
स्रोतःसुतेस्वर वहेषुगताः प्रतिष्ठां हन्युः॥
स्वरंभवति चापिहिषड्विधःसः॥ १॥

अब स्वरभंग निदान कहते हैं

सो ऐसेकि अति जो रसे बोलना विष खाना अति ऊंचे स्वरसे पढना तथा गलेमे लाठी इत्यादिककी चोट लगना अथवा अति वांति होनेका धक्का लगना किंवा कठिन पदार्थ खानेका धक्का लगना इत्यादिक कारणौं करिके कुपित भये वातादिक दोष वै शब्दके प्रकाश करने वाली नाडियोंमे प्रवेश करिके औ उहां स्थिरताको प्राप्त ह्वैके स्वरको खराब करि देते हैं उस रोगको स्वरभंग वा स्वरभेद कहते हैं सो छ प्रकारका होता है ॥ १ ॥

अथ षड्विधत्वमाह

पृथग्दोषैः समस्तैश्च क्षयेणमेदसा तथा॥
षड्विधःस्वरभेदःस्याल्लक्षणानि ब्रुवेधुना॥ २॥

स्वरभंग छ प्रकारका हैं सो ऐसाकि न्यारे न्यारे दोषौं करिके तीनि प्रकारको एक सन्निपातसे एक क्षयसे औ एक भेदसे ऐसे छ तिनके अवलक्षण कहैंगे ॥ २ ॥

अथ तेषां लक्षणानि

वातेन कृष्ण नयना ननमूत्रवर्चा भिन्नंशनै र्वदति गर्दभवत्स्वरंच ॥ पित्तेन पीत नयना ननमूत्रवर्चा ब्रूयाद्गलेन सविदाह समन्वितेन ॥ ३ ॥

कृच्छ्रा त्कफेन सततं कफरुद्धकंठः स्वल्पं शनै र्वदतिचापि दिवा विशेषात् ॥ सर्वात्मके भवति सर्व विकार संपत्तं चाप्यसाध्य मृषयः स्वरभेद माहुः ॥ ४ ॥

धूम्ये तवाक् क्षयकृते क्षयमाप्नुयाच्च वागेषचापि हतवाक् परिवर्जनीयः ॥ अंतर्गत स्वरमलक्ष्य पदं चिरेण मेदोन्वया द्वदति दिग्धगल स्तृषार्त्तः ॥ ५ ॥

अब इन छइउके लक्षण कहते हैं

जो स्वरभेद वात विकारसे होता है उसते मनुष्यके नेत्र मुख मूत्र औ मल ये काले होते है औ गधेके शब्दके समान फटे भये शब्दसे धीरेधीरे बोलता है पित्तज्वर भंगसे मनुष्यके नैत्र मुख औ मल ये पीले औ बोलनेमे गला जलता है ॥ ३ ॥ कफज स्वर भंगसे निरंतर कफसे कंठ रुंधा रहता है औ धीरेसे थोडासा बोलता है तहां दिनमे कुछ जादा बोलता है त्रिदोषज स्वरभेदसे ऊपर कहे भये सर्व लक्षणयुक्त होता है सो असाध्य होता है ॥ ४ ॥ क्षयज स्वरभंगसे बोलते समय मुखमे धुआं इधि आती है इस क्षयज स्वर भंगमे वाणीका नाशही होता है वह क्षयरोगीभी असाध्य होता है जो स्वरभंग मेदसे होता है उसमे गला कफसे अथवा मेदसे लपटा रहता है औ बडी देरसे गलेके भीतर

ऐसा बोलता है कि समुझनेमे न आवै तथा उस रोगीको तृषा अतिशय लगा करती है ॥ ५ ॥

असाध्यमाह

क्षीणस्य वृद्धस्य कृशस्य वापि चिरोत्थितो यःसह जोपजातः॥ मेदस्विनः सर्व समुद्भवश्च स्वरामयो यो नससिद्धि मेति॥ ६॥

॥ इति रुग्वि निश्चये स्वरभंग निदानं ॥

स्वरभंगके असाध्य लक्षण ये कि जो स्वरभंग क्षीणके अथवा वृद्धके अथवा कृशके किवा बहुतदिनौंका होता है तथा जो जन्मका मेदवालेका औ त्रिदोषज स्वरभंग असाध्य होता है ॥ ६ ॥

इतिश्री मत्शुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां स्वरभंग निदान प्रकाशः ॥ १४॥

अथाऽरोचक निदानं

वातादिभिः शोकभयाति लोभ क्रोधैर्मनोघ्नाशन रूपगंधैः॥ अरोचकाःस्युः परिहृष्टदंत कषाय वक्त्रश्च मतोऽनिलेन॥१॥कट्वम्लमुष्णं विरसंच पूति पित्तेन विद्या ल्लवणंच वक्त्रं॥माधुर्य पैच्छिल्य गुरुत्वशैत्य विबंध संबद्ध युतं कफेन॥२॥ अरोचके शोकभया तिलोभ क्रोधाद्य हृद्याशुचि गंधजे स्यात्॥ स्वाभाविकं चास्यमथारुचिश्चत्रिदोषजे नैकरसं भवेच्च॥३॥ अन्यच्च॥ हृच्छूल पीडनयुतं

पवनेन पित्तात्तृडदाहचोषबहुलं सकफप्रसेकं ॥
श्लेष्मात्मकं बहुरुजं बहुभिश्चविद्याद्वैगुण्यमोह
जडताभि रथापरंच ॥ ४ ॥

अब अरोचक निदान कहते हैं

वातादिक दोषौं करिके तथा अति शोक भय लोभ क्रोध औ मनके विगाडनेवाले आहार रूप गंधादिक इन कारणौं करिके पांच प्रकारके अरोचक होते हैं तिनमे जो वायूसे होता है उसमे दांत गुठिलियाय जाते हैं औ मुखका स्वाद कसैला रहता है ॥ १ ॥ पित्तसे मुखका स्वाद कडुआ खट्टा गरम विरस दुर्गंधयुक्त औ लोनखरा रहता है ॥ कफसे मधुर चिकना जड ठंढा बंधासरीखा औ मुख कफसे लपटासरीखा रहता है ॥ २ ॥ जो अरोचक शोक भय अति लोभ क्रोध मनके विगाडनेवाले पदार्थ औ अशुद्ध गंध इन कारणौंसे होता है उसमे मुखका स्वाद साधारण स्वाभाविक रहता है त्रिदोषज अरोचकमे मुखका स्वाद अनेक प्रकारका रहता है ॥ ३ ॥ औरभी कहते हैं वातसे हृदय शूल करिके पीडित रहता है पित्तसे पिआस दाह औ चूसनेसरीखी पीडा रहती है कफारोचकमे मुखसे कफ गिरता रहता है त्रिदोषज अरोचकमे अनेक प्रकारकी पीडा होती है भयादिक अरोचकमे मनकी व्याकुलता मोह औ जडता इत्यादिक चिन्ह होते हैं ॥ ४ ॥

अत्र भोजेन विशेष मुक्तं तदाह

प्रक्षिप्तं यन्मुखे नान्नं जंतोर्नस्वदते मुहुः ॥
अरोचकः सविज्ञेयो भक्तद्वेष मतः शृणु ॥ ५ ॥
चिंतयित्वाच मनसा दृष्ट्वा श्रुत्वाच भोजनम् ॥

द्वेष मायाति यत्नं तोर्भक्त द्वेषसउच्यते ॥ ६ ॥
कुपितस्य भयार्त्तस्य तथा भक्त निरोधिनः ॥
यस्यान्नेन भवेच्छ्रद्धा भक्तच्छंदःसउच्यते ॥ ७ ॥
अभिलषितं यच्चान्नं दीयमानं न भक्षितुं ॥
शक्तःस्यात्तत्तु सद्वैद्यैर्मतं नान्नाभि नंदनं ॥ ८ ॥

॥ इति रुग्वि अरोचक निदानं ॥ १ ॥

इस अरोचक विषयमे भोजने कुछ विशेष कहा है याने इसीके भेद भक्तद्वेषादिक औरभी कहे है सो कहते हैं जिस रोगसे मुखमे अन्न रखनेसे स्वाद नमालूम परै सो अरोचक ॥ ५ ॥ जिस रोगसे मनसे अन्नका चिंतवन करनेसे अथवा देखने सुननेसेभी द्वेष आवै सो भक्त द्वेष ॥ ६ ॥ जिसकी क्रोध भय ओ भोजनके अवरोधसे अन्नपर श्रद्धा न रही होय सो भक्तच्छंद रोग ॥ ७ ॥ जिस रोगसे इच्छितभी दिया भया अन्न खाइ न सकै उसको नान्नाभि नंदन कहते हैं ॥ ८ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां अरोचकनिदान प्रकाशः ॥ १ ॥

अथ च्छर्दिरोग निदानं

दुष्टैर्दोषैःपृथक सर्वैर्वीभत्सालोक नादिभिः ॥
छर्दयःपंच विज्ञेया स्तासां लक्षण मुच्यते ॥ १ ॥
अतिद्रवै रतिस्निग्धै रहृद्यैर्लवणैरिति ॥
अकालेचातिमात्रैश्च तथा सात्म्यैश्च भोजनैः ॥ २ ॥
श्रमाद्भया त्तथो द्वेगा दजीर्णात्क्रमि दोषतः ॥

नार्याश्चापन्नसत्वाया स्तथाति द्रुतमश्नतः॥ ३॥
बीभत्सै र्हेतुभि श्चान्यै र्द्रुत मुत्क्लेशितो बलात्॥
छादयन्नाननं वेगै रर्दयन्नं गभंजनैः॥
निरुच्यते छर्दिरिति दोषो वक्त्रं प्रधावति॥ ४॥

अब छर्दिरोग कहते हैं

दूषित वातादिक दोषौं करिके न्यारी न्यारी तीनि त्रिदोषसे चौथी औ बीभत्स जो जिसके देखनेसे घिन लगै ग्लानि उसके देखने सूंघने खाने इत्यादिकसे पांचवी ऐसे छर्दि याने उलटी पांच प्रकारकी होती हैं अब उनके लक्षण कहते हैं॥ १॥ अति पतले अति चिकने तथा जो मनको न रुचैं औ अति लोन खारे तथा अकालमे औ अतिशय तथा अपथ्य भोजन॥ २॥ श्रम भय उद्वेग अजीर्ण कृमि दोष स्त्रीके गर्भ रहनेसे अति जलदी जलदी खाना इत्यादिक कारणौं करिके॥ ३॥ तथा औरभी बीभत्स याने घिनौने कारणौं करिके वातादिक दोष स्थान भ्रष्ट भये हुये अति शीघ्र जोरसे अपने वेगौं करिके मुखको कंपावते भये अंग तोडने करिके व्याकुल करते भये मुखसे निकसने लगते हैं उसको छर्दि कहते हैं यह रोग लोकमे वांति उलटी औ ओकारी नामसे प्रसिद्ध है॥ ४॥

पूर्वरूपमाह

हृल्लासो द्वाररोधौच प्रसेको लवणास्यता॥
दोषोन्नपानेचभृशं वमीनां पूर्वलक्षणं॥ ५॥

वांतिके होनेके समयमे प्रथम उबेकाई आती हैं औ डकार आतीं

नहीं मुखसे पानी छुटता है मुखमे लोन इसाखारा रहता है औ अन्न-पानपर अतिशय द्वेष रहता है यह वांतिका पूर्व रूप जानना ॥ ५ ॥

अथ वात छर्दि लक्षणं

हृत्पार्श्व पीडा मुखशोष शीर्ष नाभ्यर्ति का स स्वर भेदतोदैः॥उद्गारशब्दं प्रबलं सफेनं विच्छिन्न कृष्णं तनुकं कषायम् ॥ ६॥ कृच्छ्रेण चाल्पं महताच वेगे नार्त्तोऽनिलाच्छर्दयतीह दुःखं ॥७॥

अब वातज छर्दिके लक्षण कहते हैं

वातज छर्दि रोगसे हृदय औ पसुरिनमे पीडा मुखका सूखना मस्तक औ नाभिमेभी पीडा कास स्वरभंग शरीरमे सुई टोंचनेसरीखी वेदना डकार औ प्रबल शब्दयुक्त उलटीका आना उसमे फेन गिरना वांति रहि रहिके होय उसका रंग काला पतली औ कसैली उलटी गिरै ॥ ६ ॥ वह उलटी आवै तौ वेगसे औ पडै थोडा दुःख घणा ये लक्षण होते हैं ॥ ७ ॥

पित्तजामाह

मूर्च्छा पिपासा मुख शोष मूर्द्धता ल्वक्षि संताप तमो भ्रमार्त्तः॥पीतं भृशोष्णं हरितं सतिक्तं धूम्रंच पित्तेन वमेत्स दाहं॥ ८ ॥

पित्तज छर्दिसे

मूर्छा तृषा मुखका सूखना मस्तक तालू औ नेत्रौंमे संताप नेत्रौंके आगे अंधेरीका आना औ भ्रम इन करिके पीडित मनुष्य पीला अति

गरम हरा कडू धूम्रवर्ण औ दाह सहित ओकना है ॥ ८ ॥

श्लेष्मजामाह

तंद्रास्य माधुर्य कफ प्रसेक संतोष निद्राऽरुचि गौ
रवार्त्तः॥ स्निग्धं घनंस्वादु कफं विशुद्धं सरोम हर्षो
ल्प रुजं वमेत्तु॥ ९ ॥

कफज छर्दिसे नेत्रौंपर झपकी मुख मीठा औ मुखसे कफका गि-
रना खाए विन तृप्त अति निद्रा अरुचि औ शरीर भारी इन उपद्रवौं
करिके पीडित मनुष्य चिकना गाढा मधुर केवल कफ ऐसी उलटी रो-
मांच औ अल्प पीडाके सहित करता है ॥ ९ ॥

त्रिदोषजामाह

शूला विपाका रुचि दाह तृष्णा श्वास प्रमोह प्रब
ला प्रसक्तं॥ छर्दि स्त्रिदोषा ह्लवणाम्ल नील सांद्रो
ष्ण रक्तं वमतां नृणांस्यात्॥ १० ॥

त्रिदोषज छर्दिसे मनुष्य निरंतर लोन खरी खट्टी नीलवर्ण गाढी
गरम औ लाल रंगकी उलटी करता है वह रोग शूल अपच अरुचि
दाह तृषा श्वास औ मोह करिके प्रबल होता है ॥ १० ॥

अथा साध्य लक्षणमाह

विट्स्वेद मूत्रांबु वहानि वायुः स्रोतांसि संरुध्य य
दोर्ध्वमेति॥ उत्पन्न दोषस्य समाचितंतं दोषं समु
द्धूय नरस्य कोष्ठात्॥ ११ ॥ विण्मूत्रयो स्तत्समगं
ध वर्ण तृट् श्वास कासार्त्ति युतं प्रसक्तं॥ प्रच्छर्दये

दुष्टमिहाति वेगात्तयार्दित श्चाशु विनाशमेति॥ १२॥

अब असाध्य लक्षण कहते हैं

जब मल पसीना मूत्र औ पानीके वहनेवाली नाडियोंको वायु रोंकिके ऊर्ध्व गतिको प्राप्त होता है तब जिस मनुष्यके दोष उत्पन्न होते हैं उसके उन संचित दौषोंको उठायके कोठासे बाहेर काढता है ॥ ११ ॥ तब विष्टा औ मूत्रके समान जिसमे गंध औ वर्ण ऐसी वांति होती है उसते वह मनुष्य तृषा श्वास औ कास करिके पीडित बडे वेगसे बहुत औ दुष्ट दुर्गंधयुक्त वमन करता है उस वमन करिके पीडित मनुष्य शीघ्रही मरता है ॥ १२ ॥

अथागंतुजामाह

वीभत्सजा दौर्हृदजा मजाचयाऽसात्म्यजा वा
क्रिमिजाच याहि ॥सा पंचमीतां च विभावयेत्तु
दोषोच्छ्रयेणैव यथोक्तमादौ ॥ १३ ॥

आंगतुक छर्दिरोग कहते हैं

जो वांति घिनौने पदार्थके देखने खाने वगैरेसे तथा स्त्रीके गर्भ बढनेसे अजीर्णसे प्रकृति विरुद्ध भोजनसे औ कृमि रोगसे उत्पन्न होती है सो पांचवी छर्दि है उसमेभी पूर्वोक्त वातादिक दोषौंका निश्चय करना चाहिये दोष लक्षण उसीके प्रमाण होते हैं ॥ १३ ॥

विशेष लक्षणमाह

शूल हृल्लास बहुला क्रिमिजाच विशेषतः॥
कृमि हृद्रोग तुल्येन लक्षणेनच लक्षिता॥१४॥

अब कृमिज वांतिके विशेष लक्षण कहते हैं

जैसेकि कृमिज उलटीवालेके शूल उबगाई औ जो कृमिज हृद्रोगके लक्षण होते हैं उन लक्षणौं करिकेभी युक्त होती है वै लक्षण ये कि उबकाई सुई टोचने सरीखी पीड़ा थुक थुकी शूल मुहमे पानी छूटना अरुचि नेत्र धुमैले औ मुखका सूखना ॥ १४ ॥

साध्यासाध्य माह

क्षीण स्यया छर्दिरति प्रसक्ता सोपद्रवा शोणित पूय युक्ता ॥ सचंद्रिकांतां प्रवदे दशाध्यां साध्यां चिकित्सेन्नि रुपद्रवांच ॥ १५ ॥

उलटीके साध्यासाध्य लक्षण जैसेकि जो वांति क्षीण मनुष्यके अतिशय होती होय औ उपद्रव युक्त होय जिसमे रक्त औ पीब गिरता होय औ उलटीमे मोरपंखके चंदोबेका आकार देखि परै वह असाध्य होती है जो उपद्रव रहित साध्य होय उसका औषध उपाय करना ॥ १५ ॥

उपद्रवानाह

कासः श्वासो ज्वरो हिक्का तृष्णा वैचित्य मेवच ॥ हृद्रोग स्तमक श्चैव ज्ञेयाश्छर्दे रुपद्रवाः ॥ १६ ॥

॥ इति रुग्वि निश्चये छर्दि निदानम ॥ १६ ॥

उलटीके उपद्रव जैसेकि कास श्वास ज्वर हुचकी तृषा उदासी हृद्रोग औ तमक श्वास यै छर्दिरोगके उपद्रव हैं ॥ १६ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां छर्दि निदान प्रकाशः ॥ १६ ॥

अथ तृष्णा निदानं तत्र संप्राप्तिमाह

भय श्रमाभ्यां बलसंक्षयाद्वाप्यूर्ध्वं चितं पित्त विवर्द्धनैस्तु॥ पित्तं सवातं कुपितं नराणां तालुप्रपन्नं जनयेत्पिपासां॥ १॥

अब तृषाका निदान कहते हैं

तहां प्रथम संप्राप्ति कहते हैं सो ऐसेकि भय परिश्रम अथवा बलकी क्षीणतासे अथवा पित्त बढानेवाले पदार्थों करिके बढाभया वात सहित पित्त फिरि कुपित भया हुआ ऊर्ध्वगामी ह्वै के तालूमे जायके तृषाको उत्पन्न करता है॥ १॥

अथान्न कफजान्नां संप्राप्तिमाह

स्रोतःस्वपां वाहिषु दूषितेषु दोषैश्च तृट् संभवतीह जंतोः॥ तिस्रः स्मृतास्ताः क्षतजा चतुर्थी क्षया त्तथात्याम समुद्भवा च॥ भक्तोद्भवा सप्तमिकेति तासां निबोध लिंगान्यनु पूर्वशस्तु॥ २॥

अन्नजा औ कफजा पियासकी संप्राप्ति कहते हैं सो ऐसेकि जो जलके वहनेवाली नाडी वेजब वातादि दोषौं करिकै दूषित होती हैं तब मनुष्यके पिआस उत्पन्न होती है सो दोषभेदसे न्यारी न्यारी तीनि प्रकारकी क्षतसे चौथी क्षयसे पंचमी आमसे छठी औ अन्न खानेसे सातवीं तिनके लक्षण क्रमसे कहते हैं॥ २॥

वातजा लक्षणं

क्षामास्यता मारुत संभवायां तोदस्तथा शंख शि

रःसुचापि॥ स्रोतो निरोधो विरसंच वक्कं शीताभि रद्भिश्च विवृद्धिमेति॥ ३॥

वातज पियास रोगमे मुखपर मलिनता औ कनपटिनमे तथा मस्तकमे सुई भोकनेसरीखी पीड़ा कानोंका बंद होना मुख बे स्वाद रहता है औ वह ठंढे जलसे बढती है॥ ३॥

पित्तजा लक्षणं

मूर्च्छान्न विद्वेष विलाप दाह रक्ते क्षणत्वं प्रततश्च शोषः॥ शीताभि नंदा मुख तिक्तताच पित्तात्मिका यां परिदूयनंच॥ ४॥

पित्तज तृषा रोगमे मूर्छा अन्नपर द्वेष बकना दाह नेत्र लाल बारंबार शोष ठंढे पदार्थपर इच्छा मुख कडुआ औ देहमे संताप होताहै ४

कफजा लक्षणं

बाष्पा वरोधात्क फसंवृतेऽग्नौ तृष्णा बलासेन भवेन्नरस्य॥ निद्रा गुरुत्वं मधुरास्यताच तयार्दितः शुष्यति चातिमात्रं॥ ५॥

कफज तृषाके लक्षण जैसेकि जब कुपित कफ करिके जठराग्नि ढकि जाता है तब उसकी बाफके रुकि जानेसे तृषा उत्पन्न होती है कारण कि जब बाफ ऊपरको न निकरने पाया तब नीचे जायके जल वहाने वाले नाडियोंको तपायके तृषा उत्पन्न करता है यद्यपि तृषा उत्पन्न कारक वह बाफ है तथापि कफके रोकनेसे तृषा करता है इसते इसको कफजातृषा कहते हैं इस तृषावालेको तृषा अधिक देह

भारी मुख मीठा औ इस तृषासे पीडित मनुष्यकी रसादिक धातू बढती नही तिसीसे वह सूखता जाता है ॥ ५ ॥

क्षतजां क्षयजां चाह

क्षतस्य रुक् शोणित निर्गमाभ्यां तृष्णा चतुर्थी क्षतजा मतासा ॥ रसक्षयाद्याक्षय संभवासा तयाभि भूतश्च निशादिनानि ॥ पेपीयतेंऽभः ससुखं नयाति तां सन्निपाता दितिकेचिदाहुः ॥ ६ ॥

अब क्षतज औ क्षयज तृषौंके लक्षण कहते हैं वे ऐसेकि जखम-की पीडा औ रक्तके निकलनेसे जो तृषा होती है वह क्षतजा औ जो रसधातुके क्षयसे होती है वह क्षयजा उस करिके पीडित मनुष्य राति औ दिनभरी पानी पीते पीते सुखपाता नहीं इसको कोइक आचार्य सन्निपातजाभी कहते हैं ॥ ६ ॥

आमजां चान्नजामाह

त्रिदोष लिंगा मसमुद्भवातु हृच्छूल निष्ठीवन सादकर्त्री ॥ स्निग्धं तथाम्लं लवणंच भुक्तं गुर्वन्नमेवाशु तृषां करोति ॥ ७ ॥

आमसे उत्पन्न भई तृषामे तीनौं दोषौंके लक्षण होते हैं तथा हृ-दयमे शूल थुक थुकीकौ अंगौंकी शिथलताको करती है जो तृषा चि-कने पदार्थ खटाई लोन औ उडद इत्यादिक भारी अन्नके अति सेवन करनेसे होती है सो अन्नजा ॥ ७ ॥

अथोपसर्गजामाह

हीनस्वरः प्रताम्यन् दीनः संशुष्क वक्र गलतालुः ॥

भवति खलुयो पसर्गा तृष्णासा शोषिणी कष्टा ॥
ज्वरमेह क्षयकास श्वासाद्युप स्तृष्ट देहानां ॥ ८ ॥

अब उपसर्गज तृषाके लक्षण कहते हैं उपसर्ग याने रोगमे दूसरे रोग उनमे उत्पन्न भई जैसेकि जिस मनुष्यके ज्वर प्रमेह क्षय कास औ श्वास उत्पन्न भये होय जो उन रोगोंमे तृषा उत्पन्न भई होय औ उसमे जो मनुष्य स्वरहीन भया होय तथा मोहको प्राप्त ह्वै के दीन भया होय औ उसका मुख गला औ तालू सूखता होय तौ वह तृषा शरीरके सूखानेवाली कष्ट साध्य होती है ॥ ८ ॥

असाध्य लक्षण माह

सर्वास्त्वति प्रसक्ता रोग कृशानां वमि प्रसक्तानां
घोरोपद्रव युक्ता स्तृष्णामरणाय विज्ञेयाः॥ ९ ॥

॥ इति रुग्विनिश्चये तृष्णा निदानं ॥

अब असाध्य लक्षण कहते हैं जैसेकि जो मनुष्य रोग करिके कृश होय औ अति वांतिसे पीडित होय उनके जो उपद्रवयुक्त घोर तृषा उत्पन्न भई होय सो उनके मारनेहीको होती है ॥ ९ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां तृष्णा निदान प्रकाशः ॥ १७ ॥

अथ मूर्छा निदान पूर्विकां संप्राप्ति माह

क्षीणस्य बहुदोषस्य विरुद्धाहार सेविनः ॥
वेगा घातादभी घाता द्धीनसत्वस्य वापुनः ॥ १ ॥
करणायतनेषू ग्राबाह्येष्वभ्यं तरेषुच ॥
निवसंति यदा दोषास्तदा मूर्छंति मानवाः ॥ २ ॥

संज्ञावहासु नाडीषु पिहिता स्वनिलादिभिः॥
तमोभ्युपैति सहसा सुख दुःख व्यपोहकृत्॥ ३॥
सुख दुःख व्यपोहाच्चनरः पतति काष्ठवत्॥
मोहो मूर्छैति तामाहुः षड्विधासा प्रकीर्तिता॥ ४॥
वातादिभिः शोणितेन मद्येनच विषेणच॥
षट्स्वप्येतासु पित्तं तुप्रभुत्वेना वतिष्ठते॥ ५॥

अब मूर्छाकी निदान पूर्वक संप्राप्ति कहते हैं सो ऐसेकि जो मनुष्य क्षीण औ अति बढे भये वातादि दोषयुक्त होता है औ वह विरुद्ध आहार करता है तथा सत्वगुणहीन होय याने देवगुरु सत्कार रहित होय अर्थात् तमोगुण प्रधान भया होय उस मनुष्यके मलादिकके वेग रोंकनेसे वा चोट लगनेसे बाह्य औ अभ्यंतर करणायतन याने मनोस्थान जो दशौ इंद्रियां इनमे जब वातादिक दोष प्रवेश करते हैं तब मनुष्य मूर्छित होते हैं॥ २॥ जब संज्ञाके प्रकाशनेवाली नाडी दोषौं करिके बंद होती हैं तब सुखदुखका दूरि करनेवाला जो तमोगुण सो प्राप्त होता है॥ ३॥ फिरि सुख औ दुःखकेभी अभावसे मनुष्य काष्ठवत पडता है उसरोगको मोह और मूर्छाभी कहते हैं सो छ प्रकारका है ॥४॥ जैसेकि वात पित्त कफ रक्त मद्य औ विष मूर्छा ऐसे छ इन सवनमे पित्त तौ प्रधानही होता है॥ ५॥

पूर्व रूपमाह

हृत्पीडा जृंभणं ग्लानिः संज्ञादौर्बल्य मेवच॥
सर्वासां पूर्व रूपाणि यथास्वं तां विभावयेत्॥ ६॥

मूर्छाके पूर्वरूपमे याने उसके आगमन समयमे हृदयमे पीडा ज-मुहाई ग्लानि औ अचेतपना ये सर्व प्रकारकी मूर्छौंके यथा दोष पूर्व रूप जानना ॥ ६ ॥

अथ वातजामाह

नीलंवा यदिवा कृष्णमा काश मथवाऽरुणं ॥
पश्यं स्तमः प्रविशति शीघ्रंच प्रति बुध्यते ॥ ७ ॥
वेपथु श्चांग मर्दश्च प्रपीडा हृदयस्यच ॥
कार्श्यं श्यावारुणच्छाया मूर्च्छाये वात संभवे ॥ ८ ॥

जब वातज मूर्छा आनेको होती है तब प्रथम आकाशको नीला अथवा काला अथवा अरुणवर्ण देखता भया अंधियारेमे प्राप्त भया सरीखा देखनेसे रहि जाता है औ चैतन्यभी शीघ्रही होता है॥७॥ तथा अंगमे कंपा शरीरका टूठना हृदयमे अति पीडा शरीरकी अति कृशता औ शरीरका रूप अरुण अथवा धूसर होता है ॥ ८ ॥

पित्तजामाह

रक्तं हरित वर्णंवा वियत्पीत मथापिवा ॥
पश्यंस्तमः प्रविशति सस्वेदश्च प्रबुध्यते ॥ ९ ॥
सपिपासः ससंतापो रक्त पीताकुलेक्षणः ॥
जात मात्रेच पतति शीघ्रंच प्रतिबुध्यते ॥
संभिन्नवर्चाः पीताभो मूर्छाये पित्त संभवे ॥ १० ॥

पित्तज मूर्छामे मूर्छा आनेसे प्रथम लाल हरा अथवा पीला आ-काशका रंग देखता भया अंधेरीको प्राप्त होता है औ सचेत होनेपर

अंगमे पसीना आता है पिआस तथा संतापयुक्त तथा लाल पीले औ
याकुल नेत्रयुक्त मूर्छा आनेसे तुरत पडता है सचेतभी शीघ्रही होता है
उसका मल पतला फटा औ शरीर पीला होता है ॥ १० ॥

कफजामाह

मेघसंकाश माकाश मावृतं वात मोघनैः ॥
पश्यं स्तमः प्रविशति चिराच्च प्रति बुध्यते ॥ ११ ॥
गुरुभिः प्रावृतै रंगैर्यथैवार्द्रेण चर्मणा ॥
सप्रसेकः सहृल्लासो मूर्छाये कफ संभवे ॥ १२ ॥

कफज मूर्छामे मूर्छा आनेसे प्रथम जैसा श्वेतमेघों करिके छाया
होय तैसा आकाश अथवा जैसे मेघोंके छाय रहनेसे अंधेरा होता है
सा देखता भया मूर्छित होता है औ सचेत देरसे होता है ॥ ११ तब
अंगपर ऐसा मालूम होता है कि जानौं कुछ बडा वजनदार ओढना
ओढा होय जैसाकि ओदाचर्म ओढा होय तैसा औ मुखसे पानी छुट-
ना औ उबकाई आना ये लक्षण होते हैं ॥ १२ ॥

सन्निपातिकामाह

सर्वाकृतिः सन्निपाता दपस्मार इवागतः ॥
साजंतुं पातयत्याशु विना बीभत्स चेष्टितैः १३ ॥

सन्निपातज मूर्छामे तीनौ दोषौंके लक्षण होते हैं औ वह मूर्छा
बीभत्स चेष्टा विना अपस्मारकी तरह आयके मनुष्यको गिराय देतीहै १३

रक्तजामाह

पृथिव्यं भस्तमो रूपं रक्त गंध स्तदन्वयः ॥
तस्माद्रक्तस्य गंधेन मूर्छंति भुवि मानवाः ॥

द्रव्य स्वभाव इत्येके दृष्ट्वा यदभि मूर्छति ॥ १४॥

रक्तज मूर्छा जैसेकि पृथ्वि औ जल ये दोनौं तमोगुणमय हैं इस वास्ते रक्तके गंधसे तमोगुणी मनुष्य पृथिवीपर मूर्छित होते हैं कोइक आचार्य ऐसे कहते हैं कि द्रव्यहीका स्वभाव है कि जिसके देखनेसे मूर्छा आती है ॥ १४ ॥

विषंजा मद्यजानचाह

गुणा स्तीव्रतरत्वेन स्थितास्तु विषमद्ययोः ॥
तएव तस्मात्ताभ्यांतु मोहौस्यातां यथेरितौ ॥ १५ ॥

विषज औ मद्यज मूर्छा कहते हैं जैसेकि जो तीव्र गुण तैलादिक द्रव्योंमे स्थित हैं वै विष औ मद्यमे अति तीव्रतासे स्थित हैं इसी ते इन विष औ मद्यसे जैसी कहीहैं तैसी मूर्छा होती हैं तहां मद्यसे विष मूर्छामे अति तीव्रता जाननासो तंत्रांतरसे लिखतेहैं जैसेकि श्लोक येविषस्यगुणाः प्रोक्ताः सन्निपात प्रकोपिणः ॥ तएव मद्ये दृश्यंते विषेतु बलवत्तराः ॥१॥ अर्थ—जो सन्निपात कोपकारक गुण विषमें कहे हैं वै मद्यमेभी हैं परंतु विषमे अति बलवान है ॥ १ ॥ अब दृढ बलके कहे भये विषके गुण लिखतेहैं॥श्लोक लघुरूक्ष माशुविशद व्यवायितीक्ष्णं विकाशि सूक्ष्मं च ॥ उष्णम निर्देश्य रसं दशगुण मुक्तं विषं तज्ज्ञैः ॥ १ ॥ अर्थ—हलका रूखा शीघ्र गुणकारक प्रकाशकारक वीर्य रेचक तीक्ष्ण प्रफुल्लित करने वाला सूक्ष्मउष्ण औ जिसके रस कहने देखनेमे मन आवैं ऐसा दशगुण युक्त विषको कहते हैं ॥ १ ॥ १५ ॥

अथ रक्तजा दीनां लक्षणा न्याह

स्तब्धांग दृष्टिस्त्वस्रजा मूढोच्छ्वासश्च मूर्छितः ॥ १६ ॥

मद्येन विलपन् शेते नष्ट विभ्रांत मानसः॥
गात्राणि विक्षिपन भूमौ जरांया वन्न यातितत्॥१७
वेपथु स्वप्न तृष्णाःस्यु स्तमश्च विष मूर्च्छिते॥
वेदितव्यं तीव्रतरं यथास्वं विषलक्षणैः॥ १८॥

अब रक्तज इत्यादिक मूर्छौंके लक्षण कहते हैं

जैसेकि रक्तज मूर्छासे अंग आ नेत्र तनि जाते हैं श्वासभी खुलासा आता नही॥ १६॥ मद्यज मूर्छावाला मनुष्य बडबड बकता है औ स्मृतिहीन तथा भ्रमिष्ट रहता है जहांतक मद्य उतरता नहीं तहां तक हाथ पाय पटकता भया पडा रहता है॥ १७॥ विष मूर्छावालेके शरीरमे कंपा निद्रा तृषा औ नेत्रौंके अगाडी अंधेरी आती है इसमे जैसे जैसे तीव्र कंदादिक विष होय तैसे तैसेही लक्षणौंसे विष निश्चय करना॥ १८॥

अथ संज्ञा नाश साधर्म्या न्मूर्छा तंद्रा दीनां विशेषमाह

मूर्छापित्त तमः प्रायारजः पित्तानिला द्भ्रमः॥
तमो वात कफात्तंद्रा निद्रा श्लेष्म तमो भवा॥ १९॥

मूर्छा औ तंद्रा इत्यादिकौंमे अचेतपना सरीखा होता है इसते इनके विशेष लक्षण कहतेहैं वे ऐसेकि पित्त औ तमोगुणसे मूर्छा होती है रजोगुण पित्त औ वातसे भ्रम तमोगुण वात औ कफसे तंद्रा कफ औ तमोगुणसे निद्रा होती है॥ १९॥

तंद्रा लक्षणं

इंद्रियार्थेष्व संप्राप्ति गौरवं जृंभणं क्लमः॥
निद्रार्त्तस्यैव यस्येह तस्य तंद्रां विनिर्दिशेत्॥ २०॥

तंद्राके लक्षण ऐसेकि जब इंद्रियां आपआपके विषयों को न ग्रहण करि सकैं औ जैसे निद्रा आनेके समयमे अंगके भारीपन इत्यादिक लक्षण होते हैं तैसे अंग भारी जमुहाई औ घबरा हट होता है तब तंद्रा कहते हैं ॥ २० ॥

क्लम लक्षणं

योऽनायासः समोदेहे प्रवृद्धःश्वास वर्जितः ॥
क्लमः सइति विज्ञेय इंद्रियार्थ प्रबाधकः ॥ २१ ॥

क्लम लक्षण जैसेकि जो परिश्रम किये विना थकवाय मालूम परै औ उसमे थकवायकी अधिकतासेभी श्वास न बढै तथापि इंद्रियां आपआपके कार्योंको न करि सकैं सो क्लम जानना ॥ २१ ॥

अथ मूर्छाया भेदं संन्यासमाह

वाग्देह मनसां चेष्टा आक्षिप्याति बलान्मलाः ॥
सन्यस्यं त्यबलं जंतुं प्राणायतन माश्रिताः ॥ २२ ॥
सना संन्यास सन्यस्तः काष्ठीभूतो मृतोपमः ॥
प्राणैर्वि मुच्यते शीघ्रं मुक्त्वा सद्य फलां क्रियां ॥ २३ ॥
दोषेषु मदमूर्छायाः कृतवेगेषु देहिनां ॥
स्वयमेवो पशाम्यंति सन्यासो नौषधैर्विना ॥ २४ ॥

॥ इति रुग्वि निश्चये मूर्छा निदानं ॥ १८ ॥

मूर्छाका भेद सन्यास कहते हैं सो ऐसाकि वातादिक दोष वे प्राणायतन जो हृदय उसमे रहिके अति बलसे वाणी देह औ मनकी क्रियाका नाश करिके निर्बल मनुष्यको सन्यास रोग प्राप्त करते हैं

याने अति अचेत करि देते हैं ॥ २२ ॥ तब वह मनुष्य उस सन्यास करिके पीडित काठसरीखा मृतकसमान पडा रहता है जो उसमे तत्काल सिद्धिकारक उपाय न किये तौ वह मनुष्य शीघ्रही मरि जाता है॥२३ जो मूर्छा मद्यादिकोंसे होती है वह दोष वेग शांत होनेसे आपही शांत होती है औ यह सन्यास औषधविना शांत होता नहीं ॥ २४ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां मूर्छा निदान प्रकाशः ॥ १८ ॥

अथ मदात्यय निदानमाह

ये विषस्य गुणाः प्रोक्ता स्तेच मद्ये प्रकीर्तिताः ॥
तेन मिथ्योपयुक्तेन भवत्युग्रोमदात्ययः ॥ १ ॥
किंतुमद्यं स्वभावेन यथैवान्नं तथा स्मृतं॥
अयुक्ति युक्तं रोगाययुक्ति युक्तं यथाऽमृतम् ॥ २ ॥

अत्र दृष्टांतः ॥

प्राणाः प्राणभृता मन्नं तदयुक्तं हिनस्त्यसून् ॥
विषं प्राण हरंतच्च युक्ति युक्तं रसायनम् ॥ ३ ॥
विधिनोपयुक्तस्यमद्यस्य फलमाह ॥
विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथा बलं ॥
प्रहृष्टोयः पिबेन्मद्यं तस्य स्याद मृतोपमम् ॥४॥
स्निग्धैः सदन्नैर्मांसैश्च भक्ष्यैश्च सहसेवितम् ॥
भवेदायुः प्रकर्षाय बलायोपचयायच ॥ ५ ॥
काम्यता मनस स्तुष्टि स्तेजो विक्रमएवच ॥

विधिवत्सेव्यमानेतु मद्ये सन्निहितागुणाः॥ ६॥

अव मदात्यय रोगका निदान कहते हैं

जैसेकि जो गुण विषके कहे हैं वेई मद्यमे हैं उस वास्ते जो विधिहीन शक्तिसे जादा सेवन किया होय तौ मदात्यय रोग होता है॥ १॥ कारणकि मद्य औ विषके गुण यद्यपि समान हैं तौभी जैसे अन्न देह धारण पोषणकारक है तैसेही मद्यभी स्वभावहीसे अन्नतुल्य है सो अन्न औ मद्य ये दोनौ युक्तिसे सेवन करे भये अमृततुल्य होते हैं औ अयुक्तिसे सेवन किये भये रोगकारक होते हैं ॥ २ ॥ इहां दृष्टांत कहते हैं कि अन्न यह देहधारी मात्रका जीवन है वही जो विधिहीन खाया होय तौ प्राणनाशक होताहै औ विष यह प्राणनाशक है तथापि विधि पूर्वक सेवन किया होय तौ रसायन होता है याने आरोग्यदायक होता है ॥ ३ ॥ अब विधि पूर्वक सेवन किये भये मद्यका फल कहते हैं जो मद्य विधिपूर्वक यथोक्त मात्रा प्रमाण औ श्रेष्ठ अन्नके संग आपकी शक्तिप्रमाण प्रसन्न ह्वै के सेवन करा होय तौ वह मद्य अमृतके समान है ॥ ४ ॥ स्निग्ध अन्न याने गेहू इत्यादिक जो आपको हित होय तथा मांस तथा औरभी भक्ष्यपदार्थ इनके संग सेवन किया मद्य आयुष्य कारक बलदायक औ वृद्धिकारक होता है॥ ५॥ मद्यके गुण-मद्यपानसे रूपकी सुंदरता मनको संतोष शरीरका तेज औ पराक्रम ये गुण होते है परंतु विधिपूर्वक सेवन करनेसे ॥ ६ ॥

अथ मदभेदानाह विदेहः

मदस्तु त्रिविधः प्रोक्तः सात्विकादि विभेदतः॥
आचार्याः केचि दिच्छंति चतुर्थं मति तामसं॥ ७॥

सात्विके गीतहास्याद्यं तामसे साहसादिकं॥
राजसे पुरुषे मद्यं निद्रालस्यादि कारकं॥
मृततुल्यं करोत्येव मद्यंचैवातितामसं॥८॥

अथ विशेष माह

बुद्धी स्मृति प्रीति करः सुख श्वपानान्न निद्रा रति वर्द्धनश्च॥ संपाठगीतस्वर वर्द्धन श्च प्रोक्तोऽतिर म्यः प्रथमो मदोहि॥९॥ अव्यक्त बुद्धिस्मृति वाग्विचेष्टः सोन्मत्त लीलाकृति रप्रशांतः॥ आलस्य निद्रा भिहतो मुहुश्चमध्येन मत्तः पुरुषो मदेन॥१०॥ गच्छेद गम्यांच गुरून्नमन्ये त्खादे दभक्ष्याणि चनष्टसंज्ञः॥ ब्रूया च्चगुह्यानि हृदिस्थितानि मद्ये तृतीये पुरुषोऽस्वतंत्रः॥११॥ चतुर्थेतु मदे मूढो भग्नदार्विव निष्क्रियः॥ कार्याकार्य विभागज्ञो मृता दप्य परोमृतः॥१२॥ कोमदं तादृशं गच्छे दुन्मादमिवचापरं॥ बहुदोषमिवा मूढःकांतारं स्ववशः कृती॥१३॥

अब विदेहने जो मद भेद कहे सो कहते हैं

सात्विकादिक भेदौं करिके मद तीन प्रकारका कहा है औ कोई आचार्य अति तामस चौथाभी मद कहते है॥७॥ सात्विक मदमे गीत

हास्यादिक तामसमे साहस कर्म औ राजसमे निद्रालस्यादिक तथा अति तामसी पुरुषने मद पिया तौ मृतक तुल्य होता है ॥ ८ ॥

अब सात्विकादिक चारौ मदोंके विशेष लक्षण कहते हैं

प्रथम याने सात्विक पुरुषने सेवन किया भया मद यह बुद्धि स्मृति प्रीति औ सुखका करनेवाला तथा पान अन्न निद्रा मैथुन पाठशक्ति गानशक्ति औ कंठके स्वरका बढानेवाला अति रमणीक होता है ॥ ९ ॥ मध्य याने राजस पुरुषने जो पियासो बुद्धि स्मृति बोलना औ चेष्टाकोभी अप्रसिद्ध करता है तथा दिवानेसरीखा मनमे आयासो करने लगता है तथा उस मनुष्यको आळस औ निद्रा अधिक होते हैं ॥ १० ॥ तृतीय मदमे याने जो तामसी पुरुष मद्यपान करै तौ जो स्त्री अपने भोगने योग्य नहीं उसकोभी भोगै औ गुरु जे पिता इत्यादिक उनको न मानै तथा अभक्ष्य भक्षण करै औ जो बातैं ह्रदयमे गुप्त कर रखी होय उनको कहि देइ औ बेहोसभी होय है ॥ ११ ॥ चौथे मदसे यानें जो अति तामसीने पिया उसते वह मनुष्य मूर्ख काष्ठ सीरीखा पडता है औ उसको कार्याकार्यकाभी ज्ञान रहता नही उससे मराही भला जानना १२ इस दूसरे उन्माद रोगके तुल्य मदको ज्ञानी औ सुवश मनुष्य तौ न प्राप्त होयगा जैसे मृत्यु भयकारक वनमे ज्ञानी औ स्वतंत्र नही जाता हैं ॥ १३ ॥

अविधि प्रयुक्तं मद्यं विकारांतरानुत्पादयतीत्याह

निर्भुक्त एकांततएवमद्यं निषेव्यमानं मनुजेन नित्यं॥उत्पादयेत्कष्टतमान्विकारानापादयेच्चापि शरीर भेदं॥१४॥क्रुद्धेन भीतेन पिपासितेन शोकाभि

तप्तेन बुभुक्षितेन॥ व्यायाम भाराध्व परिक्षतेन वे गावरोधाभि हतेन चापि॥ १५॥ अत्यन्नरूक्षावततो दरेण साऽजीर्ण भुक्तेन तथाऽबलेन॥उष्णाभि तप्तेन च सेव्यमानं करोति मद्यं विविधान् विकारान्॥ १६॥ पानात्ययं परमदं पानाजीर्ण मथापिवा॥ पान विभ्रम मत्युग्रं तेषांवक्ष्यामि लक्षणं॥ १७॥

जो मद्य विधिपूर्वक नही सेवन किया होय सो दूसरे विकारौंको उत्पन्न करता है ऐसा कहते हैं जो अन्न विना निरंतर मद्यपान नित्य करता है उस मनुष्यको वह मद्य अति कठिन विकारौंको उत्पन्न करता है औ शरीरकाभी नाश करता है॥ १४॥ जो मनुष्य क्रोधयुक्त होय तथा भय पियास शोक औ भूखयुक्त होय तथा परिश्रम भारका उठाना औ रस्ता चलने करिके थका होय यामलादिकौंके अवरोधसे पीडित होय॥ १५॥ तथा जिसका पेट अति खटाई औ रूखे पदार्थौंसे भरा होय तथा अजीर्णमे भोजन किया होय निर्बल गरमीसे तप्त ऐसे मनुष्यों करिके सेवन किया भया मद्य अनेक रोग उत्पन्न करता है॥१६॥ जैसेकि पानात्यय परमद पाना जीर्ण औ पान विभ्रम इनमेसे कोईभी रोग पैदा होता है॥ १७॥

अथ लक्षणानि तत्र वातमदात्यय लक्षणं

हिक्का श्वास शिरः कंप पार्श्व शूल प्रजागरैः॥
विद्या द्बहुप्रलापस्य वातप्रायं मदात्ययं॥ १८॥

अब इनके लक्षण कहते हैं तहां प्रथम वातमदात्ययके लक्षण कहते हैं जैसे हुचकी श्वास मस्तक कांपना पसुरिनमे शूल जागरण औ बडबड बकना इन लक्षणोंसे वात प्रधान मदात्यय जानना ॥ १८ ॥

पित्त मदात्यय लक्षणमाह

तृष्णा दाह ज्वरस्वेद मोहातीसार विभ्रमैः ॥
विद्या द्धरित वर्णस्य पित्त प्रायं मदात्ययं ॥ १९ ॥

जिसमो पियास दाह ज्वर पसीना मोह अतिसार औ चित्तभ्रम तथा रंग हरा दीखै उसके पित्तरूप मदात्यय जानना ॥ १९ ॥

कफजमाह

छर्द्य रोचक ह्लास तंद्रास्तै मित्यगौरवैः ॥
विद्याच्छीत परीतस्य कफ प्रायं मदात्ययं ॥ २० ॥

कफजन्य मदात्यय रोगमे उलटी अरुचि मति लई झपकी स्तैमित्य याने जैसे भीज कपडा ओढे होय ऐसा मालुम पडै शरीर गरुआ औ ठंढ लगै ॥ २० ॥

त्रिदोष मदा० ल०

ज्ञेय स्त्रिदोषज श्चापि सर्व लिंगैर्मदात्ययः ॥ २१ ॥

जिस मदात्ययमे तीनौ दोषके चिन्ह मिलैं उसको त्रिदोषज मदात्यय जानना ॥ २१ ॥

अथ परमद लक्षणं

श्लेष्मोच्छ्रयोंऽग गुरुता विरसास्यताच विण्मूत्र सक्ति रथतंद्रि ररोच कश्च ॥ लिंगं परस्यतु मदस्य

वदंति तज्ञा स्तृष्णा रुजा शिरसि संधिषु चापि भेदः ॥ २२ ॥

परमद रोगमे कफका बढना याने नाक वहना इत्यादिक चिन्ह शरीर भारी मुख फीका मल मूत्रका अवरोध झपकी अरुचि पियास शिरमे पीडा औ संधिनमे फूटनेसरीखी पीडा ये लक्षण होते हैं ॥ २२॥

पाना जीर्ण लक्षणं

आध्मान मुग्र मथवोद्गिरणं विदाहः पानेऽजरां स मुप गच्छति लक्षणानि ॥ ज्ञेयानितत्र भिषजासु वि निश्चितानि पित्त प्रकोप जनिता निचकारणा नि ॥ २३ ॥

पाना जीर्णमे पेट फूलना उलटी किंवा डकार शरीरमे दाह ये लक्षण होते है तहां पित्त प्रकोप जनित कारण जानना ॥ २३ ॥

पान विभ्रम लक्षणं

हृद्गात्र तोद कफ संस्रव कंठ धूम मूर्च्छा वमिज्वर शिरोरुजन प्रदेहाः ॥ द्वेषः सुरान्न विकृतेषुच तेषु तेषु तंपान विभ्रम मुशंत्य खिलेन धीराः ॥ २४ ॥

पान विभ्रम जैसे जिसमे हृदय औ शरीरमे छेदने सरीखी पीडा मुख नाकसे कफका गिरना कंठमे धुआं निकलनेसरीखी पीडा मूर्छा उलटी ज्वर मस्तक पीडा मुखमे कफका लपटा रहना मद्य औ अन्नको पदार्थोंपर अनिच्छा इसको पान विभ्रम कहते हैं ॥ २४ ॥

असाध्य लक्षणमाह

हीनो तरोष्ठमति शीत ममंद दाहं तैल प्रभास्य म
तिपा नहतं त्यजेत्तं ॥ जिह्वौष्ठ दंत मसितं त्वथवा
तु नीलं पीतेच यस्य नयने रुधिर प्रभेवा ॥ २५॥

असाध्य ल०

जिस मनुष्यका ऊपरका ओठ छोटा पडि जाय तथा कधीं अति शीत लगै औ कधीं तीव्र दाह होय औ मुख तेल सदृश चिकना होय जीभ ओठ औ दांत काले या नीले नेत्र पीले या लाल होय ऐसे पानात्यय रोगवालेकी चिकित्सा न करना ॥ २५ ॥

अथ मदात्ययस्योपद्रवानाह

हिक्का ज्वरो वमथु वेपथु पार्श्व शूलाः
कास भ्रमा वपिच पानहतं भजंते ॥ २६ ॥

॥ इति रुग्वि निश्चये मदात्यय निदानं ॥ १९ ॥

अब मदात्ययके उपद्रव कहते हैं जो मदात्यय रोगी है उसको हुचकी ज्वर वांति कंपा पसुरिनमे शूल कास औ चित्तभ्रम ये रोग उपद्रवरूप होते हैं ॥ २६ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां
रुग्वि निश्चय दीपिकायां मदात्यय निदान प्रकाशः ॥ १९ ॥

अथ दाह निदानं तत्र प्रथमतो मद्यज माह

त्वचं प्राप्तः सपानोष्मा पित्तरक्ताभि मूर्छितः ॥
दाहं प्रकुरुते घोरं पित्तवत्तत्र भेषजं ॥ १ ॥

अब दाह निदान कहते हैं तहां प्रथम मज्जज दाह लक्षण कहते हैं जैसेकि मद्यपानकी जो गरमी सो पित्त औ रक्त करिके बढाई भई त्वचामे प्राप्त ह्वै के दाहको उत्पन्न करै है तहां पित्तकी तरह औषध करना ॥ १ ॥

रक्तजमाह

कृत्स्न देहानुगं रक्त मुद्रिक्तं दहति ध्रुवं ॥
शुष्यते तृष्यते चैव ताम्राभ स्ताम्र लोचनः ॥
लोह गंधां गवदनो वन्हिने वा वकीर्यते ॥ २ ॥

रक्तजदाह लक्षण

संपूरण देहमे रहा भया रक्त जब अतिशय बढता है तब दाह उत्पन्न करता है उस दाहमे मनुष्य सूखता है पियास लगती है शरीर औ नेत्र लाल तांबे सरीखे होते हैं शरीर औ मुखमे लोहकी वास यानेजैसे तपे भयेते लककी वास वैसी आती है तथा जैसे अग्निके पास बैठनेसे अंग तपता है तैसा मालूम पडना ॥ २ ॥

पित्तजमाह

पित्त ज्वर समः पित्तात्सचाप्यस्य विधिः स्मृतः ॥ ३ ॥

पित्तजदाह पित्तज्वर लक्षणयुक्त होता है उसपर औषधादिकभी इस पित्तज्वर समानही करना ॥ ३ ॥

तृष्णा निरोधा दब्धातौ क्षीणे तेजः समुत्थितं
सबाह्याभ्यं तरं देहं प्रदहेन्मं दचेतसः ॥
संशुष्क गलताल्वोष्ठो जिह्वां निष्कृष्य चेष्टते ॥ ४ ॥

तृषाके रोकनेसे जल संबंधी जो रसरक्तादिक धातू हैं वै क्षीण ह्वै जाती हैं तब पित्तकी गरमी बढिके सर्व बाहेर औ भीतरभी देहको दहन करता है वह मनुष्य अचेत होता है तथा उसका गला औ तालू सूखते हैं औ जीभ निकारिके तडफता है ॥ ४ ॥

अस्रजः पूर्ण कोष्ठस्य दाहोंऽगे स्यात्सु दुःसहः ॥ ५ ॥

जिसके किसी तरहसेभी कोठेके अंदर जखम लगिके कोठेमे भरी रहता है उसके अंगमे अति दुःसह दाह पैदा होता है ॥ ५ ॥

धातु क्षयोत्थो यो दाहस्तेन मूर्च्छा तृषान्वितः ॥
क्षामस्वरः क्रियाहीनः ससीदेद्भृश पीडितः ॥ ६ ॥

जो धातु क्षयसे दाह पैदा होता है उस दाहसे मनुष्य मूर्छा औ तृषा युक्त होता है तथा आवाज बारीक उठने वैठने इत्यादिक काम करनेको असमर्थ दुखी भया हुआ मरताही है ॥ ६ ॥

मर्माऽभि घातजोऽप्यास्ति सचा साध्यतमो मतः ॥
सर्व एवच वर्ज्याःस्युः शीतगात्रेषु देहिषु ॥ ७ ॥

इति दाह निदानं

एक दाह मर्मस्थानमे चोटके लगनेसेभी होता है सो औ जि ठंढे शरीरमे दाह होता है वै सब असाध्य होते है ॥ ७ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां दाह निदान प्रकाशः ॥ २० ॥

अथोन्माद निदानमाह

मदयंत्युद्धता दोषा यस्मा दुन्मार्ग मागताः ॥

मानसोऽय मतोव्याधि रुन्माद इतिकीर्त्यते ॥ १ ॥

अब उन्माद रोगनिदान कहते हैं जिस वास्तेकि स्वकारणों करिके बढे भये औ आपके रस्तेको छोडिके मनके वहनेवाली नाडीमे प्राप्त ह्वै के उन्माद याने मनको उन्मत्त करते हैं इस वास्ते यह मानसिक रोग है इसको उन्माद कहते हैं ॥ १ ॥

संख्यामाह

एकैकशः सर्वशश्चदोषै रत्यर्थ मूर्छितैः ॥
मानसे नच दुःखेन सच पंचविधः स्मृतः ॥ २ ॥
विषाद्भवति षष्ठश्च यथा स्वंतत्रभेषजम् ॥
सचप्रवृद्ध स्तरुणो मदसंज्ञां बिभर्त्तिच ॥ ३ ॥

संख्या कहते है सो उन्माद अति बढे भये न्यारे न्यारे वातादि दोषों करिके तीन सन्निपातसे चौथा मनके दुःखसे पांचवा औ विषसे ॥ २ ॥ छठा इनमे औषधैं यथा योग्य देना चाहिये सो जबतक अतिशय बढता नही तबतक उसको मद कहते हैं ॥ ३ ॥

अथास्य सामान्य हेतु माहः

विरुद्ध दुष्टाऽ शुची भोजनानि प्रधर्षणं देव गुरु द्विजानां ॥ उन्माद हेतु भय हर्षपूर्वोमनो भिघातो विषमाश्च चेष्टाः ॥ ४ ॥

संप्राप्तिमाह

तै रल्प सत्वस्य मलाः प्रदुष्टा बुद्धेर्निवासं हृदयं

प्रदूष्य॥स्रोतांस्य धिष्ठाय मनोवहानि प्रमोहयंत्या शु नरस्य चितः॥ ५॥

अब उन्माद का सामन्य कारण कहते हैं

विरुद्ध याने प्रकृति विरुद्धादिदुष्टं याने विषादिकौं करिके दूषित अशुचि याने रजस्वलादिकौंका छुआभया ऐसे भोजन तथा देवता गुरु औ ब्राह्मण इनका अपमान तथा भयसे अथवा हर्षसे भयाजो मनका अभिघात औ विषम चेष्टा याने बलवानसे वैर इत्यादिक ये सर्व उन्मादके सामान्य हेतु है ॥ ४ ॥

संप्राप्ति कहते हैं

जो कारण कहे उन्ही कारणौ करिके जिस पुरुषके सत्वगुण अल्प है उसके वातादिक मल कुपित व्हैके बुद्धिका स्थान जो हृदयको दूषित करिके औ मनके वहनैवाली नाडियोंमे रहिके उसमनुष्यके चित्तको मोहित करते है यानि कार्याकार्य विचार करिके रहितकरि देते हैं॥५॥

अथा स्य सामान्य रूपमाह

धी विभ्रमः सत्व परिप्लवश्च पर्याकुला दृष्टि रधी रताच ॥ अबद्धवाचं हृदयं चशुन्यं सामान्य मुन्माद गदस्य लिंगं॥ ६ ॥

उन्मादका सामान्य रूप जैसेकि बुद्धिका भ्रम मनका चंचलपना आकुल व्याकुल दृष्टिसे देखना अधीरता याने कायरपना अबद्ध वाक्क याने बे प्रमाण बोलना हृदय शून्य याने स्मृति भ्रष्ट पना ये उन्माद रोगके समान्य चिन्ह हैं ॥ ६ ॥

वातिक माह

रूक्षाल्प शीतान्न विरेक धातुक्षयोपवासैरनिलोभिवृद्धः॥ चिंतादिदुष्टं हृदयं प्रविश्य बुद्धिं स्मृतिं चाप्य पहंति शीघ्रं॥७॥ अस्थान हास्य स्मित नृत्य गीत वागंगविक्षेपण रोदनानि॥ पारुष्य कार्श्यारुण वर्णताच जीर्णेबलं चानिलजस्य रूपं॥८॥

वातजन्य उन्माद कहते हैं

जैसे रूखा अल्प याने पेटभरिके नखाना औ ठंढे अन्नके खानेसे जुलाब धातुक्षय औ उपवास इनसे बढा भयाजो वायु सो चिंता इत्यादि कारणोंसे दुष्टभये हुये हृदय मे प्रवेश व्हैके बुद्धि औ स्मृतिका नाशकरता है ॥ ७ ॥ जब बुद्धि औ स्मृतिका नाश भया तब समय विन हसना मुस्काना नाचना गाना वकना हाथ इत्यादिक ईधर उधर फेकना रोना शरीरमेरूखा पन औ कृशता तथा ललामी होती है औ आहार पचनेपर इसका बल होताहै यह वातज उन्माद का रूपहै॥८॥

पित्तज माह

अजीर्ण कट्वम्ल विदाह्यशीतैर्भोज्यैश्चितं पित्त मुदीर्णवेगं॥ उन्माद मत्युग्र मनात्मकस्य हृदिस्थितं पूर्व वदाशुकुर्यात्॥९॥ अमर्ष संरंभ विनग्न भावः संतर्जनाभि द्रवणौष्ण्यचोषाः॥ प्रच्छाय शीतान्न जलाभिलाषः पीताचभाः पित्तकृतस्य लिंगं॥१०॥

पित्तज उन्माद लक्षण जेसे अजीर्ण कटुक खटाई दाह कारक गरम तासीरके वा स्पर्शमे गरम ऐसे भोजनौं करिके संचित भयाहुआ पित्त अति वृद्धिको प्राप्तव्है के हृदयमे प्रवेश करिके बुद्धि औ स्मृतिको भ्रष्टकरिके अति उग्र उन्मादको उत्पन्न करता ॥ ९ ॥ फिरि अमर्ष याने किसीका बोलना इत्यादिक सहनन करना संरंभ याने व्याकुलता विनग्नभाव याने वस्त्रन पहिरना संतर्जन याने ताडन अभिद्रवण याने दौडना औष्ण यानि शरीर गरम रहना चोपयानि दाह तथा छाया औ- ठंढे अन्नजलकी इच्छा औ शरीरकी कांति पीली येपित्तोन्मादके लक्षण हैं ॥ १० ॥

कफज माह

संपूरणै मंदविचे ष्टितस्य सोष्मा कफो मर्मणि सं प्रवृद्धः ॥ बुद्धिं स्मृतिं चाप्यु प हंति चित्तं प्रमोहय न्संजनये द्विकारं ॥ ११ ॥ वाक्चेष्टितं मंद मरोचक श्च नारी विविक्त प्रियता च निद्रा ॥ छर्दिश्च लाला च बलंच भुंक्तेनखादि शौक्ल्यं चकफात्मके स्यात् १२

कफज उन्माद लक्षण

जैसेकि जो मनुष्य खायबहुत औ परिश्रम नकरै उसके पित्तस हित कफ बढिके हृदयमे प्रवेश करके बुद्धि औस्म तिको नष्टकरिके चित्तको मोहता भया विकार याने उन्मादको उत्पन्न करता है॥११॥ उसते थोडा बोलना औचलना फिरनाभी अल्पही होता है तथा अ- रुचि स्त्री तथा एकांत स्थान पर प्रीति तथा निद्रा उलटी मुखसे लार गिरना भोजन कियेपर रोग कीप्रवलता औ नख मुखादि कौंमे सफेदी यह रूप कफ उन्मादका है ॥ १२ ॥

सन्निपातिक माह

यःसन्निपात प्रभवोहिघोरःसर्वैं समस्तैःसतुहेतु भिःस्यात्॥सर्वाणि रूपाणि बिभर्तिताहग्वि रुद्ध भैषज्य विधि र्विवर्ज्यः॥ १३॥

सन्निपातिक उन्माद लक्षण

जैसेकि जो सन्निपात जन्य उन्माद होता है वह सर्व वातादिक दोष और रजो गुण तमो गुणमिले भये कारणौंसे होता है उसमे जो वातादि उन्मादोंके कहे वै सर्व रूप होते है ऐसे उन्मादमे औषधकरना योग्यनही क्योंकि इसमे औषधकरनाही विरुद्ध है अर्थात् यह असाध्य है ॥ १३ ॥

शोकजमाह

चौरै र्नरेंद्र पुरुषै ररिभिस्तथान्यै र्वित्रासितस्य धन बांधव संक्षयाद्वा॥गाढं क्षते मनसिचप्रियया रिरं सी जायेत चोत्कट तरो मनसो विकारः॥ चित्रं ब्रवीति च मनोनुगतं विसंज्ञो गायत्यथो हसति रोदिति चापिमूढः॥ १४॥

शोकज उन्माद लक्षण जैसेकि चोर राजपुरुष तथा और कोई शत्रू तथा अन्य जो सिहादिकौं करिके त्रासको प्राप्त भया जो पुरुष उसके अथवा जिसके धन औ बंधु जनौंका नाशभया होय तथा जो कामसे पीडित होय औ उसको स्त्रीकी प्राप्तिन भई होय ऐसे मनुष्यों-के मनको कहे भये कारणौंसे अति पीडित होनेसे अति प्रबल मनका

विकार याने उन्माद उत्पन्न होता है जिस उन्मादसे वह पुरुष चित्र विचित्र औ मनकी भी अभिप्राय कहि देता है बेचेतभी हो जाता है कधी गाने लगता औ कभी हसनेभी लगता है तथा कभीं रोनेभी लगता है ॥ १४ ॥

विषज माह

रक्तेक्षणो हत बलेंद्रिय भाः सदीनः
श्यावाननो विषकृते न भवेद्विसंज्ञः ॥ १५ ॥

विषजन्य उन्मादके लक्षण

जैसे विषज उन्मादसे नेत्र लाल होते हैं तथा बल इंद्रियां औ कांति उसकी नष्ट होती है दीन याने उदास मुख धूसर औ अचेत होता है ॥ १५ ॥

असाध्यमाह

अवाङ्मुखस्तून्मुखो वाक्षीण मांस बलोनरः ॥
जागरूको ऽप्यसंदेह मुन्मादे न विनश्यति ॥ १६ ॥

असाध्य लक्षण कहते हैं जो उन्माद रोगी नीचेको अथवा ऊपरहीको देखता रहता है औ मांस तथा बल करिके क्षीण निद्रा रहित ऐसा मनुष्य उन्मादसे मरताही है ॥ १६ ॥

भूतोन्माद लक्षणं

अमर्त्यवाग्वि क्रम वीर्यचेष्टो ज्ञानादि विज्ञानब लादि भिर्यः ॥ उन्मादकालोऽनियत श्च यस्य भूतो त्थ मुन्माद मुदाहरंति ॥ १७ ॥

ज्ञान जो शास्त्र विज्ञान जो शास्त्रके तात्पर्यका निश्चय अथवा

ज्ञान तत्त्वज्ञान विज्ञान शिल्प शास्त्र ज्ञान आदि शब्दसे स्मृत्यादिक इ-
नौंके वल करिके जो मनुष्योंके अयोग्य तैसे होय वाक्य पराक्रम श-
क्ति ओ शरीर चेष्टा जिसके तथा जिसके उन्माद कालका जैसा वाता-
दिकौंका भोजनके आदि औ भोजन किये इत्यादिक नियमकहा वैसनि
यमन होय उसको भूतोन्माद कहते हैं ॥ १७ ॥

देवोन्मादमाह

संतुष्टःशुचि रति दिव्यमाल्य गंधो निस्तंद्रो ह्यवि
तथ संस्कृत प्रभाषी ॥ तेजस्वी स्थिर नयनो वर प्र
दाता ब्रह्मण्यो भवति चदेवभूतजुष्टः ॥ १८ ॥

देवसंबंधी उन्मादवाला मनुष्य सर्वकाल संतुष्ट औ पवित्र तथा
दिव्य माला औ सुगंध धारन करनेवाला निस्तंद्र याने सावधान तथा
सत्य औ संस्कृत बोलने वाला तेजस्वी नेत्र स्थिर याने नेत्र चंचल नहीं
वरदाता औ ब्राह्मणौंके सत्कार करनेवाला होता है ॥ १८ ॥

असुरोन्माद लक्षण

संस्वेदी द्विज गुरुदेवदोष वक्ता जिह्माक्षो विगत
भयो विमार्गदृष्टिः ॥ संतुष्टो नभवति चान्नपान
जातै दुष्टात्मा भवति सदेवशत्रु जुष्टः ॥ १९ ॥

असुरोन्मादवाला मनुष्यकी सर्वकाल शरीरमे पसीना औ ब्राह्मण
गुरु तथा देवतौंके दोषौंके कहनेवाला कुटिल नेत्र भयरहित अति अध-
र्मका देखनेवाला तथा अन्नपाना दिकौंसे संतुष्ट न होय औ दुष्ट चित्त-
वाला होता है ॥ १९ ॥

गंधर्वोन्मादमाह

हृष्टात्मा पुलिन वनां तरो पसेवी स्वाचारः प्रिय प रिगीत गंधमाल्यः ॥ नृत्यन्वै प्रहसति चारु चाल्प शब्दं गंधर्व ग्रहपरि पीडितो मनुष्यः॥ २० ॥

गंधर्व संबंधी उन्माद रोगवाला पुरुष प्रसन्न चित्त औ नदीका पु-लिन वन जो उपवन ऐसे ठेकाने बहुधा करिके रहता है तथा सुंदर आचरण स्नानादिक करता रहता है औ गाना तथा चंदन पुष्पमाला इनपर अति प्रीति रखता है नाचते नाचते हसने लगता है औ बोलता है तौ थोडा औ मनोहर बोलता है ॥ २० ॥

यक्षोन्मादमाह

ताम्राक्षः प्रियतनु रक्तवस्त्र धारी गंभीरो द्रुतगति रल्पवाक् सहिष्णुः ॥ तेजस्वी वदतिच किंददामि कस्मै यो यक्षग्रह परि पीडितो मनुष्यः॥ २१ ॥

जो मनुष्य यक्ष ग्रह करिके पीडित होता है उसके नेत्र लाल होते हैं औ वह शोभायमान बारीक तथा लाल वस्त्र धारण करता है तथा गंभीर याने उसका अभिप्राय किसीके जाननेमे न आवै चलै ऊ-तावला बोलै थोडा सहनशील तेजस्वी औ मै किसके वास्ते क्या देऊं ऐसा बोलता रहता है ॥ २१ ॥

पितृजोन्मादमाह

प्रेतानां सदिशतिसंस्तरेषु पिंडान् शांतात्मा जल मपि चापसव्य वस्त्रः॥ मांसेप्सु स्तिल गुड पाय

साभिकाम स्तद्भक्तो भवति पितृग्रहाऽभिजुष्टः॥२२॥

जो मनुष्य पितृग्रह करिके पीडित उन्मत्त होता है वह मरे भये आपके बाप दादा इत्यादिकोंको कुश कास बिछायके उसपर पिंड देता रहता है शांत स्वभाव तथा दाहिने कांधेपर अंगौछा राखिके पितृनका जलसे तर्पणभी करता रहता है तथा मांस तिल गुड औ खीरकीभी इच्छा करता रहता है औ पितृनका भक्त होता है॥ २२ ॥

सर्पोन्मादलक्षणमाह

यस्तूर्व्यां प्रसरति सर्पवत्कदाचित् स्रृक्किण्यौ विलिहति जिव्हया तथैव॥ क्रोधालुर्गुडमधुदुग्धपायसेप्सुर्विज्ञेयो भवति भुजंगमेन जुष्टः॥ २३॥

जो मनुष्य सर्पग्रह पीडित होताहै सो कोई कोई समयमे पृथिवी-पर सर्पसरीखा पसरिजाताहै औ जैसे सर्प आपकी जीभसे अपने गल-फरोंको चाटताहै वैसे गलफर चाटने लगताहै तथा क्रोधी औ गुड सहत दूध तथा खीरकी इच्छा करताहै॥ २३॥

राक्षसोन्मादमाह

मांसासृग्विविधसुराविकारलिप्सुर्निर्लज्जो भृशमतिनिष्ठुरोतिशूरः॥ क्रोधालुर्विपुलबलो निशाविचारी शौचद्विड्भवतिहि राक्षसैर्गृहीतः॥२४॥

जो मनुष्य राक्षस ग्रह गृहीत होताहै सो मांस रक्त औ नाना प्रकारके मद्योंकी इच्छा करताहै तथा अतिशय निर्लज्य अति निष्ठुर अति शूर वीर अति क्रोधी अति बली रात्रीमे फिरनेवाला औ शुचि-

ताका विरोधी याने अपवित्र रहा करताहै ॥ २४ ॥

पिशाचो न्माद लक्षणं

उद्धस्तः कृश परुषो विरुद्ध लापी दुर्गंधो भृश मशु चि स्तथा तिलोलः ॥ बव्हाशी विजन वनांतरोप सेवी व्याचेष्टन् भ्रमति रुदन् पिशाच जुष्टः ॥ २५ ॥

जो मनुष्य पिशाचग्रह ग्रसित होताहै सो ऊपरको हाथ ऊंचे किये भये फिरता रहताहै औशरीसे दुबला रूखा विरुद्ध बकनेवाला देहमे दुर्गंध अति अपवित्र अति लालची बहुत खानेवाला जहां मनुष्यका संचारनहोय ऐसे वनमे रहा करताहै औ अनेक प्रकारकी चेष्टा करता भया तथा रोता भया फिरा करताहै ॥ २५ ॥

असाध्य लक्षण माह

स्थूलाक्षो द्रुतमटनः सफेन लेही निद्रालुः पतति च कंपते च योति ॥ यश्चाद्रि द्विरद नगादि विच्युतः स्यात्सोऽसाध्यो भवति तथा त्रयोदशोऽब्दे ॥ २६ ॥

असाध्य लक्षण कहते हैं

जिस उन्मादमे रोगी मनुष्यके नेत्र फटे रहते होयँ चलता दौडता भया होय मुखसे फेना गिराकरै औ उसको वह चाटता रहता होय सो वै बहुत उठिके पडिजाय कांपै बहुत तथा जो पर्वत हाथी औ वृक्ष भीति इत्यादिकोंसे पडै तथा जिसके उन्मादको तेरह वाँ वर्षलगा होय उसको असाध्य जानना ॥ २६ ॥

अथ देव ग्रहादीनां ग्रहण काला उच्यंते

देवग्रहाः पौर्णमास्या मसुराः संध्ययो रपि ॥

रूप नही दीषता है जैसे सूर्यकांत मणिमे सूर्यका किरण प्रवेश है के अग्नि उत्पन्न करता है परंतु दीषता नही औ जैसे देहमे देहधारी जीव प्रविष्ट होते समय दीखता नही ॥ २९ ॥ तैसेही देवग्रहादिकभी प्रविष्ट होते दीखते नही औ प्रवेश करिके दुःसह पीडाको उत्पन्न करते हैं॥३० जो इहां देवग्रह इत्यादिक कहे सो देवनके अनुचर प्रवेश करते है यह वृत्तांत सुश्रुत उत्तर तंत्रमे अमानुष प्रतिषेध ऐसाध्याय जो साठिका अध्याय है उसमे कहा है ॥ ३० ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकाया मुन्माद निदान प्रकाशः ॥ २१ ॥

अथाऽपस्मार निदानं

स्मृतिर्भूतार्थ विज्ञान मपश्च परिवर्जनं ॥
अपस्मार इतिप्रोक्त स्ततोऽयं व्याधि रंतकृत् ॥ १ ॥
मिथ्यादि योगेंद्रियार्थ कर्मणामति सेवनात् ॥
विरुद्ध मलिना हार विहार कुपितैर्मलैः ॥ २ ॥
वगनिग्रहशीलाना महिता शुचिभोजिनां ॥
रज स्तमोभि भूतानां गच्छतां चरजस्वलां ॥ ३ ॥
तथा काम भयो द्वेग क्रोध शोकादि भिर्भृशम् ॥
चेतस्यभि हते पुंसा मपस्मारोऽभिधीयते ॥ ४ ॥

अब अपस्मारका निदान कहते हैं

सो ऐसेकि भूतकालका जो ज्ञान तिसको स्मृति कहते हैं औ अपशब्द यह वर्जनार्थ कहै तौ उस स्मृतिका जो अभाव सो अपस्मृति

उसीका पर्याय यह अपस्मार होता है यह रोग मृत्युकारक है ॥ १ ॥ इंद्रियोंके कार्य जो शब्द स्पर्शरस रूप औ गंध इनका मिथ्या योग अयोग औ अति योग तिनसे जैसेकि जो अपना प्रिय वस्तु मनुष्यादिक उसका दुःख नाशादिक श्रवण मिथ्यायोग तांसा नगारा ढोल इत्यादिकौंका अति श्रवण अति योग औ कुछभी सुननेमे न आवै सो अयोग ये शब्दके मिथ्यादिक योग ऐसेही स्पर्शके जो शत्रु सर्पादिकौंका स्पर्श सो मिथ्या योग अतिशय स्त्री प्रसंगादिक अति योग जो इच्छा होनेसे मिलापन होय सो अयोग ऐसेही चोटका लगना किंवा अशुद्ध वस्तुका स्पर्श मिथ्या योग अतिशय शीत उष्णादिकौंका सेवन जैसे अति स्नान अभ्यंगादिकौंका अति सेवनसो अति योग कुछभी न छूनी अयोग ऐसेही व्याघ्रादिक प्राणघातक रूपौंका देखना मिथ्या योग अति सुरूपवती स्त्री इत्यादिकौंका देखना अति योग कुछभी इच्छित देखनेको न मिलै अयोग ऐसेही अप्रिय वस्तुका खाना मिथ्या योग स्वादु तीक्ष्णादिकौंका अति खाना अति योग कुछभी खानेको न मिला सो अयोग इस तरहसे दुर्गंध पदार्थौंका सूंघना मिथ्या योग अति सुगंध औ तीक्ष्ण नास इत्यादिकौंका सूंघना अति योग कुछभी नसूंघना अयोग इन कारणौंसे ॥ २ ॥ तथा विरुद्ध औ मलिन जो आहार विहारादि करिके कुपित भये जो वातादिक दोष उन दोषौं करिके जो मनुष्य मलमूत्रादिकौंके वेगको रोंकते हैं तथा अतिशय औ अपवित्र भोजन करते हैं तथा जो मनुष्य रजोगुण तमोगुण युक्त होते हैं औ जो रजस्वला स्त्रीसे प्रसंग करते हैं ॥ ३ ॥ उन मनुष्यौंके चित्त जब काम शोक भय औ उद्वेग तथा क्रोध शोकादिकौं करिके भ्रष्ट होते हैं तब अपस्मार होता है ॥ ४ ॥

अथापस्मारस्य सामान्य लक्षणं

तमःप्रवेशः संरंभो दोषोद्रेक हतस्मृतिः॥
अपस्मारइति ज्ञेयोगदोघोरश्चतुर्विधः॥ ५॥

अब इस अपस्मारके सामान्य लक्षण कहते हैं जैसेकि तमः प्रवेश याने अंधियारेमे प्रवेश कियासरीखा दीखै औ संरंभयाने नेत्रोंका फिरना मटकना औ हाथ पाय न का फेकना तथा दोषोंके बढनेसे स्मृतिका नाश होना इसको अपस्मार कहते हैं यह वातपित्त कफ सन्निपात भेदों करिके चारि प्रकारका होता है॥ ५॥

पूर्वरूपमाह

हृत्कंपः शून्यता स्वेदो ध्यानं मूर्छा प्रमूढता॥
निद्रानाशश्च तस्मिंस्तु भविष्यति भवंत्यथ॥ ६॥

अपस्मारका पूर्वरूप जैसेकि हृदयका कांपना औ शून्यता शरीरमे पसीना बकना मूर्छा याने मनको मोह होना प्रमूढता याने इंद्रियोंका मोह निद्राका नाश ये लक्षण होते हैं॥ ६॥

वाताऽपस्मार ल०

कंपते संदशे दंतान् फेनोद्वामी श्वसत्यपि॥
परुषारुण कृष्णानि पश्येद्रूपाणि चानिलात्॥ ७॥

वातापस्मारमे रोगी कांपता रहता है औ दांत कटकटाता है उसके मुखसे फेना गिरता है श्वासैं वेगसे चलती हैं औ वहरूखे लाल तथा काले रूपोंको सामने आये भयोंको देखता है॥ ७॥

पैत्तिकापस्मार ल०

पीतफेनांगवक्त्राक्षः पीतासृग्रूपदर्शनः॥

सतृष्णोष्णानलव्याप्तलोकदर्शीच पैत्तिकः॥ ८॥

पित्तापस्मारसे पीला फेना गिरना तथा अंग नेत्र औ मुखभी पीला औ पीलासयुक्त लाल रूपोंको देखता है तथा वह तृषा उष्णता युक्त भया हुआ सर्व जगतको अग्निसे व्याप्त देखता है॥ ८॥

कफजापस्मार ल०

शुक्लफेनांगवक्त्राक्षः शीतो हृष्टांग जोगुरुः॥
पश्यन् शुक्लानि रूपाणि श्लैष्मिको मुच्यते चिरात्॥ ९॥

कफापस्मारवाले रोगीके मुखका फेना शरीर मुख औ नेत्र सफेद होते हैं शरीर ठंढा रोम खडे देहभारी होता है औ वह सफेद रूपोंको संमुख आते भयोंको देखता है इस कफापस्मारसे वात पित्तापस्मारके अपेक्षा देरमे छूटता है याने उन दोनौसेभी इसका वेग बहुत देर रहिके छूटता है॥ ९॥

सन्निपातापस्मार लक्षणं

सर्वैरेतैः समस्तैश्च लिंगैर्ज्ञेय स्त्रिदोषजः॥
अपस्मारःसचासाध्योयःक्षीणस्याऽनवश्चयः॥ १०॥

जो प्रथम वातादिकोंके सर्व लक्षण कहे तिन करिके जो युक्त होय सो सन्निपातापस्मार वह त्रिदोषक औ जो बहुत कालका होय ये दोनौ असाध्य हैं॥ १०॥

असाध्य ल०

प्रस्फुरंतं च बहुशः क्षीणं प्रचलित भ्रुवं॥
नेत्राभ्यां च विकुर्वाण मपस्मारो विनाशयेत्॥ ११॥

जो अपस्मार रोगी अपस्मारके वेगके आनेसे बहुत तडफडाय

तथा क्षीण भया होय भवोंहोंको नचाता होय नेत्रोंको फिराय देइ ऐसे रोगीका अपस्मार नाशही करता है ॥ ११ ॥

अथ वातादि जनिता पस्मार वेग दिन नियमानाह

पक्षाद्वा द्वादशाहाद्वा मासाद्वा कुपिता मलाः ॥
अपस्माराय कुर्वंति वेगं किंचिदथांतरं ॥ १२ ॥

वात इत्यादिकौंसे उत्पन्न भये जो अपस्मार तिनके वेग आनेके दिनौंके नेम कहते हैं वे ऐसेकि एक पक्षसे अथवा बारह दिनसे अथवा एक महीनेसे दोष कुपित ह्वैके अपस्मारके वेगको उत्पन्न करते हैं तहां वातिका पस्मारका वेग बारह दिनसे पैत्तिकका पंदरह दिनसे कफजका एक महीनेसे यह नेम तौ है परंतु कभी मध्यमेभी वेग आयजाताहै १२

अत्र दृष्टांतमाह

देवे वर्षत्यपि यथा भूमौ बीजानि कानिचित् ॥
शरदि प्रतिरोहंति तथा व्याधि समुद्भवः ॥ १३ ॥

॥ इति रुग्वि निश्चयेऽपस्मार निदानं ॥ २२ ॥

इहां दृष्टांत जैसेकि चतुर्मासेमे वर्षा होनेसेभी के तने एक बीज पृथिवीहीमे रहिके जमते नही जब वर्षा व्यतीत ह्वैके शरदऋतु आती हैं तबहीं जामते हैं तैसेही रोगौंकीभी उत्पत्ति वेगौंका निश्चय करना ॥ १३ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायामपस्मार निदान प्रकाशः ॥ २२ ॥

अथ वात व्याधि निदानमाह

रुक्ष शीताल्प लघ्वन्न व्यवायाति प्रजागरैः ॥
विषमा दुपचाराच्च दोषास्टक् स्रावणादपि ॥ १ ॥

लंघन प्लवना त्यध्व व्यायामा तिविचेष्टितैः॥
धातूनां संक्षया च्चिंता शोक रोगादि कर्षणात्॥२॥
वेग संधारणा दामाद भिघाताद भोजनात्॥
मर्मबाधा द्गजोष्ट्राश्व शीघ्र यानाति सेवनात्॥ ३ ॥
देहे स्रोतांसि रिक्तानि पूरयित्वा निलो बली॥
करोति विविधान् व्याधीन् सर्वांगै कांग संश्रयान्॥४

अब वातरोगके निदान कहते हैं जैसेकि रूखा ठंढा थोडा औ हलका अन्न अति खानेसे अति मैथुन औ अति जागरनसे तथा विषम उपचार याने औषधके समयविना औषध देना औ समयमे न देना ऐसे हि वमन विरेचनादिकभी समय विना देना औ समयमे न देना यह विषम उपचार तथा दोष जो कफ पित्त मलमूत्रादिकौंका औ रक्तका निकालना ॥ १ ॥ अति लंघन पानीमे पैरना रस्ता चलना कसरत औ औरभी चेष्टा इनके अति सेवन करनेसे धातुनके क्षयसे चिंता औ शोकसे रोगादिकौंके जादा निकालनेसे जैसेकि बढे भये कफ इत्यादिकके कमी करनेके उपाय किये फिरि सम भये परभी कमती करनेके उपाय करना उसते ॥ २ ॥ मलादिकौंके वेग रोकनेसे आमसे चोट लगनेसे उपवाससे मर्मस्थानमे पीडा होनेसे तथा हाथी ऊंट औ घोडे इनपर वैठिके दौडानेसे इत्यादिकौंके अति सेवनसे ॥ ३ ॥ कुपित भया वलवान् वायु देहमे जो खाली नसैं है उनको भरिके एकांग औ सर्वांगमे रहने वाले अनेक रोग उत्पन्न करता है ॥ ४ ॥

पूर्वरूपमाह

अव्यक्तं लक्षणं तेषां पूर्वरूप मितिस्मृतं ॥
आत्मरूपं तुयद्व्यक्त मपायो लघुता पुनः ॥ ५ ॥

पूर्वरूप कहते है जो वातरोग अगाडी कहैंगे उनका जो अप्रसिद्ध लक्षण है उसको पूर्वरूप कहते है वही लक्षण जब प्रसिद्ध होता है तब उसको रूप कहते हैं औ जो वायूकी एकाएकी अकस्मात् लघुता याने कमीपना है सोभी अपाय याने अपकृति है अर्थात् वातरोग उत्पन्न होनेका कारणभूत है ॥ ५ ॥

रूपाण्याह

संकोचः पर्वणां स्तंभो भंगोऽस्थ्नां पर्वणामपि ॥
लोमहर्षः प्रलापश्च पाणिपृष्ठ शिरोग्रहः ॥ ६ ॥
खांज्यपांगुल्य कुब्जत्वं शोथोऽगाना मनिद्रता ॥
गर्भशुक्र रजोनाशः स्पंदनं गात्रसुप्तता ॥ ७ ॥
शिरोनासा क्षिजत्रूणां ग्रीवायाश्चापि हुंडनं ॥
भेदस्तोदोर्त्ति राक्षेपो मोहश्चाया सएवच ॥ ८ ॥
एवं विधानि रूपाणि करोति कुपितोऽनिलः ॥
हेतुस्थान विशेषाच्च भवेद्रोग विशेषकृत् ॥ ९ ॥

संधिनका संकोच औ जकडना हाडोंका औ संधिनका टूटना रोम खडे होना बकना हाथ पीठ औ शिर इनका ग्रहण याने जकडिसे जाय खांज्य याने लचकते मचकते चलना पांगुल्य याने पंगुलापन कुबडापन अंगोंका सूखना निद्रा नाश तथा गर्भवीर्य औ रजका नाश

शरीरकांपन औ फरकना तथा अंगमे शून्यता जो छूने दाबनेसे मालूम न होय ॥ ७ ॥ तथा मस्तक नाक नेत्र हंसिये औ गरदन इनका संकोच किवा टेढा करना तथा शरीरमे फोडने औ कोचनेसरीखी पीडा आक्षेप इसके लक्षण अगाडी कहैंगे मोह याने कार्याकार्यका अविचार आयास याने परिश्रम विना परिश्रम याने थकवाय ॥ ८ ॥ इन प्रकारौं की अनेक व्याधिनको कुपित भया वायु उत्पन्न करता है इस पीछे भी जैसे कारण औ स्थान विशेष वैसे रोग विशेष करता है जैसेकि कफावृत वायु मन्यास्तंभ रोग करता है यह हेतु विशेष स्थान जैसे पक्काशयमे रहिके अंत्र कूजन याने आंतौंको कुंजावता है इत्यादि औरभी जानना ॥ ९ ॥

स्थान विशेषमाह

तत्र कोष्ठाश्रिते दुष्टे निग्रहो मूत्रवर्चसोः ॥
वर्ध्महृद्रोगगुल्मार्शःपार्श्वशूलंच मारुते ॥ १० ॥

अब स्थान विशेष कहते तहां जो कोष्ठाश्रित वायु याने कोठेमे रहनेवाला वायु दूषित भया तौ मलमूत्रका अवरोध तथा वर्ध्म हृदयका रोग गुल्म अर्श औ पसुरिनमे शूल उत्पन्न करता है ॥ १० ॥

सर्वांग कुपित वातमाह

सर्वांग कुपिते वाते गात्रस्फुरण भंजने ॥
वेदनाभिः परीताभिःस्फुटंती वास्यसंधयः ॥ ११ ॥

सर्वांगमे वायुके कोप करनेसे गात्रौंका फरकना औ टूटना होता है तथा पीडा करिके जानौं संधि फूटैंगी ऐसा होना ॥ ११ ॥

गुदस्थ वायुमाह

ग्रहो विण्मूत्र वातानां शूलाध्माना श्मशर्कराः॥
जंघोरु त्रिकहृत्पृष्ठ रोग शोको गुदस्थिते॥ १२॥

गुदस्थ वायुके लक्षण कहते हैं यहभी पक्काशयस्थ है परंतु इसका गुदासे संबंध है इस वास्ते गुदस्थ कहा इसके कोप होनेसे मलमूत्र औ अधोवायुका अवरोध होता है तथा शूल पेट फूलना अश्मरी शर्करा तथा पिंडरी जांघ दोनौ कंधौंकी औ गरदनकी संधि हृदय औ पीठमे पीडा तथा शोथ उत्पन्न होता है॥ १२॥

आमाशय कुपितवातमाह

रुक्पार्श्वों दरहृन्नाभौ तृष्णोद्गार विशूचिकाः॥
कासः कंठास्य शोषस्तु श्वास श्चामाशयस्थिते॥ १३॥

जो वायु आमाशयमे कुपित होता है तौ पसुरी पेट हृदय औ नाभिमे पीडा तथा पियास डकार विशूचिका खांसी कंठ औ मुखका सूखना औ श्वास यै लक्षण होते हैं॥ १३॥

पक्काशयस्थ कुपितमाह

पक्काशयस्थोऽत्र कूजं शूलाटोपौ करोतिच॥
कृच्छ्रमूत्र पुरीषत्व मानाहं त्रिकवेदनां॥ १४॥

जो पक्काशयमे वायु कुपित होता है सो आंतौंका कूजना याने घुम्घुम् शब्द तथा शूल औ पेटमे गुरगुराना तथा मलमूत्रका कष्टसे उतरना पेट फूलना तथा त्रिकस्थाने जो कमरके पिछाडी संधिका हाड है उसमे पीडा इन रोगौंको उत्पन्न करता है॥ १४॥

त्वग्गत लक्षणमाह

त्वग्रूक्षा स्फुटिता सुप्ता कृशा कृष्णाचतुद्यते ॥
आतन्यते सरागाच सर्वरुक् त्वग्गतेनिले ॥ १५ ॥

त्वचागत वायुके कुपित होनेसे त्वचा रूखी फटी भया शून्य पतली औ काली तथा पीडायुक्त होती है तथा किंचित् लाल औ खिची सरीखी मालूम पडती है तथा सर्व त्वचामे पीडा होती है यह वायु जो त्वचागत रस है उसमे कुपित ह्वैके उस रसका शोषण करिके ऐसे रोग उत्पन्न करता है ॥ १५ ॥

रक्तगत कुपित माह

रुजस्तीव्राः ससंतापा वैवर्ण्यं कृशता रुचिः ॥
गात्रे चारुं षिभुक्तस्य स्तंभश्चा स्रग्गतेऽनिले ॥ १६ ॥

रक्तस्थित वायुके कुपित होनेसे संतापसहित अंगमे तीव्र पीडा रूपका कुरूप होना शरीरमे कृशता अरुचि शरीरमे फुन्सी होय तथा भोजन करनेसे शरीरका जकडना होता है ॥ १६ ॥

मांस मेदोगतमाह

गुर्वंगंतु द्यतेस्तब्धं दंड मुष्टिहतं तथा ॥
सरुक्स्तिमित मत्यर्थं मांसमेदो गतेऽनिले ॥ १७ ॥

मांस औ मेदमे स्थित वायूके कुपित होनेसे शरीर भारी जकडा भया तथा जैसे कोई डंडा अथवा मुक्की मारै तैसी पीडा तथा पीडायुक्तभी जादा मालूम पडता है ॥ १७ ॥

मज्जास्थिगत कुपित वात लक्षणमाह

भेदोऽस्थिपर्वणांसंधि शूलंमांसबलक्षयः ॥

अस्वप्नः संततारुक्च मज्जास्थिकुपितेऽनिले॥१८॥

अस्थि औ मज्जामे वायुके कुपित होनेसे हाड औ पैरोंमे फूटनि संधिनमे शूल मांस औ बलका क्षय निद्राका न आना औ निरंतर सर्व शरीरमेभी पीडा ये लक्षण होते हैं॥ १८॥

शुक्रस्थ कुपित वात लक्षणमाह

क्षिप्रंमुंचतिबध्नाति शुक्रंगर्भमथापिवा॥
विकृतंजनयेच्चापि शुक्रस्थःकुपितोऽनिलः॥ १९॥

वीर्यस्थानमे कुपित भया हुआ वायु स्त्री प्रसंगके समयमे धातुको जलदी गिराता है अथवा शक्तिसे बाहेर रुकावट करता है ऐसेही गर्भकोभी गिराय देता है अथवा मुद्दतसे जादा कालतक राखता है अथवा वीर्यमे तया दुष्ट वीर्य उत्पन्न गर्भमे विकार उत्पन्न करता है१९

शिरागतमाह

कुर्याच्छिरा गतःशूलं शिराकुंचन पूरणं॥
सबाह्याभ्यंतरायामं खल्लीकुब्जत्वमेवच॥ २०॥

शिरामे याने जो नाडिया रक्तके वहनेवाली हैं उनमे कुपित भया हुआ बायु शूल औनसोंको संकुचित करता है तथा नसोंको फुलाके मोटी करता है तथा बाह्यायाम औ अंतरायाम खल्ली तथा कूबर इन रोगोंको करता है॥ २०॥

स्नायुसंधिगत लक्षणमाह

सर्वांगैकांगकान्रोगा न्कुर्यात्स्नायु गतोनिलः॥
हंतिसंधिगतःसंधीन् शूलशोथौ करोतिच॥ २१॥

स्नायु याने नसै उननसौंमे प्राप्त भया कुपित वायु जो सर्व नसौंमे कुपित होतौ सर्वांग रोग औ जो कही अंगकी नसौंमे कुपित होय तौ एकांग वातरोगको उत्पन्न करता है तथा संधिगत वायु कुपित ह्वैके संधिनको विगाडता है औ शूल तथा शोथकीभी उत्पन्न करता है ॥२१

अथ कफ पित्ताभ्यामावृतानां प्राणादि वायूनां कार्याण्याह

प्राणेपित्तावृतेच्छर्दिर्दाहश्चैवोपजायते॥
दौर्बल्यंसदनंतंद्रा वैरस्यंच कफावृते॥ २२॥
उदानेपित्तसंयुक्ते दाहोमूर्छाभ्रमःक्लमः॥
अस्वेदहर्षौमंदाग्निःशीतताचकफावृते॥ २३॥
स्वेददाहौष्ण्यमूर्छाःस्युःसमानेपित्तसंयुते॥
कफेनसंगेविण्मूत्रे गात्रहर्षश्चजायते ॥ २४ ॥
अपानेपित्तयुक्तेतु दाहौष्ण्यंरक्तमूत्रता॥
अधःकायेगुरुत्वंच शीतताचकफावृते॥ २५॥
व्यानेपित्ता वृतेदाहो गात्रविक्षेपणंक्लमः॥
स्तंभकोदंडकश्चापि शोथशूलौकफावृते॥ २६॥

अब कफ पित्तयुक्त जो प्राणादिक पंच वायु तिनके कार्य कहते हैं प्राण वायुके पित्तयुक्त होनेसे वांति औ दाह होता है तथा कफयुक्त होनेसे दुर्बलता अंगकी शिथिलता झपकी मुखकी विरसता ये लक्षण होते है ॥ २२ ॥ उदान वायूके पित्तयुक्त होनेसे दाह मूर्छा भ्रम औ अकस्मात् घबराहट होता है तथा कफयुक्त होनेसे पसीनाकी वंदी रोमनका खडा होना मंदाग्नि औ शीत लगना ये रोग होते है ॥ २३ ॥

समान वायुके पित्तयुक्त होनेसे शरीरमे पसीना दाह उष्णता औ मूर्छा तथा कफयुक्त होनेसे मलमूत्रका रुकना औ रोम हर्ष ये चिन्ह होते हैं ॥ २४ ॥ अपान वायूके कफयुक्त होनेसे दाह उष्णता औ मूत्र रक्तवर्ण तथा कफयुक्त होनेसे नीचेके शरीरमे भारीपना औ ठंढका लगना होय है ॥ २५ ॥ व्यान वायूके पित्तयुक्त होनेसे दाह हाथ पायोंका पटकना औ एकाएकी घबराहट तथा कफयुक्त होनेसे शरीरका जकडना औ दंडसरीखा रहि जाना तथा शोथ औ शूल ये लक्षण होते हैं॥ २६ ॥

अथा क्षेपकस्य सामान्य लक्षणमाह

यदा तु धमनीः सर्वाः कुपितोभ्येति मारुतः॥
तदाक्षिपत्याशुसहु र्मुहुर्देहंमुहुश्चरः॥
मुहुर्मुहुस्तदाक्षेपा दाक्षेपकइतिस्मृतः॥ २७॥

आक्षेपक लक्षण कहतेहैं जब वायु कुपित ह्वैके सर्व रक्त वहनेवाली नाडिनमे प्राप्त होता है तब वारंवार चलायमान ह्वैके जैसे हाथीपर वैठनेसे झक झोरे हील लगते हैं तैसे शरीरको वारंवार हलावता हो तब उसको वारंवार आक्षेप करनेसे आक्षेपक कहते हैं ॥ २७ ॥

अथास्यैवावस्था विशेषमपतंत्रकमाह

क्रुद्धःस्वैः कोपनैर्वायुः स्थाना दूर्ध्वंप्रपद्यते॥
पीडयन्हृदयंगत्वा शिरःशंखौचपीडयेत्॥ २८॥
धनुर्वन्नामयेद्गात्रा ण्याक्षिपेन्मोहयेत्तथा॥
सकृच्छ्रादुच्छ्वसेच्चापि स्तब्धाक्षोऽथनिमीलकः॥ २९॥

कपोतइवकूजेच्च निःसंज्ञःसोपतंत्रकः॥
दृष्टिंसंस्तभ्यसंज्ञांच हत्वाकंठेनकूजति॥ ३०॥
हृदिमुक्तेनरःस्वास्थ्यं यातिमोहंवृतेपुनः॥
वायुनादारुणंप्राहुरेकेतमपतानकं॥ ३१॥

अब अपतंत्रकके लक्षण कहते हैं जैसेकि जो आपके कोप करने वाले रुक्षादिक पदार्थ तिन करिके कुपित भया वायुसो स्वकीय स्थान जो पक्काशय उसते ऊर्ध्व गतिको प्राप्त होता है तब हृदयको पीडित करता भया मस्तकमे जायके कनपटिनमे पीडा उत्पन्न करता है ॥२८॥ औ शरीरको धनुषसरीखा नमाइ देता है औ झक कोरि डारता है तथा बेहोस करि देता है तब वह बडे कष्टसे श्वास लेता है औ नेत्रौंको फैलाए भये रहि जाता है वा मूंदेही रहता है ॥ २९ ॥ तथा अचेत भया हुआ कबूतर सरीखा कूजता रहता है उसको अपतंत्रक रोग कहते हैं इसमे दृष्टिक निश्चल करि देता है याने नेत्र फुलते बंद होते हैं सो न यह कटकी लगि जाती है संज्ञाका नाश होता है औ कंठसे कां खता रहता है ॥ ३० ॥ तथा जब वायु हृदयको छोडि देता है तब मनुष्य सुखी होता है जब फिरि ग्रहण करता है तब फिरि बे होस हो जाता है यह रोग बडा दारुण है इसको कोई अपतान कभी कहते हैं ॥ ३१ ॥

दंडापतानकमाह

कफान्वितोभृशंवायुस्तास्वेवयदितिष्ठति॥
सदंडवत्स्तंभयति कृच्छ्रोदंडापतानकः॥ ३२॥

जब जो प्रथम नसें कहीं उन्हीम अतिशय कफयुक्त वायु स्थित

होता है तब मनुष्यको दंडाकी तरह जड करि देता है अर्थात् वह सूखे काठकी तरह पडा रहता है उसको दंडापतानक कहते हैं वह कष्ट साध्य है ॥ ३२ ॥

अस्यैव भेदं धनुस्तंभमाह

धनुस्तुल्यंनमेद्यस्तु सधनुस्तंभसंज्ञितः ॥ ३३ ॥

इसी अपतानकका भेद धनुस्तंभ है इसते मनुष्य धनुषके तुल्य नइके रहि जाता है ॥ ३३ ॥

अंतरायाममाह

अंगुलीगुल्फजठर हृद्वक्षोगलसंश्रितः ॥
स्नायुप्रतानमनिलो यदाक्षिप्रतिवेगवान् ॥ ३४ ॥
विष्टब्धाक्षः स्तब्धहनु र्भग्नपार्श्वःकफंवमन् ॥
अभ्यंतरंधनुरिव यदानमतिमानवः ॥
तदासोऽभ्यंतरायामं कुरुतेमारुतोवली ॥ ३५ ॥

अंतरायामके लक्षण कहते हैं

जैसेकि जब अंगुली एडी पेट हृदय छाती औ गलेमे रहनेवाला वायु वेगवान हुआ भया नसौके समूहको खैंचि लेता है तब मनुष्यके नेत्र जैसेके तैसे रहि जाते हैं ॥ ३४ ॥ ठोढी जकडि जाती है पसुरीभी मरुरि जाती हैं औ मुखसे कफ आपसे आप गिरने लगता है औ अ· गाडीकी तरफ धनुष सरीखा नइ जाता है तब अभ्यंतरायाम नामके रोगको वह बलवान वायु करता है ॥ ३५ ॥

बाह्यायाम माह

बाह्यस्नायु प्रतानस्थो बाह्यायामं करोतिच ॥

तमसाध्यं बुधाःप्राहुः कटिपार्श्वौरुभंजनं॥ ३६॥

बाह्यायाम लक्षण जैसे अंतरायाममे अगाडीकी नसौंमे वायु स्थित व्हैके अंतरयाम करता है तैसे पिछाडकी सर्वनसौंमे रहा भया कुपित वायु पिछाडीको नवायके बाह्यायाम करता है यह कमर पसुरी औ जांघौंको मरोरनेवाला असाध्य है॥ ३६॥

व्रणायाममाह

मर्माश्रितं व्रणंप्राप्य वायुर्यः सर्वदेहगः॥
वेगैरानमयेद्देहं व्रणायामंतुतंत्यजेत्॥ ३७॥

जो व्रण मर्मस्थानमे भया औ उसमे कुपित वायु प्राप्तव्है सर्व देहमे प्रसरा भया हुआ अपने वेगौं करिके देहको नवाइ देता है उसको व्रणायाम कहते है॥ ३७॥

उक्तानामाक्षेपक प्रकाराणां कफ पित्तानु बंध माह

कफपितान्वितोवायुर्वायुरेवचकेवलः॥
कुर्यादाक्षेपकंत्वन्यं चतुर्थमभिघातजं॥ ३८॥

कहे भये आक्षेपक भेदौमे कफ औ पित्तका संबध कहते हैं जैसे कि कफान्वितवायु पित्तान्वितवायु औ केवलवायु चौथा अभिघातसे आक्षेपक होता है ऐसे चारिभेद आक्षेपकके कहै वै गुरुत्वादिक भेदौंसे जानना॥ ३८॥

असाध्यमाह

गर्भपातनिमित्तश्च शोणितातिस्त्रवाच्चयः॥
अभिघातनिमित्तश्च नसिध्यत्यपतानकः॥ ३९॥

असाध्य लक्षण कहते हैं जो अपतानक वायुरोग गर्भपातके

निमित्तसे अथवा रक्तके निकलनेसे औ जो चोटलगनेसे भया होयगा सो असाध्य जानना ॥ ३९ ॥

पक्षबध माह

गृहीत्वार्द्धं तनोर्वायुः शिरास्नायुर्विशोष्यच ॥
पक्षमन्यतमंहंति संधिबंधान्विमोक्षयन् ॥ ४० ॥
कृत्स्नोऽर्द्धकाय स्तस्यस्या दकर्मण्यो विचेतनः ॥
एकांग रोगं तंके चिदन्ये पक्षबधंविदुः ॥
सर्वांग रोगं तद्वच्च सर्वकायाश्रितेऽनिले ॥ ४१ ॥

पक्षबध रोग कहते हैं जिसरोगमे वायु आधे शरीरको ग्रहण करिके शिरा जो मोटीनसे स्नायु जो उनसे मध्यम नसै उनको सुखायके संधिनके जो बंध न हैं उनको ढीले करता भया एक तरफके पक्षकोयाने एक तरफके नेत्र नाक कान हाथ पाय इत्यादिक आधे अंगको शिथिल करि देता है ॥ ४० ॥ तब उस मनुष्यका आधा देह कोईभी काम करनेके योग्य नही रहता है औ अचेत ह्वै जाता है उसको कोई एक आचार्य एकांग रोग औ कितनेक पक्षवध कहते हैं लोकमे पक्षाघात प्रसिद्ध है जैसे यह अर्द्धांग शिथिल होनेसे पक्षवध होता है इसी रीतिसे सर्वांग बे काम होनेसे सर्वांग रोग होता है ॥ ४१ ॥

अथास्य साध्यासाध्यत्व ज्ञानार्थमाह

दाह संताप मूर्छाःस्युर्वायुपित्तसमन्विते ॥
शैत्यशोथगुरुत्वानि तस्मिन्नेव कफान्विते ॥ ४२ ॥
शुद्धवात हतंपक्षं कृच्छ्रसाध्य तमंविदुः ॥

साध्य मन्येन संसृष्ट मसाध्यं क्षयहेतुकं ॥ ४३ ॥
गर्भिणी सूतिका बाल वृद्ध क्षीणे ष्वसृक्क्षये ॥
पक्षाघातं परिहरे द्वेदना रहितोयदि ॥ ४४ ॥

इसके साध्यासाध्य लक्षण जाननेके वास्ते कहते हैं

जो पक्षा घातमे पित्तयुक्त वायु होय तो दाह संताप औ मूर्छा ये चिन्ह होते हैं औ जो कफयुक्त होय तो शीत शोथ औ गुरुत्व इत्यादिक चिन्ह होते हैं ॥ ४२ ॥ जो शुद्ध वायूसे पक्षा घात भया होय तौ अति कष्ट साध्य जानना औ पित्तादि युक्तसे साध्य तथा जो क्षय निमित्तसे भया होय ॥ ४३ ॥ अथवा गर्भिणी बालक वृद्ध सूतिका औ क्षीण मनुष्यके भया होय किंवा रक्तक्षयसे भया होय औ पीडा रहित होय तौ असाध्य जानिके उसका त्यागही करना श्रेष्ठ है ॥ ४४ ॥

अर्दित रोगमाह

उच्चैर्व्याहरतोऽत्यर्थं खादतःकठिनानिच ॥
हसतो जृंभमाणस्य विषमा च्छयनादपि ॥ ४५ ॥
शिरोनासौष्ठ चिबुक ललाटे क्षणसंधिगः ॥
अर्दयत्य निलो वक्त्र मर्दितं जनयत्यपि ॥ ४६ ॥
वक्री भवति वक्त्रार्द्धं ग्रीवां व्याप्य प्रवर्त्तते ॥
शिरश्चलति वाक्संगो नेत्रादीनांच वैकृतम् ॥ ४७ ॥
ग्रीवा चिबुक दंतानां तस्मिन्पार्श्वेचवेदना ॥
तमर्दित मितिप्राहु र्व्याधिंव्याधिविशारदाः ॥ ४८ ॥

अर्दित रोग कहते हैं

अति ऊंचे स्वरसे बोलनेसे अति कठिन पदार्थ खानेसे अति ह-सते हसते जमुहाई लेना ऊंची नीची गर्दन करिके सोना इन कारणौंसे कुपित भया हुआ वायु ॥ ४५ ॥ मस्तक नासिका ओंठ ठोढी ललाट औ नेत्र संधिमे प्राप्त भया हुआ मुखको फिरायके याने एक ओरको टेढा करिके अर्दित रोगको उत्पन्न करता है ॥ ४६ ॥ तिसते ग्रीवासे लैके मुख टेढा होता है मस्तक हलता रहता है औ बोला नहीं जाता है तथा नेत्रादिकभी विकारयुक्त होते हैं ॥ ४७ ॥ जिस अंगकी तरफ टेढा होता है उसी तरफ गरदन ठोढी औ दांतौंमे पीडा होती है उसको वैद्य लोक अर्दित रोग कहते हैं ॥ ४८ ॥

असाध्यमाह

क्षीणस्यानि मिषाक्षस्य प्रसक्ताऽव्यक्तभाषिणः॥
नसिध्यत्यर्दितंगाढंत्रिवर्षं वेपनस्यच॥ ४९ ॥

जो मनुष्य क्षीण होय तथा नेत्रौंके निमेष उन्मेष न होते होयँ याने यकटकी लगायके रहि गया होय तथा जिसका बोल न कुछभी न समुझि पडता होय औ जिसके जिह्वा नासिका औ नेत्रौंसे पानी झ-रता होय तथा कांपता होय सो असाध्यहै वह अच्छा होनेका नही४९

आक्षेपकादीना मर्दितां तानां तावद्वेगित्वमाह

गतेवेगे भवेत्स्वास्थ्यं सर्वेष्वाक्षेप कादिषु॥ ५० ॥

आक्षेपकसे लैके अर्दित पर्यंत रोगौंका वेगित्व कहते हैं जब इन सर्व आक्षेपकादिकौंका वेग शांत होता है तब मनुष्यको थिरता होती है वेग आनेसे फिरि जैसाका वैसा होता है ॥ ५० ॥

हनुस्तंभमाह

जिव्हा निर्लेखना च्छुष्क भक्षणादभिघाततः॥
कुपितो हनुमूलस्थः स्रंसयित्वा निलोहनुं॥ ५१॥
करोति विवृतास्यत्व मथवा संवृतास्यतां॥
हनुग्रहः सतेनस्या त्कृच्छ्राच्चर्वणभाषणं॥ ५२॥

हनुस्तंभके लक्षण

जैसेकि दातून की चीरसे जीभ घसनेसे सूखे चने वगैरः के चवानेसे थप्पड वगैरेकी चोटके लगनेसे ठोढीमे रहनेवाला वायु कुपित भया हुआ उस ठोढीको चलायके याने चौहरको फैलायके॥ ५१॥अथवा सकोरिके मुखको फैलाय देता है अथवा बंद करि देता है फिरि वह जैसाका वैसा रहि जाता है उसको हनुस्तंभ कहते हैं उस रोगमे खाना औ बोलना बडे कष्टसे होता है॥ ५२॥

मन्यास्तंभमाह

दिवास्वप्ना सनस्थान विकृतो र्ध्वनिरीक्षणैः॥
मन्यास्तंभं प्रकुरुते सएव श्लेष्मणावृतः॥ ५३॥

दिनके सोनेसे बहुत बैठनसे वा खडे रहनेसे अथवा टेढी गरदन पीछे फिरिके वा ऊपरको देखनेसे कफयुक्त कुपित भया हुआ वायु गरदनको जकडि देता है उसको मन्यास्तंभ कहते हैं॥ ५३॥

जिव्हास्तंभमाह

वाग्वाहिनी शिरासंस्थो जिव्हांसंस्तं भयतेऽनिलः॥
जिव्हास्तंभः सतेनान्न पानवाक्येष्वनीशता॥ ५४॥

वाणी निकालनेवाली जो नाडी उसमे रहनेवाला वायु कुपित हो-नेसे जीभको जैसीकी वैसी खींचि रखता है उसते खाने पीनेको औ बलने कोभी मनुष्य समर्थ है सकता नही उसको जिह्वास्तंभ रोग कहते हैं ॥ ५४ ॥

शिरोग्रहमाह

रक्तमाश्रित्य पवनः कुर्यान्मूर्द्ध धराःशिराः॥
रूक्षाःसवेदनाःकृष्णाःसोऽसाध्यःस्याच्छिरोग्रहः॥५५॥

कुपित भया हुआ वायु रक्तमे प्रविष्ट ह्वैके मस्तकके धारनेवाली जो नाडी हैं उनको रूखी काली औ वेदनायुक्त करिके जकडि देता है सो शिरोग्रह रोग असाध्य है ॥ ५५ ॥

गृध्रसीमाह

स्फिक्पूर्वा कटिपृष्ठो रुजानुजं घापदंक्रमात्॥
गृध्रसी स्तंभ रुक्तोदै र्गृह्णाति स्पंदतेमुहुः॥ ५६ ॥
वाताद्वात कफात्तंद्रा गौरवा रोचकान्विता॥
वातजायां भवेत्तोदो देहस्यापिप्रवक्रता॥ ५७॥
जानुजंघो रुसंधीनां स्फुरणं स्तब्धता भृशं॥
वातश्लेष्मो द्भवायांतु गौरवंवन्हिमार्दवं॥
तंद्रामुख प्रसेकश्च भक्तद्वेप स्तथैवच॥ ५८ ॥

गृध्रसी रोग यह प्रथम कूलैंमे फिरि क्रमसे कमर पीठ जांघें घु-टना पिडरीऔ पांय इनमे स्तंभ याने जकडना पीडा सुई छेदनेसरीखी दर्द उत्पन्न करिके ग्रहण करता है औ वारंवार कंपा होती है यह रोग

वातसे औ वातकफसे उत्पन्न होता है तथा गुरुता औ अरोचक युक्त होता है तहां वातजन्यमे सुई छेद्दने सरीखी पीडा औ देहका अति टेढापना तथा घुटुना पिडरी जांघें औ संधि इनका फरकना औ जकडना अतिशय होता है तथा वात कफजन्यमे गुरुता अग्नि मांद्य झपकी मुखसे लार गिरना औ अन्नपर द्वेष होता है ॥ ५८ ॥

कुब्जत्वमाह

हृदयं यदिवा पृष्ठ मुन्नतं क्रमशः सरुक् ॥
क्रुद्धो वायुर्यदाकुर्या त्तदातं कुब्ज मादिशेत् ॥ ५९ ॥

क्रुद्धित भया वायु जब हृदय अथवा पीठिको क्रमसे ऊंचा करि देइ उसको कुब्ज कहते हैं लोकमे कूबर कहते हैं ॥ ५९ ॥

विश्वाचीमाह

तलं प्रत्यंगुलीनांयाः कंडरा बाहु पृष्ठतः ॥
बाव्होः कर्मक्षयरी विश्वाची तिनिगद्यते ॥ ६० ॥

भुजाकी पीठसे लैकें हथेली औ अंगुलिनकी जो मोटीनसैं उनमे क्रुद्धित भया हुआ वायु प्रवेश करिके उन नसौंको जकडि लेता है उसते भुजनके काम बंद व्है जाते हैं उसको विश्वाची कहते हैं ॥ ६० ॥

क्रोष्टुशीर्षमाह

वात शोणितजः शोफो जानुमध्ये महारुजः ॥
ज्ञेयः क्रोष्टुकशीर्षस्तु स्थूलः क्रोष्टुकशीर्षवत् ॥ ६१ ॥

जो वायु औ रक्त करिके घुटजानुमे सियारके मत्थेके समान

सूजनि आती है औ उसमे पीडा अतिशय होती है उसको क्रोष्टुकशीर्ष कहते हैं ॥ ६१ ॥

खंज पंगु लक्षणमाह

वायुः कट्याश्रितः सक्थ्नः कंडरामाक्षिपेद्यदा ॥
खंजस्तदा भवेज्जंतुः पंगुः सक्थ्नो र्द्वयोर्वधात् ॥ ६२ ॥

कमरमे रहनेवाला वायु कुपित होके जब एक तरफके सब पायोंकी नसोंको खैचिके किंचित् शिथिलतायुक्त जकडि डारता है तब मनुष्य खंज होता है याने लंगडा होता है औ जब दोनौं पायोंको नसोंको विगाडि देता है तब पंगुला होता है ॥ ६२ ॥

कलायखंजमाह

प्रक्रामन्वेपते यस्तु खंजन्निव च गच्छति ॥
कलाय खंजं तं विद्यान्मुक्तसंधि प्रबंधनं ॥ ६३ ॥

जिस रोगसे संधिनके बंधन ढीले होके मनुष्य चलतेमे कांपता औ लेंगडाता चलै उसको कलायखंज कहते हैं ॥ ६३ ॥

वात कंटकमाह

रुक्पादे विषमेन्यस्ते श्रमाद्वा जायते यदा ॥
वातेन गुल्फमाश्रित्य तमाहुर्वातकंटकं ॥ ६४ ॥

ऊंची नीची जमीनपर पाय रखनेसे अथवा श्रम करनेसे जो एडिके ऊपरके भागमें याने टंघुनामे पीडा होती है उसको वात कंटक कहते हैं ॥ ६४ ॥

पाद दाहमाह

पादयोः कुरुते दाहं पित्तासृक् सहितोऽनिलः ॥

विशेषतश्चक्रमतः पाददाहं तमादिशेत्॥ ६५॥

पित्त औ रक्तसहित वायु पायनमे दाह उत्पन्न करै तहांभी चलनेमे विशेष करिके दाह करता होय सोपाद दाह जानना॥ ६५॥

पादहर्षमाह

हृष्येते चरणौ यस्य भवेतां वापि सुप्तकौ॥
पादहर्षः सविज्ञेयः कफवात प्रकोपजः॥ ६६॥

जिस रोगमे पायनमे झुनझुनी आवै अथवा रोमखडे ह्वै जाय उसको पादहर्ष जानना वह कफ वातजन्य होता है॥ ६६॥

अथां सशोषाप बाहुकावाह

अंसदेशे स्थितो वायुः शोषयित्वां सबंधनं॥
शिराश्वा कुंच्य तत्रस्थो जनयत्य पबाहुकं॥ ६७॥

कंधेमे रहनेवाला वायु कुपित ह्वैके कंधेकी संधिमे रहनेवाले कफको सुखायके कंधेकोभी सुखाय देता है उसको अंसशोष कहते हैं तथा जो उसी जगह रहनेवाला वायुनसौंको खैंचि के अपबाहुक रोगको पैदा करता है ये रोगभी कफवात जन्य हैं॥ ६७॥

अथ जिव्हागतान्मूकादीन त्रीन् रोगानाह

आवृत्यवायुः सकफो धमनीः शब्दवाहिनीः॥
नरान्करोत्य क्रियका न्मूक मिन्मिन गद्गदान्॥ ६८॥

जिव्हागत मूकादिक तीनि रोग कहते हैं कफयुक्त वायु कुपित भया हुआ जो जीभसे शब्दके प्रसिद्ध करनेवाला नसौंको घेरिके दोषके कमी जादे पनेसे मूक मिन्मिन औ गद्गद रोगौंको पैदा करता है तहां जिसको बिल्कुल्य बोलना न आता होय उसको मूक कहते हैं

औ जो नाक स्वरसे बोलै उसको मिन्मिन कहते हैं तथा जो हक लायके बोलै उसको गद्गद कहते हैं ॥ ६८ ॥

तूनीमाह

अधोया वेदनायाति वर्चोमूत्राशयो त्थिता ॥
भिंदंती वगुदोपस्थं सातूनी नामनामतः ॥ ६९ ॥

जो पीडा मलाशय औ मूत्राशयसे उठी भयी गुदा औ लिंगको मानौ चीरती होय ऐसी नीचेको जाती होय सो तूनी ॥ ६९ ॥

प्रतितूनीमाह

गुदोपस्थो त्थिता चैव प्रतिलोमं प्रधावति ॥
वेगैः पक्काशयं याति प्रतितूनीति सोच्यते ॥ ७० ॥

जो पीडा गुदा औ लिंगसे उठिके उलटी वेगौंसे पक्काशयमे जाती होय उसको प्रतितूनी जानना ॥ ७० ॥

आध्मानमाह

साटोप मत्युग्र रुज माध्मान मुदरं भृशं ॥
आध्मान मितिजानीया द्धोरं वात निरोधजम् ॥ ७१ ॥

जिस रोगमे गुरगुर शब्द सहित औ बडी पीडायुक्त पेट फूलै उसको आध्मान कहते हैं वह अधो वायुके रुकनेसे होता है ॥ ७१ ॥

प्रत्याध्मानमाह

विमुक्त पार्श्व हृदयं तदेवा माशयो त्थितं ॥
प्रत्याध्मानं विजानीयात्कफ व्याकुलिता निलम् ७२ ॥

जिस आध्मानमे हृदय औ पसुरीनमे पीडा न होती होय तथा

पीडा आमाशयमे भई होय इसको प्रत्याध्मान जानना यह वायु कफ करिके व्याकुल रहता है ॥ ७२ ॥

वाताष्ठीलामाह

नाभे रधस्ता त्संजातः संचारी यदीवाऽचलः ॥
अष्ठीला वद्घनो ग्रंथि रूर्ध्वमायत मुन्नतः ॥
वाताष्ठीलां विजानीया द्बहिर्मार्गा वरोधिनीं ॥ ७३ ॥

नाभिके नीचे अचल किंवा चलनेवाली लोढिआसरीखी ऊपरको लंबी इधर उधर ऊंची औ कठिन एक गांठि पैदा होती है उसको वाताष्ठीला कहते हैं वह मल औ मूत्रके रोंकनेवाली है ॥ ७३ ॥

प्रत्यष्ठीलामाह

एतामेव रुजा युक्तां वात विण्मूत्र रोधिनीं ॥
प्रत्यष्ठीला मिति वदे ज्जठरे तिर्य गुत्थितां ॥ ७४ ॥

यही अष्ठीला जो पीड़ायुक्त मलमूत्र औ अधो वायूकी रोकनेवाली होय तथा पेटमे तिरछी आडी पैदा होय उसको प्रत्यष्ठीला कहते हैं ॥ ७४ ॥

वात विकृतिमाह

मारुतेऽविगुणे बस्तौ मूत्रं सम्यक् प्रवर्त्तते ॥
विकारा विविधा श्चापि प्रतिलोमे भवंतिहि ॥ ७५ ॥

जब बस्ति याने पेडूमे वायू सानुकूल होता है तब मूत्र अछी तरहसे उतरता है औ जब वह प्रतिकूल होता है तब अनेक विकार उत्पन्न होते हैं ॥ ७५ ॥

ऊर्ध्व वातमाह

अधः प्रतिहतो वायुः श्लेष्मणा मारुतेनवा ॥
करोत्युद्गार बाहुल्य मूर्ध्व वातः प्रचक्ष्यते ॥ ७६ ॥

कफ औ वायु करिके अधो वायुका अवरोध होता है तब डकारें बहुत आने लगती हैं उसको ऊर्ध्व वात कहते हैं ॥ ७६ ॥

कंपवात खल्यावाह

सर्वांग कंपः शिरसो वायुर्वे पथु संज्ञकः ॥
खल्लीतु पाद जंघोरु कर मूलाव मोटनी ॥ ७७ ॥

जो सर्व अंग औ शिर तथा और अंगोंका कांपना उसको वेपथु कहते हैं लोकमे कंपवात कहते हैं तथा जिस वातरोगमे पाय पिंडरी जांघ औ पहुंचा मुरडि जाय उसको खल्ली कहते हैं ॥ ७७ ॥

अनुक्त वातरोग संग्रहार्थमाह

स्थान नामानु रूपैश्च लिंगैः शेषान्वि निर्दिशेत् ॥
सर्वेष्वे षुच संसर्गं पित्ताद्यै रुपलक्षयेत् ॥ ७८

जो वातरोग नही कहे हैं उनके संग्रहके वास्ते कहते हैं जैसेकि जो वातरोग नही कहे उनको स्थानके नाम अनुरूप चिन्ह जानना औ इन सवनमे पित्तादिकौंका संसर्ग जानना ॥ ७८ ॥

साध्यासाध्यमाह

हनु स्तंभार्दिता क्षेप पक्षा घाता पतानकाः ॥
कालेन महता वाता यत्ना त्सिध्यंति वानवा ॥
नवान्ब लवतस्त्वेतान्सा धयेन्नि रुपद्रवान् ॥ ७९ ॥

साध्यासाध्य कहते हैं हनुस्तंभ अर्दित आक्षेपक पक्षाघात औ अपतानक ये वातरोग बहुत कालसे यत्न करते करते सिद्ध होयंगे तौ होयंगे अथवा नहींभी होयंगे जो वातरोग नये हैं औ रोगीभी बलवान हैं तथा उपद्रवरहित हैं उनका औषध उपाय करना ॥ ७९ ॥

उपद्रवानाह

विसर्प दाह रुक् संग मूर्छाऽरुच्यग्नि मार्दवैः ॥
क्षीण मांस बलं वाताघ्नंति पक्ष वधादयः ॥ ८० ॥

उपद्रव कहते हैं

विसर्प दाह पीडा मलमूत्र औ अधो वायुका अवरोध मूर्छा अरुचि औ अग्नि मांद्य इन करिके युक्त जो पक्षबध इत्यादिक वातरोग ते जिसका मांस औ बलक्षीण भया होय उसको मारतेही हैं ॥ ८० ॥

असाध्यमाह

शूनं सुप्त त्वचं भग्नं कंपाध्मान निपीडितं ॥
रुजार्ति मंतं चनरं वात व्याधिर्विनाशयेत् ॥ ८१ ॥

जिसके अंगमे सूजनि होय किंवा चर्म शून्य भया होय अथवा हाड टूटि गया होय तथा कंपा औ पेट फूलने करिके पीडित होय तथा अति पीडायुक्त होय ऐसे मनुष्यका वातरोग नाश करताहै ॥ ८१ ॥

अथेदानीं पंचविधस्यापि प्रकृतस्य वायोः कार्यं लिंगं चाह

अव्या हत गतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतौ स्थितः ॥
वायुः स्यात्सो धिकं जीवे द्वीत रोगः समाः शतम् ॥ ८२

इति रुग्वि निश्चये वातरोग निदानं ॥ २२ ॥

अब जो पांचौ प्रकारका वायु उसके कार्य औ चिन्ह कहते हैं

जो वायु आपके स्थान औ स्वभावमे स्थित है औ कहीभी शरीरमे वायुका अवरोध नहीं सो मनुष्य एकसोवीस वर्ष ओ पांच दिन रोगरहित जीवै इस आयुष्यके प्रमाणमे वराह मिहरने आयुर्निरूपण अध्यायमे लिखा है जैसे ॥ श्लोक ॥ समाः षष्टि द्विधा मनुज करिणां पंचचनिशाः अर्थ—मनुष्य औ हाथीकी आयुष्यके साठिके दूने याने एकसौवीस वर्ष औ पांच रात्री हैं ॥ ८२ ॥

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकायां वातरोग निदान प्रकाशः ॥ २३ ॥

अथ वातरक्त निदानं

लवणाति कटु क्षार स्निग्धोष्णा जीर्ण भोजनैः ॥
क्लिन्न शुष्कां बूजा नूप मांस पिण्याक मूलकैः ॥ १ ॥
कुलत्थ माष निष्पाव शाकादि पलले क्षुभिः ॥
दध्यार नालसौ वीर सक्तुतक्र सुरासवैः ॥ २ ॥
विरुद्धा ध्यशन क्रोध दिवा स्वप्नाति जागरैः ॥
प्रायशः सुकुमाराणां मिथ्याहार विहारिणां ॥
स्थूलानां सुखिनां चापि वातरक्तं प्रकुप्यति ॥ ३ ॥

अब वातरक्तका निदान कहते हैं

अतिशय लवण कटुक क्षार स्निग्ध औ उष्ण पदार्थ अजीर्णमे भोजन तथा गले भये अथवा सुखाये भये जलके मच्छी कछुआ इत्यादिकोंके मांस औ जल किनारेके जो हंस सारस चकई चकवा इत्यादिकोंके मांस तिनका खाना ॥ १ ॥ तथा खरी मूरी कुरथी उरद

अकसा पत्रशाक औ वैंगन इत्यादिकौंके शाक तिल कुट ऊस दही कांजी सिरका सतु वा मठा मदिरा आसव ॥ २ ॥ विरुद्ध भोजन औ भोजनपर भोजन क्रोध दिनका सोना रातिका जागना इत्यादिकौंके अति सेवनसे बहुधा करिके जो सुकुमार औ मिथ्या आहार विहारौंके करनेवाले हैं उनके तथा जो स्थूल याने मोटे शरीरवाले हैं तिनके औ सुखी लोगौंके वातरक्त कुपित होता है ॥ ३ ॥

संप्राप्तिमाह

हस्त्य श्वोष्ट्रैर्गच्छत श्चाश्नतश्च विदाह्यन्नं सविदाहाशनस्य ॥ कृत्स्नं रक्तं विदहत्याशु तच्च दुष्टं शीघ्रं पादयोश्चीयतेच ॥ तत्सं पृक्तं वायुना दूषितेन तत्प्राबल्या दुच्यते वात रक्तं ॥ ४॥

अब संप्राप्ति कहते हैं हाथी घोडा औ ऊंटकी अति सवारी करनेवाले तथा दाहकारक पदार्थौंके खानेवाले तथा विदग्धा जीर्णमे खानेवाले जो मनुष्य तिनके सब देहका रक्त दग्ध याने तप्त है जाता है औ वह तप्त दूषित रक्त पायोंमे यकठ्ठा होता है वह रक्त दूषित वायु करिके युक्त होता है इस वास्ते वायुकी प्रबलतासे उसको वातरक्त कहते हैं ॥ ४ ॥

पूर्वरूपमाह

स्वेदोऽत्यर्थं न वा कार्ष्ण्यं स्पर्शाज्ञत्वं क्षते तिरुक्॥ संधि शैथिल्य मालस्यं सदनं पिडिकोद्गमः॥ ५॥ जानु जंघो रुकट्यंस हस्त पादांग संधिषु॥

निस्तोदः स्फुरणं भेदो गुरुत्वं सुप्ति रेवच ॥ ६ ॥
कंडूः संधिषु रुग्दाहो भूत्वा नश्यति चासकृत् ॥
वैवर्ण्यं मंडलो त्पत्तिर्वाता स्त्रक् पूर्व लक्षणम् ॥

वातरक्तके पूर्वरूपमे पसीनेकी अधिकता अथवा अभा
दागौंका होना छूनेसे स्पर्श न मालूम परना व्रणौंमे अति पीडा
शिथिल आलस शरीरभी शिथिल शरीरमे फुंसियोंका होन
तथा जानू पिडरी जांघ कमर कांधे हाथ पांय औ सब अंगकी
इनमे सुई टोंचने सरीखी पीडा औ फरकना कुल्हारी मारनेसर
दना शरीर गरुआ त्वचा शून्य ॥ ६ ॥ खाज संधिनमे पीडा औ
ह्वैके मिटि मिटि जाते हैं शरीरका रंग बदरंग होना चकत्तौंका
ये लक्षण होते हैं ॥ ७ ॥

वाताधिक वातरक्त लक्षणं

वाताधिकेऽधिकं तत्र शूल स्फुरण तोदनं ॥
शोथस्य रौक्ष्यं कृष्णत्वं श्यावता वृद्धि हानयः ॥
धमन्यं गुलि संधीनां संकोचोंग ग्रहोति रुक् ॥
शीत द्वेषानु पशय स्तंभवे पथु सुप्तयः ॥ ९ ॥

जिस वातरक्तमे वातकी अधिकता होती है उसमे शूल
औ सुई टोंचनेसरीखी पीडा होती है सूजनिमे रूखापन औ
लिये धूसर रंग होता है रोग कभी कम कभी जादा होता है
नसैं अंगुली औ संधी इनका संकोच शरीरका जकडना पीडाक
कता शीतसे विरोध याने शीत प्रिय न लगै औ शी[illegible]

पाय इत्यादिक जहांके तहां जकडि जाय शरीरमे कंपा औ शून्यताही होती है ॥ ९ ॥

रक्ताधिक वातरक्त ल०

रक्ते शोफोऽति रुक् तोद स्ताम्रश्चिमि चिमायते॥
स्निग्धै रूक्षैः शमं नैति कंडू क्लेद समन्वितः॥ १०॥

रक्ताधिक वातरक्तमे सूजनि अति वेदना लाल रंग राई लगाने सरीखा चिमचिमाहट स्निग्ध औ रूक्षसेभी शांत न होना वह खाज औ ओदापनयुक्त होता है ॥ १० ॥

पित्ताधिक लक्षणं

पित्ते विदाहःसंमोहःस्वेदो मूर्छा मदःसतृट्॥स्पर्शा
सहत्वं रुग्रागः शोथः पाको भृशोष्णता॥ ११॥

पित्ताधिक वातरक्तमे दाह मोह पसीना मूर्छा मद याने भांग इत्यादिक खायेका नसा सरीखा रहना तथा पियास सूज निपरहाथ लगाना नसहन होय पीडा ललामी सूजनिका पकना औ अतिशय उष्णता होती है ॥ ११ ॥

अथ कफाधिक संसर्गजा वाह

कफेस्तै मित्य गुरुता सुप्ति स्निग्ध त्वशीतताः॥
कंडूर्मंदाच रुग्द्वंद्व सर्व लिंगंच संकरात्॥ १२॥

अब कफाधिक द्वंद्व औ सन्निपातज वातरक्तके लक्षण कहते हैं तहां कफाधिकमे शरीर ओदा औ भारी त्वचाशून्य शरीरमे चिकनता शीतलता औ पीडा अल्परहत है द्वंद्वजौंमे दोदो दोषौके चिन्हरहते हैं औ सन्निपातज मे सर्व चिन्ह रहते है॥ १२॥

पादयोरस्मिन् जनितेऽ प्रतिक्रियमाणेऽ न्वदेशांतरं प्राप्नोति त्याह

पादयो मूलमास्थाय कदाचिद्धस्तयो रपि ॥
आखो विषमिव क्रुद्धं तद्देह मनु सर्पति ॥ १३ ॥

जो वातरक्त पायंनमे अथवा हाथनमे उत्पन्न भया औ उसका उपाय न किया तौ तौ जैसे मूसेका विषधीरे धीरे देहमे फैलता है तैसे वह देहमे सर्वत्र फैलि जाता है ॥ १३ ॥

अथास्य द्विविधत्व माहचरकः

उत्तान मथगंभीरं द्विविधं वातशोणितं ॥
त्वङ्मांसा श्रयमुत्तानं गंभीरं त्वंतराश्रयं ॥ १४ ॥

इसवातको चरक मुनी दोप्रकारका कहते हैं सो ऐसाकि उत्तान औ गंभीर भेदसें वात रक्तदो प्रकारका है तिनमे जो त्वचा औमांसमे होता है सो उत्तान जो कोठे मेभी प्राप्त व्है जाता है सो गंभीर ॥१४ ॥

अथास्यसाध्याऽ साध्यत्व माह

वातरक्त मसाध्यंस्या द्यच्चाति क्रांतवत्सरं ॥
अकृत्स्नो पद्रवं याप्यं साध्यंस्या न्निरुपद्रवं ॥ १५ ॥
एकदोषा नुगंसाध्यं नवं याप्यं द्विदोषजं ॥
त्रिदोषज मसाध्यंस्या द्यस्यचस्यु रुपद्रवाः ॥ १६ ॥
तंत्रांतरेच ॥ आजानु स्फुटितं यच्च प्रभिन्नं प्रस्रुतं चयत् ॥ उपद्रवै श्चयज्जुष्टं प्राणमांस क्षयादिभिः ॥
वातरक्त मसाध्यंस्या द्याप्यं संवत्सरो त्थितं ॥ १७ ॥

अब वातरक्तकी साध्यता औ असाध्यता कहते हैं

जिस वातरक्तको एक वर्ष व्यतीत भयाहोय सो असाध्य जो अल्प उपद्रव युक्त होय सो याप्य उपद्रव रहित होय सो साध्य॥१५॥ तथा जो एक दो ससे होय औ नयाहोय सो साध्य दो दोषजन्य याप्य औजो तीनौ दोषसे भयाहोय औ उपद्रवयुक्त होयसो असाध्य होता है ॥ १६॥ तंत्रांतरमे औरभी कहा है जैसे कि जो पायनसे लैके जानुपर्यंत फूटिगया होय औ फूटे भये से रक्त औ पीब जाताहोय तथा बल औ मांसके क्षयादिक उपद्रवन करिके युक्त होय सो असाध्य औ जो एक वर्षके भीतर का होय सो याप्यजानना ॥ १७ ॥

उपद्रवानाह

अस्वप्नारोचकश्वास मांसकोथ शिरोग्रहाः॥
मूर्च्छायो मंदरुक्तृष्णा ज्वरमोह प्रवेपकाः॥ १८॥
हिक्कापांगुल्य वीसर्प पाकतोद भ्रमक्कमाः॥
अंगुली वक्रता स्फोट दाहमर्म ग्रहार्बुदाः॥ १९॥
एतैरुपद्रवैर्युक्तं मोहेनैकेन वापियत्॥
वातरक्त मसाध्यंस्याद्यशोर्थी परिवर्जयेत्॥ २०॥

॥ इति रुग्वि निश्चये वातरक्त निदानं ॥

अब वातरक्तके उपद्रव कहते हैं

वै ऐसे कि निद्राका न आना अरुचि श्वास मांस कागलि गलिके गिरना शिरका जकडना मूर्छा मद याने नसा सरीखा वना रहना शरीरमे वेदना तृषा ज्वर मोह कांपना ॥ १८ ॥ हुचकी पंगुल पना विसर्प शरीरका जगहागहसे पकना सुई टोंचने सरीखी वेदना भ्रम

घवडाहट अंगुरीनको टेढा होना फोडे दाह संधिन का जकडना औ अर्बुद ॥ १९ ॥ ये उपद्रव हैं इन उपद्रवन करिके युक्त अथवा एक मोह हीकरिके युक्त होय तौ ऐसा वातरक्त असाध्य होता है जिसको यश प्राप्तिकी इच्छाहोय सोवैद्य ऐसे रोगीकी औषध न करै ॥ २० ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडितरघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चयदी पिकायां वातरक्त निदान प्रकाशः ॥ २४ ॥

अथो रुस्तंभ निदान माह

शीतोष्ण द्रवसं शुष्कगुरु स्निग्धैर्निषेवितैः ॥
जीर्णाऽ जीर्णे तथा यास संक्रोध स्वप्न जागरैः ॥ १ ॥
सश्लेष्म मेदः पवनः साम मत्यर्थ संचितं ॥
अभिभूये तरं दोष मूरूचे त्प्रति पद्यते ॥ २ ॥
सकूथ्य स्थीनि प्रपूर्यांतः श्लेष्मणा स्तिमितेनच ॥
तदा स्तभ्नाति तेनोरू स्तब्धौ शीताव चेतनौ ॥ ३ ॥
परकीया विवगुरू स्याता मति भृशव्यथौ ॥
ध्यानांग मदस्तै मित्य तंद्रा छर्द्य रुचि ज्वरैः ॥ ४ ॥
संयुक्तः पाद सदन कृच्छ्रो द्धरण सुप्तिभिः ॥
तमूरु स्तंभ मित्याहु राढ्य वातमथा परे ॥ ५ ॥

अब ऊरुस्तंभ कानिदान कहते हैं

सो जैसेकि अतिशीत औ गरम पतले सूखे भारी औ चिकने पदार्थौं का अति सेवनसे तथा जीर्ण याने जबसम्यक् प्रकारसे अन्न पचिके भूंख लगीहोय औ अजीर्ण जब कि अन्न न पचाहोय ऐस

समयमे परिश्रम करने से तथा क्रोधकरना दिनका सोना रातिका जागना ॥ १ ॥ इनकारणौं करिके कफ औ मेदसहित वायु अतिशय बढे भए आमसहित पित्तको जीतिके जब जांघौंमेप्राप्त होता है ॥ २ ॥ तब सर्व पांयंकी हड्डीको स्थिर कफसे परि पूरित करिके ऊरुजो जांधैं तिनको स्तंभित करता है तब वै जांधैं जकडी भई ठंढी औ अचेत ह्वै जाती हैं ॥ ३ ॥ फिरि वै अति वेदनायुक्त भारी औ जैसी दूसरेकी होय तैसी परवश ह्वै जाती हैं तब वह पुरुष सुस्ती अंगमर्दनि भीजावस्त्र ओढे सरीखा झपकी उलटी अरुचि ज्वर ॥ ४ ॥ पगौंकी शिथिलता पगौंका कष्टसे उठाना तथा पगौंकी शून्यता करिके युक्त होता है उस रोगको ऊरुस्तंभ औ आढ्य वातभी कहते हैं ॥ ५ ॥

पूर्वरूपमाह

प्राग्रूपं तस्यनिद्राति ध्यानं स्तिमित ताज्वरः ॥
रोमहर्षोऽरुचि श्छर्दि जंघोर्वोः सदनं तथा ॥ ६ ॥

इस ऊरुस्तंभ होनेके प्रथम अति निद्रा गुंग मुंग ह्वैके बैठे रहना भीजा वस्त्र ओढा है ऐसा मालूम पडना ज्वर रोमांच अरुचि वांति औ जांघ तथापिंडरिनकी शिथिलता ये चिन्ह होते हैं ॥ ६ ॥

रूपमाह

वात शंकि भिरज्ञाना त्तस्यस्या त्स्नेहना त्पुनः ॥
पादयोः सदनं सुप्तिः कृच्छ्रा दुद्धरणं तथा ॥ ७ ॥
जंघो रुग्लानि रत्यर्थं शश्वद्वा दाहवेदना ॥
पादंच व्यथते न्यस्तं शीतस्पर्शं नवेत्तिच ॥ ८ ॥
संस्थाने पीडने गत्यां चलने चाप्यनीश्वरः ॥

अन्यने यौहि संभग्ना वूरू पादौच मन्यते ॥ ९ ॥

अब ऊरुस्तंभके लक्षण कहते हैं वै ऐसेकि इस ऊरुस्तंभ रोगमे वातरोगकी शंका करिके अज्ञानसे जो स्नेह पानादिक कराये तौ पांय शिथिल शून्य औ कष्टसे उठानेमे आते हैं ॥ ७ ॥ तथा जांघ औ पिंडरी अति शिथिल अथवा निरंतर दाह औ पीडायुक्त होती हैं जमीनमे पाय रखनेसे ठनकता है तथा ठंढे पदार्थका स्पर्श मालूम नहीं होता है ॥ ८ ॥ पाउंके रखने उठाने चलने औ हलानेमेभी समर्थ होता नहीं तथा ऐसा मालूम होता है कि जांघ औ पायनको किसीने उठाय लिये होय औ तोडता है ॥ ९ ॥

असाध्य लक्षणमाह

यदादाहार्त्ति तोदार्त्तो वेपनः पुरुषो भवेत् ॥
ऊरुस्तंभ स्तदाहन्या त्साधये दन्यता नवम् ॥ १० ॥

॥ इति रुग्वि निश्चये ऊरुस्तंभ निदानं ॥ २५ ॥

जब दाह पीडा औ सुई भोंकनेसरीखी पीडा करिके मनुष्य पीडित भया हुआ कांपता है तब वह ऊरुस्तंभ उस मनुष्यका प्राण नाशक होताहै जो इन लक्षणों करिके रहित औ नया होय तौ साधनेमे आवे १०

इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्वि निश्चय दीपिकाया मुरुस्तंभ निदान प्रकाशः ॥ २४ ॥

अथामवात निदानमाह

विरुद्धाहार चेष्टस्य मंदाग्ने र्निश्चलस्यच ॥
स्निग्धं भुक्त वतोह्यन्नं व्यायामं कुर्वतस्तथा ॥ १ ॥
वायुना प्रेरितो ह्यामः श्लेष्मस्थानं प्रधावति ॥

तेनात्यर्थमपक्कोसौ धमनीः प्रतिपद्यते ॥ २ ॥
वातपित्तकफैर्भूयो दूषितः सोन्नजोरसः ॥
स्रोतांस्यभिस्पंदयति नानावर्णोतिपिच्छिलः ॥ ३ ॥
जनयेत्सोग्निदौर्बल्यं हृदयस्यच गौरवं ॥
व्याधीनामाश्रयोह्येष आमसंज्ञोऽतिदारुणः ॥ ४ ॥
युगपत्कुपितावंतस्त्रिकसंधि प्रवेशकौ ॥
स्तब्धंच कुरुतेगात्र मामवातः सउच्यते ॥ ५ ॥

अब आम वातके निदान कहते हैं

वे ऐसे कि जो मनुष्य विरुद्ध आहार जैसे कि प्रकृति विरुद्ध अथवा काल विरुद्ध किंवा संयोग विरुद्ध आहार तथा विरुद्ध चेष्टा याने शक्तिसे अधिक स्त्रीप्रसंग कसरत वगैरे विहार करना ऐसे मनुष्यके तथा स्निग्ध आहार करिके कसरत वगैरे मेहनत करै तिसके ॥ १ ॥ वायु करिके प्रेरित आम कफस्थान जो आमाशय छाती कंठ मस्तक औ सर्व संधि तिनमे प्राप्त होता है उहां उस कफ करिके अति कच्चा रहिके नाडिनमे प्राप्त होता है ॥ २ ॥ फिरि उहांभी वातपित्त औ कफ करिके दूषित हुआ भया वह अन्नरस याने आंवसो उन नाडियोंमे चपटि जाता है औ वह अनेकरंगका ॥ ३ ॥ तथा अति चिकना हुआ भया अग्निको मंद करता है औ हृदयको भारी करता है वह आम सर्व रोगोंका स्थान है इसीते अति दारुण है ॥ ४ ॥ इस रोगमे कफ औ वात दोनो एक संग देहमे कुपित भये हुये कोठा कमर औ गरदनिके पिछाडी जो संधि है तिसमे तथा संधिनमे प्रविष्ट भये हुये शरी-

रको जकडि डारते हैं इस रोगको आमवात कहते हैं ॥ ५ ॥

अस्य सामान्यलक्षणमाह

अंगमर्दो रुचिस्तृष्णा चालस्यं गौरवंज्वरः॥
अपाकः शून्यतांगाना मामवातस्य लक्षणं ॥ ६ ॥

अब आमवातके सामान्य लक्षण कहते हैं जैसेकि शरीरका ऐं-ठना अरुचि तृषा आलस शरीरका भारीपना ज्वर अन्नका न पचना औ शरीरकी शून्यता ये आमवातके सामान्यसे लक्षण हैं ॥ ६ ॥

रूपमाह

सकष्टः सर्वरोगाणां यदाप्रकुपितो भवेत्॥
हस्तपादशिरो गुल्फ त्रिकजानूरुसंधिषु ॥ ७॥
करोति सरुजं शोथं यत्रदोषः प्रपद्यते ॥
सदेशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इवदृश्चिकैः॥ ८ ॥
जनयेत्सोग्निदौर्बल्यं प्रसेका रुचिगौरवं ॥
उत्साहहानिंवैरस्यं दाहं चबहुमूत्रतां ॥ ९ ॥
कुक्षौ कठिनतांशूलं तथानिद्राविपर्ययं॥ १० ॥
तृट्छर्दि भ्रममूर्च्छाश्च हृद्ग्रहंविड्विबंधतां ॥
जाड्यांत्रकूजमानाहं कष्टांश्चान्या नुपद्रवान्॥ ११ ॥

अब लक्षण कहते हैं

वह आमवात सर्व रोगौंमे कठिन है जब वह कुपित होता है तब हाथ पाय मस्तक घुटना याने एडीके ऊपर जो संधि है उहां त्रिक याने गर्दन औ कमरके पिछाडीकी संधि जानू याने घोटु जिसको प-

रियाभी कहते हैं ॥ ७ ॥ तथा जांघै औ सर्व संधियां इन स्थानौंमें ज-
हां जहां प्राप्त होता है तहां तहां पीडा सहित सूजनि उत्पन्न करता है
औ उहां वीछू मारनेसरीखी पीडा करता है ॥ ८ ॥ उस पीडासे जठरा-
ग्नि मंद होता है तथा मुखसे लार गिरना अरुचि शरीरकी गरुवई उत्सा
हकी हानि मुख बेस्वाद दाह बहुमूत्रता ॥ ९ ॥ कोखौंमे कठिनता शूल
निद्राका नाश ॥ १० ॥ अथवा अधिकता तृषा वांति भ्रम मूर्च्छा हृद-
यका जकडना मलका अवरोध शरीर जड आंतौंमे गुडगुडाहट शब्द
पेटका फूलना तथा वातरोगमे कहे भये औरभी कठिन उपद्रवौंको उ-
त्पन्न करता है ॥ ११ ॥

अथ पित्तादियुक्तस्य विशेष लक्षणमाह

पित्तात्सदाहरागंच सशूलं पवनानुगम् ॥
स्तिमितं गुरुकंडूकं कफजुष्टं तमादिशेत् ॥ १२ ॥

अब पित्तादिकयुक्त आम वातके विशेष लक्षण कहते हैं

जैसेंकि जो आम वात पित्ताधिक होता है वह दाह औ ललामी
युक्त होता है जो वाताधिक होता है सो शूलयुक्त ऐसेही कफाधिक
जड भारी तथा खाजयुक्त होता है ॥ १२ ॥

साध्या साध्यमाह

एकदोषानुगःसाध्यो द्विदोषो याप्यउच्यते ॥
सर्वदेहचरःशोथःसकृच्छ्रःसान्निपातिकः ॥ १३ ॥

इति रुग्वि निश्चये आम वात नि०

साध्यादिक लक्षण जैसे कि जो आमवात एक दोपसे होता है सो

साध्य दोदोष वाला याप्य औ जो त्रिदोषक होता है सो असाध्य उससे सर्व शरीरमे सूजनी होती है ॥ १३ ॥

इति श्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथप्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायामामवात निदान प्रकाशः ॥ २६ ॥

अथ शूल निदानं

दोषैः पृथक् समस्ताम द्वंद्वैः शूलोऽष्टधाभवेत् ॥
सर्वेष्वेतेषु शूलेषु प्रायशः पवनःप्रभुः ॥ १ ॥

अब शूलका निदान कहते हैं

जेसे कि वातादिक न्यारे न्यारे दोषौंकरिके तीनि द्वंद्वज तीनि आमज एक औ सन्निपातज एक ऐसे आठ प्रकारके शूल है परंतु इन सर्व शूलौंमे बहुधा करिके वायु तौ प्रधानही होता है ॥ १ ॥

अथ वात शूल माह

व्यायामयाना दतिमैथुनाच्च प्रजागरा च्छीतजलातिपानात् ॥ कलायमुद्गाढकिकोरदूषा दत्यर्थ रूक्षाध्यशनाभिघातात् ॥ २ ॥ कषायतिक्ता तिविरूढजान्न विरुद्धवल्लूरकशुष्कशाकात् ॥ विट्शुक्र मूत्रा निलसन्निरोधा च्छोकोपवासा दतिहास्य भावात् ॥ ३ ॥ वायुःप्रवृद्धो जनयेद्धिशूलं हृत्पृष्ठ पार्श्व त्रिकवस्तिदेशे ॥ जीर्णेप्रदोषे चघनागमेच्च शीतेचकोपं समुपैतिगाढं ॥ ४ ॥ मुहुर्मुहुश्चो पशम प्रकोपौ विड्वातसंस्तंभनतोदभेदैः ॥ संस्वेदनाभ्यंज

नमर्दनाद्यैः स्निग्धोष्णभोज्यैश्चशमंप्रयाति॥ ५॥

वात संबंधी शूलरोगका कारण औ लक्षण कहते हैं

सो जैसेकि कसरति करना अथवा घोडे इत्यादिक अति सवारी तथा अति मैथुन अति जागरन ठंडे जलका अतिपीना तथा मटर मूंग अरहरको द्रव औ रूखा इनका अति सेवन भोजनपर भोजन किसी-तरहकी चोटका लगना कसैले तीखे पदार्थोंका अतिखाना ॥ २ ॥ तथा जिस अन्नका अंकुर निकरा होय उसका खाना रुतु विरुद्धा-दिक विरुद्ध आहार सूखे मास औ सागका खाना मलवीर्य मूत्र औ अधोवायुका रोकना शोक औ उपवास करना औ अतिशय हंसना॥३॥ इत्यादिक कारणौं करिके बढा भया वायु सो हृदय पीठ पसुरी त्रिक औ पेडू इनमे शूलको उत्पन्न करता है सो शूल अन्नके पचनेपर तथा प्रदोष कालमे वर्षा औ ठंढे समयमे अधिक होता है ॥ ४ ॥ तथा मल औ अधो वायुका रुकावट सुईभोंकने सरीखी औ चीरने सरीखी पीडा युक्त वारंवार शांति औ कोपको प्राप्त होता है वहशूल पासीना काढ-नेसे तेलादिकौंके मर्दनसे तथा वैसेही मर्दनसे स्निग्ध औ उष्ण पदार्थौंके खानेसे शांत होता है ॥ ५ ॥

पित्तजमाह

क्षारातितीक्ष्णोष्ण विदाहितैल निष्पावपिण्याक
कुलत्थयूषैः॥कट्वम्लसौवीरसुराविकारैः क्रोधानला
यास रविप्रतापैः ॥ ६ ॥ ग्राम्यातियोगा दशनैर्वि
दग्धैःपित्तंप्रकुप्याशुकरोतिशूलं॥तृण्मोहदाहार्त्ति
करंहिनाभ्यां संस्वेदमूर्च्छाभ्रमचोपयुक्तं॥ ७॥

मध्यंदिनेकुप्यति चार्द्धरात्रे निदाघकाले जलदात्ययेच॥ शीतेचशीतैःसमुपैतिशांतिं सुस्वादुशीतैरपिभोजनैश्च॥ ८॥

अब पित्तज शूलके निदान लक्षण कहते हैं

जैसे की अतिक्षार तीक्ष्ण उष्ण दाहकारक तेल मटरा पीनी कुरथीकाजू चिरपिरे पदार्थ खटाई मदिरा औ कांजीका अतिखाना तथा अति क्रोध अग्निका तापना मेहनत घाम इनका अतिसेवन ॥६॥ अति मैथुन जले अन्नका खाना इनकारणौंसे पित्तकु पितव्हैके शीघ्रही शूलको उत्पन्न करता है वह शूल तृषा दाह नाभींकी पीडा देहमे पसी-ना मूर्छा चित्तभ्रम औ चूसने सरीखी पीडा इन करिके युक्त ॥ ७॥ मध्यान्ह औ अर्द्ध रात्रिके समयमे तथा ग्रीष्मऋतु औ शरदऋतुमे अधिक होता है शीतकाल मे शीत पदार्थनसे औ स्वादु भोजनसे तथा शीत भोजनसे शांत होता है ॥ ८ ॥

कफज शूल निदान लक्षणं

आनूपवारिज किलाट पयो विकारै मांसेक्षुपिष्टकृशरातिल शष्कुलीभिः॥ अन्यैर्बलासजनकैरपि भोजनैश्च श्लेष्माप्रकोप मुपगम्य करोतिशूलं॥९॥ ल्हासकास सदनारुचि संप्रसेकै रामाशये स्तिमितकोष्ट शिरोगुरुत्वैः॥ भुक्तेसदैवहिरुजं कुरुतेऽतिमात्रं सूर्योदयेचशिशिरे कुसुमागमेच॥ १०॥

अब कफज शूलके निदान औ लक्षण कहते है

जैसे कि जल सीपके जानवर औ जलके जीव इनका मास कि-लाट याने पेवसी तथा दूधके विकार दही वगैरे मांस तथा ऊषके वि-कार जो रस गुडादिक तथा पीठीके पदार्थ वडे फरा इत्यादिक तथा खिचडी तिल पुरी औ ऐसेही औरभी कफकारक पदार्थोंके अति सेव-नसे कफ कुपित व्हैके शूलको उत्पन्न करता है ॥ ९ ॥ उसशूलसे उब-काई खांसी अंगकी शिथलता अरुचि मुखसे पानी गिरना आमाशयमे भीजने सरीखा भार कोठा औ मस्तकभी भारी इनलक्षणों करिके युक्त होताहै यह शूल सर्वदा भोजन कियेपर अति पीडा करता है तथा सूर्यो-दय कालमे शिशिर औ वसंतमे अति पीडाकारक होता है ॥ १० ॥

सान्निपातिकमाह

सर्वेषुदोषेषुच सर्वलिंगं विद्याद्भिषक् सर्वभवंहि शूलं॥ सुकष्टमेनं विषवज्रतुल्यं विवर्जनीयं प्रव दंतितज्ज्ञाः॥ ११ ॥

जो शूल सन्निपातसे होता है उसमे वातादिक तीनौ दोषौंके चि-न्ह होते हैं वह विष औ वज्रके तुल्य कष्टकारक औषध करनेके अ-योग्य होता है ॥ ११ ॥

आमशूलमाह

आटोपहृल्लास वमीगुरुत्व स्तैमित्यमानाहकफप्र सेकैः॥ कफस्यलिंगेन समानलिंग मामोद्भवं शू लमुदाहरंति॥ १२ ॥

आमशूलके लक्षण जैसेकि जो शूल पेटका गुड गुडाहट उबकाई वांति शरीरकी गरुता ई औ शरीरका भीजा कपडेसे लपटा मालूम

होना पेटका तनना मुखसे कफ गिरना इन लक्षणों करिके युक्त तथा कफ शूलके समान लक्षण युक्त होता है उसको आमशूल कहते हैं १२

द्वंद्वजमाह

द्विदोष लक्षणैरेतै र्विद्याच्छूलं द्विदोषजं ॥
वस्तौहृत्कंठ पार्श्वेषु सशूलः कफवातिकः ॥ १३ ॥
कुक्षौहृन्नाभि मध्येतु सशूलः कफपैत्तिकः ॥
दाहज्वर करोघोरो विज्ञेयोवातपैत्तिकः ॥ १४ ॥

जिस शूलमे दो दो दोषौंके लक्षण मिलैंसो द्वंद्वज हैजो पेडू हृदय कंठ औ पसुरिनमे शूल होय सो कफवातज ॥ १३ ॥ जो शूल कोखि हृदय औ नाभिके मध्यमे होय सो कफ पित्तज औ जो दाह तथा ज्वरका करनेवाला होय सो वातपित्तज है ऐसा जानना ॥ १४ ॥

साध्यासाध्यमाह

एकदोषोत्थितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः ॥
सर्वदोषो स्थितोघोर स्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः ॥ १५ ॥

जो शूल एक दोषसे होता है सो साध्य दो दोषौंसे कष्ट साध्य जो सर्व दोषौंसे होय सो औ जिसमे अनेक उपद्रव होय सो असाध्य होता है ॥ १५ ॥

उपद्रवानाह

वेदनाच तृषामूर्छा आनाहो गौरवारुचिः ॥
कासश्वासौच हिक्काच शूलस्योप द्रवानव ॥ १६ ॥

शूलके उपद्रव कहते हैं जैसेकि वेदना पियास मूर्छा पेटका फूल-

ना शरीरकी गरुअई अरुचि कास श्वास औ हुचकी ये नव शूलके उपद्रव हैं ॥ १६ ॥

अथ परिणाम शूल निदानं

स्वैर्निदानैः प्रकुपितो वायुःसन्निहितस्तदा ॥
कफपित्ते समावृत्य शूलकारी भवेद्बली ॥ १७ ॥
भुक्तेजीर्यति यच्छूलं तदेव परिणामजम् ॥
तस्यलक्षण मप्येतत्समासेन विधीयते ॥ १८ ॥

परिणाम शूल लक्षण

जैसेकि आपके बढाने औ कोप करानेवाले जो पदार्थ उनके सेवनसे कुपित भया जो बलवान वायु सो कफ पित्तमे व्याप्त ह्वैके शूल रोगको उत्पन्न करता है ॥ १७ ॥ वह शूल भोजनके पचने समय अधिक होता है सो परिणाम शूल उसके संक्षेपसे लक्षण कहतेहैं १८

वातिकमाह

आध्मानाटोप विण्मूत्र विबंधार तिवेपनैः ॥
स्निग्धोष्णो पशमप्रायं वातिकंतं वदेद्भिषक् ॥ १९ ॥

जो परिणाम शूल पेटका फूलना औ गुडगुडाना तथा मल औ मूत्रका अवरोध बेचैनी औ कांपना इन लक्षणों करिके युक्त तथा स्निग्ध औ उष्ण पदार्थोंसे बहुधा करिके शांत होय सो वातिक शूल १९

पैत्तिकमाह

तृष्णादाहाऽरुचिस्वेद कट्वम्ल लवणोत्तरं ॥
शूलंशीत शमप्रायं पैत्तिकं लक्षयेद्बुधः ॥ २० ॥

जो तृषा दाह अरुचि औ पसीना युक्त होय औ कटुक खटाई तथा लोनसे वढता होय औ ठंढेपदार्थसे शांतहोय सो पित्तज ॥ २० ॥

कफज माह

छर्दि ह्हृल्लास संमोह स्वल्परु ग्दीर्घसंततिः॥
कटु तिक्तोप शांतौच ज्ञेयं तच्च कफात्मकं॥ २१ ॥

जो परिणामशूल उल्ठी उबकाई संमोह याने इंद्रिय औ मनका मोहित होना पीडा थोडी परंतु देर तक रहने वाली औ वहशूल कटुक औ तिक्त पदार्थौसे शांतहोय सो कफज जानना ॥ २१ ॥

द्वंद्वज सन्निपातिक माह

संसृष्टं लक्षणं बुध्वा द्विदोषं परिकल्पयेत्॥
त्रिदोपज मसाध्यंस्या त्क्षीणमांस बलानलं॥ २२ ॥

जिस परिणाम शूलमे दो दोषौंके लक्षण होय उसको द्वंद्वज औ जिसमे तिनौ दोषौंके लक्षण होय तथा उसरोगीके मांस वल औ अग्नि क्षीण भये होयसो त्रिदोषज असाध्य है ऐसा जानना ॥ २२ ॥

अन्नद्रव शूल माह

जीर्णे जीर्यत्य जीर्णेवा यच्छूल मुपजायते॥
पथ्या पथ्य प्रयोगेण भोजना भोजने नच॥
नशमं याति नियमात् सोऽन्न द्रव उदाहृतः॥ २३ ॥

इति रुग्विनिश्चये शूल निदानं॥ २७॥

जो शूल अन्नके पचे पर तथा पचनेके समय औ अजीर्णमे भी उत्पन्न होती हैं औ पथ्य कुपथ्य अथवा भोजन करनेसे वानकरनेसे भी शांत न होतीहोय सो अन्नद्रव शूल॥ २३ ॥

इति श्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथप्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपीकायां शूल निदान प्रकाशः ॥ २७ ॥

अथानाह निदानं

आमं शकृद्वा निचितं क्रमेण भूयोवि बद्धं विगुणानिलेन ॥ प्रवर्त्तमानं नयथा स्वमेनं विकार मानाहमुदाहरंति ॥ १ ॥ तस्मिन् भवंत्या मस मुद्भवेतु तृष्णा प्रतिश्याय शिरोविकाराः ॥ आमाशये शूल मथोगुरुत्वं त्दल्लास मुद्गार विघातनंच ॥ २ ॥ स्तंभः कटीपृष्ठ पुरीष मूत्रे शूलोऽथ मूर्छा शकृतश्च वांतिः ॥ श्वासश्च पक्काशयजे भवंति तथा लसोक्ता निच लक्षणानि ॥ ३ ॥

इतिरुग्विनिश्चये आनाहनिदानं ॥ २८ ॥

आनाह रोगका निदान जैसे कि आम किंवा मल यह क्रम क्रमसे संचित भयाहुआ फिरि कुपितभये वायूसे बंधा भया याने सूकिके कठिन हुआ भया तथा उचित निकलता नही उसके रोगको आनाह कहते हैं ॥ १ ॥ सो आनाह जो आमसे भया होय तौ उसमे तृषा प्रतिश्याय याने नाक वहना मस्तकरोग आमाशयमे वेदना गरुवई औ उबकाई आती हैं औ डकार आनेसरीखा व्है के बंद होती हैं ॥ २ ॥ जो पक्काशयमे मलके संग्रहसे होता है उसमे कमर औ पीठका जकडना मलमूत्रका अवरोध पक्काशयमे शूल मूर्च्छा मलकी वांति श्वास औ जो लक्षण अलसक रोगमे कहे हैं वै भी होते हैं ॥ ३ ॥

इति श्री मत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथप्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपीकाया मानाह् निदान प्रकाशः ॥ २८ ॥

वात विण्मूत्र जृंभाश्रु क्षवो द्गार वमींद्रियैः॥
क्षुत्तृष्णो च्छ्वास निद्राणां धृत्यो दावर्त्त संभवः॥ १ ॥

अब उदावर्त्त रोगकह ते हैं

सो ऐसाकि अधोवायु मल मूत्र जमुहाई आंसू छींक डकार वांति वीर्य क्षुधा तृष उच्छ्वास औनिद्रा इनके रोकनेसे उदावर्त्त रोगहोता है ॥ १ ॥

अथैतेषां लक्षणानि तत्र वात निरोधजमाह्

वातमूत्र पुरीषाणां संगाध्मान क्लमो रुजः॥
जठरे वातजा श्चान्ये रोगाः स्युर्वात निग्रहात्॥ २॥

अब इनते रहौ उदावर्त्त नके लक्षणकहते हैं तहां जो अधोवायूके रोंकनेसे होता है सो कहते हैं जै से कि अधो वायु के रोकनेसे जो उदावर्त्त होता है उसमे अधोवात मूत्र औमलका अवरोध पेटमे अफरा घबराहट पेटमे पीडा औदूसरिभी वातजरोग होते हैं ॥ २ ॥

मला वरोधजमाह्

आटोप शूलौ परिकर्त्तिकाच संगः पुरीषस्य तथोर्ध्व वातः॥ पुरीष मास्या दथ वानिरेति पुरीष वेगे ऽभिहते नरस्य॥ ३ ॥

मलके रोकने से पेटमे गुड गुडाहट शूल गुदामे कतरने सरीखी पीडा मलावरोध ऊर्ध्ववात अथवा मुखसे विष्टाभी गिरने लगती है॥ ३॥

मूत्रावरोधजमाह

बस्ति मेहनयोः शूलं मूत्रकृच्छ्रं शिरोरुजा॥
विना मो वंक्षणानाहः स्याल्लिंगं मूत्र निग्रहे॥४॥

मूत्रके रोंकने से पेडू औ लिंगमे शूल मूत्रकृच्छ्र मस्तक पीडा पीडासे शरीर कालचि जाना जांघकी संधि जोपट्टा तहांखिचाव ये लक्षण होते हैं॥४॥

जृंभा निरोधजमाह

मन्या गल स्तंभशिरो विकारा जृंभो पघातातप
वनात्मकाः स्युः॥ तथा क्षिनासा वदनामयाश्च
भवंति तीव्राः सहकर्ण रोगैः॥५॥

जमुहाई केरोकने से गर्दनि काजकडना गलेकारुकना शिरमे पीडा औ दूसरे भीवातरोग तथा मुखरोग नासिका रोग तथा तीव्र कर्ण-रोग होते हैं॥५॥

अश्रुरोधजमाह

आनंदजं वाप्यथ शोकजंवा नेत्रोदकं प्राप्तममुंच
तोहि॥ शिरो गुरुत्वं नयना मयाश्च भवंति तीव्राः
सह पीनसेन॥६॥

आनंदसे अथवा शोकसे जो उत्पन्न भये आंसू उनके रोंकने से शिरका भारीपना नेत्ररोग औ पीनस येरोग होते हैं॥६॥

छिक्का निरोधजमाह

मन्यास्तंभः शिरः शूलमर्दि ताद्धीव भेदकौ॥

इंद्रियाणांच दौर्बल्यंक्षवथोःस्या द्विधारणात्॥ ७॥

छींकके रोंकनेसे गर्दनिका जकडना मस्तक शूल अर्दित आधासी सीऔ सर्व इंद्रियोंकी दुर्वलता यानें इंद्रियां आप आपके काममे असमर्थ होती हैं ॥ ७ ॥

उद्गारनिरोध जमाह

कंठास्य पूर्णत्व मतीव तोदः कूजश्चवायो रथवा प्रवृत्तिः॥उद्गारवेगे ऽभिहते भवंति घोरा विकाराः पवन प्रसूताः॥ ८ ॥

डकारके रोकनेसे कंठ औ मुखका भरना याने जो खाया है सो मानौ कंठऔमुखमे भरा आताहोय ऐसा मालूम होना तथा सुईभों-कने सरीखी ह्रदे यादिकमे अति पीडा वायूका कूजना अथवा नीचे ऊपरको नजाना तथा वायु संवंधी औरभी विकार होते हैं ॥ ८ ॥

छर्दिरोध जमाह

कंडुट्वा कोष्ठा रुचिव्यंग शोफ पांडा मयज्वराः॥ कुष्ट ह्रल्लास वीसर्पा श्छर्दि निग्रह जारुजः॥ ९ ॥

वांतिके रोंकनेसे खाज ददोरे अरुचि व्यंग याने झांई सूजनि पांडुरोग ज्वर कुष्ट उबकाई औवि सर्प येरोगहोते हैं ॥ ९ ॥

शुक्रा ऽवरोधजलक्षणं

मूत्राशये वै गुद मुष्कयोश्च शोफोरुजा मूत्र विनिग्रहश्च॥ शुक्राश्मरी तत्स्रवणं भवेच्चते ते विकारा विहते तुशुक्रे॥ १० ॥

वीर्यके रोकनेसे पेडू गुदा औ अंडकोशमे सूजनि औपीडा मूत्रका अवरोध शुक्राश्मरी वीर्यका वहना तथा औरभी वीर्य विकार होते हैं ॥ १० ॥

क्षुत्तृण्निरोधजावाह

तंद्रांग मर्दा वरुचिः श्रमश्च क्षुधाभिघाता त्कृश ताच दृष्टेः ॥ कंठास्य शोषश्रवणा वरोध स्तृष्णा भिघाता द्धृदय व्यथाच ॥ ११ ॥

क्षुधाके रोकने से नेत्रौंपर झपकी अंगका ऐंटना अरुचि थकवाय औदृष्टिमंद होति है तृषा रोकनेसे कंठ औ मुखका सूकना अल्प सुनि पडना हृदयमे पीडा येलक्षणहोते हैं ॥ ११ ॥

निःश्वास निद्रानिरोध जावाह

श्रांतस्य निःश्वास विनिग्रहेण हृद्रोग मोहा वथ वापि गुल्मः ॥ जृंभांग मर्दाक्षि शिरोभि जाड्यं निद्राभि घाता दथ वापि तंद्रा ॥ १२ ॥

निःश्वासके रोंकनेसे याने परिश्रमसे उत्पन्न भई स्वासौंके रोंकनेसे हृद्रोग मोह अथवा गुल्म होता है ॥ निद्रा रोंकनेसे जमुहाई शरीर ऐंठवा नेत्र औमस्तकका जडत्व अथवा तंद्रा याने नेत्रौंपर झपकी ये लक्षण होते हैं ॥ १२ ॥

अथ संप्राप्तिमाह

वायुः कोष्ठानुगो रूक्षैः कषाय कटु तिक्तकैः ॥ भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्त्तं करोतिच ॥ १३ ॥

संप्राप्तिमाह

सव्यस्तैर्जायते दोषैः समस्तैरपिचोच्छ्रितैः ॥
पुरुषाणां तथास्त्रीणां ज्ञेयोरक्तेन चापरः ॥ ३ ॥

संप्राप्ति कहते हैं

जैसेकि वह गुल्म न्यारे न्यारे दोषौंकरिके तीनि प्रकारका द्वंद्वज चौथा सन्निपातसे पांचवा रक्त रज ये पांचौ पुरुष औ स्त्री इनदोनौंके होते हैं औ छठा रक्त गुल्म होता है सो केवल स्त्रियौंकेही होता है॥३॥

पूर्वरूपमाह

उद्गारबाहुल्य पुरीषबंध तृप्त्यक्षमत्वांत्रविकूज नानि॥ आटोपमाध्मानमपक्तिशक्तिमासन्न गुल्मस्यवदंति लिंगं ॥ ४ ॥

गुल्म होनेके प्रथम डकारौंका बहुतआना मलका अवरोध खाए विना तृप्तियाने अन्नपर इच्छानही तथा अशक्तता आंतौंका गुंजना पेटमे गुडगुडाहट औ पेट फूलना अन्नका नपचना येलक्षण होते हैं इसको पूर्वरूपकहते हैं ॥ ४ ॥

सामान्यरूपमाह

अरुचिः कृच्छ्र विण्मूत्र वातांत्र प्रतिकूजनं ॥
आनाहश्चोर्ध्ववातश्च सर्वगुल्मेषु लक्षयेत् ॥ ५ ॥

सर्व गुल्मौंके सामान्य लक्षण

जैसेकि अरुचि मलमूत्र औ अधोवायुका अवरोध आंतौंका कूजना आनाह याने आफरा औ ऊर्ध्ववात येलक्षण सर्वगुल्मौंमे होते हैं ॥ ५ ॥

अथहेतुपूर्वकं वातगुल्मस्य लक्षणं

रूक्षान्नपानं विषमातिमात्रं विचेष्टनं वेगविनि
ग्रहश्च ॥ शोकोऽभिघातो तिमलक्षयश्च निरन्न
ताचानिल गुल्महेतुः ॥ ६ ॥ यः स्थान संस्थानरु
जा विकल्पं विड्वातसंगं गलवक्रशोषं ॥ श्यावा
रुणत्वं शिशिरज्वरं च हृत्कुक्षिपार्श्वांसशिरो
रुजश्च ॥ ७ ॥ करोति जीर्णेभ्यधिक प्रकोपं भुक्ते
मृदुत्वं समुपैति गाढं ॥ वाता त्सगुल्मो नच तत्र रू
क्षं कषायतिक्तंक टुचोपशेते ॥ ८ ॥

वातगुल्मके निदानपूर्वक लक्षण कहते है

वे ऐसेकि सूखे अन्नपानका सेवन तथा विषम याने कभी कम कभी जादा अतिमात्र याने प्रमाणसे अधिक ऐसे अन्नपान औ चेष्टा जो मेहनत स्त्रीप्रसंगादिक तिनका करना तथा मलादिकौंके वेगका रोकना शोक चोटलगना मलक्षय औ उपवास येगुल्म होनेके कारण हैं ॥ ६ ॥ जो गुल्म स्थान प्रमाण औ वेदनाका विकल्प करताहोय जैसे कि एक ठेकाने नरहै औ पीडाभी कभी कम कभी जादा करै यहविकल्प इसका करनेवाला होय तथा मल औ अधोवायुका अवरोध गले औ मुखका सूखना शरीरका रंग धूसर औ लाल शीतज्वर हृदय कोखि-पसुरी कांधे औ मस्तक इनमे पीडा करै ॥ ७ ॥ औ अन्नपचनेपर अतिकोपकरै औ भोजन करनेसे शांतहोय सोवातगुल्म इसमे रूखे कसैले औ कडुये पदार्थ सुखदाय क नही इसीसे नखाना चाहिये ॥ ८ ॥

पित्तगुल्म निदान लक्षणं

कट्वम्ल तीक्ष्णोष्ण विदाहि रूक्ष क्रोधाति मद्यार्क हुताश सेवा॥ आमाभि घातो रुधिरं चदुष्टं पैत्त स्य गुल्मस्य निदान मुक्तं॥ ९॥ ज्वरः पिपासा व दनांग रागः शूलं महज्जीर्यति भोजनेच॥ स्वेदो वि दाहो व्रणवच्च गुल्मः स्पर्शासहः पैत्तिक गुल्मरूप ॥ १०॥

अवपित्त गुल्मका निदान औ लक्षण कहते हैं

जैसेकि चिरपिरे पदार्थ खटाई दाहकारक औ रूखे पदार्थ क्रोध मदिरा पान धूप औ अग्नि इस सबका अतिसेवन आम याने विदग्धअ-जीर्णसे उत्पन्न भयाजो अन्नरस याने आंव चोटका लगना रक्तका विगडना ये सब पित्तगुल्मके कारण हैं॥ ९॥ इसके लक्षण ये कि ज्वर तृषा मुख औ शरीर मे ललामी भोजन पचते समय अतिपीडा पसीने का आना दाह होना औ जैसे घाउ छनेसे सहन होतानही ऐसा पित्त गुल्मभी दुखता है॥ १०॥

अथ कफजद्वंद्वजसा न्निपातिक गुल्मानां लक्षणा न्याह

शीतं गुरु स्निग्ध मचेष्टनं च संपूरणं प्रस्वपनं दिवा च॥ गुल्मस्य हेतुः कफ संभवस्य सर्वस्तु दृष्टो नि चयात्मकस्य॥ ११॥ स्तैमित्य शीत ज्वर गात्रसा दहृल्लास कासा रुचि गौरवाणि॥ शैत्यंरु गल्पा कठिणो न्नतत्वं गुल्मस्य रूपाणि कफात्मकस्य॥ १२॥

निमित्तलिंगा न्युपलक्ष्य गुल्मे द्विदोषजे दोष बला बलंच ॥ व्यामिश्रलिंगा नपरांश्च गुल्मां स्त्रीनादिशे दौषध कल्पनाय ॥ १३ ॥ महारुजं दाहपरी तमश्मवत्घनो न्नतं शीघ्र विदाहि दारुणं ॥ मनः शरीराग्नि बलापहारिणं त्रि दोषजं गुल्म मसाध्य मादिशेत् ॥ १४ ॥

अब कफज द्वंद्वज औ सन्निपातज गुल्मौंके लक्षण कहते हैं

वै ऐसे कि ठंढे पदार्थ तथा भारी औ स्निग्धपदार्थौंका सेवन करना मेहनत करना कोठेमे अन्नका अतिभरना औ दिन का सोना येसब कफगुल्मके कारण हैं ॥ त्रिदोष गुल्मके कारण जो सर्व ऊपर कहे वैमिश्रित जानना ॥ ११ ॥ कफ गुल्मके लक्षण ये जैसे कि स्तैमित्य याने निश्चलता शीतज्वर गात्र शिथल उबकाई खांसी अरुचि शरीर जड औ ठंढा पीडा अल्प गुल्म कठिन औऊंचा होता है ॥ १२ ॥ द्विदोषज गुल्ममे दोनौ दोषौंके कारण औ लक्षण देखिके दोषौंका बला बल देखना ॥ ऐसे ये तीनि तथा औरौं कोभी गुल्म मिश्रित चिन्ह युक्त औषधकी कल्पना करने को निश्चय करना ॥ १३ ॥ जिस गुल्ममे पीडा अधिक दाहहोय औ गुल्म पत्थर सरीखा कठिन औ ऊंचा तथा शीघ्र हीदाह कारक दारुण मनको व्याकुल करने वाला तथा शरीर जठराग्नि औ बलका क्षीणकरन वाला ऐसे त्रिदोषज गुल्मको असाध्य कहना ॥ १४ ॥

अथस्त्रीणां रक्त गुल्मस्य संप्राप्ति पूर्वकं लक्षणमाह

नवप्रसूता हितभोजनाया याचाम गर्भं विसृजे

हृतौवा ॥ वायुर्हितस्याः परिगृह्य रक्तं करोति गुल्मंसरुजं सदाहम् ॥ १५ ॥ पैत्तस्य लिंगेन समान लिंगं विशेषणं चाप्यपरं निबोध ॥ यः स्यंदते पिंडित एवनांगैश्चिरा त्सशूलः सम गर्भलिंगः ॥ सरौधिरः स्त्रीभव एव गुल्मो मासे व्यतीते दशमे चिकित्स्यः ॥ १६ ॥

अब रक्त गुल्मकी संप्राप्ती पूर्वक लक्षण कहते हैं

सौ जैसेंकि जो स्त्रीनवीन प्रसूतभई हुयी कुपथ्य भोजनकरै अथवा जिसका कच्चागर्भ गिरिजाय अथवा ऋतुकालमे कुपथ्य भोजनकरै उसके रक्तको वायु लैके गर्भाशयमे रक्तगुल्म करता है उसगुल्ममे पीडा औ दाह होता है ॥ १५ ॥ उसके और सब लक्षण पित्तगुल्मके समानहोते हैं परंतु वह गोलाकार गर्भसरीखा फिरता रहता है तथापि उसके हाथपाय इत्यादिक अंगोंका आकारनही दीखता है शूलभी बहुत देरसे होता है लक्षण सर्व गर्भहीके समान होते हैं इसकी चिकित्सा दश महीने पीछे करना ॥ १६ ॥

असाध्य लक्षणमाह

संचितः क्रमशो गुल्मो महावास्तु परिग्रहः ॥
कृतमूलः शिरानद्धो यदा कूर्मइवोन्नतः ॥ १७ ॥
दौर्बल्यारुचिहृल्लास कासच्छर्द्यरुचिज्वरैः ॥
तृष्णा तंद्रा प्रतिश्यायै र्युज्यते न स सिद्ध्यति ॥ १८ ॥
अन्यच्च गृहीत्वा सज्वरं श्वासं छर्द्यतीसारपीडितं ॥

ह्रन्नाभि हस्त पादेषु शोफः कर्षति गुल्मिनं ॥ १९ ॥

अन्यदप्याह

श्वास शूल पिपासान्न विद्वेषो ग्रंथिमूढता ॥

जायते दुर्बलत्वं च गुल्मिनो मरणायवै ॥ २० ॥

इतिरुग्विनिश्चये गुल्मनिदानं ॥ ३० ॥

असाध्य लक्षणं

कहते हैं जैसे कि जो गुल्म क्रमक्रमसे बढा भया वर्सपेटमे व्याप्तह्वैके धात्वंतरमे प्राप्तहोता है औ नसौंकरिके भीलपटा होता है औ कछुआकीतरह ऊंचाहोता॥१७॥है तथा दुर्बलता अरुचि उबकाई कास वांति बेचैनी ज्वर तृषा तंद्रा औ प्रतिश्याय इनकरिके युक्तहोता है सो असाध्य होता है ॥ १८ ॥ औरभी कहते हैं जैसेकी जिस गुल्मवालेके ह्रदय नाभि हाथ औ पायं नमे सूजनि होय औ उसको ज्वर श्वास वांति तथा अतिसारकी पीडाहोय उसको वह गुल्म संबंधी शोथमारताही है ॥ १९ ॥ औ रभी कहते हैं कि गुल्मरोग वालेके श्वास शूल पियास अन्नपरद्वेष गुल्मकी गांठिका अकस्मात् नदीखना तथा दुर्बलता होय यै लक्षण गुल्मवालेके मरने के वास्येही होते हैं ऐसे लक्षण देखिके उसरोगीकी चिकित्सान करना ॥ २० ॥ इतिश्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां गुल्मनिदानप्रकाशः ॥ ३० ॥

अथह्रद्रोग निदानं

अत्युष्ण गुर्वम्ल कषाय तिक्त श्रमाभि घाता ध्यशन प्रसंगैः॥ संचिंतनैर्वें गविधारणैश्च ह्रदामयः पंच विधः प्रदिष्टः॥ १ ॥

अबहृदयरोग निदान कहते हैं

जैसे कि अतिगरम भारी खट्टे कसैले तीखे ऐसे पदार्थोंका अतिसेवन औ मेहनत करना हृदयमे चोटका लगना मलमूत्रादिकोंके वेगों कारोंकना इनकारणोंसे पांच प्रकारका हृद्रोग होता है ॥ १ ॥

अथसंप्राप्ति पूर्वकं सामान्य लक्षणं

दूषयित्वा रसंदोषा विगुणा हृदयं गताः ॥
हृदि बाधां प्रकुर्वंति हृद्रोगं तं प्रचक्षते ॥ २ ॥

हृद्रोगकी संप्राप्ति औ सामान्य लक्षण कहते हैं

वातादिक दोष ये अन्नरसको दूषितकरिके फिरि आप कुपित-भये हुये हृदयमे प्राप्तव्हैके उस हृदयमे पीडाकरते है उसको हृद्रोग कहते हैं ॥ २ ॥

वातिकमाह

आयम्यते मारुतजे हृदयं तुद्यते तथा ॥
निर्मथ्यते दीर्यतेच स्फोट्यते पाट्यते पिच ॥ ३ ॥

वातिक हृदयरोगमे हृदय का तनाव तथा सुई टोंचनेसरखी मथने सरीखी आरीसे चीरने सरीखी कुल्हारीसे फोडने सरीखी औ हाथसे खीचिके दोटुकडे करने सरीखी पीडा होती है ॥ ३ ॥

पैत्तिकमाह

तृष्णोष दाह चोषाः स्युःपैत्तिके हृदये क्लमः॥
धूमायनं च मूर्छाच क्लेदः शोषो मुखस्यच ॥ ४ ॥

पित्तजहृदय रोगमे

तृषा किंचित् दाह हृदयमे मुखसेपकरिके चूसने सरीखी पीडा

घबराहट मुखमे धुआंइंधि मूर्छा किंचित् दुर्गंध औ मुखका सूखना ये लक्षण होते हैं ॥ ४ ॥

कफजमाह

गौरवं कफसंस्रावोऽरुचिस्तंभोऽग्निमांद्यता॥
माधुर्यमपिचास्यस्य बलासोवर्तते हृदि ॥५॥

कफज हृदयरोगमे हृदयका भारीपना मुखसे कफका गिरना अरुचि जडता मंदाग्नित्व औ मुख मीठारहता है ॥ ५ ॥

त्रिदोषज कृमिजयोर्मिलितमेव लक्षणं तदाह

विद्यात्त्रिदोषादपि सर्वलिंगं तीव्रार्तितोदं कृमिजंसकंडुं॥उत्क्लेदः ष्ठीवनं तोदः शूलं हृल्लास कस्तमः॥ अरुचिःश्यावनेत्रत्वं शोषश्च क्रिमिजे भवेत्॥६॥

अब त्रिदोषज औ क्रिमिज हृदयरोगके लक्षण कहते हैं

इनके लक्षण समानही हैं ॥ जिस हृदयरोगमे तीनौ दोषोंके चिन्हदीखैं औतीव्र सुई टोंचने सरीखी पीडा होय सो त्रिदोषज तथा कृमिज हृद्रोगमे खाज उबकाई थुक थुकी सुई टोंचनेसरीखी पीडा शूल पंछा नेत्रौंके सामने अंधेरी अरुचि नेत्रोंका रंगधूसर औ मुख सूखता है ॥ ६ ॥

सर्वेषामुपद्रवानाह

क्लमः सादो भ्रमः शोषो ज्ञेया स्तेषा मुपद्रवाः॥

कृमिजे कृमिजातीनां श्लेष्मजानां तुयेमताः ॥ ७॥

इतिरुग्वि० हृद्रोगनि० ॥ २१ ॥

सर्व प्रकारके हृदय रोगौं के उपद्रव कहते है वै ये कि क्लोमजं पिआसका स्थान उसकी ग्लानि औ भ्रम मुखका सूखना ये उपद्रः कहे हैं औ जो कफज कृमिरोग मे उपद्रव कहे हैं वे इहांकृमिज हृद्रं गमे होतो हैं ॥ ७ ॥ इतिश्री मत्सुकल सीतारामात्मजपं डित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चयदीपिकायांहृद्रोगनिदानप्रकाशः ॥२१

अथ मूत्रकृच्छ्रनिदानं

व्यायाम तीक्ष्णौषध रुक्ष मद्य प्रसंग नृत्य द्रुत पृष्ठ यानात् ॥ अनूपमत्स्याध्य शनादजीर्णात्स्यु मूत्रकृच्छ्राणि नृणां तथाष्टौ ॥ १ ॥

मूत्र कृच्छ्रका निदान जैसेकि अति कसरत तीक्ष्ण औषध रुक्ष पदार्थ अति मद्यपान शीघ्रतासे नृत्य घोडे वगैरेकी अतिसवारी जलके किनारे रहने वाले जानवरोंका मास औ मच्छिनका अतिखाना भोजन पर भोजन करना औ अजीर्ण इनकारणौंसे मनुष्यौंके आठ प्रकार के मूत्रकृच्छ्र होते हैं ॥ १ ॥

अथास्य संप्राप्तिपूर्वकं लक्षणमाह

पृथग्मलाः स्वैःकुपितानि दानैः सर्वैथवा कोपमुपेत्य वस्तौ ॥ मूत्रस्य मार्गं परिपीडयंति यदा तदा मूत्रयतीह कृच्छ्रात् ॥ २ ॥ तीव्राच रुग्वंक्षणवस्ति मेढ्रेस्वल्पं मुहुर्मूत्रयतीह वातात् ॥ पीतं सरक्तं

सरुजं सदाहं वेगान्मुहुर्मूत्रयतीह पित्तात् ॥ ३ ॥
वस्तेः सलिंगस्य गुरुत्व शोथौ मूत्रं सपिच्छं कफ
मूत्र कृच्छ्रे ॥ सर्वाणि रूपाणिच सन्निपाताद्भवंति
तत्कृच्छ्र तमं च कृच्छ्रं ॥ ४ ॥

अब इस मूत्रकृच्छ्रका संप्राप्ति पूर्वक निदान कहते हैं सो जैसे कि आप आपके कारणों करिके कुपित भये जो वातादिक दोषसो वे न्यारे न्यारे अथवा सर्व एकही संग मूत्राशयमे प्राप्तव्है के मूत्रमार्गको पीडित करते हैं तब मनुष्य वडे कष्टसे मूतता है उसको मूत्रकृच्छ्र कहते है ॥ २ ॥ तहां वातकी अधिकतासे वंक्षण याने जांघ औ पेडू के बीचमे तथा मूत्राशय औ लिंगमे तीव्र वेदना वह वारंवार थोडा थोडा मूतता रहता है ॥ पित्तसे ललामीलिये पीला पीडा दाहयुक्त बडे-वेगसे वारंवार मूतता है ॥ ३ ॥ कफसे पेडू औ लिंगका भारीपना सूजनि औ चिकनईयुक्त मूतता है ॥ सांन्निपातिकमे पूर्वोक्त सर्व लक्षण होते हैं सो अति कष्ट साध्य है ॥ ४ ॥

शल्यजमाह

मूत्र वाहिषु शल्येन क्षतेष्वभिहतेषु च ॥
मूत्रकृच्छ्रं तदाघाताज्जायते भृशदारुणं ॥
वातकृच्छ्रेण तुल्यानि तस्यलिंगानि निर्दिशेत् ॥ ५ ॥

मूत्रके वहनेवालीजो नस तिसमे कोई प्रकारका घावलगा अथवा चोटलगी होय तब उसघातसे अतिदारुण मूत्रकृच्छ्र होता है उसके लक्षण वातमूत्रकृच्छ्रके सरीखे होते हैं ॥ ५ ॥

पुरीष जमाह

शकृतस्तु प्रती घाता द्वायुर्विगुणतां गतः॥
आध्मान वात शूलौच मूत्रसंगं करोति च॥ ६॥

मलके रोकनेसे कुपित भया हुआ वायु अध्मान याने पेटका चढना औ वातशूल तथा मूत्रका अवरोध करता है॥ ६॥

अश्मरी शुक्रजंमाह

अश्मरीहेतु तत्पूर्वं मूत्रकृच्छ्र मुदाहरेत्॥
शुक्रे दोषै रुपहते मूत्रमार्गे विधारिते॥
सशुक्रं मेहये त्कृच्छ्रा द्वस्ति मेहन शूलवान्॥ ७॥

जोमूत्र कृच्छ्र अश्मरीके कारणौं करिके युक्त होता है सो अश्मरी मूत्र कृच्छ्र जो वातादिक दोषौंसे विगडा भयावीर्य मूत्रके रस्तोको रोंकिके रहता है तव मनुष्य पेडू औ लिंगकी शूलयुक्त वीर्य मिश्रित मूतता है॥ ७॥

मूत्र कृच्छ्रहेतुत्वेनो क्त यो रश्मरी शर्करयो र्नव त्व संख्यानि रासार्थं समानत्वेऽवांतर भेदमाहाश्म रीति॥ अश्मरी शर्करा चैव तुल्य संभव लक्षणे॥
विशेपणं शर्करायाः श्रणु कीर्त्तयतो मम॥ ८॥
पच्यमानाश्मरी पित्ता च्छोष्यमाणा च वायुना॥
विमुक्त कफ संधाना क्षरंती शर्करा मता॥ ९॥
हृत्पीडा वेपथुः शूलं कुक्षा वग्निश्च दुर्वलः॥

तथा भवति मूर्छाच मूत्र कृच्छ्रं सुदारुणं ॥ १० ॥

इतिरुग्विनिश्चये मूत्रकृच्छ्र निदानं

मुत्र कृच्छ्र केकारणत्वकरिके कहीभई जो अश्मरी औ शर्करा तिनके समान पनेमे अवांतर भेद हैसो मूत्रकृच्छ्र की नवईसंख्या निवारणके वास्ते कहते हैं ॥ जैसेकि अश्मरी औ शर्करा इनदोनौके निदान लक्षण समान हैं तहांशर्करा काविशेष कहते है सोसुनौ ॥ ८ ॥ जो अश्मरीहोती है सोई पित्तसे पकती भई वायूसे सूखतीभई औ कफके संयोगसे छूटीभई जबमूत्र मार्गव्हैके गिरने लगती है तब उसीको शर्करा कहते हैं ॥ ९ ॥ उसके होनेसे हृदयमे पीडा शरीरका कांपना कोखौमे शूल अग्निमंद औ मूर्छा आती है वह मूत्र कृच्छ्र अतिदारुण होता है ॥ १० ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसादविरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां मूत्रकृच्छ्र निदान प्रकाशः ॥ ३२ ॥

अथमूत्राघातानाह

जायंते कुपितै र्दोषै र्मूत्राघाता स्त्रयोदश ॥
प्रायोमूत्र विघाताद्यै र्वात कुंड लिकादयः ॥ १ ॥

मूत्राघातका निदान ऐसा कि बहुधा करिके मूत्र मलादिकौंके रोकनेसे कुपित भये जो वातादिक दोष तिनकरिके वात कुंडलिका दिक तेरह प्रकारके मूत्राघात होते हैं ॥ १ ॥

अथवात कुंडलिका लक्षणं

रौक्ष्या द्वेगविघाता द्वावायु र्बस्तौ स वेदनः ॥
मूत्र माविश्य चरति विगुणः कुंडली कृतः ॥ २ ॥
मूत्रमल्पा ल्प मथवा स रुजं संप्रवर्त्तते ॥

वातकुंडलिकां तांतु व्याधिं विद्यात्सुदारुणं ॥ ३ ॥

रूक्षता से अथवा मल मूत्रादिकौं केरोकनेसे कुपित भया जोवायु सो मूत्राशयमे जायके मूत्रमे प्रवेशकरिके कुंडलिकाके आकार फिरता है ॥ २ ॥ तिसकरिके थोडा थोडा अथवा पीडा युक्त मूत्र निकसता है सो अति दारुण वातकुंडलिका है ॥ ३ ॥

अष्ठीलाल०

आध्मापयन् बस्तिगुदं रुध्वा वायुश्च लोन्नतां ॥
कुर्यात्तीव्रार्तिमष्ठीलां मूत्र विण्मार्ग रोधिनीम् ॥ ४ ॥

पेडू औ गुदाको भरता सरीखी वायु उनको रोंकिके चंचल औ ऊंची ऐसी बटि आसरी खी गांठि पेडूके मुखपर पीडायुक्तमल मूत्रके रोकनेवाली उत्पन्न करता है उसको अष्ठीलाकहत है ॥ ४ ॥

वातवस्तिल०

वेगंविधारये घस्तु मूत्रस्या कुशलोनरः ॥
निरुणद्धिमुखंतस्य बस्ते र्बस्तिगतोऽनिलः ॥ ५ ॥
मूत्र संगो भवेत्तेन बस्ति कुक्षनि पीडितः ॥
वात बस्तिःसविज्ञेयो व्याधिः कृच्छ्र प्रसाधनः ॥ ६ ॥

जो अनारी पुरुषमूत्र वेगको रोंकता है तिसके पेडूमे रहने वाला वायु पेडूके मुखको रोंकि लेता है ॥ ५ ॥ तिसकरिके पेडू औ कोखिमे पीडित भया हुआ मूत्रका अवरोध होता है उसको वात बस्तिकहते हैं वह दारुण रोग है ॥ ६ ॥

मूत्रातीत लक्षणं

चिरं धारयतो मूत्रं त्वरया न प्रवर्त्तते ॥

मेहमानस्य मंदं वा मूत्रातीतः सउच्यते ॥ ७॥

जो मूत्रको वडीदेरतक रोंकता है उसके फिरि मूत्र जलदी उतरतानहीं अथवा धीरे उतरता है उसको मूत्रातीत कहते हैं ॥ ७॥

मूत्रजठरमाह

मूत्रस्य वेगे भिहते त दुदावर्त्त हेतुतः॥
अपानः कुपितो वायु रुदरं पूरये द्भृशं॥ ८॥
नाभे रधस्ता दाध्मानं जनय त्तीव्र वेदनं॥
तन्मूत्र जठरं विद्या दधो बस्ति निरोधनं॥ ९॥

मूत्रके वेगके रोकनेसे उत्पन्न भयाजो उदावर्त्त उसते कुपित भयाजो अपान वायु सोपेटको पूरता भया॥ ८॥ नाभिके नीचे पेडूका तीव्र पीडा युक्त फुलाता है उसपेडूके मुखकों रोकने वाले रोगको मूत्र जठर कहते हैं॥ ९॥

मूत्रोत्संगल०

बस्तौ वाप्यथवा नाडे मणौ वा य स्य देहिनः॥
मूत्रं प्रवृत्तं सज्जेत सरक्तं वा प्रवाहतः॥ १०॥
स्र वेच्छनैरल्प मल्पं सरुजं वा थनीरुजं॥
विगुणा निलजो व्याधिः समूत्रोत्संग संज्ञितः॥ ११॥

जिस रोगमे लघु संकाकरने समय पेडू अथवा लिंग अथवा लिंगके मस्तकमे मूत्ररुकि रहता है किं वा प्रवाहसे धीरे धीरे रक्त सहित मूतता॥ १०॥ अथवा चिनग सहित किंवा चिनगरहित थोडा थोडा निकलता है उसको मूत्रोत्संग कहत हैं वह कुमार्ग गामी वायुसे उत्पन्न होता है॥ ११॥

मूत्रक्षयल०

रूक्षस्य क्लांतदेहस्य बस्तिस्थौ पित्त मारुतौ॥
मूत्रक्षयं सरुद्दाहं जनयेतां तदाव्हयं॥ १२॥

जिसका शरीर रूखा औ थका भया होय उसके मूत्राशयमे रहे भये पित्त औ वायु पीडा औ दाहसहित मूत्रकाक्षय करते हैं औ उसी मूत्रक्षय रोगको उत्पन्न करते हैं॥ १२॥

मूत्रग्रंथि लक्षणं

अंतर्बस्ति मुखे वृत्तः स्थिरोऽल्पः सहसा भवेत्॥
अश्मरी तुल्यरुग्ग्रंथिर्मूत्र ग्रंथिः सउच्यते॥ १३॥

पेडूके भीतर मुख पर अकस्मात् गोल थिर छोटे आंवलेके समान एक गांठि उत्पन्न होती है उसमे पीडा अश्मरीके समान ही होती है उसको मूत्र ग्रंथिकहते हैं॥ १२॥

मूत्रशुक्रमाह

मूत्रितस्य स्त्रियं यातो वायुना शुक्रमुद्धतं॥
स्थानाच्च्युतो मूत्रयतः प्राक् पश्चाद्वा प्रवर्त्तते॥
भस्मोदक प्रतीकाशं मूत्र शुक्रं तदुच्यते॥ १४॥

जो पुरुष मूत्र वेग युक्त लघु शंका किये विना स्त्री प्रसंग करता है उसका वीर्य वायु करिके स्थान भ्रष्टहुआ भया लघुशंका करनेके समयमे प्रथम अथवा पीछे भस्ममिश्रित जलके तुल्यवीर्य जाता है उसको मूत्रशुक्र कहते हैं॥ १४॥

उष्णवातल०

व्यायामा ध्वातपैः पित्तं बस्तिं प्राप्या निलान्वितं॥

बस्ति मेढ्र गुदंचैव प्रदहन् स्रावयेदधः॥ १५॥
मूत्रं हारिद्र मथवा सरक्तं रक्तमेववा॥
कृच्छ्रात्पुनः पुन र्जंतो रुष्ण वातं तमादिशेत्॥ १६॥

उष्ण वात लक्षण जैसेकि मेहनतकरना मार्ग चलना औ धूपमे रहना इन कारणों करिके कुपित भया जो पित्त सोवात युक्त मूत्राशयमे प्राप्तव्हैके पेडू लिग औ गुदामे दाह करता है॥ १५॥ हरदी सरीखा अथवा ललामी युक्त किंवा लालमूत्र को वारंवार लिंगसे निकालता है उसरोगको उष्ण वात कहते हैं॥ १६॥

मूत्रासादल०

पित्तं कफो वा द्वौवापि संहन्यंतेऽनिले नचेत्॥
कृच्छ्रान्मूत्रं तदा पीतं रक्तं श्वेतं घनं सृजेत्॥ १७॥
सदाहं रोचना शंख चूर्ण वर्णं भवेच्च तत्॥
शुष्कं समस्त वर्णंवा मूत्रसादं वदंतितम्॥ १८॥

मूत्र सादलक्षण जैसे कि पित्त अथवा कफ अथवा दोनौ जब वायुके संग मिलि जाते हैं तब बडे कष्टसे पीला लाल अथवा सफेद मूत्र दाहयुक्त गाढा निकलता है॥ १७॥ वह मूत्रजब सूखता है तब पित्तकरके अनेकरंगका होता गोरोचन सरीखा अथवा शंखके चूना सरीखा अथवा अनेक रंगका जमि रहता हैं उसरोगको मूत्रसादक कहते हैं॥ १८॥

विड्विघातमाह

रूक्षान्न भुग्दुर्बल योर्वातेनाधो वृतं शकृत्॥

मूत्रस्रोतोऽनुपद्येत विट् संसृष्टं तदानरः॥ १९॥
विङ्गंधं मूत्रयेत्कृच्छ्राद्विड्विघातं तमादिशेत्॥ २०॥

जो मनुष्य रूखा खाता है अथवा दुर्बल होता है उसका वायु करिके मल गुदाके समीप प्राप्तह्वै के मूत्रवाहिनी नसामें प्राप्तहोता है तब वह मनुष्य विष्ठामिश्रित मूतता है॥ १९॥ मल सरीखी दुर्गंधियुक्त बडे कष्टसे मूतता है उसको विड्विघात कहते है॥ २०॥

बस्तिकुंडलमाह

द्रुताध्वलंघनायासैरभिघातात्प्रपीडनात्॥
स्वस्थानाद्वस्तिरुद्वृत्तः स्थूलस्तिष्ठति गर्भवत्॥ २१॥
स्थूलस्पंदनदाहार्त्तो बिंदुं बिंदुं स्रवत्यपि॥
पीडितस्तस्रजेद्धारां संस्तंभोद्वेष्टनार्तिमान्॥ २२॥
वस्तिकुंडलमाहुस्तं घोरं शस्त्रविषोपमं॥
पवनंप्रबलं प्रायो दुर्निवारोऽल्पबुद्धिभिः॥ २३॥

जलदी जलदी रस्ता चलना उपवास औ मेहनत करना चोटलगना अथवा रगडना इत्यादि कारणौं से आपके स्थानसे टला भया मूत्राशय सोमोटा भया हुआ गर्भ सरीखा थिर रहता है॥ २१॥ उसते शूल कंपा औ दाह करिके पीडित बूंद बूंद पेशाव करता है जोपेडूको दवावैतौ धार पडती है उसमे रुका वट औ ऐंटने सरीखी पीडा करिके मनुष्य पीडित होता है॥ २२॥ उसरोगको वस्ति कुंडल कहते हैं वह महा घोर शस्त्र औ विषके समान है उसमे वायु प्रबल है सो अल्प बुद्धि न करिके दुर्जय है॥ २३॥

अथाऽस्यैवेतर दोषानु बंधेन लक्षणमाह

तस्मिन् पित्तान्विते दाहः शूलं मूत्र विवर्णता॥
श्लेष्मणा गौरवं शोथःस्निग्धं मूत्रं घनं सितं॥२४॥
श्लेष्म रुद्ध विलो बस्तिः पित्तो दीर्णो नसिध्यति॥
अविभ्रांत बिलः साध्यो नचयः कुंडलीकृतः॥
स्याद्वस्तौ कुंडली भूते तृण्मोहः श्वास एवच॥२५॥

इति रुग्विनिश्चये मूत्रघात निदानं॥ ३३॥

अब दोषोंकरिके इसीके लक्षण कहते हैं

जो इसमे पित्तयुक्त होय तौ दाह शूल औ मूत्रका रंग बदरंग होता है कफसे भारी पना सूजनि तथा मूत्र चिकना गाढा औ सपेद होता है॥२४॥ जिसके मूत्राशयका मुख कफसे रुकि जाय औ उसमे पित्त प्रबल होय सो असाध्य जानना औ जिसके मूत्राशयका मुख खुला होय सो साध्य औ जिसके मूत्राशयके मुख बंद होनेसे उसमे वायु कुंडलाकार फिरने लग्या होय सो भी असाध्य इसते तृषा मोह औ श्वास उत्पन्न होते हैं॥२५॥ इतिश्रीमत्सुकल सीता रामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां मूत्राघात निदान प्रकाशः॥ ३३॥

अथाऽश्मरी निदानं

वात पित्त कफै स्तिस्त्र श्चतुर्थी शुक्रजा परा॥
प्रायः श्लेष्मा श्रयाः सर्वा अश्मर्य स्तुयमो पमाः॥१॥

अश्मरी निदान ऐसे किवातपित्त औ कफ करिके तीनि जैसे वात

श्मरी पित्तास्मरी औ कफाश्मरी चौथी शुक्राश्मरी इनचारोंका बहुधा करिके आस्रय कफही है ये अश्मरीयम राजके समान पीडा कारक हैं ॥ १ ॥

संप्राप्तिमाह

विशोषये द्बस्ति गतं सशुक्रं मूत्रं सपित्तं पवनः कफंवा यदा तदा श्मर्युपजायते च क्रमेण पित्ते ष्विवरोचना गोः ॥ २ ॥

कुपित भया हुआ वायु जब वस्ति स्थानमे रहे भये वीर्य सहित मूत्रको अथवा पित्त सहित मूत्रको अथवा कफ हीको सुखाय देता है तब उसतेमनुष्योंके पथरीकी उत्पत्ति होते है सो जैसे गायके पित्तमे गोरोचन क्रमसे बढता है तैसी बढती है ॥ २ ॥

अथाऽश्मरीणामनेक दोषाश्रयत्वं पूर्वरूपं चाह ॥
नैक दोषाश्रयाः सर्वा अश्मर्याः पूर्वलक्षणं ॥ ३ ॥
बस्त्याध्मानं तदा सन्न देशेषु परितोऽतिरुक् ॥
मूत्रे वस्त सगंधित्वं मूत्र कृच्छ्रं ज्वरोऽरुचिः ॥ ४ ॥

अब अश्मरीका अनेक दोषाश्रयत्व औ पूर्वरूप कहते है ये सर्व प्रकारकी अश्मरी एकदोपज नहीं है याने त्रिदोषज हैं ॥ ३ ॥ औ इनके उत्पत्ति समयमे पेडू का फूलना तथा पेडूके उपर औनीचे लिंग औ अंड कोशादिकों मे अति पीडा होती है औ मूत्रमे मस्त बकरेकी सरीखी वास मूत्र कृच्छ्रज्वर अरुचि येलक्षण होते हैं ॥ ४ ॥

सामान्यलक्षणं

सामान्य लिंगं रुङ्नाभि सेवनी वस्ति मूर्द्धसु ॥

विशीर्णधारं मूत्रं स्यात्तयामार्गनिरोधिते ॥ ५ ॥
तद्व्यपायात्सुखं मेहेदच्छं गोमेदकोपमं ॥
तत्संक्षोभात्क्षते सास्रमायासाच्चातिरुग्भवेत् ॥ ६ ॥

अश्मरीके सामान्य चिन्हयेकि

नाभि सीवनि औ पेडूपात पीडा तथा उसकरिके मूत्र मार्ग रोकनेसे मूत्रकी धार फटी भई निकलती है जब कदापि उसमार्गको छोडती है ॥ ५ ॥ तब सुखसे मूत्र उतरता है सो मूत्रस्वच्छ औ लाल पीला रंग मिश्रित होता है तथा जब वह अश्मरी मूत्रमार्गको रोंकिलेती है तव जो कदाचित् अंदर जखम पडिजाय तौ रक्त मिश्रित निकसै औ कांखिके मूतने से अतिपीडा होती है ॥ ६ ॥

अथ वाताऽश्मरी लक्षणमाह

तत्र वाताद्भृशं चार्तो दंतान्खादतिवेपते ॥
मृद्गाति मेहनं नाभिं पीडयत्यनिशं क्वणन् ॥ ७ ॥
सानिलं मुंचति शकृन्मुहुर्मेहति विंदुशः ॥
श्यावाऽरुणाऽश्मरीवास्यात्संचिता कंटकैरिव ॥ ८ ॥

जो अश्मरी वातकी अधिकतासे होती है उससे अतिशय पीडा युक्त मनुष्य दांतौको कडकडाता है औ कांपता है तथा कांखता कांखता लिंगको मलता है औ नाभीकोभी दबाता रहाता है ॥ ७ ॥ उसके अधो वायुके साथ त्वाडाव्है जाया करता है औ उसके मूत्रभी वारंवार बूंदबूंदगिरता रहता है उस पथरीका रंग धूसर अथवा लाल होता है उसके ऊपर कांटे कांटे सेभी होते हैं ॥ ८ ॥

अथ पित्ताश्मरी लक्षणं

पित्तेन दह्यते बस्तिः पच्यमानं इवोष्मवान्॥

भल्लातकास्थिसंस्थाना रक्ता पीता ऽसिताऽश्मरी॥९॥

पित्ताधिक अश्मरीसे पेडूमे औ पकने सरीखी वेदना तथा उष्णता युक्त मालूम होती है सो अश्मरी भेडा वाके मगज सरीखी आकार तथा रंगमे लाल पीली अथवा काली होती है ॥ ९ ॥

अथ कफाधिकाऽश्मरी लक्षणमाह

बस्ति निंस्तुद्यतइव श्लेष्मणा शीतलो गुरुः॥

अश्मरी महती श्लक्ष्णा मधु वर्णा ऽथवासिता॥१०॥

जो अश्मरी कफकी अधिकतासे होती है उसते पेडूमे कांटा टोंचने सरीखी पीडा होती जैसी पेडूठंढा औ भारी मालूम परता है वह पथरी बडी चिकनी सहत सरीखी कुछ पीलाय स लिये सफेद अथवा सफेद ही होती है ॥ १० ॥

एता अश्मर्यो बालानां बाहुल्ये न भवंती त्याह

एताभवंति बालानां तेषा मेवच भूयसा॥

आश्रयो पचयो ऽल्पत्वा द्ग्रहणा हरणे सुखा॥ ११ ॥

ये त्रिदोष अश्मरी बहुधा करिके बालकन हीके होती है जैसे कि जोयै अश्मरी प्रथम कहिजो बहुधा करिके बालक नके भी होती हैं तहा उनका आश्रय जो बस्ति याने पेडू सो भीअल्पही होता है याने छोटा होताहै तैसेही मोटाईभी अल्पही होती है इस वास्ते उन पथरिनका बडिश नाम अस्त्रसे ग्रहण करना औ शस्त्रसे चीरिके निकासना भी सुगम होता है ॥ ११ ॥

अथ शुक्राश्मरी लक्षणं

शुक्राश्मरीतु महती जायते शुक्र धारणात्॥ १२॥
स्थाना च्युत ममुक्तं हि मुष्कयो रंतरे ऽनिलः॥
शोषय त्युप संहृत्य शुक्रं तच्छुक्र मश्मरी॥ १३॥
बस्ति रुक्कृच्छ्र मूत्र त्व मुष्क श्वपथु कारिणी॥
तस्या मुत्पन्न मात्रायां शुक्रमे तिं विलीयते॥ १४॥
पीडिते त्ववकाशे ऽस्मि न्नश्मर्यें व चशर्करा॥
अणु शो वायुनाभिन्ना सात्व स्मि न्ननुलोमगे॥ १५॥
निरेति सहमूत्रेण प्रतिलोमे विबध्यते॥
मूत्रस्रोतः श्रितासातु सक्ता कुर्या दुपद्रवान्॥ १६॥
दौर्बल्यं सदनं कार्श्यं कुक्षि शूल मथारुचिं॥
पांडुत्व मुष्णवातं च तृष्णां हृत्पीडनं वमिं॥ १७॥

अब शुक्राश्मरीके लक्षण कहते है वे ऐसे कि जो शुक्राश्मरी है सो महत याने जिनको वीर्य प्रसिद्ध भयाहोय अर्थात् मैथुन योग्य भयाहोय उनहीके वीर्यके रोंकनेसे होती है॥ १२॥ याने जव मैथुन करते करते आनंद आयके वीर्य खलासहोने लगा उस समयमे उस-स्थानसे छुटे भये वीर्यको जो रोकिलेते हैं उसको गिरने नही देते है तब उस वीर्यको वायु अंडकोश औ पेडूके मध्यमे लैके प्राप्तकरता है उहां यकठा करिके सर्वको सुखाय देता है॥ १३॥ उसको शुक्राश्मरी कहते है वह अश्मरी पेडूमे शूल मूत्रको कष्टसे पीडा हि करने वाली औ अंडकोशोंमे सूजनि करनेवाली होति है उसमे अश्मरीके उत्पन्न

होनेहीमे पीडा बहुत होती है ॥ १४ ॥ जब लिंग औ अंडकोशके मध्य भागको जब वह दबाते दबाते मिटि सरिखी बहुतसी अश्मरी वायू करिके छोटी टुकडे सीन्हे के नीकसतीहै इस श्लोकम चमत्कार है उसके ॥ १५॥ अर्थसे कहते हैकि सिकताभी होती है शर्करा से जो बारीक होती है वह सिकता सो जब वायु अनुलोम गती होता है तब यक बारगी मूत्रमार्ग से गिरि पडती है औ प्रतिलोमसे फिरि बंधि जाती है सो मूत्रवहने वाली नाडीमे रहनेसे उहां लगिके उपद्रव करती है वै उपद्रव ये हैं ॥ १६ ॥ जैसेकि दुर्बलता अंगकी शिथलता औ कृशता कोखौंमे शूल अरुचि शरीरका रंग पांडू वर्ण याने पीलास युक्त सफेद तथा उष्ण वात इस उष्णवातके लक्षण पीछे इसीके निदानमे कहे है तहांसे देखिके जानना औ पियास हृदयमे दवाने सरीखी पीडा औ वांति यै होते है ॥ १७॥

असाध्य लक्षणमाह

प्रसून नाभि वृषणं बद्ध मूत्रं रुजातुरं ॥
अश्मरी क्षपयत्याशु सिकता शर्करा न्विता॥ १८ ॥

इति रुग्विनिश्चय अश्मरी निदानं ॥ ३४ ॥

जिस अश्मरी वाले पुरुषके नाभि औ अंडको शमे सूजनि होय तथा मल मूत्रके अवरोधसे पीडित होय उस मनुष्यको शर्करा औ सिकता सहित वह अश्मरी नाशहीको प्राप्त करती है ॥ १८॥ इति श्रीसुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकाया मश्मरी निदान प्रकाशः ॥ ३४ ॥

अथ प्रमेह निदानं

अस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्यो दकानू परसः

पयांसि ॥ नवान्नपानं गुडवैकृतं चप्रमेहहेतुःकफकृच्च सर्वं ॥ १ ॥

निश्चेष्ट वेठेरहना सुखसे निद्रा दही इनका खाना तथा ग्राम्य जो बकरा मेढा वगैरे और जौ विरुद्ध जलके किनारे के रहने वाले हंस चकवाक नवान्न गुडपान और मांस रस ही का खाना औ दूध नवीन जलसकर औ अन्न तथा गुडविकार याने मास एसभ वस्तु सर्व कफ-कारक पदार्थ ये प्रमेहके कारक है ॥ १ ॥

अथ कफपित्त वातमेहानां क्रमेण संप्राप्ति माह

मेदश्च मांसंच शरीरजंच क्लेदं कफो बस्ति गतं प्रदूष्य ॥ करोति मेहान्समुदीर्ण मुष्णै स्तानेव पित्तं परिदूष्य चापि ॥ २ ॥ क्षीणेषु दोषं ष्ववकृष्य धातून्संदूष्य मेहान्कुरुते ऽनिलश्च॥साध्या स्कफोत्था दश पित्तजा षट् याप्या नसाध्याः पवनाश्चतुष्काः॥ समक्रियत्वा द्विषम क्रियत्वान्महात्वयत्वाच्चयथा क्रमंते ॥ ३ ॥

अब कफ पित्त औ वात इन सौ भये जो प्रमेह उनकी क्रमते संप्राप्ति कहते है

जैसै कि वस्ति पेडूमे रहै भये जो मेदमांस औ सरीर जन्यक्लेद याने देहमे उत्पन्न जो जल इन सबनको कफ दूषित करके कफ प्रमेहो को उत्पन्न करता है तथा उष्ण पदार्थोंके सेवनसे वला भया पित्त-

भी उनमेदमांसादि कनको दूषित करिके पित्त प्रमेहोको उत्पन्न करता है ॥ २ ॥ एसेही वायु अपने करिके कफ औ पित्तके क्षीण होनेसे वसा मज्जा इत्यादिक धातन को खीचके औ पेडूके मुषपर लाइके उनको दूषित करिके वात प्रमेहोको उत्पन्न करता है अब इनके साध्या साध्य भेद कहते है इनके दश कफ जन्यसाध्य है कारणकि इनकी औषध क्रिया सम है जैसे किभेद इत्यादिक भीकटुतिक्त कषाया दिकौसे शांत होते है तेसही कफ भी इनसे शांत होता है तथा छपित्त जन्य प्रमेह याप्य है जैसै कि शीतोपचार पित्त श्याम क औ मांस इत्यादिकौके बढाने वाले है ऐसेही वातजन्य चार असाध्य है कारण कि वह वायु महात्यकारक है याने विनासकारी है इसविनाशकारित्व का कारण यह है कि यह वायु मज्जादिक गंभीर धातुने अपकर्षण करने पनेसे बहु व्याप्त कारी औ शीघ्र कारी है ॥ ३ ॥

अथ प्रमेह दोष दूष्य वर्ग माह

कफः सपित्तः पवनश्च दोषा मेदो
स्रशुक्रांवु व साल सीकाः॥मज्जा रसौ जः
पिशितं च दूष्याः प्रमेहिणां विंशतिरेव मेहाः॥ ४ ॥

अव प्रमेह मेदोष औ दूष्यगण

अव कहते है कफ पित्त औ वायु ये दोष तथा मेद रक्त वीर्य उदक स्नेह रस याने मांसमे रहीभई चरबी लसीका जो चर्वी उद्रमेसे पानी निकलता है सो लासा मज्जा याने हाडके मांसके भीतर रहता है सो रसजो अन्नका सार और जो सरीरमे कफ जो रहता है सो औ मांस ये दूप्य है दोष औ दूष्यका अर्थ यह है किजो दूषित करने

वाले है वातादिक ये दोष औ जे वातादिकों करिके दूषित होते है वेदू-ष्य है एसे ये प्रमेहवालो के जो दोष दूष्य कहे इन्ही करके वीस प्रकारके प्रमेह होते है ॥ ४ ॥

पूर्वरूपमाह

दंतादीनां मलाढ्यत्वं प्राग्रूपं पाणिपादयोः॥
दाहचिक्कणता देहो तृट् स्वासश्चोप जायते॥ ५॥

प्रमेह होनेके समेमे प्रमेह दांत जिह्वा दिकोमे मल बहुत उत्पन्न होता है हाथपर उनमे चिकन ईष्ययास औ मुख मीठा होता है ॥५॥

सामान्यल०

सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभुता विलमूत्रता॥ ६॥

पेसाब जादा औ ढबेला होता है यह प्रमेहो का सामान्य लक्षणं है॥ ६॥

अथ प्रमेहानां भेद कारणमाह

दोष दुष्या विशेषेपि तत् संयोग विशेषतः॥
मूत्र वर्णादिभेदेन भेदो मेहेषु कथ्यते॥ ७॥

अबजो प्रमेहोके भेदकहे तिनका कारण कहते है सो जेसैकि यद्यपि दोष औ दूष्यमे कुछ विशेष्य नहीहे तोभी मूत्रके वर्णादिक भेद करिके प्रमेहोमे भेद जानना॥ ७॥

अथकफजमेहानांलक्षणान्याह

अच्छं बहुसितं शीतं निर्गंध मुदकोपमं॥
मेह त्युदक मेहेन किंचिदा विलपिच्छलं॥८॥
इक्षो रस मिवात्यर्थं मधुरं चेक्षु मेहतः॥

सांद्रीभवे त्पर्युषितं सांद्र मेहेन मेहति ॥९॥
सुरामेही सुरा तुल्य मुपर्य च्छ मधो घनं॥
संहृष्ट रोमाः पिष्टेन पिष्टव द्बहुलं सितं ॥ १० ॥
शुक्राभं शुक्रमिश्रंवा शुक्रमेही प्रमेहति॥
मूत्राणून्सिकता मेही सिकता रूपि णोमलान् ॥११॥
शीतमेहीसुबहुशो मधुरं भृशशीतलं ॥
शनैः शनैः शनैर्मेही मंदंमंदंप्रमेहति ॥
लाला तंतु युतं मूत्रं लाला मेहेनपिच्छिलं ॥ १२ ॥

अवजो प्रथम कहेजो प्रमेह है उनकै लछन कहते है

तहां जो उदकमेह स्वच्छ वहुत सफेद ढंडा गंधरहित पानीससरीखा किंचिरडाग्यो चिकना मूत्र मूत्रताहै १।८ इक्षु मेहमे ऊषके तुल्य अतिसे मीठा मूत्रताहै २ सांद्र प्रमेह वालेका मूतएकदिन रात रखनेसे गाढाहोजाताहै ओ कुछगाढाभी मूत्रताहै ३।९ सुरा प्रमेही मदिरा केतुल्य मूत्रताहै सो मूत्र ऊपर स्वच्छ औ नीचे गाढाहोताहै ४पिष्टप्रमेहसे रोमांच होतेहै औ आटासरीषा वहुत तथा सफेद मूत्रताहै ५।१० सिकताप्र मेहवालामूत्रकेकणाकणातथावालूसरीषे कफके तुकडे मूत्रताहै ६ ११ सीत प्रमेह वाला वहुत मीठा औ अतिढंडा मूत्रताहै ८ शनै मेंह वाला धीरे धीरे ओर थोडा थोडा मूत्रताहै ९ लाला प्रमेह वाला लाल तारसरीखे तारो करिके युक्त मूत्रको मूत्रताहै १०।१२

अथकफप्रमेहानाह

गंध वर्ण रसस्पर्शः क्षारेणक्षार तोयवत्॥

नीलमेहे न नीलाभं कालमेही मषीनिभं ॥ १३ ॥
हारिद्र मेही कटुकं हारिद्रा संन्निभं बृहत् ॥
विस्नंमां जिष्टमेहेन मंजिष्टा सलिको पमं ॥
विस्र मुष्णं सवलणं रक्ताभं रक्त मेहतः ॥ १४ ॥

अब छप्रकारके पित्त प्रमेहके लछन कहते है

जेसेके छार प्रमेहसे गंध वर्ण रस औ स्पर्श करके क्षारके पानी सरीखा मूत्रता है नील प्रमेहसे नील सदृश मूत्रता है काळ प्रमेहसे लिषनेकी स्याही सरीषा ॥ १३ ॥ हारिद्र मेहसे कटूदाह युक्त औ हरदी सरीषा मूत्रता है मांजिष्ट प्रमेहसे आम गंधियाने कच्चे मांस सदृश गंधि युक्त मजीठ के पानी सरीषा मूत्रता है रक्तप्रमेहसे आमगंधि गरम लोम खर औ रक्तसदृश मूत्रता है ॥ १४ ॥

अथ वातमेहानां लक्षणानि

वसा मेही वसामिश्रं वसाभं मूत्रये न्मुहुः ॥
मज्जाभं मज्ज मिश्रंवा मज्जमेही मुहुर्मुहुः ॥ १५ ॥
कषायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रं मेहेन मेहति ॥
हस्तीमत्त इवाजस्नं मूत्र वेगविवर्जितं ॥
सलसीकं विवद्धंच हस्ति मेही प्रमेहति ॥ १६ ॥

अबचार प्रकारके वातज प्रमेहोके लक्षण कहते है

जैसे कि बसा प्रमेह वाला वसा जो चर्वी उसचरबी मिश्रित औ रचरवी सरीखा वारंवार मूत्रता है मज्जाप्रमेह वाला जो हाडके भीतर का मगज उसके सदृश अथवा मज्जा मिश्रित वारंवार मूत्रता है ॥ १५ ॥

क्षौद्र प्रमेह से कसेला मीठा औ रूखा मूत्र मूत्रता है हस्ति प्रमेह वाला वेग रहित औ लासासहित तथा अवरोध युक्त जैसे मत्त हस्तीतै सै वारंवार मूत्रता है ॥ १६ ॥

अथो पद्रवानाह तत्रता वत्कफ प्रमेहो पद्रवा नाह

अविपाको रुचि च्छर्दिः ज्वरः कासः सपीनसः॥
उपद्रवाः प्रजायंते मेहानां कफ जन्मनां ॥ १७॥

अव प्रमेहके उपद्रव कहते हैं तहां प्रथम कफ प्रमेहके उपद्रव मे कि अन्नका नपचना अरुचि वांति ज्वरकास औ पीनस याने नाकसे कफको गिरना ॥ १७ ॥

अथ पित्त प्रमेहो पद्रवाः

वस्ति मेहनयोः शूलं मुष्का वदरणं ज्वरः॥
दाह तृष्णा क्लमो मूर्छा विड्भेदः पित्त जन्मनां ॥ १८ ॥

पित्त प्रमेह उपद्रव जै से कि पेडू औ लिंगमे शूल तथा अंडको शमे फाटने सरीषा पीडा ज्वर दाह तृषा अनायास चित्तका घबड ना मूर्छा औ मलका फूटना ये लक्षण होते है ॥ १८ ॥

अथ वातप्रमेहो पद्रवा नाह

वातजाना मुदावर्तकं पत्हृह लोलताः॥
शूल मुन्निद्रता शोषः कासः श्वास श्चजायते॥ १९ ॥

वात प्रमेहो को उपद्रव जैसेकि उदावर्त कंपा हृदय का जकडना सर्व पदार्थ भोगने की इच्छा शूल निद्राका नाश शोष खासी औ स्वास उत्पन्न होते है ॥ १९ ॥

अथैते षामसाध्य लक्षणा न्याह

यथोक्तो पद्रवा विष्टमति प्रस्नुत मेववा ॥
पिडिका पीडितं गाढं प्रमेहो हंति मानवं ॥ २० ॥
जातः प्रमेही मधु मेहिनां वा नसाध्य रोगः
सहि वीज दोषात् ॥ येचापि केचि त्कुलजा
विकारा भवंति तांश्च प्रवदंत्य साध्यान् ॥ २१ ॥

अब इनके असाध्य लक्षण कहते है

जेसे कि जो उपद्रव कहे है उन करिके युक्त करना अथवा अतिशय मूत्रादिकौ का स्राव होने लगा होइ तथा सराविका दिक पिढिको करिके अति पीडित होइतो उस मनुष्य को प्रमेहीको प्रमेह मार- है ॥ २० ॥ जो प्रमेही पुरुष मधु मेहवाले से उत्पन्न हुवा उसका प्रमेह उस वीज दोसते असाध्य होता है तथा जो औरभी कुष्टादिक रोग कुल परंपरा म होते है उनको भी असाध्य कहते है ॥ २१ ॥

अथ सर्व एव प्रमेहाणां उपेक्षा मधुमेहत्वं दर्शयन्न साध्यत्वमाह

सर्व एव प्रमेहास्तु कालेना प्रतिकारिणः ॥
मधुमेहत्व मायांति तदासाध्या भवंतिहि ॥ २२ ॥
मधु मेहे मधु समं जायते सकिल द्विधा ॥
क्रुद्धे धातु क्षया द्वायो दोषा वृत पथे ऽथवा ॥ २३ ॥

अब औ बंधन करने से सर्व प्रमेहौ का मधु मेहत्व देषते भए अ- साध्य त्व कहते हैं

सो जेसे कि जे सर्व कफजा दिक प्रमेह कहि आये वे सर्व औ-

षधो पचारके नकरने से कुछ काल व्यतीत होनेसे मधुमेह त्व को प्राप्तहोते है तब असाध्य होते हैं ॥२२॥ उस मधु प्रमेहसे मूत्र सहित मधु सरीखा उतरता है सो मधु मेह दो प्रकारका होता है एकतो धातु छीन होनेसे जो वायुकुपित्त होता है उससे पित्तादिक दोषो करिके मूत्र मार्गमे वायुके रुकनेसे ॥ २३ ॥

अथ सावरण लक्षणं

आवृतो दोषलिंगानि सोनिमित्तंप्र दर्शयन् ॥
क्षीणः क्षीणाः क्षणा त्पूर्णौ भजते कृच्छ्र साध्यतां॥ २४॥

अब दोषा वृतके लक्षण कहते हैं

जैसेकिजिस पित्तादिक करिके वायु रुकाहोइ उसके अकस्मात् चिन्ह देषाता होइ छनमे कमहोता है औछणमे जादाहोता है वह कष्टसाध्य होता है ॥ २४ ॥

अथ मधुमेह शब्द प्रवृतौ निमित्त माह

मधुरं यच्चमेहे षुप्रायो मध्वि व मेहति ॥
सर्वैपि मधुमेहाख्यां माधुर्या च्च तनो रतः॥ २५ ॥

अब मधुमेह शब्दकी प्रवृतिमे निमित्त कहते है

जिसवास्ते कि जिस प्रमेहमे मूत्र मधुसरीखा मीठा उत्तरता है इसीवास्ते शरीरकी मधुरता से सर्व प्रमेहभी मधुमेहत्व को प्राप्तहोते है ॥२५॥

अथ प्रमेह पिडिका निदानं

शरा विका कच्छविका जालनी विनता लजी॥
मसूरिका सर्पपका पुत्रिणी सविदारिका॥ १ ॥

विद्रधि श्चेति पिडिका प्रमेहा पेक्षया दश ॥
संधि मर्मसु जायंते मांसलेषु च धामसु ॥ २ ॥

अब प्रमेह पिडिका का निदान कहते है

जैसे प्रमेहौ का औषध उपचार न करनेसे संधि म मर्मस्थानोमे औ मांसल स्थानोमे दश प्रकारकी पिडिका उत्पन्न होती है वे येशराविका १ कच्छपिका २ जालिती ३ विनता ४ अलजी ५ मसूरिका ६ सर्षपिका ७ पुत्रिणी ८ विदारिका ९ विद्रधि ॥ १० ॥

अथैषां लक्षणान्याह

अंतोन्नता च तद्रूपा निम्न मध्या शराविका १ स
दाहा कूर्मसंस्थाना ज्ञेया कच्छपिका बुधैः २।३
जालिनी तीव्रदाहातु मांसजा लसमा वृता ३ अ
वगाढ रुजो क्लेदा पृष्टे वाप्युदरे पिवा४ महती पिडि
का नीला सावुधैर्विनता स्मृता ४ रक्ता सिता
स्फोटतती दारुणा त्वलजी भवेत् ५ मसूर दल
संस्थाना विज्ञेया तुमसूरिका ६ गौर सर्षप संस्था
ना तत्प्रमाणा च सर्षिपी ७६ महत्यल्प चिता ज्ञे
या पिडिका चापि पुत्रिणी ८ विदारी कंदवद्वृत्ता
कठिना च विदारिका ९ विद्रधे र्लक्षणै र्युक्ता ज्ञेया
विद्रधिकातु सा ॥ १० ॥७

अव सर्वपिडिकौं के लक्षण कहते है

जो पिडिका किनारोंपै ऊची शराव तुल्य वीचिमे नीची सोशराविका १ जो कछवा के आकार दाह युक्त होइ सो कच्छपिका २।२ जो तीव्रदाह युक्त औ मांसकेजा लेकरिके आच्छादित होइ सो जालिनी३ अंतर पीडा तथा बहने वाली पेटमे किंवा पीठमे वडी तथा नीली पिडिका होती है सो विनता ४ जोलाल औ सफेद तथा फफोला युक्त होती है सो अलजी ५।५ मसूरिकी दालके आकार होइ सो मसूरिका ६ जो गोरे सरसो के आकार औ सरसोके वरावर होती है सो सर्षपीका ७।६ जोवडी पिडिका दूसरी बहुत सी छोटी पिडिकौ करिके युक्त होती है सो पुत्रिणी ८ जो कठिन औ विदारी कंदसरीषी गोल होती सो विदारिका ९ जो विद्रधिके लक्षण युक्तहोती है सो विद्रधिका १०।७

अथ पिडिकानां मारंभ कारणमाह

येय न्मयाः स्मृता मेहा स्तेषामेतास्तु तन्मयाः॥
विना प्रमेह मप्येता जायंते दुष्टमेदसः॥
तावच्चैता नलक्ष्यंते यावद्वास्तु परिग्रहः॥८॥

अव पिडिका होनेके कारण कहते है

जो प्रमेह जिस दोष मय है उसकी पिडिका भी उसीदोष मय होती है जैसै कफ प्रमेही को कफ पिडिका एसे ही जानना ये पिडिका प्रमेह विना दूषित मेदहीसे भी उत्पन्न होती है इनके लछन जब तक ये ऊची नही आती है तव तक समुझने मे नही आते है॥८॥

अथा सामसांध्य लक्षणानि

गुदे हृदि शिरस्यंसे पृष्ठे मर्मसु चोत्थिताः॥

सोपद्रवा दुर्बलाग्नेः पिडिका परिवर्जयेत् ॥ ९ ॥

अब इनके असाध्य लछन कहते है

जो पिडिका गुदा हृदे मस्तक कंधे पीठ तथा औरभी मर्मस्थानोमे भईहोइ तथा उपद्रव युक्त औ मंदाग्नि वालेके होइ वे असाध्य है ॥ ९ ॥

उपद्रवानाहचरकात्

तृट् कास मांस संकोच मोहहिक्का मद ज्वराः ॥
विसर्प मर्म संरोधाः पिडिका नामुपद्रवाः ॥ १० ॥

अब चरक संहितासे प्रमेह पिडिका के उपद्रव कहते है

तृषा कास मांसका संकोच मोह हुचकी मद ज्वर विसर्प औ मर्मस्थानौका संरोध ये पिडिकौ के उपद्रव है ॥ १० ॥

अथ ग्रंथांतरा त्स्त्रीणां प्रमेहा भाव माह

रजः प्रसेका न्नारीणां मासि मासि विशुध्यति ॥
कृत्स्नं शरीरं दोषाश्च नप्रमेहं त्यतः स्त्रियः ॥ ११ ॥

अब ग्रंथांतरसे स्त्रियौंके प्रमेहका अभाव कहते है जैसे कि स्त्रियौ के महीने २ रज निकसता है इसवास्ते इनका शरीर औ दोषोंकी शुद्धि होती है तिसीसे स्त्रियौके प्रमेह नही होते है ॥ ११ ॥

प्रमेह निवृत्ति लक्षणमाह सुश्रुतात्

प्रमेहिणां यदा मूत्र मना विल मपिच्छिलं ॥
विशदं कटुतिक्तंच तदारोग्यं प्रचक्षते ॥ १२ ॥

इतिरुग्वि निश्चये मधुमेहप्रमेह पिडिका निदानं

अब प्रमेह निवृतिके लक्षण सुश्रुतसे कहते है जब प्रमेहवालोका

मूत्र गदला औ चिकना नहोइ तथा स्वच्छ कडुआ औतीखा होइ तव जानना कि प्रमेह निवृत्तभया ॥ १२ ॥ इति श्रीमत्सु० सी० आ० पं० रघुनाथ प्रसाद विर० रु० प्रमेहादिनिदान प्रकाशः

अथ मेदो निदानं

अव्यायामदिवास्वप्न श्लेष्मलाहारसेविनः॥
मधुरोन्नरसः प्रायः स्नेहान्मेदोविवर्द्धयेत्॥ १॥
मेदसावृत मार्गत्वात्पुष्यंत्यन्येन धातवः॥
मेदस्तुचीयते यस्मादशक्तः सर्वकर्मसु॥ २॥

मेदका निदान औ संप्राप्ती कहते है मेहनत के करनेसे दिनके सोनेसे औ कफ कारक पदार्थके खाने से मेदवढता है तथा जो अन्नरस मधुरहे सो वहुधा करिके मेदका वढावने वाला हैं इत्यादिक कारणसे मेद वढता है ॥ १ ॥ जव मनुष्यके मेद वढिगया तव सर्व धातुनके मार्ग वंदहो जाते है इसवास्ते दूसरी धातु पुटिनही होती है औ मेदयाने चर्वी वढती रहती है इसते मनुष्य सर्व कार्योंमे असक्त होता है ॥ २ ॥

प्रवृद्धस्य मेदस्यो उपद्रवा नाह

क्षुद्रश्वास तृषा मोह स्वप्न क्रथन सादनैः॥
युक्तः क्षुत्स्वेद दौर्गंध्यै रल्प प्राणोल्प मैथुनः॥ ३॥
मेदस्तु सर्व भूताना मुदरे ष्वस्थि पुस्थितं॥
अतएवोदरे वृद्धिः प्रायो मेदस्विनो भवेत्॥ ४॥

वढे भये मेदके उपद्रव कहे है जैसे कि क्षुद्र श्वास पिपास मोह निद्राधिक्य अकस्मात्च्छास का अवरोध शरीरकी शिथिलता छीक

पसीना औ दुर्गंधता करिके युक्त हुया भया मनुष्य अल्पशक्ति अल्प मैथुन चेष्टा वाला होता है ॥ ३ ॥ मेद याने चरबी यह बहुधा करिके मनुष्यौके पेटहीमैर है इसबास्ते मेदरोगी का पेट बहुधा बढिजाता है ॥ ४ ॥

तस्याति वृद्धस्य वन्हेर्दीप्तता माह

मेदसा वृतमार्गत्वा द्वायुः कोष्ठे विशेषतः ॥
चरन् संधुक्षय त्यग्नि माहारं शोषयत्यपि ॥ ५ ॥
तस्मात्स शीघ्रं जरय त्याहारं चापिकांक्षति ॥
विकारांश्चाश्नुते घोरान् कांश्चि त्काल व्यतिक्रमात् ॥ ६
एता वुपद्रवकरौ विशेषा दग्निमारुतौ
एतौहि दहतः स्थूलं वनं दावानलो यथा ॥ ७ ॥

अब उसमेदके बढने से जो जठराग्निकी प्रदीप्तता होती है सो कहते है मेदयहवायु संचारके मार्गोंको रोकिलेता है तिसी सबब से बहु वायुकोठेमे रहा भया जठराग्निको विशेष प्रदीप्त करता है आहारको भी शोषण करता हैं ॥ ५ ॥ इसवास्ते आहार जलद पचता है सो भोजनकी ईछा होती है अैसे कछुकाळपर्यंत व्यतिक्रम होनेसे और भी घोरविकारोको उत्पन्न करता है ॥ ६ ॥ इहां विशेष करिके अग्नि औ वायु एदोनो घोर उपद्रव कारक होते है औ जैसै वनको दावानल भस्मकरता है तेसे ये दोनो स्थूल मनुष्यका नाशकरते है ॥ ७ ॥

मेदस्य तीव संवृद्धे सहसैवा निलादयः ॥
विकारान् दारुणान् रुत्वा नाशयंत्या शुजीवितं ॥ ८ ॥

जब मेद अति वढि आता है तब वातादिक दोष अकस्मात् घोर उपद्रवको पेदाकरे है औ प्राणनाश करते है ॥ ८ ॥

अति स्थूल लक्षणं

मेदो मांसाति वृद्धत्वा च्चलस्फि गुदर स्तनः ॥
अयथो पचयो त्साहो नरोति स्थूल उच्यते ॥ ९ ॥

इति मेद निदानं

जिस मनुष्यके मेद अति बढजाता है उसके कूले पेट औ स्तन येथलथलाते रहते है औ वृद्धि तथा उत्साह यथा योग्यनही रहते है याने मोटातौ हद्दसे जादा औ शक्तिरहित है जाता है उसको स्थूल कहते है ॥ ९ ॥ इतिपं० र० प्र० कृ० रुग्विनिश्चय दीपिकायां मेदो निदान प्रकाशः

अथोदर निदानं

रोगाः सर्वेपि मंदेग्नौ सुतरा मुदराणिच ॥
अजीर्णा न्मलिनै श्चान्नै र्जायंते मलसंचयात् ॥ १ ॥

यद्यपि सर्वरोग जठराग्निकी मंदतासे ही होते हैं परंतु उदर रोग तो निरंतर मंदाग्निहीसे होत है तथा अजीर्ण मलीन अन्न याने क्षीर मत्स्यादिक विरुद्ध आहार औमलके संचय होनेसे भी उदर रोगहोते है ॥ १ ॥

संप्राप्तिमाह

रुध्वास्वेदांबु वाहीनि दोषाः स्रोतांसि संचिताः ॥
प्राणा ग्न्यपाना न्संदूष्य जनयंत्युदरं नृणां ॥ २ ॥

संप्राप्ति कहते है जैसेकि संचित भए वातादि दोष पसीना औ

जलके वहने वाली नसोंका अवरोध करिके प्राण वायु जठराग्नि औ अपान वायुको दूषित करिके उदर रोगको उत्पन्न करते है ॥ २ ॥

सामान्य लक्षणं

आध्मानं गमने ऽशक्तिर्दौर्बल्यं दुर्बलाग्निता ॥
शोथः सदन मंगानां संगो वात पुरीषयोः ॥
दाह स्तंद्रा च सर्वेषु जठरेषु भवंति हि ॥ ३ ॥

सामान्य लक्षण पेटका फूलना चलने मे अशक्ति दुर्बलता अग्निमांघ सूजन अंगशिथिल अधोवायु औ मलका अवरोध दाह तंद्रा याने झपकीयेलछन सर्व उदररोगमे होते हैं ॥ ३ ॥

संख्यामाह

पृथ ग्दोषै समस्तै श्च प्लीह बद्धक्षतो दकैः ॥
संभवं त्युदरा ण्यष्टौ तेषां लिंगं पृथक्श्टणु ॥ ४ ॥

संख्या कहते हैं

जैसे कि न्यारे न्यारे वातादिक दोषोकरिके तीन त्रिदोषसे चोथा प्लीहासे पांचवा बद्ध गुदोदर छटा क्षतोदर सातवा औ आठवा जलोदर एसे आठ उदररोग होते है अब इनके न्यारे न्यारे लछण कहता हौ सो सुनो ॥ ४ ॥

अथ वातोदर लक्षणं

तत्र वातोदरे शोथः पाणि पान्नाभि कुक्षिषु ॥
कुक्षि पार्श्वोदर कटि पृष्टरुक् पर्व भेदनं ॥ ५ ॥
शूष्कका सोंग मर्दोधो गुरुता मलसंग्रहः ॥

श्यावारुणत्वगादित्व मकस्माद्वृद्धि ह्रासवत्॥ ६॥
सतोदभेद मुदरं तनुकृष्ण शिराततं॥
आध्मानं दृतिवच्छब्द माहतं प्रकरोतिच॥
वायुश्चातिसरुक् शब्दो विचरे त्सर्वतो गतिः॥ ७॥

वातोदरमे हाथ पाउ नाभि औ कोखिनमे सूजन तथा कोषि पसुरी पेट कमर औ पीठमे पीडा संधिनमे फूटने सरीषा दरद॥ ५॥ सूखी खासी देहका ऐंडना नाभिके नीचेका भाग भारी मालूम-होना मलका संग्रह त्वचा इत्यादिकौका रंग धूसर वा लाल अकस्मात् पेटका घटना वढना॥ ६॥ औ सुईछेदने सरीषी तथा फोडने सरीषी अंगमे पीडा तथा बारीक औ काली नसौ करिके व्याप्त औ उस फूले भए पेटको बजाने से मसक सरीका शब्दहोइ औ उसमे पीडा तथा शब्दयुक्त वायु सर्वत्र फिरता रहता है॥ ७॥

पित्तोदर लक्षणं

पित्तोदरे ज्वरो मूर्छादाह स्तृट् कटुका स्यता॥
भ्रमो तिसारः पीतत्वं त्वगा दावुदरं हरित्॥ ८॥
पीत ताम्र शिरा नद्धं सस्वेदं सोष्म दह्यते॥
धूमायते मृदुस्पर्शं क्षिप्र पाकं प्रदूयते॥ ९॥

पित्तोदरमे ज्वर मूर्छा दाह पियास मुखका कडूपना भ्रम अति-सार त्वचा इत्यादिकमे पिलाइ पेट हरा॥ ८॥ तथा पीली औ लाल-नसो करिके व्याप्त पसीना औ गरमी से उदर जलता भया मालूम परे धूमा इधिका आना छूने मे कोमल जलदी पाक दशाको प्राप्त होता है याने जलोदरत्वको प्राप्तहोता है तथा दुःखना है॥ ९॥

कफोदर लक्षणं

श्लेष्मोदरें गसदनं स्वाप स्वयथु गौरवं निद्रो॥
त्क्लेशोऽरुचिः श्वासः कासः भुक्क त्वगादिता॥ १०॥
उदरं स्तिमितं स्निग्धं श्रक्कराजी तितं महत्॥
चिराभि वृद्धि कठिनं शीतस्पर्शं गुरुस्थिरं॥ ११॥

कफोदर मे अंग शिथिल अंगोको सूय आना सूजन शरीर जड नीदजादा उबकाइ अरुचि श्वास कास त्वचा॥ १०॥ इत्यादिक सफेद पेटभीजासा मालूम होना औ चिकना सफेद नसौकरके व्याप्त औ वडा देरसे गुडगुड शब्दादिकौका होना इत्यादिक लच्छन होते है॥ ११॥

संनिपातोदर लक्षणं

स्त्रियो न्नपानं नखरोम मूत्र बिडार्त वैर्युक्त मसाधु वृत्ताः॥ यस्मै प्रयछं त्यरयो गरांश्च दुष्टांवु दूषी विष सेवनाद्वा॥ १२॥ तेनाशु रक्तं कुपिता श्च दोषाः कुर्युः सुघोरं जठरंत्रिलिंगं॥ तच्छीत वाते भृश दुर्दिनेच विशेषतः कुप्यति दह्यतेच॥ १३॥ स चातुरो मूर्च्छति हि प्रसक्तं पांडुः कृशः शुष्यति तृष्णयाच॥दूष्योदरं कीर्तित मेतदेव प्लीहोदरं कीर्तय तो निबोध॥ १४॥

संनिपातोदर लक्षण

जिस मनुष्यको दुष्टस्त्रिया वशी करणके वास्ते आपके वाकिसी पशूके नखरोम मूत्र विष्टा किंवा आर्तव याने जो रजस्वला होनेसे योनि द्वारा रक्त पडता है तिसकरके युक्त अन्नपानादिक खिलादेती है अथवा जिसको शत्रु लोग विषदेते है याने संयोगज विष जे सै सम भाग मधु घृत इत्यादिक देते है किंवा दुष्ट जलजे सै वर्षाकालमे नदी का जल इत्यादिक किंवा दूषीत विष याने जो विष पुराना होनेसे अथवा अग्नि इत्यादिकके योगसे किंवा विषघ्न औषधके योगसे अल्प वीर्य भयाहोइ उसके सेवनसे ॥१२॥ रक्त औकुपित वातादिक दोष त्रिलिंग याने त्रिदोष चिन्ह युक्त उदररोग को उत्पन्न करतेहै सो उदररोग शीत समेमे औ वायुके समेमे तथा दुर्दिनमे याने जिस दिनमे मेघ करिके सूर्य नदीषते होइ उसदिन मे विशेष करिके कोप को प्राप्त होइहे औ जलनभी पडतीहै॥ १३॥ वह रोगी निरंतर मूर्छित होता है तथा पांडुवर्णी कृस औतृषा करिके सूषता रहता है इस संनिपातोदर को दूष्योदर भी कहते है सो मेनेकहा अब प्लीहोदर कहता हो सोसुनो ॥ १४ ॥

प्लीहोदरलक्षणम्

विदाह्य भिष्यंदिरतस्य जंतोः प्रदुष्ट मत्यर्थ मसृक्कफश्च॥ प्लिहाभि वृद्धिं कुरुतः प्रवृद्धौ प्लिहोत्थ मे तज्जठरं वदंति॥ १५॥ तद्वाम पार्श्वे परि वृद्धि मेति विशेषतः सीदति चातुरोत्र॥मंदज्वराग्निः कफ पित्त लिंगै रुपद्रुतः क्षीण बलो तिपांडुः॥ १६॥

जो मनुष्य दाहकारक औ कफकारक पदार्थनका अतिसेवन करताहै उसके रक्त औ कफ अतिशय दूषितहोके वे बढेभए प्लीहाकी वृद्धिकरते हे उसको प्लीहोदर कहते है ॥ १५ ॥ सो प्लीहा वाई पसुरीके पास वढताहै इसको ताप तिल्ली प्लीहा तथा ववट एसे मनुष्य भाषामे कहते है इसतें मनुष्य विशेष करिके दुषी होताहै इसरोगमे ज्वर औ जठराग्नि ये दोनौ मंदरहते है औ कफ तथा रोगी कफ पित्तके लच्छनो करके पीडितरहता है वलछीन औ पांडुवर्ण रहताहै ॥ १६ ॥

अथ प्लीहोदरस्यैव भेदयकृदाल्युदरमाह

सव्यान्यपार्श्वे यकृति प्रदुष्टे ज्ञेयं यकृद्दाल्युदरं तदेव ॥ १७ ॥ उदावर्तरुजानाहैर्मोहतृड्दहनज्वरैः ॥ गौरवारुचिकाठिन्यैर्विद्यात्तत्रमलान् क्रमात् ॥ १८ ॥

अव उसी प्लीहोदरका भेद यकृदाल्युदर कहते है जैसेकि प्लीहा वा येतरफ होता है तैसेही दाहिनी तरफ यकृतकेदूषित होनेसे यकृद्दाल्युदरहोतो है इसमे ॥ १७ ॥ उदावर्त शूल औ पेटके फूलनेसेवात कोप जानना मोह तृषा दाह औज्वरसे पित्तकोप तथा सरीरकी गरुवाई अरुचि औ पेटकी कठिनतासे कफकोपत जानना ॥ १८ ॥

वद्ध गुदोदर लक्षणं

यस्यांत्रमन्नैरुपलेपिभिर्वा वालाश्मभिर्वापिहितं यथावत् ॥ संचीयते तस्यमलः सदोषः शनैशनैसंकरवच्च नाड्यां ॥ १९ ॥ निरुध्यते तस्यगुदे

पुरीषं निरेतिकृच्छादपि चाल्पमल्पं॥ हृन्नाभिम ध्येपरिवृद्धिमेति तस्योदरं बद्धगुदं वदंति॥ २०॥

बद्धगुदोदर लच्छन

जिस मनुष्यकी आंते पड लेपी याने चिकट पदार्थ अथवा शाकादिक किंवा जो अन्नमे छोटे छोटे कंकर होते है उनके अंनके संगमे आंतो मेजाइके रहनेसे आंतढकिजाता है तव तीनो वातादिदोष करिके जैसे झाड लगाते लगातेभी थोडा थोडा॥ १९॥ कूरा फर्कट अकठा ह्वैके आंतकी नाडीमे जमिजाता है ओ थोडा थोडा वडेक ष्टसे कुछ वाहेर निकलताहै औ हृदै तथा नाभिके वीचमेपेट वढि जाताहै उसकौ वद्धगुदोदर कहते है॥ २०॥

अथ क्षतोदरलक्षणं

शल्यं तथान्नोपहितं यदंत्रंभुक्तं भिनत्यागतम न्यथा वा॥तस्मात्क्षतांत्रात्सलिलप्रकाशः स्रावः स्रवेद्वै गुदतस्तु भूयः॥ २१॥ नाभेरधश्चोदर मेति वृद्धिं निस्तुघते दाल्यतिचातिमात्रं एतत्परि स्राव्युदरं प्रदिष्टं दकोदरं कीर्तयतो निबोध॥ २२॥

क्षतोदरलछन

शल्ययाने कांटा झाडकाकंकर इत्यादिक अंनके संगमे पक्काशयमे प्रामहोके आंतमे तिरछाह्वै के छेदकरिदेताहै उस क्षतयुक्त आंतसे पानी सरीखा गुदाके रस्ते वहुत सा स्रावहोताहै॥ २१॥ ओनाभीके नीचे पेट वढिजाताहै तथा शूल औचीरने सरीखी पीडा होती है इसको कोई परिस्रावी उदरभी कहते है अव दकोदर कहते सोसुनो॥ २२॥

जलोदरमाह

यः स्नेह पीतो प्यनु वासितोवा वांतोविरक्तोप्यथ वा निरूढः॥ पिबेज्जलं शीतल माशुतस्य स्रोतांसि दूष्यंति हित द्वहानि॥ २३ ॥ स्नेहो पलिप्ते ष्वथवा पितेषु दकोदरं पूर्ववदभ्यु पैति॥स्निग्धं महत्त त्परि वृत्त नाभि समाततं पूर्णमिवांबुनाच॥ २४॥ य थादतिःक्षुभ्यति कंपते चशब्दायते चापि दकोदरं तत्॥ २५॥

जलोदरलक्षन

जो मनुष्य स्नेह पानकरिके अथवा अनु वासन वस्तिलेके वमन किये पर रेचन लिये पर औ निरूढ वस्ति लिये पर सीतल जल पिये तो उस मनुष्यकी जलवहने वाली नाडिया दूषित होके ॥ २३ ॥ अथ- वा उनमे चिकटई लपिटके क्रम क्रमसे वढिके प्रथम कहे भए प्रमा- णसे दकोदर उत्पन्न होता है सोचिकना बडा तथा नाभिके चौफेर बहुत ऊंचा मालूम होता है ॥ २४ ॥ सो जैसे जलकी भरीभई मस कमे पानी इधर उधर हालता रहताहै औ उसके हलनेसे शब्द होता है तेसे पेटमे भीहोता है इसको दकोदर याने जलोदर कहते है ॥ २५ ॥

साध्यासाध्यत्वमाह

जन्मनै वो दरंसर्वं प्रायः कृच्छ्रतमं विदुः॥
बलिनस्तदजातांबु यत्नसाध्यं नवोत्थितं ॥ २६ ॥

पक्षाद्बद्ध गुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं तथा॥
प्रायो भवत्य भावाय छिद्रांत्रंचोदरं नृणां ॥ २७ ॥
सूनाक्षं कुटिलोपस्थ मुपक्लिन्न तनुत्वचं॥
वलशोणित मांसाग्नि परिक्षीणं च वर्जयेत् ॥ २८ ॥
पार्श्वभंगान्नविद्वेषशोथातीसारपीडितं ॥
विविक्तंचाप्युदरिणंपूर्यमाणंविवर्जयेत् ॥ २९ ॥

इतिउदरनिदानं

अवसाध्या साध्यलक्षण

जैसेकि आठौ उदररोग जबसे उत्पन्न होते है तहा जो रोगी वलवानहोइ औ पेटमे पानी नभयो होई तथा नया होइतो यत्नकरनेसे कदापि सिद्धिहोइ ॥ २६ ॥ तथा वद्ध गुदोदर एकपक्ष याने पंद्रहदिन पीछे औ जिस उदरमे जल उत्पन्न भया वे सर्व तथा क्षतोदर ये सर्व मृत्युहीके वास्ते उत्पन्न होते है ॥ २७ ॥ जिसके नेत्रो पर सूजन लिंग टेढा होगया होइ तथा पेटकी त्वचा ऊपर औदी औ पतली होगई होइ औ वल रक्त मांस तथा जठराग्नि जिसके क्षीण भएहोइ वह रोगी असाध्य है ॥ २८ ॥ जिसकी पसुरी टेढी ह्वैगई होइ अन्न नभावे तथा सोथ अतीसार करक पीडित होइ तथा रेचन लियेपीछे फिरि भरि आवे वह रोगी असाध्य औषध नकरनी ॥ २९ ॥

इति श्रीमत्सु० सीतारामा त्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद कृतायां रुग्विनिश्चय दीपिकाया मुदर निदान प्रकाशः ॥

अथशोथनिदानं

रक्त पित्त कफा न्वायुर्दुष्टोदुष्टान्वहिः शिराः ॥

नीत्वा रुद्धगति स्तैर्हि कुर्यात्वङ्मांससंश्रयं ॥
उत्सेधंसंहतं शोथं तमाहु र्निचया दतः॥ १॥

आपके कोपकारक कार णौंकरिके दूषित भया हुआ वायु दूषित भये हुये रक्तपित्त औ कफ इनको बाहेरकी नसौमे प्राप्त करता है उहां उन रक्तपित कफोकरिके रुकाभया त्वचा औ मांसमे उँचा औ कठिन शोथ उत्पन्न करता हैं सोत्रिदोस संग्रहसे होता है॥ १ ॥

संख्यामाह

सर्वहेतु बिशेषैस्तु रूपभेदान्न वात्मकं ॥
दोषैः पृथग्द्वयैः सर्वै रभि घाता द्विषादपि॥ २ ॥

सर्व शोथकारण

विशेषौ करिके रूपभेदसे नव प्रकारका है तहा न्यारे न्यारे वातादिक दोषो करिके तीन द्वंद्वज तीन सन्निपाति एक चोटलगनेसे एक औ विषसे एक ऐसे नव प्रकारके ॥ २ ॥

पूर्वरूपं

तत्पूर्वरूपं दवथुः शिरायामो गगौरवं॥ ३ ॥

उस शोथके उत्पन्न समयमे दवथु याने नेत्रा दिकौंमे तिव्र दाह दवथुके लक्षण चरक कहते हैं कि दवथु श्चक्षुरादिभ्य स्तीव्र उष्मा प्रवर्तनं ॥ ३ ॥

अर्थ जो नेत्रादिकौंसे तीव्र जलनिका निकलना उसको दवथु कहते है॥ सो दवथु औ नसोका तनना तथा जिस अंगसे शोथ होने को होता है सोभारी है जाता है॥ ३ ॥

कारणमाह

शुध्यामया भक्त कृशा बलानां क्षाराम्ल तीक्ष्णो ष्ण गुरूपसेवा॥दध्याम मृच्छा कविरोधि दुष्टगरो पसृष्टान्न निषेवणंच ॥ ४ ॥ अर्शांस्य चेष्टा वपुष स्यशुद्धि मर्मोपघातो विषमा प्रसूतिः॥ मिथ्योप चारः परिकर्मणांचनिजस्यहेतुः श्वयथोः प्रदिष्टः॥ ५ ॥

शुद्धि जो वमन विरेचनादिक आमय जो पांडु इत्यादिक रोग अभक्त जो उपवासादिक इनकरिके हैं कृशबल जिनौका उनको क्षार खटाई तीक्ष्ण गरम भारी दही कच्चे पदार्थ मृत्तिका शाक तथा बिरोधी दूषित औ बिषयुक्त अन्नौंका सेवन ॥ ४ ॥ तथा अर्शरोग बहुत स्थिर रहोना देहकी असुद्धता मर्मस्थानमे चोटका लगना अकालमे गर्भ पा- तादिक तथा वमनादिकौंका मिथ्या उपचार ये वातादिक शौथोके कारण हैं ॥ ५ ॥

शोथस्यसामान्यलक्षणं

सगौरवं स्यादनवस्थितत्वं सोत्सेध मूष्माथ शि रातनुत्वं॥सलोमहर्षश्च विवर्णताचसामान्यलिंगं श्वयथोः प्रदिष्टं ॥ ६ ॥

शरीरकी भारी चित्तकी विकलता उँची सूजन संताप नसौंका बारीक हो जाना रोमांचहोना देहका रंगबेरंग ये सोथके सामान्य लक्षण हे ॥ ६ ॥

वातशोथलक्षण०

चरस्तनु त्वक्परुषो ऽरुणोऽसितः प्रसुप्ति हर्षार्त्ति

युतो निमित्ततः॥ प्रशाम्यति प्रो न्नमति प्रपीडितो दिवाबलीच श्ववथुः समीरणात् ॥ ७ ॥

जो सोथ वायु से होता है सोचर याने एक ठिकानेसे दुसरे ठि-काने जातारहै चर्मपतला कर्कस लाल काला छूना मालूम नपरना रोमहर्ष पीडाइन करिके युक्त निमित विनाक भीशांत होय औ कभी बठी जाय दावनेसे दविके फिर उचा उठिआवे औ दिनको जादा जोर करता है ॥ ७ ॥

पित्तजल०

मृदुः सगंधो ऽसित पीत रागवान् भ्रमज्वर स्वेद तृषामदान्वितः॥ यउष्यते स्पर्शरुगक्षि रोगकृत् पित्तस्य शोफो भृश दाह पाकवान्॥ ८ ॥

पित्त ज शोथ स्पर्षमे कोमल गंध युक्त काले पीले रंगयुक्त तथा भ्रम ज्वर पसीना पि आस औ मद युक्त शोथमे दाह छूनेसे दुखे नेत्रोका लाल करने वाला तथा अतिशय दाह औ पाक युक्त होता है ॥ ८ ॥

कफजमाह०

गुरुः स्थिरः पांडुर रोचकान्वितः प्रसेक निद्रावमि वन्हिमांद्य कृत्॥ सकृच्छ्र जन्मप्रशमोनिपीडितो नचोन्नमेद्रा त्रिवली कफात्मकः ॥ ९ ॥

जो शोथ कफजन्य होता है सोभारी स्थिर पांडु वर्ण औ अरुचि युक्त तथा लारका गिरना निद्रा वां ति औ अग्निमांद्य काकरने वाला

ओ वह पैदाभी कठिनतासे होता है औ शांत भीकष्ट सेहोता है दाब-नेसे जैसाका तैसा दबिकेरहेजात है ॥ औ रात्रीको जादा जोर करता है ॥ ९ ॥

संसर्गजमाह०

निदानाकृतिसंसर्गाच्छ्वयथुः स्याद्विदोषजः ॥ सर्वाकृतिः सन्निपाताच्छोफो व्यामिश्र लक्षणः ॥ १० ॥

जो शोथ दो दोदोसोके चिन्ह युक्त होय सो द्विदोषज औ सर्व लक्षण युक्त होय उसको त्रिदोष जानना ॥ १० ॥

अभिघातजल०

अभिघातेनसस्त्रादि च्छेदभेदक्षतादिभिः ॥ हिमानिलोदध्यनिलैर्भल्लात कपिकच्छुजैः ॥ ११ ॥ रसैः शूकैश्च संस्पर्शाच्छ्वयथुः स्याद्विसर्पवान् ॥ भृशोष्णालोहिताभाशः प्रायशः पित्त लक्षणः ॥ १२ ॥

जो शोथ अभिघात जन्य होता है सो चोटके लगनेसे औ सस्त्रादिको केछेदनेसे वाकटने से औ नाडी ब्रनादिक जखमोसे होता है तथा ठंढी किंवा समुद्रकी हवा लगने से अथवा भिलवे कातेलके लगनेसे ॥ ११ ॥ ऐसेही केवाचके फलके उपरके रूवा लगनेसे शोथ होता है सो चारोतरफको फैलता है औ अतिगरम तथा लालरंग का होता है औ बहुधा पित्तशोथ के लक्षनौ करिके युक्त होता है ॥ १२॥

विषजलक्षणं

विषजः सविषःप्राणि परि सर्पण मूत्रणात् ॥

दंष्ट्रा दंत नखा घाता द्विष प्राणि नामपि ॥ १३ ॥
विण्मूत्र शुक्रो पहत मलव द्वस्तु संकरात् ॥
विष वृक्षा निलस्पर्शा द्गरयोगा वचूर्णनात् ॥ १४ ॥
मृदुश्च लोऽवलंबीच शीघ्रो दाहरुजा करः ॥ १५ ॥

जो शोथ विषजन्य होता है सो विषवाले प्राणीके शरीर पर फिरनेसे मूतने से तथा निर्विष जो मनुष्यादिक तिनके भी दाढ दांत औ नखके लगनेसे तथा सविष प्राणनीके ॥ १३ ॥ विष्टामूत्र औ वीर्य के स्पर्शसे दूषित औ मल युक्त ऐसी वस्तूके संसर्गसे तथा विषवाले वृक्षके वायूके स्पर्शसे तथा जो संयोग जन्य विष है उनके शरीरमे लगानेसे कोमल एक अस्थान छोडीके अन्यत्र होनेवाला औ नीचेको लटकने वाला ॥ १४ ॥ मृदुचलने वाला शीघ्रउत्पन्न होने वाला औ दाह तथा पीडाकारक होता है ॥ १५ ॥

अथ यत्र स्थितादोषा यत्रशोथं कुर्वंति तदाह

दोषाः श्वयथु मूर्ध्वं हि कुर्वंत्या माशय स्थिताः ॥
पक्वाशयस्था मध्येतु वर्च्चः स्थान गता स्त्वधः ॥
कृत्स्न देह मनु प्राप्ताः कुर्युः सर्व सरं तथा ॥ १६ ॥

अब जहा जहा दोष रहिके जहा जहा शोथको पैदा करते है सो कहते है जैसेकी वातादिक दोष आमाशयमे प्राप्त है के उपरके भागमे सोथकरते है पक्वाशयमे रहिके मध्यमे मलाशयमे रहिके नीचेके भागमे औ जो सर्व देहमे वातादिक दोष प्राप्त भये है वैदोष सर्व शरीरमे शोथको उत्पन्न करते है ॥ १६ ॥

अथ कष्टसाध्या दिकभेदानाह

योमध्य देशे श्वयथुः सकष्टः सर्वग श्वयः॥
अर्द्धांगे ऽरिष्ट भूतः स्या द्यश्चोर्ध्वं परि सर्पति॥ १७॥
श्वासः पिपासा दौर्बल्यं छर्दिश्च ज्वर एवच॥
यस्यचान्ने रुचि र्नास्ति शोथिनं तं विवर्जयेत्॥ १८॥
अनन्यो पद्रवकृतः शोथः पाद समुत्थितः॥
पुरुषं हंति नारींतु मुखजो गुह्यजोद्वयं॥
नवो ऽनुपद्रवः शोथः साध्यो ऽसाध्य पुरेरित इति॥ १९॥

अब कष्ट साध्यादिक भेद कहते है

जो शोथ मध्यशरीरमे अथवा सब शरीरमे भया होय सोकष्ट साध्य है जो एक बाजू आधे अंगमे होय वा पुरुषके उपरको फैले सो अतिकष्ट है॥ १७॥ जिस शोथ रोगीके श्वास पियास दुर्बलता उलटी औ ज्वर होय तथा अन्नपर रुची नहोय वह असाध्य है उसकी औषधि नकरना॥ १८॥ जो शोथ अतीसार पांडु इत्यादिकोंके उपद्रव विन याने याने आपहीके निदानसे उत्पन्न भया होय सो जो पुरुप के पायनसे मुखपर जाइतो पुरुषको मारै औ जोइस्त्रीके मुखसे पगोंको प्राप्त होय तौ स्त्री को मारै तथा गुह्यस्थान याने लिंग योनी गुदादिकोका शोथ दोनौका नाशक होता है तथा जो शोथ नवीन औ उपद्रव रहित है सो साध्य औ इसते अन्यजो प्रथम कहा सो असाध्य है इसके उपद्रव वही हैं जो जो श्वास इत्यादिक अठारहें श्लोकमे कहे हैं॥ १९॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामलज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां शोथ निदान प्रकाशः

अथांड वृद्धिनिदानं तत्र संप्राप्ति माह

क्रुद्धोऽनूर्ध्वगति वायुःशोथ शूलकर श्चरन्॥
मुष्कौ वंक्षणतःप्राप्य फलकोशाभि वाहिनीः॥
प्रपीड्य धमनी र्वृद्धिं करोति फलकोशयोः॥ १॥
दोषास्रमेदो मूत्रांत्रैःसवृद्धिःसप्तधा गदः॥ मूत्रां
त्र जा वप्य निला द्धेतु भूत श्च केवलः॥ २॥

क्रुद्धित औ नीचेको गमनकरने वाला तथा शोथ औ शूलका भी करने वाला ऐसा जो वायु सो स्वस्थान से चलिके जांघके ऊपर पेडूके नीचे एक तरफ की संधिमे ह्वै के अंड कोशमे प्राप्त होता है तहां जो नसैं अंड कोशौंके आधार भूत हैं उनको पीडित करिके अंड को-शौंको वढाता है उसको अंड वृद्धि कहते हैं सोअंड वृद्धिरोग ॥ १॥ वात पित्त कफ रक्त मेद मूत्र औ अंत्र याने आंत इनके भेदसे सात प्र-कारका है इनमे भी जो मूत्रज अंडवृद्धि औ अंत्रवृद्धि येदोनौ वातही से होती हैं परंतु मूत्र औ अंत्रभी हेतु भेद मात्र हैं॥ २॥

अथ वातादिमेदोः पर्यंतानांवृद्धीनां लक्षणन्याह

वात पूर्ण दृति स्पर्शो रूक्षो वाताद हेतुरुक्॥
पक्को दुंबर संकाशः पित्ताद्दाहो ष्म पाकवान्॥ ३॥
कफा च्छीतो गुरुः स्निग्धः कंडूमा न्कठिनोऽल्परुक्॥
कृष्ण स्फोटावृतःपित्त वृद्धि लिंगश्च रक्तजः॥ ४॥
कफ वन्मेद सो वृद्धि र्मृदु स्तालफलो पमः॥ ५॥

जो अंड वृद्धि वायुसे होता है सो जैसे पवनसे भरीभई मसक

ऐसा हाथ लगाने से मालूम होता है औ रूखा तथा कारण विना पीडा होती है ॥ पित्तज अंड वृद्धि पके गूलरके फलके समान औ दाह उष्णता तथा पाक युक्त होता है ॥ ३ ॥ कफसे ठंडा भारी चिकना खाजयुक्त कठिन औ अल्प पीडायुक्त होता है ॥ रक्तज अंड वृद्धिका ले फोडौ करिके व्याप्त औ पित्त अंड वृद्धिके लक्षण युक्त होता है ॥ ४ ॥ मेदसे जो अंड वृद्धि होता है सो कफ वृद्धि समान कोमल औतालफल तुल्य होता है ॥ ५ ॥

मूत्रज वृद्धिल०

मूत्रधारणशीलस्य मूत्रजः सतुगच्छतः॥
अंभोभिःपूर्णदृतिवत् क्षोभंयाति सरुङ्मृदुः॥
मूत्र कृच्छ्र मधस्तात्तु चलयन् फलकोशयोः॥ ६ ॥

जो मनुष्य मूत्रको रोका करता है उसके मूत्र अंड वृद्धि होता है सोचलते पर जैसे पानीकी भरीभई मसक बोलै तैसे बोलता है औ पीडा युक्त कोमल होता है उससे मूत्रकच्छ कीसी वेदना तथा नीचे कीतरफ हलता रहता है ॥ ६ ॥

अंत्रवृद्धिमाह

वातकोपिभि राहारैःशीततोया वगाहनैः॥
धारणेरणभाराध्व विषमांगप्रवर्त्तनैः ॥ ७॥
क्षोभणैःक्षुभितोऽन्यै श्वक्षुद्रां त्रावयवं यदा॥
पवनो द्विगुणीकृत्य स्वनिवेशा दधोनयेत्॥
कुर्याद्वंक्षण संधिस्थो ग्रंथाभं श्वयथुं तदा॥ ८॥

उपेक्ष माणस्य चमुष्क वृद्धि माध्मान रुकस्तं भवतीं सवायुः ॥ प्रपीडितोंतः स्वन वान् प्रयाति प्रध्मा पयन्नेतिपुन श्चमुक्तः॥ ९ ॥

अंत्र वृद्धि कँहते है

जो आहार वायुके कोपकराने वाले हैं उनके सेवन करने से तथा मल मूत्रादिकाके बेगरो कनेसे औ मलादिकोके वेगविना जबरद-स्तीसे निकालनेके उपाय करनेसे जादा भारके उठानेसे रस्ताचलनेसे तथा बाके टेठे ह्वै के चलने उठाने बैठने इत्यादिकौंसे ॥ ७ ॥ तथा औ-रभी वातकोप करने वाले पदार्थोंके सेवन करनेसे कुपित भयाहु-आ वायू छोटी आंतोके एक भागमे प्रवेश करिके उसको दुगुण करि-के उसके स्थानसे नीकोचे लैके बंक्षणको जांघ औ कमरकी संधी उसकी संधिमे प्राप्त ह्वै के गांठिसरीखी सूजन उत्पन्न करता है ॥ ८ ॥ फिरजो उसको उपाय नकियातो अंडकोशमे प्राप्त ह्वै के पेटफूलन शूल औ मल मूत्रके अवरोध युक्त अंडवृद्धि करता हैं फिर जव उसको युक्ति से दबावै तव घुल घुल शब्द करता भया पेटमे जाता है औ छोडनेसे फिरभी अंड कोशको फुलाता भया उसीजगह प्राप्त होता है इहा भोज लीखते है की आंतको दुगुण करिके वायु वंक्षण-मेंछे जाता है औ उहासे पीडा युक्त अंडकोशमे प्राप्त होता है ॥ सो-श्लोकयथा ॥ अंत्रं द्विगुण मादाय जंतोर्नयति वंक्षणं ॥ वंक्षणात्त ह्रुजा युक्तं फलकोशं प्रपद्यते ॥ ९ ॥

इतिप्रमाण

असाध्यमाह

यस्यांत्राऽवयवा श्लेषा न्मुष्कयोर्वातसंचयात् ॥

अंत्र वृद्धिरसाध्योऽसौ वात वृद्धि समाकृतिः इति०
॥ १० ॥

असाध्य लक्षण कहते है

जैसेकी जिसपुरुषके वायूके संचयसे आंतोके कुछ भाग संयोगसे अंडकोशमे प्राप्त है औ वात वृद्धिके समान लक्षण होते है सो अंत्र वृद्धि असाध्य होता है ॥ १० ॥

इति० वर्ध्मनिदानं

अथ सामीप्या दत्रैव वर्ध्म निदान माह तंत्रांतरात्

अत्यभिष्यंदि गुर्वन्न शुष्क पूत्या मि षाशनात् ॥
करोति ग्रंथिवच्छोथं दो षोवं क्षण संधिषु ॥
ज्वर शूलांग सादाढ्यं तंव र्ध्मेति विनिर्दिशेत् ॥ १ ॥
इति रुग्विनिश्चिये वृद्धि वर्ध्म निदानं

अंड वृद्धिके समीपही वर्ध्म रोग होता है

इसवास्ते इसी जगह उसका भीनिदान कहते है इसको लोगवद कहते हैं ॥ जोपदार्थ अति शय कफकारक दही इत्यादिक तिनके अति सेवनसे तथा भारी अन्न तथा सूखा दुर्गंध युक्त ऐसे मांसके खानेसे वायु वंक्षणस्थानमे गाठि सरीखा शोथ उत्पन्न करता है उससे ज्वर शूल औ अंगसियल होता है इसको वर्ध्म कहते है ॥ १ ॥ इति श्रीम त्सुकल सीतारामात्मज पंडितरघुनाथ प्रकाश विरचितायां ग्विनिश्चय दीपिकायां वृद्धिवर्ध्म निदान प्रकाशः

अथगलगंड निदानं

निबद्धः श्वयथुर्यस्य मुष्कवल्लं बतेगले ॥

महान्वायदिवा ह्रस्वो गलगंडं तमादिशेत्॥ १ ॥

जिस मनुष्यके दृढ अथवा अचल शोथ गलेमे अंडकोश तुल्य गलेमे लटके सो बडा होय किवा छोटा होय उसको गलगंड कहते है ॥ १ ॥

संप्राप्तिमाह

वातः कफश्चापि गलेप्रदुष्टौमन्येस माश्रित्यत थैवमेदः ॥ कुर्वंतिगंडं क्रमशः स्वलिंगैः समन्वितं तंग लगं डमाहुः ॥ २ ॥

बात औ कफये गलेके स्थानमे दूषित भये हुये दोनो बाजू गरदनमे रहिके तैसाही मेद भीयेतीनोक्रमसे आप आपके चिन्हो युक्त गलगंड उत्पन्न करते है याने अंडकोश सरीखी गाठि उत्पन्न करते हैं उसको गलगंड कहते है ॥ २ ॥

वातिकगलगंड लक्षणं

तो दान्वितः कृष्णशिरावनद्धः श्यावारुणो वा पवनात्मकस्तु ॥ पारुष्ययुक्त श्चिर वृद्धिपाकी यदृच्छया पाकमिया त्कदाचित् ॥ वैरस्य मास्यस्य चतस्य जंतोर्भवेत्तथा तालुगल प्रशोषः ॥ ३ ॥

जो वायुसे गलगंड होता है सोसुईछे दने सरीखी पीडा युक्त औ काली नसोकरिके व्याप्त रंग उसका धूसर अथवा लाल रुक्ष युक्त देरमे बढता औ पकता है तथा कदाचित् आपही पकिजाता है इसते

मुखकी बिरसता औ तालू तथा गला सूखता रहता है ॥ ३ ॥

कफज गलगंड लक्षणं

स्थिरः सवर्णो ऽगुरुरुग्रकंडूः शीतोमहांश्चापि कफात्मकस्तु ॥ चिराभि वृद्धिं भजते चिराद्वा प्रपच्यते मंदरुजः कदाचित् ॥ ४ ॥ माधुर्यमास्यस्य चतेस्यजंतो भवेत्तथातालु गलप्रलेपः ॥ ५ ॥

जोगलगंड कफसे होता है सो अचल रंगमे जैसागलका चर्म होय वैसाहीरहेता है थोडी पीडाखाज युक्त ठंडा बडा बहोत दिनोमे वठने औ पकने वाला औ पाक कालमे भी अल्प पीडा युक्त तथा ॥४ ॥ मुख मिठा रह उस रोगीके तालू औ गलेमे कफलपटा सा रहेता है

मेदोजमाह

स्निग्धो गुरुः पांडुरनिष्टगंधो मेदोभवःस्वल्परुजो ऽतिकंडूः ॥ प्रलंबते ऽलावुवदल्पमूलो देहानुरूपः क्षयवृद्धि युक्तः ॥ स्निग्धास्य तातस्य भवेच्च जंतोर्गले ऽनुशब्दं कुरुतेचनित्यं ॥ ६ ॥

जोगलगंड मेदसे होता है सोचिकना भारीपिला सलिये सफेद रंगका अल्प पीडायुक्त ॥ ५ ॥ मूलमे पतला औतूंबी सरीखा लटकता रहता है तथा देहके अनुरूप क्षय औ वृद्धि युक्त होता है याने देहकी मोटाइ से मोठा औ कृशता से छोटा होता है ॥ तथा उस मनुष्यका मुख चिकना रहेता है औ निरंतर उसका शब्द गलेहीमे बोलता है ॥ ६ ॥

असाध्य ल०

कृच्छ्रा च्छ्वसंतं मृदुसर्वगात्रं संवत्सरातीत मरोच कार्तं ॥ क्षीणंच वैद्यो गलगंडजुष्टं भिन्नस्वरं चापिविवर्जयेत्तु ॥ ७॥

इति रुग्विनिश्चये गलगंड निदानं

असाध्य ल०

जिसको बडेकष्टसे श्वास आवे औ सर्व अंगको मल व्है गया होय एक वर्षव्यतीत भया होय अरुची करिके पीडित होय तथा क्षीन भया होय औ स्वरभंग भया होय ऐसे गलगंड वालेको त्यागना योग्य है ॥ ७ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां गलगंड निदान प्रकाशः

गंडमाला लक्षणं

कर्कंधु कोलामलकप्रमाणैः कक्षांसमन्या गलवंक्षणेषु ॥ मेदः कफाभ्यां चिरमंदपाकैः स्याद्गंडमाला बहुभिश्चगंडैः॥ १ ॥

अब गंडमाला का निदान कहते हैं जोमेद औ कफ करिके कांखकंधे गरदन गला औ वंक्षण याने जांघ औ कमरकी संधी इन स्थानोंमे बडे बेरके प्रमान तथा छोटेबेरके प्रमान अथवा आवलाके प्रमान औ बहुत दिनोमे धीरे धीरे पकने वाले ऐसी बहुत गांठे होती है उनको गंडमाला कहते है ॥ १ ॥

अथ गंडमाला या एवावस्था भेद मपची माह

तेग्रंथयः केचिदवाप्तपाकाः स्रवंति नश्यंति भवंति

चान्ये॥ कालानुबंधं चिरमादधाति सैवापचीति प्रवदंति केचित्॥ साध्यास्मृता पीनस पार्श्वशूल कासज्वर च्छर्दियुता त्वसाध्या॥ २॥

इति रुग्विनिश्चये गंडमाला निदानम्

गंडमाला हीका अवस्था भेद अपची कहते है॥ वैजो गंडमाला की गांठे ते कोई पकिके बहती है॥ अच्छी होती है तथा औरभी नवी उत्पन्न होती है ऐसेही बहोत कालपर्यंत रहनेसे कोइ आचार्य उसको अपची कहते है वह साध्य है परंतु जो पीनस पसुरीकी शूल कास ज्वर औ वांति युक्त होय तो असाध्य जानना॥ २॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसादविरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां गंडमाला निदान प्रकाशः॥

अथ ग्रंथि निदानं

वातादयो मांस मसृक् प्रदुष्टाः संदुष्य मेदश्च तथा शिराश्च॥ वृत्तोन्नतं विग्रथितंतु शोथं कुर्वं त्यतो ग्रंथि रिति प्रदिष्टः॥ १॥

अब ग्रंथिका निदान कहतेहै॥

अतिशय दुष्टभये वातादिक दोष मांस रक्त मेद औ नसौको दुषि करिकेगोलि उँचागाँठि साबधा भयाशोथको उत्पन्न करतेहै ईसीसे उस को ग्रंथि कहतेहै॥ १॥

तत्रवातजग्रंथिमाह०॥

आयम्यते वृश्चति तुद्यतेच प्रत्यस्यते मथ्यति भि

यतेच ॥ कृष्णो मृदुर्बस्तिरि वाततश्च भिन्नः श्रवे च्चानिलजो स्रमच्छं ॥ २ ॥

बातजन्य ग्रंथिमे जैसे कोई उसको खैचिके बठाताहोय औ काटता होय छेदता होय उठायके फेकताहो मथताहोय औ फोडताहोय ऐसी पीडाहोतीहै तथा वह गाँठि काली कोमल तथा मसक सरीखी भरी भई फूटनेसे स्वच्छ रक्त निकलता है ॥ २ ॥

पित्तजमाह

दंदह्यते धूम्यति चूष्यतेच पापच्यते प्रज्वलतीव चापि ॥ रक्तः सपीतोऽप्यथवाऽपिपित्ताद्भिन्नः स्रवेदुष्टमती वचास्रं ॥ ३ ॥

पित्तज ग्रंथि अतिशय जलतीहै औ धुँआनिकलना सरीखा मालूम होताहै तथा तूंबी लगायके चूँसने सरीखी पीडाहोतीहै औ अतिसय पकने सरीखी पीडाहोतीहै तथा जलने सरीखी पीडाहोतीहै फूटने से पिलास लिए लाल मवाद अथवा अतिदुष्ट रक्तनिकलताहै॥३॥

कफजमाह

शीतोऽविवर्णोऽल्परुजोऽतिकंडूः पाषाणवत्संहननोपपन्नः ॥ चिराभिवृद्धिश्च कफप्रकोपाद्भिन्नःस्रवेच्छुक्लघनं चपूयम् ॥ ४ ॥

कफजन्य ग्रंथि यह ठंढा औदेहके रंगके समान रंग पीडा थोडी खाज अधिक तथा पत्थर सरीखा वडा बहुत कालसे पकने औ बढनेवाला तथा फूटने से सफेद औगाढा पीप निकलताहै ॥४॥

मेदोजन्यमाह

शरीर वृद्धि क्षय वृद्धिहानिः स्निग्धोमहान्कंडुयुतो ऽल्परुक्च ॥ मेदःकृतेगच्छति चात्रभिन्ने पिण्याकसर्पिः प्रतिमं चमेदः ॥ ५ ॥

मेदसे जो उत्पन्न भया ग्रंथि सोशरीरके मोटेहोने से बढताहै औ दुर्बलेहोने से घटताहै तथा चिकना बडा खाजयुक्त थोडीपीडा युक्त तथा इसके फूटनेसे पीना याने खरी औघृत सदृश मेदनी कलतोहै ॥ ५ ॥

शिराजन्यमाह०

व्यायामजातै रबलस्यतैस्तै राक्षिप्यवायुर्हि शिराप्रतानम् ॥ संकुच्य संपीड्य विशोष्य चापि ग्रंथिं करोत्युन्नत माशुवृत्तम् ॥ ६ ॥

शिराजन्य ग्रंथिकहतेहै ॥ जो मनुष्य निर्बलहैवै जो बलके काम करतेहै तौ उनकामैसे कुपित भयाहुआ वायु शिराजाल यानेनसों केजालको संकोचित तथा पीडित तथा सुखायकरिकें उँचा औगोलग्रंथिको उत्पन्न करताहै ॥ ६ ॥

साध्या साध्यमाह

ग्रंथिः शिराजःसतुकृच्छ्र साध्यो भवेद्यदिस्यात्सरुजश्चलश्च ॥ अरुक्सएवाप्य चलो महांश्चमर्मोत्थित श्चापिविवर्जनीयः ॥ ७ ॥

इतिरुग्विनिश्चये ग्रंथिनिदानं ॥

साध्यासाध्यलक्षणकहतेहै ॥

जो कदाचित् शिरा जन्य ग्रंथि पीडा सहित चंचलहोय तौ कष्ट साध्य औ जोपीडा रहित अचल तथा बडा औमर्म स्थानमे उत्पन्न भयाहोय सो असाध्य होताहै ॥ ७ ॥

इतिश्रीमसुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदिपिकायांग्रंथिनिदानप्रकाशः ॥

॥ अथार्बुदमाह तत्रतत्संप्राप्तिमाह ॥

गात्रप्रदेशे क्वचिदेवदोषाः समुच्छ्रिता मांस मसृक्प्रदूष्य ॥ वृत्तं मृदुं मंदरुजं महांत मनल्पमूलं चिरवृद्ध्यपाकं ॥ कुर्वंति मांसोच्छ्रय मत्यगाधं तदर्बुदं शास्त्रविदोवदंति ॥ १ ॥

अब अर्बुद कहतेहै तँहाँ प्रथम उसकी संप्राप्ति कहतेहै ॥

शरीरमे कोई सी जगह भी दूषित भये वातादिकदोष मांस और रक्तको दूषितकरिके गोलकोमल अल्पपीडा युक्त बडा तथा गहिरे मूलवाला देरसे बनने औ पकने वालाऐसामांकाउँचावकरते है उसको वैद्य शास्त्रके जानने वाले अर्बुद कहते है ॥ १ ॥

संख्यादमाह॰

वातेन पित्तेन कफेनचापि मांसेन रक्तेन चमेदसाच ॥ यज्जायतेतस्य चलक्षणानि ग्रंथैः समानानि सदाभवंति ॥ २ ॥

संख्या कहतेहै जो अर्बुद वात १ पित्त २ कफ ३ मांस ४ रक्त

५ मेद ६ करिके उत्पन्नहोताहै उसकेलक्षनसर्वकालमे याने उत्पत्त्या दिककालमे ग्रंथिके समानहोताहै ॥ १ ॥

रक्तार्बुदमाह॰

दोषः प्रदुष्टो रुधिरं शिराश्च संकुच्य संपीड्य गत स्त्वपाकं ॥ सास्रावमुन्नह्यति मांस पिंडं मांसांकु रै राचित माशुवृद्धं ॥ ३

करोत्यजस्रं रुधिर प्रवृति मसाध्य मेतद्रुधिरात्म कंतु ॥ रक्तक्षयो पद्रव पीडितत्वा त्पांडु र्भवे त्सो ऽर्बुद पीडितस्तु ॥ ४ ॥

रक्तार्बुदकहतेहै ॥

दोषजो पित्तसो स्वकारणो करिके दूषित भयाहुवा रक्त औ नसौ संकुचित औ संपीडित करिके किंचित् पाकको प्राप्तहैके स्रावयुक्त मांस के पिडको उँचा करताहै फिरिमांसके अंकुरोकरिके बढा भया निरंतर रक्तकी प्रवृति करता है ॥ ३ ॥ यह रक्तार्बुद असाध्य है इसते रक्तक्षयके जो उपद्रव सुश्रुतादिक ग्रंथोमे कहते है उनकरिके उस अर्बुद पीडित मनुष्यपीडित होता है इसीते पांडुवर्ण होता है ॥ ४ ॥

अथमां सार्बुद संप्राप्तिमाह

मुष्टिप्रहारा दिभि रर्दितेंगे मांसं प्रदुष्टं जनये द्विशो थं ॥ अवेदनं स्निग्ध मनन्य वर्ण मपाक मश्मोप म मप्रचाल्यं ॥ ५ ॥ प्रदुष्ट मांसस्य नरस्य गाढ मे तद्भवे न्मांसप रायणस्य ॥ मांसार्बुदं त्वेतदसाध्य

मुक्तं साध्येष्वपी मानि विवर्जयेत्तु॥६॥संप्रस्तुतं म मंसु यच्च जातं स्रोतः स्तुवायच्च भवेद् चाल्यं॥७॥

अबमांसार्बुद कहते है ॥

जो अंग मुष्टिका इत्यादिको करिके पीडित होता ह उस जगह कामांस दूषित भयाहुआशोथको उत्पन्न करता है ॥ ५ ॥ वह सोथ पीडा रहित चिकना देहके रंगके समान पाक रहित] पत्थर सरीखा कठिन औ अचल होता है ॥ ६ ॥ यह अर्बुद जिसका मांस दूषित भयाहोय औ वह मांसका अतिसेवन करता होय उसीके होता है यह मांसार्बुद असाध्य कहा है तथा जोसाध्य कहैहे उनमे भी जो इनके आगे जो लक्षण कहेगे उन लक्षण करिके युक्त होय उनको त्यागना वै ये जैसेकी जो अर्बुद मुरतार हता होय औ जो मर्मस्था नमे भया होय वानसादिकोमे भयाहोय औ जो अचल होय वह भी चिकित्सायोग्यनही है ॥. ७ ॥

अन्यच्चा साध्य मर्बुदमाह

यज्जायते ऽन्यत् खलु पूर्वजाते ज्ञेयं तदध्यर्बुदमर्बुदज्ञैः॥ यद्द्वंद्व जातं युगपत् क्रमाद्वा द्विरर्बुदं तच्च भवेद साध्यम्॥८॥

अब और भी असाध्य कहते है जो अर्बुद प्रथम भयेहुये अर्बुद की जगह पर भया होय उसको अध्यर्बुद कहते है तथा एकदम वाक्रमसे जो अर्बुद द्विदोष करिके उत्पन्न होय उसको द्विरर्बुद कहते है वह असाध्य है ॥ ८ ॥

अथार्बुदानां पाका भावे हेतुमाह

नपाक मायांति कफाधिकत्वा न्मेदो वहुत्वा च्च विषेषतस्तु॥दोष्यस्थिरत्वा द्ग्रथनाच तेषां सर्वार्बुदा न्येव निसर्गतस्तु॥ ९॥

इति रुग्विनिश्चये अर्बुद निदानं

जिसवास्ते अर्बुद पकते नही है सो कारण कहते है जैसेकी इन अर्बुदोमे कफ औ मेदकी अधिकतासे तथा दोषौकि भी स्थिरता है औ उनमे ग्रंथि भी रहती है इसवास्ते औ स्वभावसे भी नही पकते है जो रक्त औ पित्त सबंधी है वे भी देर से पकते है॥ ९॥ इति श्रीमत्शु कलसीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकाया मर्बुद निदान प्रकाशः

अथ श्लीपद निदानं

मेदो मांसाश्रयं शोफं पादयोः श्लीपदं भवेत्॥ स्वलिंग दर्शिभि र्दोषै स्त्रिधास्य च्च कफोत्तरं॥ १॥

आपके लक्षणोके प्रगटकरने वाले जो वातादिक दोष तिन करि- के मेद औ मांसके आश्रित पायोमे शोफ उत्पन्न होता है उसको श्ली पद कहते है उसमे कफ प्रधानहै औ दोषाधिक तासे तीन प्रकारका होता है॥ १॥

संप्राप्ति माह

यः सज्वरो वंक्षणजो भृशार्तिःशोथो नृणां पादग तः क्रमेण॥ तच्छ्लीपदं स्यात्करकर्णनेत्र शिश्नौष्ठ नासास्व पिकेचिदाहुः॥ २॥

संप्राप्ति कहते है

जो शोथयाने सूजन प्रथम अंडसंधीमे ज्वरके साथ उत्पन्न होता है औ उसमे पीडा अतिशय होती है औ वह क्रमक्रमसे पांयोमे उतरि जाता है उसको श्लीपद कहते है कोइक आचार्य कहते है की यह श्लीपद हाथ कान नेत्र लिगना सिकामेभी होता है ॥ २ ॥

बातज माह

वातजं कृष्ण रूक्षंच स्फुटितं तीव्रवेदनं ॥
अनिमित्त रुजं तस्य बहुशो ज्वर एवच ॥ ३ ॥

जो श्लीपद बातज है सोकाला रूखा फूटा फुटा सा तीव्र वेदना युक्त औ निमित्त बिना पीडा करता है तथा उस श्लीपदीको ज्वर अतिशय आता है ॥ ३ ॥

पित्तजमाह

पित्तजं पीत संकाशं दाह ज्वर युतं मृदु

पित्तज श्लीपद पीला औ दाह तथा ज्वर युक्त कोमल होता है

कफजमाह

श्लैष्मिकं स्निग्धवर्णं चश्वेत पांडुगुरु स्थिरं ॥ ४ ॥

कफजन्य श्लीपद चिकना सफेद तथा पांडु वर्ण औ स्थिर याने अचल होता है ॥ ४ ॥

त्रिदोष जमाह

वल्मीक मिव संजातं कंटकै रुपचीयते ॥
सर्वात्मकं महत्तच्च वर्जनीयंविशेषतः ॥ ५ ॥

जो श्लीपद बांबी सरीखा उंचा निचा कंटको से बढा भया होता

है सो सर्व दोष जन्य वर्ज नीय याने असाध्य है ॥ ५ ॥

अथ श्लीपदे षुकफस्य व्यभिचारेण प्राधान्य माह

त्रीण्येतान्यपि जानीयात् श्लीपदानि कफोच्छ्रयात्॥
गुरुत्वं च महत्वंच यस्मा न्नास्तिकफाद्दिना॥ ६॥

अब श्लीपदोमे निरंतर कफकी प्रधानता कहते है

जो वातादि जनित तीन्यो न्यारे न्यारे श्लीपद कहे वै भी कफहीकी वृद्धियुक्त हैं कारण कि जो इनमे गरु अई औ बडा पन है सो कफ बिना होता नही ॥ ६ ॥

अथश्लीपदसंभवेहेतुभूतान्देशानाह ॥

पुराणोदक भूयिष्ठाः सर्वर्तुषुच शीतलाः॥
येदेशा स्तेषुजायंते श्लीपदानिविशेषतः ॥ ७॥

अबश्लीपदहोनेमेकारणभूतदेशकहतेहै

जैसेकी जिनदेसोमे पुराना पानी बहुत रहता है औ वे सर्व रुतुन मे ठंडे रहते है उनही देषमे श्लीपद विशेष करिके होता है ॥ ७ ॥

अथसाध्यलक्षणं ॥

यत् श्लेष्मलाहार विहारजातंपुंसः प्रकृत्यापि कफात्मकस्य॥ सास्राव मत्युन्नत सर्व लिंगं सकंडुरं श्लेष्मयुतं विवर्ज्यं॥ ८॥

इति रुग्विनिश्चये श्लीपद निदानं

अब असाध्य लक्षण कहते है

जो श्ली पद मधुरा दिक कफ कारक आहार औ दिवा स्वप्नादिक विहारोसे उत्पन्न भया होय तथा रोगीकी भी कफ प्रकृति होय औ

उस श्लीपदसे पानीसा झरता होय तथा अति उंचा होय औ सर्व दोषोके चिन्ह युक्त होय तथा जिसमे खाज आती होय सो कफ युक्त वर्ज्य याने असाध्य होता है ॥ ८ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां श्लीपद निदान प्रकाशः

अथ विद्रधि निदानं

त्वग्रक्तमांस मेदांसि प्रदुष्यास्थि समाश्रितः ॥
दोषाः शोफं शनै घोरं जनयंत्युच्छ्रिताभृशं ॥ १
महामूलं रुजावंतं वृत्तं वाप्यथवायतं ॥
सविद्रधिरिति ख्यातो विज्ञेयः षड्विधश्चसः ॥ २ ॥
पृथग्दोषैः समस्तैश्च क्षतेनाप्यस्त्रजातथा ॥
षणा मपिहिं तेषांतु लक्षणानि प्रचक्षते ॥ ३ ॥

अब विद्रधिका निदान कहते है स्वकारणों करिके कुपित भये हुये वातादिक दोष त्वचा मांस औ मेद इनको दूषित करिके हाडमे रहे भये धीरे धीरे॥ १॥ गहेरी मूलवाला औ पीडा युक्त गोल अथवा लंवा ऐसा शोथ उत्पन्न करता है उसको विद्रधि कहते है सो विद्रधि छ प्रकारका है ॥ २॥ जैसे की वातज १ पित्तज २ कफज ३ सन्निपातज ४ क्षतज ५ औ रक्तज ६ सो अब इनके लक्षण कहते है ॥ ३ ॥

अथ वात पित्त कफ सन्निपात जानांविद्रधिनां क्रमेण लक्षणानि

कृष्णो रुणो वा विषमो भृश मत्यर्थ वेदनः ॥
चित्रोत्थान प्रपाकश्च विद्रधि वातसंभवः ॥ ४ ॥

पक्कोदुंबर संकाशःश्यावोवा ज्वरदाहवान्॥
क्षिप्रोत्थान प्रपाकश्च विद्रधिः पित्तसंभवः॥ ५॥
शरावसदृशः पांडुःशीतः स्निग्धो ऽल्पवेदनः॥
चिरोत्थान प्रपाकश्च सकंडूश्च कफोत्थितः॥ ६॥
तनुपीत सितश्चैषा मास्रावाः क्रमशः स्मृताः॥
नानावर्ण रुजा स्रावोघटालो विषमो महान्॥
विषमंपच्यते चापि विद्रधिः सान्निपातिकः॥ ७॥

अब वात पित्त कफ औ सन्निपातज विद्रधि नके क्रमसे लक्षण कहते है

जो विद्रधि लाल अथवा काला होता है तथा विषमयाने कभी बडा कभी छोटा हुआ करता है औ अतिशय पीडा युक्त रहता है तथा जिसका बढना पकना भी नाना प्रकारका होता है वह वात विद्रधि ॥ ४ ॥ जो विद्रधि पके गूलरके फलके समान अथवा कलास लिये पीला ज्वर दाह युक्त तथा शीघ्रही बढने औ पकने वाला सो विद्रधि पित्तज जानना ॥ ५ ॥ जो विद्रधि शरवाके आकार पांडुवर्ण ठंढा चिकना अल्पपीडा वाला तथा देरसे बढने औ पकने वाला कंडु युक्त सो कफ संभव जानना ॥ ६ ॥ इनमे वात जसे पतला पीवब होता है पित्तजसे पीला औ कफसे सफेद पीव बहता है सन्निपात ज विद्रधिसे नानाप्रकार की पीडा युक्त औ नाना प्रकारके पीवका बहना तथा वह घडा सरीखा उचा तथा विषम घटना औ पकना उसका होता है ॥ ७ ॥

अथा भि घातज स्यागंतो विंद्रधेः संप्राप्ति पूर्वकं लक्षणं

तै स्तै भावै रभिहिते क्षतेचापथ्यकारिणः॥

क्षतोष्मा वायु विस्तृतः सरक्तं पित्तमीरयेत्॥८॥

ज्वर स्तृष्णा च दाहश्च जायते तस्यदेहिनः॥

आगंतु विद्रधि स्त्वेषः पित्तविद्रधिलक्षणः॥ ९॥

अब अभिघात ज आगंतु विद्रधिकी संप्राप्ति पूर्वक लक्षण कहते है तैस्तै र्भावैः याने लाठी पत्थर शस्त्र इत्यादिकोकी चोंटलगे किंवा घावलगे उस समय जो कुपथ्य करै उसके उस क्षतकी गरमी वायु करिके वढाइ भइ रक्त औ पित्तको ॥ ८ ॥ कुपित्त करता है तब इसके ज्वर तृसा औ दाह तथा पित्त विद्रधि लक्षण युक्त विद्रधि होता है ॥ ९ ॥

अथ रक्त जमाह

कृष्णा स्फोटावृतः श्याव स्तीव्रदाह रुजाज्वरः॥

पित्तविद्रधि लिंगस्तु रक्तविद्रधि रुच्यते॥१०॥

अब रक्तज विद्रधि कहतेहै जो विद्रधि काले फफोलो करिके घेरा भया तथा धूसरवर्ण तीव्र दाह पीडा औ ज्वर युक्त तथा पित्त विद्रधि के लक्षण युक्त होय सो रक्तज ऐसा जानना ॥ १० ॥

अधिष्ठान विशेषेण लिंग विशेषं साध्यतां च बोध यितु मंत विंद्रधी नाह

पृथक् संभूयवा दोषाःकुपिता गुल्मरुपिणः॥

वल्मीकव त्समुन्नद्ध मंतः कुर्वंति विद्रधिं॥११॥

अब अधिष्ठान विशेष करिके चिन्ह विशेष औ साध्यता ज नावनेके वास्ते अंतर्बिद्रधि नको कहते हैं॥ न्यारे न्यारे अथवा सर्व मिलिके वातादिक दोष कुपित भयेहु ये गुल्म रूपी औ बांबी सरीखे कोठेके अंदर बिद्रधिनको करते है॥ ११॥

अथांत विंद्राधीनां स्थानानी विशेषेण लिंगानि चाह

गुदेवस्ति मुखे नाभ्यां कुक्षौ वंक्षण पोस्तथा॥
वृक्कयोः प्लीन्हि यकृति हृदये क्लो म्निवाप्यथ॥ १२॥
एषामुक्तानि लिंगानि बाह्यविद्रधिलक्षणैः॥
अधिष्ठान विशेषे णलक्षणानिनिबोधमे॥ १३॥
गुदे वातनिरोधस्तु बस्तौ कृच्छ्राल्प मूत्रता॥
नाभ्यां हिक्का तथाटोपः कुक्षौ मारुतकोपनं॥ १४॥
कटीपृष्ट ग्रहस्तीव्रो वंक्षणोत्थेतु विद्रधौ॥
वृक्कयोः पार्श्वसंकोचः प्लीन्हयुच्छ्रसाऽवरोधनं॥ १५॥
सर्वांग प्रग्रह स्तीव्रो हृदिकासश्च जायते॥
श्वासो यकृति हिक्काच क्लोम्निपेपीयतेपयः॥ १६॥

अब अंतर्विद्रधिके स्थान औ स्थान विशेष करिके उनके लक्षण कहते हैं

अंत विंद्रधि यह गुदापेडू नाभी कोखि पट्टा गुरदा प्लीहा यकृत हृदय औ क्लोम इन ठिकानोमे होता है॥ १२॥ इनके लक्षण जो वातादिक दोष निमित्त बाह्य विद्रधिनके कहेवे सेही हैं परंतु स्थान विशेषसे लक्षण कहते है सोसुनो॥ १३॥ गुदामे विद्रधि होनेसे अधो

वायुका अवरोध होता है पेडूमे होनेसे बडेकष्ट से थोडा थोडा मूत्र उतरता है नाभीमे होनेसे हुचकी आती है तथा पीडा युक्त पेट गुड-गुडाता है कोखमे होनेसे वायुका कोप होता है ॥ १४ ॥ पट्टेकें अंदर होनेसे कमर औ पीठ जकडि जाती है गुरदेमे होनेसे पसुरियां संकुचित होती हैं प्लीहा मे होनेसे उच्छ्वास रुकिके निकसता हैं ॥ १५ ॥ हृद-यमे होनेसे सर्व अंगका जकडना औ खासी यकृतमे होनेसे श्वास औ हुचकी क्लोम जो तृसा स्थान उसमे होनेसे वार वार जलपीने की इच्छा होती हैं ॥ १६ ॥

अथै तेषांस्राव निर्गम माह॰

नाभे रुपरिजाः पक्का यांत्यूर्ध्वमितरेत्वधः॥
अधः स्रुतेषु जीवेत्स स्रुते षूर्ध्वं नजीवति ॥ १७॥

अब इनके फुटनेसे पीव निकसनेके मार्गज कहते है जैसेकी जो विद्रधि नाभीके उपर होती है उनके पकिके फूटनेसे पीव मुखकी रा-हसे जाता है तथा नाभीके नीचे वालोंका गुदाकी मार्गसे जाता है तथा जो नाभी हीमे होता है उसका पीव दोनोतर्फसे निकरी सकता है तहां जौ गुदाकी राहसे निकरे तो वह मनुष्य जीवे औ मुखमार्ग करिके नि-कसनेसे मरता है अर्थात् नाभीके नीचेके साध्य और उपरके असाध्य है तथा नाभीका वहने के आधीन साध्य औ असाध्य होता है ॥१७॥

अथा ऽन्यच्चसाध्यसाध्या त्वमाह

हृन्नाभि बस्तिवर्ज्याये तेषु भिन्नेषु वाह्यतः॥
जीवे त्कदाचित् पुरुषो नेतरेषुक दाचन॥ १८॥

साध्या विद्रधयः पंच विवर्ज्यः सान्निपातिकः॥
आमपक्क विदग्धत्वं तेपां शोफ वदादिशेत्॥१९॥
आध्मान बद्ध निष्यंदं छर्दि हिक्का तृषान्वितं॥
रुजा श्वास समायुक्तं विद्रधि र्नाशयेन्नरं॥ २०॥

इतिरुग्विनिश्चयेविद्रधिनिदानम्

अब और भी साध्य कहते हैं

जो विद्रधि हृदय नाभी पेडूके सेवाय दूसरे स्थानौमे होती है वै जो बाहेरको फूटेतौ रोगी कदाचित् जीवै तथा जो हृदयादिक स्थानौंकी बाहेरकी तरफ फूटे तो निश्चय मरै॥ १८॥ वातादिक पांच विद्रधी साध्य होते हैं औ सन्निपातिक असाध्य होता है उनका कच्चापन पक्कापन औ विदग्धत्व शोफकी तरह जानना॥ १९॥ जिस मनुष्यका पेटफूलता होय औ मूत्रका अवरोध होय तथा वह वांति हुचकी औ तृषा युक्त होय तथा शूल औ श्वास युक्त होय ऐसे मनुष्यका विद्रधि प्रानही लेता है॥ २०॥ तंत्रांतरमे स्त्रीके स्तन विद्रधि कहा है सो दुग्ध स्तनहीमे होता है इसवास्ते कन्याके नही होता है॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां विद्रधि निदान प्रकाशः

अथव्रणशोथनिदानं

एकदेशोत्थितःशोथो व्रणानां पूर्वलक्षणं॥
षड्विधः स्या त्पृथक् सर्वै र्दोषैश्चा गंतु रक्तजौ॥१॥
शोफाः षडेते विज्ञेयाः प्रागुक्तैः शोफलक्षणैः॥
विशेषःकथ्यते चैषां पक्कापक्क विनिश्चये॥२॥

विषमं पच्यते वातात्पित्तोत्थश्चा चिरंचिरं ॥
कफजपित्तवच्छोफो रक्तागंतु समुद्भवौ ॥ ३॥

अब व्रणशोथ निदान कहते है

शरीरके कोइसेभी एकदेशमे सूजन आता है यह व्रणोका पूर्वरूपजानना सोशोफ छ प्रकारका होता है जैसे वात १ पित्त २ कफ ३ सन्निपातज ४ रक्त ५ आगंतुक ६ जो चोट वेगैरेके लगनेसे होता है ॥ १ ॥ ऐसे ये छ प्रकारके शोफ होते है इनके लक्षण जो प्रथम शोथ निदानमे कहे हैं वैसेही जानना अब इनके पक्व औ अपक्वके निश्चयमे विशेष कहते है ॥ २ ॥ जो शोफ वातज होता है सो विषम पकता है याने कही कोइ ठिकाने पकता है औ कोइठिकाने कच्चा रहता है जैसे आधा चौथाइ पका और कच्चा रहा पित्तज शीघ्र पकता है कफज देरसे पकता है तथा रक्तज औ आगंतुक ये दोनो पित्तज कीतरह सीघ्रपकते हैं ॥ ३ ॥

अथामपच्य मान लक्षणं

मंदोष्मता ऽल्प शोफत्वं काठिन्यं त्वक् सवर्णता ॥
मंदवेदनताचैव शोफाणा मामलक्षणं ॥ ४ ॥
दह्यते दहनेनैव क्षारेणैव च पच्यते ॥
पिपीलिका गणैनै वदश्यते छिद्यतेतथा ॥ ५ ॥
भिद्यते चैव शस्त्रेण दंडेनै वच ताड्यते ॥
पीड्यते पाणिनेवांतः सूचीभि रिवतुद्यते ॥ ६ ॥
शोष चोषो निवर्णः स्यादंगुल्येवाऽवपाट्यते ॥

आसने शयने स्थाने शांतिर्वृश्चिक विद्धवत्॥ ७॥
नगच्छे द्राततःशोफो भवेदाध्मात बस्तिवत्॥
ज्वर स्तृष्णा ऽरुचि श्चैतत्पच्यमानस्य लक्षणं॥ ८॥

अब कच्चे औ पकते भये व्रण शोफोके लक्षण कहते है

जिस शोफमे गरमाई कम औ सूजन भी थोडी कठिनता शोफ का रंग त्वचाके समान पीडाभी कम ये लक्षण कच्चे व्रणशोफके है ऐसा जानना॥ ४॥ अब पच्य मानके याने जो पकने पर आता है

उसके लक्षण कहते हैं

जब व्रणशोथ पकने लगता है तब जैसे अग्निसे जलै तैसी जलन होती है तथा क्षारसे पकने सदृश जैसे चींटीकाटे तैसे॥ ५॥ तथा छेदने सदृश तथा शस्त्रसे भोकने सदृश दंडसे ताडणे सदृश हाथसे अंदर दबाने सदृश सुई छेदने सदृश ॥ ६॥ तथा शोथके येक देशमे दाह औ चूशसदृश पीडा होती है तथा रंग फिरिजाता हैं अंगुलीसे फाडने सदृश पीडा होती है इत्यादिक पीडा करिके बैठनेमे औ सोनेमे तथा घर इत्यादिकोमे जैसे वीछूकाटै को कही सुखनही होता है तेसे उस कोभी कहीं सुख नही॥७॥ औ वह शोथ फूलिके भरी भई मसक सदृश होता है तथा ज्वर पियास अरुचि यै उपद्रव होते है॥ ८॥

॥ अथपक्वावस्थस्यलक्षणं॥

वेदनोपशमः शोफो लोहितो वाल्पवेदनः॥
प्रादुर्भावो वलीनांच तोदः कंडू र्मुहुर्मुहुः॥ ९॥
उपद्रवानांप्रशमो निम्नता स्फुटनं त्वचः॥
वस्ता विवां वुसंचारः स्याच्छोथें गुलिपीडिते॥ १०॥

पूयश्च पीडयत्येक मंतमंते च पीडिते॥
भक्ता कांक्षाभवेच्चै तच्छोफानां पक्क लक्षणं॥ ११॥

अब पकेभये व्रण शोथके लक्षण कहते है

जब व्रण शोथ अच्छीतरहसे पकिजाता है तब पीडाकी शांति शोफ पडना तथा वारंवार ॥ ९ ॥ सुई छेदने सरीखी पीडा औ खाज उपद्रवनकी शांति बीचमे गडहा परना त्वचा काफटना जब शोफको अंगुलीसे दबावे जब जैसे मसकदावनेसे उसमे पानी फिरै तैसे पीव ॥ १० ॥ उसमे एक तरफ जायके पीडा करता है औ अन्नपर इच्छा होती है ॥ ११ ॥

अथैक दोषारब्धे ऽपिशोथे पाककाले त्रिदोष संबंधमाह

नर्तेऽनिलाद्रुग्नविना चपित्तं पाकः कफाच्चापि विना नपूयः॥ तस्माद्धि सर्वेपरिपाककाले पचंति शोफास्त्रिभिरेव दोषैः॥ १२॥

अब कहते हैं की जो शोफ एक दोष जन्य भी हैं तौ भी पाक-कालमे तीनौं दोष करिके पकता है जैसेकी वायू विना पिडानही पित्त विना पाकनही औ कफ विना पीवनही इसवास्ते पाककालमे सर्व सोफ तीनहुं दोष करिके पकते है ॥ १२ ॥

मतांतर माह

कालांतरेणाभ्युदितं तुपित्तं कृत्वावशेवात कफौ प्रसह्य॥ पचत्यतःशोणित मेवपाको मतः परेषां विदुषां द्वितीयः॥ १३॥

अन्यमत कहते हैं

कालांतर करिके बढा भया जो पित्त सो वात औ कफको बलात्कारसे वश करिके रक्तको पचाता है यह अन्य विद्वानोका मत है ॥ १३ ॥

अनिर्हृत पूयस्य दोषं दृष्टांतेनदर्शयन्नाह

कक्षं समासाद्य यथैववन्हि र्वाय्वीरितः सन्दहति प्रसह्य ॥ तथैव पूयोप्य विनिःसृतोहि मांसं शिरा स्नायु मपीह खादेत् ॥ १४ ॥

व्रणशोथके पकनेसे जो पीवन निकारै उसका दोषको दृष्टांत सहित देखाते हैं ॥ जैसे घासके गंजमे प्राप्त भया अग्नि वायुसे प्रज्वलित किया भया उसको बलात्कारसे जलादेता है तैसेही व्रनके पके पर जौ पीव न निकालातो उस जगहके मांसको औ मोटी तथा बारीक नसोको वह पीव खाता है ॥ १४ ॥

अथ व्रणशोथ स्यामपक्कादि ज्ञानाज्ञाने भिष जांगुण दोषा वाह

आमं विदह्यमानंच सम्यक् पक्कंच लक्षणैः ॥ जानीया त्सभवेद्वैद्यः शेषा स्तस्कर वृत्तयः ॥ १५ ॥

यच्छिनत्याम मज्ञाना द्यश्चपक्क मुपेक्षते ॥ श्वपचाविव मंतव्यौ तावनिश्चित कारिणौ ॥ १६ ॥

इति रुग्विनिश्चये व्रणशोथ निदानं

अब व्रण शोथके औ कच्चे औ पकेके जानने औ न जाननेमे वैद्योके गुण दोष कहते है ॥ जो वैद्य व्रण शोथको कच्चा औ पकने

लगा तथा अच्छी तरहसे पका ऐसा लक्षणो करिके जानता है सो वैद्य और सब चोर सरीखे जिविका करने वाले जानना ॥ १५ ॥ जो अज्ञानसे कच्चेको चीरे वा फोरै तथा जो पकेको नफोरै इन दोनौ अविचारियोको चंडाल तुल्यजानना ॥ १६ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीता-रामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां व्रणशोथ निदान प्रकाशः

अथ व्रण निदानं

द्विधा व्रणः परिज्ञेयः शारीरागंतु भेदतः ॥
दोषैराद्य स्तयो रन्यः शस्त्रादिक्षत संभवः ॥ १ ॥

अब व्रणनिदान कहते हैं

शरीर औ आगंतुक इन दो भेदों करिके व्रण दो प्रकारका होता है तिनमे शारीरक वातादिक दोषोंकरिके होता है औ आगंतुक शस्त्रादिको के घावसे होता है ॥ १ ॥

तत्रशारीरेषु वातज व्रण लक्षणं

स्तब्धः कठिन संस्पर्शो मंदस्रावो महारुजः ॥
तुद्यति स्फुटति श्यावो व्रणो मारुत संभवः ॥ २ ॥

जो शारीरक व्रण हैं तिनमे से वातज व्रण अचल छूनेमे कठिन थोडा स्राव पीडा जादा सुईछेदने सरीखी शूल फूटना औ रंगमे धूसर होता है ॥ २ ॥

पित्तजल०

तृष्णा मोह ज्वर क्लेद दाह दुष्टयव दारणैः ॥
व्रणं पित्त कृतं विद्या द्गंधैः स्रावैश्च पूतिकैः ॥ ३ ॥

पित्तज व्रण लक्षण

जिस व्रणमे पियास मोह ज्वर आर्दत्व दाह चमडेका फटना तथा उसका स्राव दुर्गंध युक्त होय सो पित्तज जानना ॥ ३ ॥

कफजल०

बहु पिच्छो गुरुः स्निग्धः स्तिमितो मंदवेदनः ॥
पांडुवर्णोऽल्पसंक्लेदश्चिरपाकी कफव्रणः ॥ ४ ॥

कफज व्रण अति लबलबित भारी चिकना अचल अल्पपीडा युक्त पांडुवर्ण थोडा थोडा ओदा औ बहोत दिनोमे पकता है ॥ ४ ॥

रक्तज लक्षण

रक्तो रक्तस्रुती रक्ता द्वित्रिजः स्यात्तदन्वयैः ॥ ५ ॥

जो व्रण रक्तज होता है सो रक्त वर्ण औ उसमेसे रक्तही वहता रहता है तथा वह रक्तके संबंधसे द्विदोषज औ त्रिदोषज होता है ॥ ५ ॥

सुखसाध्यत्व माह

त्वग्मांसजः सुखेदेशे तरुणस्याऽनुपद्रवः ॥
धीमतोऽभिनवः काले सुखे साध्यः सुखेव्रणः ॥ ६ ॥

सुखसाध्यल०

जो व्रण त्वचा औ मांससे उत्पन्न भया होय तथा मर्मस्थान विना तरुण मनुष्यके उपद्रव रहित औ सुखकालमे याने हेमंत शिशिर औ वसंतमे सो व्रण सुखसाध्य जानना ॥ ६ ॥

कृच्छ्र साध्यासाध्या वाह

गुणै रन्यतमै र्हीनै स्ततः कृच्छ्रो व्रणः स्मृतः ॥

सर्वैर्विहीनो विज्ञेय स्त्वसाध्यो निरुपक्रमः॥ ७॥

कृच्छ्र साध्य औ असाध्य व्रणके लक्षण कहते हैं

जो व्रण सुख साध्य व्रणके कुछ थोडे गुनो करिके हीन होय सो कष्टसाध्य औ जो सर्व गुनो करिके हीन होय सो असाध्य उपाय रहित जानना ॥ ७ ॥

दुष्टव्रणल०

पूति पूयाति दुष्टासृक् स्राव्युत्संगी चिरस्थितिः॥
दुष्ट व्रणोति गंधा दिः शुद्धलिंग विपर्ययः॥ ८॥

जिस व्रणमे सडनेकी दुर्गंध युक्त पीब औ अति दुष्ट रक्त बहता होय तथा ऊँचा होय बहुत दिनरहा होय तथा अतिदुर्गंधादि युक्त औ जो शुद्ध व्रणके लक्षण कहैंगे उनसे उलटे लक्षण युक्त उसको दुष्ट व्रण कहते हैं ॥ ८ ॥

शुद्धव्रणल०

जिव्हातलाभोऽतिमृदुः शुक्लोविगतवेदनः॥
सुव्यवस्थो निरास्रावः शुद्धो व्रणइतिस्मृतः॥ ९॥

जो व्रण जीभके समान अतिकोमल औ जीभहीके समान सुफेद याने न लाल न सफ़ेद साधारण होय वेदना रहित औ सुंदर व्यवस्था युक्त स्राव रहित सो व्रण शुद्ध होता है ॥ ९ ॥

अथ रोहमाणं व्रण लक्षणं

कपोत वर्ण प्रतिमा यस्यांताः क्लेदवर्जिताः॥
स्थिराश्च पीडिका वंतो रोहतीति तमादिशेत्॥ १०॥

जो व्रण भरणे लगा होय उसके लक्षण

जिस व्रणके किनारे कपोत वर्ण याने पांडू औ धूसर रंगके भये होय तथा वहते न होय स्थिर याने वढते भी नहोय तथा उनका किनारे पर खा खासा दीखैं उस व्रणको जानना की यह भरता है ॥१०॥

अथ रूढ व्रण लक्षणं

रूढवर्त्मानम ग्रंथिम सून मरुजं व्रणं ॥
त्वक् सवर्णं समतलं सम्यग्रूढं विनिर्दिशेत् ॥ ११ ॥

जो व्रण भरि आया होता है उसके लक्षण

जिस जखमका वहनाबंद भया होय औ जिसमे गांठे न होय सूजन औ पीडा भी न होय त्वचाके समान रंग शरीरके बरोबर व्है गया होय उसको जानना की यह अच्छीतरह भरि आया है ॥ ११ ॥

अथ रोग विशेषेण व्रणस्य कृच्छ्र साध्य त्वमाह

कुष्ठिनां विषजुष्टानां शोषिणां मधुमेहिनां ॥
व्रणाः कृच्छ्रेण सिध्यंति येषां चापि व्रणे व्रणाः ॥ १२ ॥

अब रोग विशेष करिके व्रण का कष्ट साध्यत्व कहते है ॥ जो कुष्टी है औ जो दूषिविष इत्यादिकरिके पीडित है तथा शोषरोगी मधुमेह वाले औ जिनके व्रणमे व्रण उत्पन्न भये होयं वै उनके व्रणकष्ट साध्य होते है ॥ १२ ॥

अन्यच्च साध्यासाध्यल०

वसामेदोऽथमज्जानं मस्तुलिंगं चयः स्रवेत् ॥
आगंतुजो व्रणः सिद्ध्येन्न सिद्ध्येद्दोषसंभवः ॥ १३ ॥

और भी साध्यासाध्य लक्षण कहते है

जिस व्रणसे वसायाने मांस गत स्नेह याने चरबी निकसै तथा मेद याने चरबी मज्जा जो हाडके भीतरका गूदाम स्तुलिंग जो मस्तकके भीतरका मगज यै जिसमेसे वहते होय वह व्रण जो आगंतुक होय तो कदाचित् अच्छा व्है सके औ जो शरीर संबंधि वातादि दोष जन्य होय तो अच्छा होनेका नही ॥ १३ ॥

अथा साऽध्या नाह

मद्या गुर्वाज्य सुमना पद्मचंदन चंपकैः ॥
सुगंधा दिव्यगंधा श्च मुमूर्षूणां व्रणाः स्मृताः ॥ १४ ॥
येच मर्मस्व संभूता भवंत्य त्यर्थवेदानाः ॥
दह्यंते चांतरत्यर्थं बहिः शीता श्चयेव्रणाः ॥ १५ ॥
दह्यंते बहिरत्यर्थं भवंत्यंतश्चशीतलाः ॥
प्राणमां सक्षयश्वास कासारोचक पिडिताः ॥ १६ ॥
प्रवद्ध पूयरुधिरा व्रणायेषांच मर्मसु ॥
क्रियाभिः सम्य गारब्धा नसिद्ध्यंति चयेयव्रणाः ॥
वर्जयेद पिता न्वैद्यः संरक्षन्नात्मनो यशः ॥ १७ ॥ इति ॥

अब असाध्य व्रण कहते है

जिन व्रणोंमे मदिरा अगरु जाइके फूल कमल फूल चंदन औ चंपा सरीखा तथा दिव्य विलक्षण सुगंध आता होय वै व्रणके वल मनुष्यके मरनेहीके वास्ते उत्पन्न होते हैं ॥ १४ ॥ जो व्रण मर्मस्थानमे तो नही है औ पीडा मर्मस्थान सदृश जादा होती है तथा अंदर

अतिशय जलते हैं औ बाहेर छूनेसे ठंडे मालूम होते हैं ॥ १५ ॥ तथा जो बाहेर छूनेसे अति गरम औ भीतर ठंडे मालूम पडैं तथा वल मांस इनका क्षय औ श्वास कास अरुचि करिके पीडित होय ॥ १६ ॥ जिन व्रणोंमे रक्त औ पीध जादा जाता होय तथा मर्मस्थानमे उत्पन्न भये होय औ जो व्रण विधिवत उपचार करनेसेभी न अच्छे होय उन व्रणोंकी चिकित्सा जो वैद्य यशकी इच्छा करिके नकरै॥ १७॥इति०

अथ आगंतुकव्रणनिदानं

नानाधारमुखैः शस्त्रैर्नानास्थान निपातितैः॥
भवंति नानाकृतयो व्रणास्तां स्तान्निवो धमे॥ १८॥

अब आगंतुक व्रण कहते है

अनेक प्रकारकी है धारै मुख जिनके ऐसे शस्त्रो करिके नाना स्थानोमें नाना प्रकारके व्रण होते है तिनके लक्षण कहते हैं सो जानो ॥ १८ ॥

व्रण प्रकारानाह

छिन्नं भिन्नं तथा विद्धं क्षतं पिच्चितमेवच॥
घृष्टमाहु स्तथाषष्ठं तेषांवक्ष्यामि लक्षणं॥ १९॥

व्रणोंके प्रकार कहते है छिन्न १ भिन्न २ विद्ध ३ क्षत ४ पिच्चित ५ औ घृष्ट ६ ये छ प्रकारके आगंतुक व्रण कहे है अव इनका लक्षण कहैगा ॥ १९ ॥

छिन्न लक्षणं

तिर्यक् छिन्न रुजुर्वापियो व्रणस्त्वायतो भवेत्॥
गात्रस्य पातनं चापि छिन्नंमित्य भिधीयते॥ २०॥

जो व्रण शस्त्रके लगने से तिरछा अथवा सीधा कटे औ लंबा होय तथा जिसमे एकगात्र याने हाथ इत्यादिक कटिके पडिजाय अथवा नपडै उस व्रणको छिन्न कहते है ॥ २० ॥

भिन्न लक्षण०

शक्ति कुंतेषु खड्गाग्र विषाणै राशयोहतः॥
यत्किंचि त्स्रवे त्तद्धि भिन्नलक्षण मुच्यते॥ २१ ॥

बरछी भाला तीर तरवारकी नोंक औ सींग इत्यादिकों करिके जो कोष्ठमे आमाशय इत्यादिक छिदि गया होय औ उसते कुछ थोडासा रक्त वहै उस व्रणको भिन्न कहते है ॥ २१ ॥

यत्र आमाशया दीनां स्थान निर्देशस्तं कोष्ठमाह

स्थाना न्यामाग्नि पक्वान्न मुत्रस्य रुधिरस्यच॥
हृदुंदुकः फुप्फुस श्च कोष्ठ इत्यभिधीयते॥ २२॥

जिस ठिकाने आमासयादिकोंका स्थान है उस कोष्ठको कहते है जहां आम अग्नि पक्वान्न मूत्र औ रक्त इनके स्थान याने आशय है तथा हृदय उदक जो मलके रक्तसे उत्पन्न अंगविशेष फेफसा ये रहते हैं उसको कोष्ठ कहते है ॥ २२ ॥

अथ भिन्नकोष्ठस्य सामान्य लक्षण माह

तस्मिन् भिन्ने रक्तपूर्णे ज्वरोदाह श्चजायते॥
मूत्रमार्ग गुदास्येभ्यो रक्तं घ्राणा च्चगच्छति॥ २३॥
मूर्च्छाश्वास तृषा ध्मान मभक्त च्छंद एवच॥
विण्मूत्र वात संगश्च स्वेदाऽस्रावो ऽक्षिरक्तता॥ २४॥

लोह गंधित्व मास्यस्य गात्रदौ र्गंध्यमेवच ॥
त्हच्छूलं पार्श्वयो श्चापि विशेषं चात्र मेश्टणु ॥ २५॥
आमाशयस्थे रुधिरे रुधिरं छर्दयत्यपि ॥
आध्मानम तिमात्रंच शूलंच भृशदारुणं ॥ २६॥
पक्काशयगते रक्ते रुजा गौरवमेवच ॥
अधः काये विशेषेण शीतताच भवेदिह ॥ २७॥

अब शस्त्रसे छिदे भये कोष्ठके लक्षण कहते है

जो कोठेमे शस्त्रसे छेद होनेसे रक्त उसी कोठेमे भरि रहै तो ज्वर औ दाह होता है ॥ तथा गुदामुख औ नाकसे रक्त वहने लगता है ॥२३॥ तथा मूर्च्छा श्वास तृषा पेटका फूलना अन्नपर अरुचि तथा मलमूत्र अधोवात औ पसीनाका अवरोध नेत्रोंमे ललामी ॥ २४ ॥ मुखमे तपे भये लोहकी सी वास शरीरमे दुर्गंध त्हदय औ पसुरीनमे शूल होता है इहां कुछ विशेष भी कहते है सोसुनौ ॥ २५॥ जो रक्त आमाशयमे जमाहोय तौ उलटीसे रक्त गिरै औ अतिशय पेट फूले तथा अति दारुण शूल होता है ॥ २६॥ जो पक्काशयमें रक्त जमिजाय तो पीडा औ पेटका भारीपन कमरसे नीचे के शरीरमे विशेष करिके ठंढाई रहती है ॥ २७॥

विद्धलक्षणमा०

सूक्ष्मास्य शल्याऽभिहतं यदंगं त्वाशयंविना ॥
उत्तुंडितं निर्गतं च तद्विद्धमिति निर्दिशेत् ॥२८ ॥

बारीक नोंकवाले काँटे इत्यादिकसे आशयके बिना जो अंग

छिदिजाय औ उंचा होगया होय तथा वह काँटा इत्यादिक शल्य निकसि गया होय अथवा न निकसा होय उसको विद्ध कहते है॥२८॥

क्षतल०

नातिच्छिन्नं नातिभिन्न मुभयोर्लक्षणान्वितं ॥
विषमं व्रणमंगे षुतत्क्षतं त्वभिनिर्दिशेत्॥ २९ ॥

जो व्रणन अति कटा होय न छिदा होय तथा दोनों के लक्षणो करिके युक्त होय औ शरीरमे टेढा होय उसको क्षत कहेना ॥ २९ ॥

पिच्चितल०

प्रहार पीडनाभ्यां तुयदंगपृथुतांगतं ॥
सास्थितत्पिच्चि तं विद्या न्मज्जारक्त परिप्लुतां ॥ ३० ॥

जो अंग कुछ पडने वगैरे चोटसे था दबनेसे हाडके सहीत चिपिटा व्है के फैलजाय औ उसमेसे मज्जा जो हाडके भीतरका गूदा औ रक्त निकरने लगै उसको पिच्चित कहते है ॥ ३० ॥

घृष्टल०

घर्षणादभिघाताद्वा यदंगंविगतत्वचं॥
ऊषा स्रावान्वितं तत्तु घृष्टमि त्यभिधीयते ॥ ३१ ॥

जो अंगघसने रगड लगने से अथवा कुछ प्रहारकी चोटलगनेसे चर्म विना व्है जाय तथा ऊषा जो आगि निकलने सरीखी पीडा तथा स्राव जो लासा इत्यादिकका वहेना इन करिके युक्त होय उसको घृष्ट कहते है ॥ ३१ ॥

सशल्य व्रणल०

श्यावं ससोफं पिडिकायुतंच मुहु र्मुहुः षोणित वाहिनं च॥ मृदूद्गतं बुद्बुद तुल्यमांसं व्रणं सशल्यं सहजं वदंति॥ ३२॥

जो व्रण श्याव याने शाक वृक्षके पत्र सदृश रंगका सूजन सहित तथा छोटीछोटी फूंसी सहित औ उसमेसे वारंवार रहि रहिके रक्त निकसता होय तथा कोमल औ पानीके वुल्बुला सरीखा उसपर मांस ऊँचा व्है आया होय तथा सहज याने पीडा युक्त होय उसको सशल्य जानना याने उसमे यह जानना की कंटक इत्यादिक शल्य युक्त है॥ ३२॥

कोष्ठ भेदलक्षणं

त्वचोतीत्य शिरादीनि भित्वा च परिल्हत्यवा॥ कोष्ठे प्रतिष्ठितं शल्यं कुर्या दुक्ता नुपद्रवान्॥ ३३॥

जो शल्य कांटा इत्यादिक सातो त्वचनको भेदन करिके नसोंको भी भेदन करिके वा छोडिके कोठेमे रहिजाय सो प्रथम जो केहे भिन्न कोष्ठके लक्षण वै घोर उपद्रवनको करता है॥ ३३॥

असाध्य कोष्ठ भेद माह०

तत्रां तर्लोहितं पांडु शीत पाद कराननं॥ शीतोच्छ्वासं रक्तनेत्र मानद्धं परिवर्जयेत्॥ ३४॥

जिसके शल्य युक्त कोठेमे रक्त रहिजाय सो पांडुवर्ण होता है औ उस पांय हाथ मुख औ उच्छ्वास शीतल नेत्र लाल औ पेटफूल ता होय उसका त्याग करना याने उसकी औषध न करना॥ ३४॥

अथ मांस संधि शिरा स्नाय्वस्थि मर्मसु पंचसु क्षतेषु सामान्य लक्षणमाह

भ्रमः प्रलापः पतनं प्रमोहो विचेष्टनं ग्लानि रथो ष्णता च ॥ स्रस्तांग तामूर्छन मूर्ध्ववात स्तीव्रारु जो वात कृता श्चतास्ताः ॥ ३५ ॥ मांसोदकाभं रु धिरं चगच्छे त्सर्वेंद्रियार्थो परम स्तथैव ॥ दशार्द्ध संख्ये ष्वपि विक्षतेषु सामान्यतोः सर्वषु लिंगमु क्तं ॥ ३६ ॥

अब मांस संधि शिरा स्नायु औ अस्थि इन पांचौके मर्मस्थान-मे घाव लगनेके सामान्य लक्षण कहते है ॥ भ्रम प्रलाप याने आय वाय वाय बकना गिरि गिरिपडना मोहित होना छट पटाना घबडाना गरमी लगना अंगका सिथिल होना मूर्छा आना डकारोंका आना औ दमफूलना तथा आक्षेपक दंडा पतानादिक वातजन्य पीडा तिनका हो ना॥ ३५ ॥ तथा व्रणसे मांसके धोवन सरीखे रक्तका निकलना औ सर्व इंद्रियोके व्यापार इच्छा नहोना याने सर्व इंद्रियोका व्याकुल होना ऐसे इन पांचौ मर्मस्थानोमे घाव लगनेसे लक्षण होता है ॥३६॥

अथ मर्म रहित शिरा विद्ध लक्षणं

सुरेंद्र गोप प्रतिमं प्रभूतं रक्तं स्रवेत्त त्क्षतजश्च वायुः॥ करोति रोगा न्विविधा न्यथोक्तान् शिरासु विद्धा स्वथवाक्षतासु ॥ ३७॥

जो मर्मरहित शिरा बाण इत्यादिकरिछिदी होय अथवा शस्त्रादि करिके कटी होय तिनके घाव से वीर बहुटी सरीखा बहुतसा रक्त वहता है फिरि उस रक्तके अतिजानेसे वायु कुपित व्है के आक्षेपकादिक अनेक रोगोको करता है ॥ ३७ ॥

स्नायु विद्ध लक्षणं

कौब्जं शरीरावयवाऽवसादः क्रिया स्वशक्तिस्तु मुला रुजश्च ॥ चिराद्व्रणो रोहति यस्यचापि तं स्नायुविद्धं पुरुषं व्यवस्येत् ॥ ३८ ॥

जिस मनुष्यके घावके लगनेकी पीडासे कुवरि निकरि आवे औ सर्व शरीरके अंगसिथिल होय जाय तथा सर्व कामकाज करनेको असक्त औ पीडा अत्यंत तथा जिसका घाव बहुत दिनमे भरै उस मनुष्यको ऐसा जानना की इसकी स्नायु याने नस छिदीया कटी है ॥ ३८ ॥

संधिविद्धल०

शोथाभिवृद्धिस्तुमुलारुजश्च बलक्षयः पर्वसुभेदशोफौ ॥ क्षतेषु संधिष्व चलाचलेषु स्यात्संधिकर्मो परमश्च लिंगम् ॥ ३९ ॥

जिस मनुष्यकी संधियां चल अथवा अचल छिदीं होय तिसके शोथकी वृद्धि तथा घोर पीडा बलका क्षय जोडोमे फूटन सूजनि तथा संधिनके कार्योंका उपराम ये लक्षण होते है ॥ ३९ ॥

अस्थि विद्धल०

घोरा रुजो यस्य निशादिनेषु सर्वास्ववस्था सुच

नैति शांतिः ॥ भिषग्वीपश्चि द्विदितार्थ एव तम स्थिविद्धं पुरुषं व्यवस्येत् ॥ ४० ॥

जिस जखमी मनुष्यके राति औ दिन सर्वकाल औ सर्व तरहसे अति घोर वेदना होय उसते उसको कहीं भी सुख न मिलै उसको जानना की इसका हाड विधा है ॥ ४० ॥

मर्मरहितानां शिरादीनां विद्ध लिंग मभिधाय शिरादि मर्मलिग मति देशेनाह

यथा स्वमेतानि विभावयेच्च लिंगानि मर्म स्वभिताडितेषु ॥ ४१ ॥

मर्मरहित शिरादिकोका विद्ध लक्षण कहिके अब शिरादिकोके मर्म विद्धके चिन्ह कहते है ॥ जो शिरा दिकोके मर्ममे भी घाव इत्यादि लगाहोय उसके भी लक्षण पूर्वोक्त जिस जिस ठेकाने लगनेके लक्षण कहै है वैसेही जानना तथा चकार ग्रहण है इसवास्ते जो भ्रम प्रलापादिक सामान्य लक्षण है उनको भी जानना ॥ ४१ ॥

मांस मर्म विद्धल०

पांडुर्विवर्णः स्पृशितं नवेत्ती योमांस मर्मस्वभिताडितःस्यात् ॥ ४२ ॥

जो मांस मर्ममे ताडित होता हैं सो पांडुवर्ण रंग वेरंग औ उस जगह छूनेसे उसको मालूम नहीं पडता है ॥ ४२ ॥

अथ सर्व व्रणा नामुपद्रवानाह

विसर्प पक्षघातश्च शिरास्तंभो पतानकः ॥

मोहोन्माद व्रणरुजा ज्वरस्तृष्णाहनुग्रहः॥ ४३॥
कासच्छर्दिरतीसारे हिक्का श्वासः सवेपथुः॥
षोडशोपद्रवा प्रोक्ता व्रणिनां व्रणचिंतकैः॥ ४४॥

इति रुग्विनिश्चये आगंतु व्रण निदानं

अब सर्व व्रणोके उपद्रव कहते हैं

जैसेकी विसर्प १ पक्षाघात २ शिरास्तंभ याने नसका जकडना ३ अपतानक वात ४ मोह याने चित्त भ्रम ५ उन्माद ६ व्रणमे पीडा ७ ज्वर ८ तृषा ९ हनुग्रह १० ४३ कास ११ उलटी १२ अती सार १३ हुचकी १४ श्वास १५ औ कंपा १६ ये व्रण वालोके सोरह उपद्रव कहे है ॥ ४४ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां अंगतुक व्रण निदान प्रकाशः

अथ भग्न निदानं

भग्नं समासा द्विविधं वदंति कांडेच संधौ चहित त्रसंधौ॥ उत्पिष्ट विश्लिष्ट विवर्तितंच तिर्यग्गतं क्षिप्र मधश्च षोढा॥ १॥

अब भग्न निदान कहते हैं सो भग्नको संक्षेपसे वैद्य लोग दो प्रकारका कहते है एक कांडभंग याने कहींवीचसे टूटना दूसरा संधि-भंग याने जोडमेसे उखड जाना तिनमेसे संधि भंग छ प्रकारका है जैसे की उत्पिष्ट १ विश्लिष्ट २ विवर्तित ३ तिर्यग्गत ४ क्षिप्त ५ औअधः ६ ऐसे ये छ प्रकार संधि भंग कहै ॥ १ ॥

अथ संधि भंगस्य सामान्य लक्षणं

प्रसारणा कुंचन वर्तनोग्रा रुक्पार्श्व विद्वेषन मे तदुक्तं ॥ सामान्यतः संधिगतस्य लिंग मुत्पिष्टसं धेः श्वयथुः समंतात् ॥ २ ॥ विशेषतो रात्रि भवा रुजश्च विश्लिष्टजेतौ च रुजाचनित्यं ॥ विवर्तिते पार्श्वरुजाश्च तीव्रा स्तिर्यग्गते तीव्ररुजो भवंति ॥ क्षिप्तेति शूलं विषमत्व मस्थ्नोः क्षिप्ते बधोरुग्वि घटश्चसंधेः ॥ ३ ॥

अब संधि भग्नके सामान्य औ विशेष लक्षण कहते हैं

संधि भंगसे पसरना समेटना औ इधर उधर उधर फिरनेमे तीव्र पीडा होती है औ किसीके पास बैठना भीनही अच्छा लगता है यह संधि भंगका सामान्य लक्षण है ॥ २ ॥ अब विशेष कहते है कि उत्पिष्टसे सांधेके चौतरफ सूजन होय है औ रातिमे पीडा जादा होती है ॥ विश्लिष्टसे सूजन रातकोभी औ दिनको भी पीडा होती है विवर्तितसे पसुरिनमे तीव्र बेदना तिर्यगक्षिप्तसे तीव्र पीडा होती है अतिक्षिप्त याने उपरको हाड टरिजानेसे दोनो हाडोके दूर व्है जानेसे पीडा जादे होती है अधः क्षिप्त याने नीचेको हाड टरिजानेमे पीडा औ संधिके हाड आपुसम घसते है ॥ ३ ॥

कांड भग्न लक्षणं

कांडेत्वतः कर्कटकाश्वकर्ण विचूर्णितं पिच्चित म स्थिछल्लिका ॥ कांडेषु भग्नं त्यतिपातितंच मज्जा

गतंच स्फुटितं चवक्रं छिन्नं द्विधा द्वादशधापि कांडे॥४॥

कांड भग्नबारह प्रकारका है

कर्कट अश्वकर्ण विचूर्णित पिच्चित अस्थिछिल्लिका कांड भग्न अतिपातित मज्जागत स्फुटित वक्र औ दोप्रकारछिन्न ऐसे बारह प्रकार दोनौ तरफसे हाड दविके बीचमे उँचा व्है जाय सो कर्कट घोडाके कान सरीखा जो हाड है जायसो अश्वकर्ण ॥ जो हाड अंदरका अंदर प्रहारादिकसे चूरचूर व्है जाता है सो हाथसे टटोहनेसे चुरचुर बोलता है उसको चूर्णित कहते हैं जो हाड पिचिल जाता है उसको पिच्चित कहते हैं जिस हाडके कोइसे भी भागमे किरच निकसि आवै याने छलिसरीखा एकटुकडा न्यारा दीखने लगै वह अस्थि छल्लिका॥ जिस हाडकी नली टुटिजाय सो कांडभग्न सब हाड टुटिजाय सो अतिपात जिस हाडके टुटनेसे मज्जा बाहेर निकरै सो मज्जागत जिस हाडके फुटिके टूकटूक होजाय सो स्फुटित जो हाड टेढा व्है जाता व्है वह वक्र भग्न ये दस औ दो प्रकारका छिन्नभी कांड भग्नहीमे व्है तिनमे एकतौ वह किजिसमे कटनेसे छोटे छोटे टूक हो जाते हैं दूसरा वह की जौ एकतरफतो अच्छा रहै औ एकतरफ चूरचूर हो जाय ऐसे कांड भग्नके बारह प्रकार कहे है ॥ ४ ॥

कांड भग्नस्य सामान्य लक्षणं

स्रस्तांगता शोफरुजा तिवृद्धिः संपीड्यमाने भवतीहशब्दः॥ स्पर्शाऽसह स्यंदनतोद शूलाः सर्वास्ववस्था सुनशर्मलाभो भग्नस्य कांडे खलुचिन्हमेतत्॥ ५॥

अंग सिथिल औ सूजन अति ठनका जहा टूटा होतहा दवानेसे शब्दको होना छूना सहान जाय फरकना औ सुइ छेदने सरीखी पीडा होती है औ कही भी तथा किसीतरह भी सुखनही मिले कांडमे भग्न होनेके यह चिन्ह है कांड याने नलक कपाल वल यतरुन औ रुचक ये पांच प्रकारके हाड हैं इनके लक्षण सारीरकमे देखना ॥ ५ ॥

कांड भग्नस्य द्वादश प्रकारा दप्य धिकत्वमाह

भग्नंतु कांडे बहुधा प्रयाति समासतो नामभि रेव तुल्यम् ॥

कांडमे भग्नके बारह प्रकार सभी अधिकता कहते कांडमे भग्न अनेक प्रकारके है तहा संक्षेपसे नामक है औ जैसा जैसा अस्थि भंग होये तै साही तैसा नामरखते जाना

अथ कष्ट साध्यत्वमाह

अल्पाशनोऽल्पा त्मवतो जंतो र्वातात्मकस्यच ॥
उपद्रवैर्वा जुष्टस्य भग्नं कृच्छ्रेण सिध्यति ॥ ६ ॥

जो मनुष्य अल्पा हारी औ कुपथ्थी होय तथा वात प्रकृति वाला होय उसका भग्न अथवा उपद्रवन करिके युक्त कष्टसाध्य होता है ॥ ६ ॥

असाध्यल०

भिन्नं कपालं कट्यांतु संधिमुक्तं तथाच्युतं ॥
जघनं प्रति पिष्टंच वर्जयेतु विचक्षणः ॥ ७ ॥

जो कोइ सेभी ठेकानेका कपाल संज्ञक हाड अथवा कमरमे जो हाड फूटा होय अथवा कहिका भी संधीसे छूटगया होय तथा नीचे-

को उतरि गया होय अथवा कूलेका हाड पिष्टसंज्ञक भग्न इनकी चिकित्सा नकरना ॥ ७ ॥

अन्यच्चा साध्य लक्षणं

असंश्लिष्ट कपालंच ललाटे चूर्णितं चयत् ॥
भग्नं स्तनगुदे शंखे पृष्टे मूर्द्धिच वर्जयत् ॥ ८ ॥

और भी असाध्य लक्षण कहते है जो कपालास्थि याने जानू कूले कंधे गाल नके उपरके जो गंड तालू कनपटी वंक्षण औ मस्तक इनके हाड जो फूटिके जोडने योग्य नर है वे तथा ललाटमे चूर्णित तथा दोनो स्तनौके बीचमे गुदाकी जगह कनपटी पीठ औ मस्तक का हाड जौ टूटा होय तो असाध्य जानना ॥ ८ ॥

अथ सर्वेषा मनवधान तया ऽसाध्यत्वमाह

सम्यक् संधित मप्यस्थि दुर्निक्षेप निबंधनात् ॥
संक्षोभा द्वापि यद्गच्छे द्विक्रियां तच्च वर्जयेत् ॥ ९ ॥

अब सर्व भग्नोका कोई भी चूकसे विगडने करिके असाध्यत्व कहते है जो हांड अच्छी तरहसे जोडभी दिया परंतु कुछ जोडने के समयमे कसरपडी होय अथवा जोडनेमे कसर नरही होय परंतु बाधनेमे न आया होय अथवा जोडे बाधे परभी किसी तरहके धका लगनेसे विकारको प्राप्त भया होयतौउसको असाध्य जानिके छोड देना ॥ ९ ॥ अथा स्थिति विशेषेण भंग विशेषमाह

तरुणा स्थीनि नम्यंते भिद्यंते नलकानितु ॥
कपालानि विभज्यंते स्फुटंति रुचका नि च ॥ १० ॥

इति रुग्वि निश्चये भग्न व्रण निदानं

अब न्यारे न्यारे हाडोके न्यारे न्यारे भंग होनेके प्रकार कहते हैं तरुनास्थिजो नाक कान औ नेत्र कूटके नरम हाड वै नमिजाते है याने टेढे व्है जाते है उनका वह टेढा होनाही भग्न हैं नलक याने नली वै फुटि जाती है कपाल जो जानु कूले इत्यादिकौ काठी करके आकार होना वै टूकटूक हो जाते व्है रुचकजो दांत वै टूटिजाते है ऐसे हीच शब्दसे जानना की वलय जो हात दोनौ पसुरी पीठ छाती पेट गुदा औ पांय इन स्थानोमे जो गोल कंकनके आकार हाड है वै भी टूटतेही है इनके इसीतरहसे भग्नके लक्षण जानना ॥ १० ॥ इति श्रीमत्सु० सी० रामात्मज पं० र० प्र० रु० दी० भग्न व्रण निदान प्रकाशः

अथनाडी व्रण निदानं

यःशोथमाम मतिपक्क मुपेक्षते ज्ञो योवा व्रणं प्रचुर पूय मसाधुवृत्तः॥ अभ्यंतरंप्रविशति प्रविदार्य तस्य स्थाना नि पूर्वविहितानि ततः सपूयः॥ तस्यातिमात्र गमना द्गतिरिष्यतेतु नाडी वयद्वहति तेनमता तुनाडी ॥ १ ॥

जो अनाडी वैद्य पकेभये शोथको कच्चा समुझिके उसकी ततवीर नकरै अथवा जोपीबस भरेभये घावकी ततवीर नकरै तौ जो व्रण स्राव विज्ञानी यमे उनके त्वचा मांस शिरा स्नायु संधि अस्थि कोष्ठ औ मर्मस्थान ये स्थानकहते हैं उनको विदारण करिके वह पीव अंदर प्रवेश करिके उहांसे नाडी सरीखा वहने लगता है इसीसे उसको नाडी व्रण कहते है ॥ १ ॥

संख्यामाह

दोषैः पृथ ग्भवति सा पृथगेक शश्च संमूर्छितै र पिच शल्य निमित्त तोऽन्यः॥ २॥

वातादिक दोषौं करिके अलग अलग तीनि सन्निपातसे चौथा औ शल्यज पांचवां ऐसे नाडी व्रण पांच प्रकारके कहे हैं॥ २॥

वातनाडील०

तत्रा निलात्परुष सूक्ष्म मुखी सशूल फेनानु विद्ध मधिकं वहति क्षपासु॥

जो नाडी व्रण वायुसे भया होय सो रूखा सूक्ष्मछिद्रवाला शूल औ फेन युक्त पीवसो रातिमे अधिक वहता है

पित्तनाडील०

पित्ता त्तृषा ज्वरकरी परिदाहयुक्तं पीतं स्रवत्यधि क मुष्ण महः सुचापि॥ ३॥

जो नाडी व्रण पित्तसे होता है सो तृषा औ ज्वरका करने वाला तथा दाह युक्त पीला औ गरम ऐसे बहुतसे पीवको दिनमे जादा वहता है॥ ३॥

कफनाडील०

ज्ञेया कफा द्बहुघनार्जुन पिच्छिलास्रा स्तब्धा सकं डु ररुजा रजनी प्रवृद्धा॥

जो नाडी व्रण कफसे होता है सो बहुत गाढा सफेद चिकना कठोर खाज युक्त पीडा रहित औ रातिमे जादा वहता है.

संसर्गज नाडी लक्षणं

दोषद्वयाऽभिहित लक्षण दर्शनेन तिस्रोगती र्व्यं
तिकर प्रभवास्तु विद्यात्॥ ४॥

जो नाडी व्रण दो दोषोंके लक्षण युक्त होय सो द्वंद्वज जा
नना ॥ ४ ॥

सन्निपातज नाडील०

दाह ज्वर श्वसन मूर्छन वक्रशोषा यस्यांभवंत्य
भिहितानि चलक्षणानि॥ तामादिशे त्पवन पित्त
कफ प्रकोपात् घोरा मसुक्षय करि मिवकालरात्रीं॥५

जो नाडी व्रण त्रिदोषसे होता है सो दाह ज्वर श्वास मूर्छा औ
मुखशोष तथा जो लक्षण प्रथम वात पित्त औ कफके कहे हैं उन
करिके युक्त होता है वह कालारात्रीके समान है ॥ ५ ॥

शल्यजनाडी व्रणल०

नष्टंकथंचि दनुमार्ग निपीडितेषुस्थानेषु शल्यम
चिरेण गतिंकरोति॥ साफेनिलं मथित मुष्णमसृ
ग्विमिश्रं स्रावंकरोति सहसा सरुजं चनित्यं॥ ६ ॥

जो प्रथम व्रणोंके स्थान कहे हैं उनमे कदाचित् कांटा इत्यादिक
शल्य लगिके वेजानो उसीमे रहिजाय तौ थोडेही दिनों मे नाडी व्रण
को याने नासूरको पैदाकरता है सो नासूर फेना युक्त मथा भया गरम
औ रक्तयुक्त पीवको वहा करताहै तथा उसमे अकस्मात् निरंतर पीडा
होती रहती है सोशल्यज है ॥ ६ ॥

साध्यासाध्यल०

नाडी त्रिदोष प्रभवा नसिध्ये च्छेषाश्चतस्रः खलु यत्न साध्याः॥ ७॥

इति रुग्विनिश्चये नाडी व्रण निदानं समाप्तं

जो नाडी व्रण त्रिदोषसे होता है सो असाध्य होता है बाकीके चारौ यत्नसे साध्य होते हैं॥ ७॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद कृतायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां नाडीव्रण निदान प्रकाशः समाप्तः

अथ भगंदर निदानं तत्रपूर्वरूप माह॥

कटी कपाल निस्तोद दाह कंडू रुजादयः॥
भवंति पूर्वरूपाणि भविष्यति भगंदरे॥ १॥

अब भगंदरका निदान कहते हैं

तहां प्रथम पूर्वरूप कहते हैं सो जैसे कि भगंदर होनेसे प्रथम जो कमरके नगीच कपाल संज्ञक चौडा ठीकरा सरीखा हाड है उसमे सुई टोचने सरीखी पीडा होने लगती है औ दाह खाज तथा ज्वरादिक रोगभी होते हैं॥ १॥

रूपमाह

गुदस्य द्व्यंगुले क्षेत्रे पार्श्वतः पिडिकार्तिकृत्॥
भिन्ना भगंदरो ज्ञेयः सच पंचविधोमतः॥ २॥

गुदासे दो अंगुल किनारे पर पीडा करने वाली एक फुंसी होती है उसके फूटनेसे वह भगंदर जानना सो पांच प्रकारका कहा है यह रोग भगाकार छिद्र करता है इसते भगंदर कहते हैं॥ २॥

अथ वातिक शतपोनक लक्षणं

कषाय रूक्षै रतिकोपितोनिल स्त्वपान देशे पिडिकां करोति यां ॥ उपेक्षणात्पाक मुपैति दारुणं रुजाच भिन्ना रूण फेन वाहिनी ॥ तत्रागमो मूत्र पुरीष रेतसां व्रणैरनेकैः शतपोनकं वदेत् ॥ ३ ॥

अब जो वातज भगंदर शतपो नक है उसके लक्षण कहते हैं कसैले औ रूखे इत्यादिक पदार्थोंके अतिसे वनसे कुपित भया हुआ वायु गुदाके नगीच एक फुंसी उत्पन्न करता है उसकी ततवीर न करने से वह अति दारुण पीडा कारक जब पकिके फूटती है तब उसमे स रक्त फेनयुक्त पीव वहता है फिरि उसमे अनेक छिद्र पडिजाते हैं तब उनछिद्रोंमे व्हैके उसमेसे मूत्र मल औ वीर्यभी पडने लगता है उस भगंदरको शतपोनक कहते हैं ॥ ३ ॥

पैत्तिक मुष्ट्रग्रीवक माह

प्रकोपणैः पित्त मतिवकोपितं करोति रक्तां पिडिकां गुदेगतां ॥ तदाशुपाकाऽ हिमपूतिवाहिनींभगंदरं चोष्ट्र शिरोधरं वदेत् ॥ ४ ॥

जो उष्ट्रग्रीव संज्ञक पित्तज भगंदर है उसके लक्षण जैसेकी पित्त कुपित कराने वाले आहार विहारादिकौंके करनेसे अतिकुपित भया हुआ पित्त गुदाके नजीक एक फुंसीको पैदाकरता है सो शीघ्रही पकती फूटती है तब उसमेसे गरम दुर्गंध युक्त पीव वहता है उसभगंदरको उष्ट्रग्रीव कहते हैं ॥ ४ ॥

अथ परिस्राविणं कफज माह

कंडूयनं घनस्रावी कठिनो मंदवेदनः॥
श्वेताऽवभासः कफजेः परिस्रावी भगंदरः॥ ५॥

जो भगंदर परिस्रावी नामका कफज है उसके लक्षण किखाज युक्त गाढे पीबका वहने वाला कठिन मंद पीडा कारक सफेदी लिये होता है ॥ ५॥

अथ त्रिदोषजं शंबूकावर्त्तमाह

बहुवर्ण रुजा स्रावा पिडिका गोस्तनोपमा॥
शंबूकावर्त्तवन्नाडी शंबूका वर्त्तकोमतः॥ ६॥

जिस भगंदरकी फुंसी गायके थनके आकार अनेक प्रकारकी पीडा औ पीवके वहने वाली औ उसका छिद्र घोंघेके घेरके सदृश होता है वह शंबूकावर्त्त नाम भगंदर त्रिदोषज है ॥ ६॥

अथ क्षतज मुन्मार्गिसंज्ञकमाह

क्षता द्गतिः पायुगता विवर्द्धते त्युपेक्षणात्स्युः
कृमयोविदार्यते॥ प्रकुर्वते मार्गमनेकधा मुखै र्व्र
णै स्तमुन्मार्गि भगंदरं वदेत्॥ ७॥

जो क्षतसे उत्पन्न उन्मार्गी भगंदर उसके लक्षण जेसे कि कोई तरहसे भी गुदाके नगीच घाव लगा तब जो उसकी ततवीर नकरितौ वह बढिके गुदातक जाता है फिरिभी जो उसकी ततवीर नकरिगईतौ उसमे कीडे परिके अनेक प्रकारके छिद्रौंको करते हैं उस भगंदरको उन्मार्गी कहते हैं॥ ७॥

साध्यासाध्यमाह

घोराः साधयितुं दुःखा सर्वेएव भगंदराः ॥
तेष्वसाध्य स्त्रिदोषोत्थः क्षतजश्च विशेषतः ॥ ८ ॥

सबही भगंदर अतिकष्ट साध्य हैं तहां भी त्रिदोषज औ क्षतज ये विशेष करिके असाध्यही हैं ॥ ८ ॥

अन्यच्चा साध्यमाह

वातमूत्र पुरीषाणि कृमयः शुक्रमेवच ॥
भगंदरा त्स्रवंतो नाशयंति तमातुरं ॥ ९ ॥

इतिश्री रुग्विनिश्चये भगंदर निदानं

जिस भगंदरसे अधोवायु मूत्र मल कीडे औ वीर्य निकसने लगता है उस रोगीकी मृत्यु उसी भगंदरहीसे होती है ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्सु० सी० आ० पं० र० प्र० वि० रु० दीपिकायां भगंदर निदान प्रकाशः

अथोपदंशनिदानं

हस्ताभि घाता न्नखदंत पाता दधावनाद त्युपसे वनाद्वा योनि प्रदोषा श्चभवंति शिश्ने पंचोपदंशा विविधोपचारैः ॥ १ ॥

अब उपदंशका निदान कहते हैं इस रोगको लोग गरमी औ आतशकभी कहते हैं जैसेकि हस्ताभि घातात् याने हाथसे धातु निकालनेसे अथवा और किसीतरहसे हाथकी चपेट लगनेसे तथा नख औ दांतके लगनेसे लिंगको साफकरिकें नधोनेसे अति मैथुनसे तथा दुष्ट योनिकेभी दोषसे इत्यादि कारणोंसे लिंगमे पांच प्रकारके उपदंश होते है ॥ १ ॥

अथैतेषां वातादिभेदेन लक्षणान्याह

सतोदभेदैः स्फुरणैः सकृष्णैः स्फोटै र्व्यवस्येत्पवनोपदंशं ॥ पीतैर्बहुक्लेदयुतैः सदाहैः पित्तेन रक्तात्पिशितावभासैः॥ २ ॥सकंडुरैः शोफयुतैर्महद्भिःशुक्लैर्घन स्रावयुतैः कफेन॥नानाविध स्राव रूजोपपन्न मसाध्यमाहुस्त्रिमलोपदंशम्॥ ३ ॥

अब इनके वातादिक भेदसे लक्षण कहते हैं

जैसेकि जिस उपदंशमे सुईटोचने सरीखी औ चीरने सरीखी पीडा होय लिंग फरकै फोडौंका रंग काला होय सो वातज उपदंश जानना॥ जिसके छाले पीले औ बहुत वहने वाले औ दाह युक्त होय सो पित्तज जानना॥ २॥ रक्तजके छाले मांसके आकार होते हैं॥ कफजमे अति खाज सूजनि युक्त छाले बडे बडे रंगमे सफेद गाढे पीबके वहने वाले होते हैं॥ सन्निपातजमै से अनेक तरहका पीब वहता है तथा अनेक तरहकी पीडा होती है॥ ३॥

अथ साध्य लक्षणं

विशीर्ण मांसं कृमिभिः प्रजग्धं मुष्कावशेषं परिवर्जयेच्च॥ संजातमात्रे नकरोतिमुढः क्रियांनरो यो विषयेप्रसक्तः॥ कालेन शोथ क्रिमिदाहपाकैः प्रशीर्णशिश्नो म्रियते सतेन॥ ४॥

अब उपदंशके असाध्य लक्षण कहते हैं॥ जिस रोगीके लिंगका मांस विखरि गया होय अथवा कीडौंने खाय लिया होय सर्व लिंग

गलिगया होय केवल अंडकोश बाकी रहा होय सो असाध्य है तथा जो पुरुष इस रोगके उत्पन्नही होने मात्रमे उपाय किये विना विषयमे आसक्त रहा होय उस मूर्खका कुछदिनौंमे लिंग सूजिजाता है औ कीडे पडिजाते हैं दाह होता है औ पकता है इत्यादिक उपद्रवौं करिके लिंग गलिके गिरिजाता है तब वह मूर्ख उसी रोगसे मरता है ॥ ४ ॥

अथ लिंगवर्तिल०

अंकुरैरिव संजातै रुपर्युपरि संस्थितैः ॥
क्रमेण जायते वर्त्ति स्ताम्रचूडशिखोपमा ॥ ५ ॥
कोशस्याभ्यंतरे संधौ पर्वसंधि गतापिवा ॥
कुलिस्याकृतयः केचित्केचित्पद्मदलोपमाः ॥
मेढ्रसंधौनृणांकेचित्केचित्सर्वाश्रयाः ॥
स्मृताः रुजादाहास्त्विवहुलास्तृष्णा तोदसमन्विताः ॥
स्त्रीणांपुंसां चजाय्यंते ह्युपदंशाः सुदारुणाः ॥
लिंगवर्ति रितिख्याता लिंगार्श इतिचापरे ॥
सवेदना पि च्छिलाच दुश्चिकित्स्या त्रिदोषजा ॥ ६ ॥

इति रुग्विनिश्चये उपदंश निदानं

लिंग वर्त्तिके लक्षण जैसेकि कोईसे धान्यके अंकुर होते है तैसे ही मांसके अंकुर लिंगकी अगाडीके चमडेके अंदर संधिमे एकपर एक जमा व्है के जैसी मुरगाकी शिख तैसे क्रमसे उत्पन्न होती है ॥ ५ ॥ कीतने कुलथीके समान् कोई एक कमलके पत्तेके समान् लिंगकी

संधीमे होते है दाहा करैह तृष्याकर्त्ते उसको लिगवर्त्ति औ कोईक लिगार्शभी कहते हैं सो त्रिदोषज है उसमे चिकनाई औ पीडा भी होती है उसकी औषध भी कठिनतासे होती है सुश्रुतने लिखा है कि यह उपदंश रोग स्त्रियोंके भी होता है सो हमारे भी अनुभवमे आया है क्यो कि बहुतनको इसीरोगका निश्चैकरिके औषधकिया सो वै आरोग्यभी भई ॥ ६ ॥ इतिश्रीसत्सुकल सीनारामात्मजपं० र० प्र० वि० रुग्विनिश्चयदीपिकायांउपदंशनिदान प्रकाशः ॥

अथशूकदोषनिदानं ॥

अक्रमा च्छेपसो वृद्धिं योभिवांछति मूढधीः ॥
व्याधय स्तस्यजायंते दशचाष्टौच शूकजाः ॥ १ ॥

जोमुर्ख मनुष्य क्रमछोडिके येक बारगी लिगबढाने केवास्ते विषादिक औषधौंका लेप करताहै उसके अठारह प्रकारके शूकदोष संबंधी रोग उत्पन्नहोते हैं ॥ १ ॥

तत्रसर्षपिका लक्षणं

गौरसर्षप संस्थानाः शूक दुर्भगहेतुकाः ॥ पि
डिकाः श्लेष्मवाताभ्यां ज्ञेयाः सर्षपिकाबुधैः ॥ २ ॥

जो शूकदोष जरोग अठारह प्रकारके कहे उनमेसे प्रथम सर्षपिकाके लक्षण कहतेहैं जैसे कि शूकदोषसे अथवा खराब योनिदोषसे कफ औवायुकरिके गौरे सरसौंके समान लिगमे फुंसि आंहोतीहैं उनको वैद्य लोग सर्षपिकाकहतेहैं ॥ २ ॥

अथाष्ठीलिकाग्रथितयोर्लक्षणं ॥

कठिना विषमै र्भुग्नै र्वायुना ष्ठीलिकाभवेत् ॥

शूके यत्पूरितं शश्वद्ग्रथितं नामत त्कफात्॥ ३॥

अष्ठीलिका यह वायुसे होतीहै इसका कारण यहकि कोई दिन लेपकमी कोईदिनजास्ती तथा कोईदिन किया औकोईदिन नकिया ऐसे कारणौंसे वातकोपव्हैके कठिन बठिआसी एकफुंसीहोतीहै सो अष्ठीलिका॥ जौ लिंगवढानेके वास्ते लिंगमे लेप निरंतर लगाये हीरहते हैं उनके लिंगमे कफ कोप व्हैके गांठि सरीका ग्रथित रोग पैदा होता है॥ ३॥

अथ कुंभिकाऽलज्यो र्लक्षणं

कुंभिका रक्तपित्तोत्था जांबवास्थिनि भाऽशुभा॥
तुल्यजां त्वलजीं विद्या द्यथाप्रोक्ता विचक्षणैः॥ ४॥

शूक दोष करिके रक्तपित्तसे जामुनिकी गुठली सरीखी जो फुंसी होती है औ रंगमे अशुभा याने काली होती है सो कुंभिका॥ जैसे प्रमेह पिडिकाके निदानमे अलजीके लक्षण कहे हैं उसीके तुल्य इहां शूक दोषसे अलजी होती है॥ ४॥

मृदित संमूढ पिडिकयो र्लक्षणं

मृदितं पीडितं यत्तु संरब्धं वातकोपतः॥
पाणिभ्यां भृश संमूढे संमूढपिडिकाभवेत्॥ ५॥

जो शूक दोष होनेसे दबायातौ वायुके कोपसे सूजनि आती है उसका नाम मृदित होता है॥ जो कदापि शूक दोष होनेसे खाज आई औ दोनौं हाथौंसे खूब मलिडारातौ उससे वात कुपित व्हैके फुंसी पैदा करता है वह संमूढ पिडिका॥ ५॥

अथा वमंथल०

दीर्घा बह्व्यश्च पिडिका दीर्यंते मध्यत स्तुयाः॥
सोऽवमंथः कफास्टग्भ्यां वेदना रोमहर्षकृत्॥ ६॥

शूक दोषसे कफ औ रक्त कुपित व्हैके लंबी लंबी बहुतसी फुंसियों को करते हैं सो वै बीचमे फटती है ओ उनमे रोमखडे होय ऐसी पीडा होती है उसको अवमंथ कहते हैं॥ ६॥

स्पर्श हान्युत्तमयो र्लक्षणं

स्पर्शहानिं चज नये च्छोणितं शूकदूषितं॥
मुद्गमाषो पमा रक्ता रक्तपित्तोद्भवा चया॥
व्याधिरेषो त्तमा नाम शूका जीर्ण निमित्तजा॥ ७॥

शूक दोषसे रक्त दूषित व्हैके लिंगके स्पर्शकी हानि करता है याने उसमे हाथ लगानेसे मालूम नही परता है ऐसा शून्य होजाता है उसको स्पर्श हानि कहते हैं॥शूक याने लिंगवर्द्धक लेपके अति करनेसे शूका जीर्ण होता है उस अजीर्णसे रक्त पित्त कुपित व्हैके मूग अथवा उरदके समान लाल रंगकी फुंसीको पैदाकरते हैं उसको उत्तमा कहते हैं॥ ७॥

पुष्करिका लक्षणं

पिडिकाभि श्चितायाच पित्तशोणित संभवा॥
पद्मकर्णिक संस्थाना ज्ञेया पुष्करिका तुसा॥ ८॥

शूक दोषसे रक्त औ पित्त कुपित व्हैके अनेक फुंसियों करिके घेरी भई कमल कर्णिका केसमान एक फुंसी करते हैं उसको पुष्करिका कहते हैं॥ ८॥

शत पोनक लक्षणं

छिद्रैरणुमुखै र्लिंगंचितं यस्य समंततः॥
वातशोणित जोव्याधिः सज्ञेयः शतपोनकः॥ ९ ॥

शूक दोषसे कुपित भये वात औ रक्त करिके लिंगमे चारौतरफ बारीक बारीक चलनीके समान छेद पडिजाते हैं उस रोगका नाम शतपोनक कहते हैं ॥ ९ ॥

अथ त्वक्पाक शोणिता र्बुदयो र्लक्षणं

वात पित्तकृतोज्ञेय स्त्वक् पाको ज्वरदाहवान्॥ १० ॥
कृष्णैः स्फोटैः सरक्ताभिः पिडिकाभि र्निपिडितं॥
यस्य वस्तुरुजा श्चोग्राज्ञेयंतच्छोणितार्बुदं॥ ११ ॥

शूक दोषसे कुपित भये वात पित्तसे लिंगकी त्वचा पकिजाती है उसते ज्वर औ दाह भी होता है तिसको त्वक्पाक कहते हैं ॥ १० ॥ जो शूक दोषसे रक्त विगडता है उसते लिंगपर काले फोडे औ उनके संगमे लाल फुंसियां होती हैं जिनमे पीडा की अधिकता होती है उस को शोणिता र्बुदकहते हैं ॥ ११ ॥

अथ मांसार्बुद मांस पाक विद्रधीनांलक्षणान्याह०

मांसदोषेण जानीयादर्बुदं मांससंभवम्॥
शीर्यंते यस्य मांसानि यस्यसर्वाश्चवेदनाः॥ १२ ॥
विद्यात्तं मांसपाकंतु सर्वदोषकृतंभिषक्॥
विद्रधिं सन्निपातेन यथोक्तमिति निर्दिशेत्॥ १३ ॥

अब मांसा र्बुद मांसपाक औ विद्रधिके लक्षण कहते हैं

शूक दोषसे मांसके दूषित होनेसे लिंगमे मांसार्बुद रोग होता है

तथा शूक दोषते तीनों दोषोके कुपित्त होनेसे मांसपाक रोग होता है उसमे लिंगका मांस गलिके गिरता है तथा तीनो दोषोके लक्षण युक्त पीडा होती है॥ १२ ॥ तीनो दोषोके कोपसे याने शूक दोषोके कुपित होनेसे लिंगमे बिद्रधि होती है उसके लक्षण सन्निपातबिद्रधिमे जो कहे है उसी प्रमान जानना ॥ १३ ॥

अथ तिल कालक लक्षणं

कृष्णानि चित्राण्यथवा शुक्लानि सविषाणिच॥
पातितानि पचंत्याशूमेढ्रंनिर वशेषतः॥ १४॥
कालानि भूत्वामांसानि शीर्यंते यस्यदेहिनः॥
सन्निपात समुत्थांस्तु तान्विद्यात्तिलकालकान्॥१५॥

काले अथवा अनेक रंगके अथवा सफेद बिषयुक्त शूक लेपनसे तिलसे फोडे होते हैं वै अति शीघ्र सर्व लिंगको पकाते हैं ॥ १४॥ उसते मांस काला व्हैके गलि गलिके गिरता हैं उनको तिल कालक कहते है ये त्रिदोषसे होते हैं ॥ १५ ॥

असाध्यमाह॰

तत्र मांसार्बुदं यच्च मांसपाकश्चयः स्मृतः विद्रधि
श्च नसिद्ध्यंति येच स्यु स्तिलकालकाः॥ १६ ॥

इति रु॰ शूक दोषनिदानं

शूक दोष रोगोंमे असाध्य कहते हैं मांसा र्बुद मांस पाक बिद्रधि औ तिल कालक ये असाध्य हैं ॥ १६ ॥ इति श्रीमत्सु॰ सी॰ आ॰ पं॰ र॰ प्र॰ कृ॰ रुग्विनिश्चये दीपिकायां शूक दोषनिदान प्रकाशः

अथ कुष्ठ निदानं

विरोधी न्यन्नपानानि द्रवस्निग्ध गुरूणिच ॥
भजता मागतां छर्दि वेगांश्चा न्यान्प्रतिघ्नतां ॥ १ ॥
व्यायाम मति संताप मतिभूक्ता निषेविणां ॥
शीतोष्ण लंघना हारान् क्रमं मुक्ता निषेविणां ॥ २ ॥
घर्मश्रम भयार्त्तानां द्रुतं शीतांबु सेविनां ॥
अजीर्णा ध्यशिनांचैव पंचकर्मा पचारिणां ॥ ३ ॥
नवान्न दधिमत्स्यानि लवणाम्ल निषेविणां ॥
माषमुलक पिष्टान्न तिलक्षीर गुडाशिनां ॥ ४ ॥
व्यवायं चाप्यजी र्णेऽन्ने निद्रां च भजतांदिवा ॥
विप्रान् गुरून् धंर्षयतां पाप कर्मचकुर्वतां ॥ ५ ॥
वातादय स्त्रयोदुष्टा स्त्वग्रक्तंमांसमंबुच ॥
दूषयंति सकुष्ठानां सप्तको द्रव्यसंग्रहः ॥
अतः कुष्ठानिजायंते सप्त चैकादशै वतु ॥ ६ ॥

अब कुष्ठका निदान कहते हैं

विरुद्ध अन्न पान जैसे दूध मच्छी एक संग इत्यादिक तथा अति पतले चिकने औ भारी पदार्थोंके अति सेवने वाले तथा वांति औ मला दिकौंके वेगौंके रोकने वाले ॥ १ ॥ तथा अति आहार करिके मेहनत करने वाले तथा अग्नि औ घामके सेवने वाले ऐसेही शीतल औ उष्ण भोजनादिक औ लंघन इनका क्रम छोडिके सेवन करने वाले ॥ २ ॥ तथा पसीना आये पर परिश्रम करिके भयभीत भये

हुये अति शीघ्र ठंढे पानीके पीने वाले तथा अजीर्णमे भोजनकरने वाले तथा वमन विरेचनादिक पंचकर्म करिके कुपथ्य करने वाले ॥ ३ ॥ तथा नवीन अन्न दही मच्छी लोन औ खटाई इनके अति सेवन करने वाले तथा उरद मूरी फरा वगैरे आंटेके पदार्थ तिल दूध औ गुड इनके अति सेवन करने वाले ॥ ४ ॥ तथा विदग्धादिक अजीर्णमे मैथुन करने वाले दिनको सोने वाले तथा ब्राह्मण औ गुरुनके अपराध करने वाले तैसेही और तरहके भी पाप कर्मोंके करने वाले ॥ ५॥ ऐसे जो मनुष्य उनके शरीरमे रहे भये जो वातादिक दोष वैकुपित व्हैके रस रक्त मांस औ शरीर संबंधी जो जल याने लासा इन चारोंको दूषित करते हैं ऐसे वातादिक तीनौ दोष औ रसादिक चारौ दूष्य एसा तौ मिलिके दूषितभये हुये सात औ ग्यारह याने अठारह प्रकारके कुष्ठौंको उत्पन्न करते हैं ॥ ६ ॥

संख्यामाह

कुष्ठानि सप्तधा दोषैः पृथग्द्वंद्वैः समागतैः॥
सर्वेष्वपि त्रिदोषेषु व्यपदेशोऽधिकस्त्वतः॥ ७॥

सर्व कुष्ठ सामान्यसे सात प्रकारके हैं जैसेकि न्यारे न्यारे दोषौं करिके तीन द्वंद्वज तीन औ सन्निपातज एक ऐसे सात परंतु सर्व कुष्ठ मात्र त्रिदोष जही है तथापि जिसमे जो दोष अधिक है उसको उसी के नामसे प्रसिद्ध करते हैं जैसे वातकी अधिकतासे वात कुष्ठा ॥ ७ ॥

पूर्वरूपमाह

अति श्लक्ष्ण खरस्पर्श स्वेदा स्वेद विवर्णता॥
दाहः कंडू स्त्वचि स्वाप स्तोदः कोठो न्नतिः श्रमः॥ ८॥

व्रणाना मधिकं शूलं शीघ्रोत्पत्ति श्चिर स्थितिः॥
रूढाना मपिरूक्षत्वं निमित्ते ऽल्पेपि कोपनं॥
रोमहर्षो ऽसृजः कार्ष्ण्यं कुष्ठलक्षण मग्रजं॥ ९॥

कुष्ठका पूर्व जेसे कि जिस जगह कुष्ठ होनेको होता है उस जगहका चर्म अतिशय चिकना अथवा खरखरा होता है तहां पसीना जादा किंवा आताही नहीं औ उस जगहका रंग बदलि जाता है तथा दाह खाज शून्यता सुई टोचने सरीखी पीडा ददोरौंका उठना मेहनत-विना थकना ॥ ८॥ व्रणौंमे शूलकी अधिकता व्रणौंका होना शीघ्र औ रहना बहुत दिनौंतक व्रणौंके भरिआनेसे औ अच्छे होनेसेभी वह जगह खर्खरी रहती है तथा फिरिभी कुछ थोडेसेही निमित्त करिके व्रण व्है आते हैं रोमनका खडा होना रक्तका रंग काला ये कुष्ठ हो-नेके समयमे प्रथम लक्षण होते हैं॥ ९॥

अथ रूपमाहतत्र सप्तमहा कुष्ठानां रूपाण्याह अथ तेषुकपाल कुष्ठ लक्षणं

कृष्णा रुणंकपालाभं यद्रूक्षं परुषं तनु॥
कपालं तोदबहुलं तत्कुष्ठं विषमं स्मृतम्॥ १०॥

अब सर्व कुष्ठौंके रूप कहते हैं तहां सात जो महा कुष्ठ है तिनके लक्षण कहते हैं तहां भी प्रथम कपाल कुष्ठके लक्षण कहते हैं जैसे कि जिस कुष्ठके मंडलौंका रंग काला औ लाल खपरा सरीखा होय तथा रूखा औ खरखरा होय पतला होय सुई टोचने सरीखी पीडा होय सो कुष्ठ कपाल नामका चिकित्साकरनेमे अति विषम है॥ १०॥

औदुंबरमाह

त्वग्दाह रागकंडूभिः परितं रोम पिंजरं ॥
उदुंबर फलाभासं कुष्ठमौदुंबरं वदेत् ॥ ११ ॥

जिस कुष्ठके जगहकी त्वचामे दाह ललामी औ खाज होय तथा रोम पीले होय औ उसका आकार पके गूलरके फल सरीखा होय उस कुष्ठको औदुंबर कुष्ठ कहना ॥ ११ ॥ २ ॥

मंडलकुष्ठ ल०

श्वेत रक्तं स्थिरं स्त्यानं स्निग्ध मुत्सन्न मंडलं ॥
कृच्छ्र मन्योऽन्य संसक्तं कुष्ठं मंडल मुच्यते ॥ १२ ॥

जिस कुष्ठका रंग सफेद लाल होय स्थिर याने कठिन स्त्यान याने भीजा रहता हो तथा चिकन ऊंचे मंडल वाला मंडल परस्पर मिले होय उसको मंडल कुष्ठ कहना ॥ १२ ॥ ३ ॥

ऋक्षजिव्हल०

कर्कशं रक्तपर्यंत मंतः श्यावं सवेदनं ॥
यदृक्ष जिव्हा संस्थान मृक्ष जिव्हं तदुच्यते ॥ १३ ॥ ४ ॥

जो कुष्ठ कर्कश तथा किनारोंपर लाल बीचमे पीलास लिये काला पीडा युक्त औ ऋच्छकी जीभके आकार होय सो ऋक्षजिव्ह कहाता है ॥ १३ ॥ ४ ॥

पुंडरीकल०

सश्वेतं रक्तपर्यंतं पुंडरीक दलोपमम् ॥
सोत्सेधं च सरागं चपुंडरीकं प्रचक्षते ॥ १४ ॥ ५ ॥

जिस कुष्ठके व्रण श्वेत कमलकी पखुरीके समान बीचमे सफेद औ किनारौंपर लाल होय तथा उस बीचकी सफेदीमे कुछ ऊंचा पन औ लामीभी दिखै उसको पुंडरीक कुष्ठ कहते है ॥ १४ ॥ ५ ॥

सिध्मल०

श्वेतं ताम्रं तनु चयद्रजो घृष्टं विमुंचति॥
प्रायश्चोरसि तत्सिध्म मलाबु कुसुमोपमम्॥ १५ ॥ ६

जिस कुष्ठका रंग सफेद वा तांबेके रंगका होय औ वह पतला होय घसनेसे उसमेसे धूरिसी निकलै वह बहुधा करिके छातीमे जादा होता है उसको सिध्म कहते है यह सेहुआ प्रसिद्ध है ॥ १५ ॥ ६ ॥

काकणल०

यत्काकणंतिकावर्णं सपाकं तीव्रवेदनं ॥
त्रिदोषलिंगं तत्कुष्ठं काकणं नैवसिध्यति ॥ १६ ॥ ७ ॥

जो कुष्ठ गुंजा सरीखा लाल पकना औ पीडा युक्त होय सो त्रिदोषिक चिन्हयुक्त असाध्य है ॥ १६ ॥ ७ ॥ इति सप्तमहा कुष्ठानि०

अथैका दशक्षुद्र कुष्ठ लक्षणं माह तत्रैककुष्ठचर्मकुष्ठयोर्ल०

अस्वेदनं महावास्तु यन्मत्स्य शकलोपमं ॥
तदेक कुष्ठं चर्माख्यं बहलंहस्तिचर्मवत्॥ १७ ॥ १ ॥ २ ॥

अब ग्यारह क्षुद्र कुष्ठ लक्षण कहते हैं

तिनमे जिस कुष्ठमे पसीना न आवै मंडल बडे बडे मच्छीकेसे फुनासरीखे होय सो एक कुष्ठ ॥ १ ॥ जो मोठा काला खरखर हाथीके चर्म समान होयसो चर्म कुष्ठ इसको गजचर्मभी कहतेहैं ॥ १७ ॥ २ ॥

किटिभवैपादिकयोर्लक्षणं ॥

श्यावं किण खरस्पर्शं परूपं किटिभं स्मृतं ॥
वैपादिकं पाणि पाद स्फोटनं तीव्र वेदनं ॥ १८ ॥३॥ ४ ॥

किटिभ कुष्ट यह पीलास लिये काला औ ढेठकी तरह खरखरा तथा कठिन होयसो किटिभ कुष्ठ ॥ ३॥ जो हाथ पायं फटतेहैं जिसमे तीव्र पीडाहोतीहै लोकमे वेवाई कहते हैं सो वैपादिक ॥ १८ ॥ ४ ॥

अलसकदद्रुमंडलयोर्लक्षणं ॥

कंडू मद्भिः सरागैश्च गंडै रलसकंचितं ॥
सकंडू रागपिडिकं दद्रुमंडल मुच्यते ॥ १९ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अलसक कुष्ठ खाजयुक्त लाल कुंफोडौंकरिके युक्तहोताहै ५ जो खाजयुक्त छोटी छोटी लाल फुंसियों करिके युक्त होताहै सो दद्रुमंडल लोकमे दाद नामसे प्रसिद्धहै ॥ १९ ॥ ६ ॥

चर्मदलल० ॥

रक्तं सशूलं कंडू मत्सस्फोटं दलयत्यपि ॥
तच्चर्मदल माख्यात मस्पर्शसह मुच्यते ॥ २० ॥ ७॥

चर्मदल कुष्ठ यह लालरंगका होताहै तथा शूल खाज औ फोडौं करिके युक्त चर्मको फाडताहै औवस्त्रादिक लगनेसे दुखताहै ॥२०॥७॥

पामाकच्छ्वोर्लक्षणं

सूक्ष्मा बव्ह्यः पिडिकाः स्रावव त्यः पामे त्युक्ता कंडुमत्यः सदाहाः ॥ सैव स्फोटै स्तीव्रदाहै रुपेता ज्ञेया पाण्योः कच्छुरुग्रा स्फिजोश्च ॥ २१ ॥ ८ ॥ ९ ॥

पामा कुष्ठमे वारीक वारीक वहने वाली तथा खाज औ दाह

युक्त ऐसी बहुतसी फुंसियां होतीहैं ॥ ८॥ वही पामाजो कमर कूले औ हाथौंमे तीव्रदाह कारक फोलौंकरिके युक्तहोयतौ उसको कच्छू कहते हैं वहना औ खाज इसमेभी होतीहै ॥ २१ ॥ ९ ॥

विस्फोट शतारुक योर्लक्षणं

स्फोटाः श्वेतारुणा भासा विस्फोटाः स्यु स्तनुत्वचः॥
रक्तंश्यावं सदाहार्त्ति शतारु स्याद्बहुव्रणं॥ २२॥
॥१०॥११॥

जिसमे सफेदी लिये लाल फोले होय चर्म पतला होय सो विस्फोट ॥ १०॥ जो लाल धूसर वर्ण दाहपीडायुक्त ऐसे बहुत व्रणौंकरिके युक्तहोय सो शतारुक ॥ २२ ॥ ११ ॥

विचर्चिकल०॥

सकंडूः पिडिकाः श्यावा बहुस्रावा॥
विचर्चिका॥ २३॥ १२॥

जिस कुष्ठमे खाजयुक्त धूसर रंगकी बहुत वहने वाली ऐसी फुंसियां होय सो विचर्चिका ॥ १२ ॥ वह त्रिदोषज है जैसेकि खाज आना कफकी अधिकता धूसर रंग वायु क बहुत वहना पित्तसे होता है जो कोई कहै कि क्षुद्रकुष्ठ तैग्यारह कहे औ येतौ एक कुष्ठसे लैके विचर्चिका पर्यंत बारह होते है सत्य है परंतु इस गिचर्चिकाको विपादिकाके भेदमे गनते हैं इसवास्ते विपादिका विचर्चिका दोनौके एक होनेसे ग्यारहीभये तहां भोजका प्रमाण लिखते हैं ॥ श्लोक दोषाः प्रदूष्य त्वङ्मांस पाणि पाद समाश्रिताः पिडिका जनयंत्याशुदाहकंडू समन्विताः ॥ दह्यते त्वक् खरा रूक्षा पाण्योर्ज्ञेया विचर्चिका ॥

पादे विपादिका ज्ञेया स्थानान्यत्वाद्धि चर्चिका ॥ २ ॥ अर्थ कुपित-भये हुये वातादिक दोष हाथ औ पायों मे रहिके त्वचा औ मांसको दूषित करते हैं फिरि उन स्थानौंमे दाह औ खाज युक्त फुसीयां उत्पन्न करते हैं उनसे त्वचामे दाह होताहै तथा त्वचा खरखरी औ रूखी होती है यह रोग जो हाथौंमे होय तौ उसको विचर्चिका कहते हैं औ पायौंमे विपादिका कहते हैं ऐसे स्थानमात्र दूसरा होनेसे नाम भेद मात्र है परंतु रोग एकही है ॥ २३ ॥

अथ कुष्ठानां वाताद्याधिक्येन लक्षणान्याह ॥

खरं श्यावारुणं रूक्षं वात कुष्ठं सवेदनम् ॥
पित्तात्प्रक्वथितं दाह रागस्रावा न्वितं मतं ॥ २४ ॥
कफात्क्लेदि घनं स्निग्धं सकंडू पौत्ति गौरवं ॥
द्विलिंगं द्वंद्वजं कुष्ठं त्रिलिंगं सान्निपातिकं ॥ २५ ॥

अब कुष्ठौंके वातादिक दोषौंकी अधिकतासे लक्षण कहते हैं सो जैसे कि वाताधिक कुष्ठ यह खरखरा रंगमे धूसर औ कुछ ल-लामी लिये रूखा औ वेदना युक्त होता है पित्तसे सडाभया दाहयुक्त लाल रंगका औ बहता रहता है ॥ २४ ॥ कफज कुष्ठ पीबसे भी जाभया कठिन चिकना खाज युक्त तथा दुर्गंध औ गरुवई युक्त रहता है ॥ द्वंद्वज कुष्ठमे दोदो दोषौंके लक्षण होते हैं औ सान्नि पातिक मे तीनौ दोषौंके लक्षण होते हैं ॥ २५ ॥

अथोत्तरोत्तर सप्तधातु गतानां कुष्ठानां क्रमेण लक्षणान्याह

त्वक्स्थे वैवर्ण्य मंगेषु कुष्ठे रौक्ष्यं च जायते ॥
त्वक्स्वापो रोमहर्षश्च स्वेदस्याति प्रवर्त्तनं ॥ २६ ॥ १ ॥

कंडू विपूयकश्चैव कुष्ठे शोणित संश्रये ॥ २ ॥
बाहुल्यं वक्त्रशोषश्च कार्कश्यं पिडिको द्गमः ॥
तोदः स्फोटः स्थिरत्वं च कुष्ठे मांस समाश्रिते ॥ २७ ॥ ३ ॥
कौण्यं गतिक्षयो गानां संभेदः क्षतसर्पणं ॥
मेदः स्थान गते लिंगं प्रागुक्तानि तथैवच ॥ २८ ॥ ४ ॥
नासाभंगोऽक्षिरोगश्च क्षतेषु कृमिसंभवः ॥
स्वरो पघातश्च भवेदस्थि मज्जा समाश्रिते ॥ २९ ॥ ५ ॥ ६
दंपत्योः कुष्टबाहुल्या दुष्ट शोणित शुक्रयोः ॥
यद पत्यंतयोर्जातं ज्ञेयंतदपि कुष्ठितं ॥ ३० ॥

अब जो उत्तरोत्तर सातौ धातुनमे प्राप्तभये कुष्ठ तिनके लक्षण कहते हैं जो कुष्ठ रस धातुगत होता है उसते रूपका कुरूप शरीर रूखा चर्म शून्य रोमांच औ पसीना बहुत ये लक्षण होते हैं ॥ १ ॥ रक्तगत कुष्ठमे शरीरमे खाज औ पीब जादा बहता है ॥ २६ ॥ २ ॥ मांसगत कुष्ठमे जखमका बडा होना मुखका सुखना कर्कशत्व फुंसियों काहोना सुई भोकने सरीखी पीडा चर्मका फटना घावकी अचलता ये लक्षण होते हैं ॥ २७ ॥ ३ ॥ मेदोगत कुष्ठमे हाथौंका टेढा होना चलने कीभी अशक्तता अंगौंका फूटना जखमौंका फैलना ये लक्षण होते हैं तथा जो लक्षण प्रथम रस रक्त औ मांस गतके कहे हैं वेभी होते हैं ॥ २८ ॥ ४ ॥ हाड औ हाडौके भीतर जो मगज रहता है उनदोनौंमे जो कुष्ठ प्राप्त होता है उसमे नाक वैठि जाती है नेत्र लाल रहते हैं व्रणौंमे कींडे पडते हैं औ आवाज वैठि जाती है ॥ २९ ॥ ५॥

॥ ६ ॥ जो स्त्रीपुरुष दोनौके रज वीर्यमे कुष्ठकी अधिकता होय तौ जो उनका संतान होय सो भी कुष्ठी होय उसके लक्षण ओरसादि सर्व धातुगत कुष्ठके कहै उसीतरहसे जानना ॥ ७ ॥ ३० ॥

अथ साध्यादिभेदानाह

साध्यं त्वग्रक्त मांसस्थं वातश्लेष्माधिकं च यत् ॥
मेदसि द्वंद्वजं याप्यं वर्ज्यं मज्जास्थि संश्रयं ॥ ३१ ॥
कृमि त्दल्लास मंदाग्नि संयुतं यत्रिदोषजं ॥
प्रभिन्नं प्रस्रुतांगंच रक्तनेत्रं हतस्वरं ॥
पंचकर्म गुणातीतं कुष्ठं हंती ह कुष्ठिनं ॥ ३२ ॥

अब साध्यादिक भेद कहते हैं जैसे कि जो कुष्ठ रस रक्त औ मांसगत होता है तथा जो वात कफाधिक होता हैं सो साध्य होता है तहां चर्म एक कुष्ठकिटिभ सिध्मा अलस औ विपादिक ये वात कफ जन्य साध्य है जो मेदगत औ द्वंद्वज होते हैं वैयाप्य होते हैं जो कुष्ठ अस्थि मज्जागत होता है सो असाध्य जो अस्थिमज्जागत असाध्य कहे तौ रज वीर्यगत कीतौ असाध्यता होनेमे संदे है नहीं है ॥ ३१ ॥ जिस कुष्ठमे कीडे पडे होय उबकाई आवै अग्निमंद कुष्ठ सन्निपातिक होय हाथ पायं इत्यादिक अंग फूटिके वहने लगे होय नेत्रलाल आवाज पडिगई होय तथा जो वमन विरेचादिक पंचकर्म सोभी उसको अपना प्रभाव नदेखायसकैं उसको असाध्य जानना वह कुष्ठीके मारनेहीके वास्ते उत्पन्न होता है ॥ ३२ ॥

अथ कुष्ठेषु चिकित्सार्थं वातादिदोषाणां प्राधान्यमाह ॥

वातेनकुष्टंकापालं पित्तेनौदुंबरं कफात् ॥

मंडलाख्यं विचर्चीच ऋक्षाख्यं वातपित्तजं ॥ ३३॥
चर्मैक कुष्टं किटिभं सिध्मालस विपादिकाः॥
वातश्लेष्मभ वाश्लेष्म पित्ताद्दद्रूशतारुषी॥ ३४॥
पुंडरीकं सविस्फोटं पामाचर्म दलं तथा॥
सर्वैः स्यात्काकणं पूर्वं त्रिकंदद्रूः सकाकणं॥
पुंडरीकर्क्ष जिव्हेच महाकुष्ठानि सप्ततु॥ ३५॥

अब औषध करनेके वास्ते कुष्ठौंमे वातादिक दोषौंकी मुख्यता कहते हैं ॥ कापाल कुष्ठमे वायु मुख्य है औडुंबरमे पित्त मंडल औ विचर्चिकामे कफ मुख्य ऋक्षजिव्हमे वात पित्त मुख्य ॥ ३३ ॥ चर्म एक कुष्ठ किटिभ सिध्मा अलस औ विपादिका इनमे वात कफ मुख्य दद्रू शतारू ॥ ३४ ॥ पुंडरीक विस्फोट पामा औ चर्म दल इनमे कफ पित्त मुख्य काकणमे तीनौ दोष मुख्य तामे समान होते हैं इनमे प्रथमके तीनियाने कापाल औडुंबर औ मंडल तथा दद्रूकाकण पुंडरीक औ ऋक्षजिव्ह ये चारि ऐसे मिलिके ये सात माहा कुष्ठ हैं ॥ ३५ ॥

अथ श्वित्रकिलासयोर्निदानं

कुष्ठैक संभवं श्वित्रं किलासंचारुणं भवेत्॥
निर्दिष्ट मपरिस्रावि त्रिधातूद्भव संश्रयम्॥ ३६॥

अब श्वित्र औ किलास इन दोनौका निदान कहते हैं तिनमे श्वित्र सफेद कुष्ठका नाम है किलास किंचित् ललामी लिये होता है इन दोनौकी संप्राप्ति औ कारण कुष्ठहीके समान हैं ये पकते औ

वहते नही तथा पीडाभी नहींकरते हैं त्रिदोषिक हैं औ रक्त मांस तथा मेदमे रहने वाले हैं ॥ ३६ ॥

अनयोर्वातादिभेदेन लक्षणं

वाता रूक्षा रूणं पित्ता त्ताम्रं कमल पत्रवत् ॥
सदाहं रोमविध्वंसि कफाच्छ्वेतं घनंगुरु ॥ ३७ ॥
सकंडुरं क्रमाद्रक्त मांसमेदःसुचादिशेत् ॥
वर्णेनैव दृगुभयं कृच्छ्रं तच्चोत्तरोत्तरं ॥ ३८ ॥

अब वातादिभेद करिके लक्षण कहते हैं

वायुंसे रूखा औ किंचित् लाल रंगका पित्तसे कमलकी पखुरी के समान बीचमे गुलाबी औ किनारौं पर लाल तथा दाह युक्त औ रोमनका नाशक होता है कफसे सफेद सदृढ औ भारी लगता है यह रोग क्रमसे रक्त मांस औ मेदके आश्रित रहता है जैसे वातिक रक्ताश्रित पैतिक मांसाश्रित औ कफज मेदोगत रहता है वर्णमे भी ऐसाही जानना कि रूक्ष औ लाल रक्तगत कमल वर्ण मांसगत औ सफेद मेदगत रहता है ॥ ३७ ॥ इसके औरभी दो प्रकार हैं एक तौ अग्निदग्ध व्रणादिक के योगसे होता है दूसरा वातादि दोषौंसे होता है सो प्रमाण चरकादिक ग्रंथौंमे है यह श्वित्र उत्तरोत्तर कष्टसाध्य है जैसें रक्तगतसे मांसगत मांसगतसे मेदोगत कष्टसाध्य है ॥ ३८ ॥

अथ साध्यासाध्यत्वमाह

अशुक्ल रोमाऽवहलम संश्लिष्टमथोनवं ॥
अनग्नि दग्ध जंसाध्यं श्वित्रं वर्ज्यमतोऽन्यथा ॥ ३९ ॥
गुह्य पाणितलौष्टेषु जात मप्य चिरंतनं ॥

वर्जनीयं विशेषेण किलासंसिद्धि मिच्छता ॥ ४० ॥

अब साध्यासाध्य भेद कहते हैं

जिस श्वित्रमे रोमसफेद नभये होय औ सफेदी भी पतली दीखै तथा दाग एकमे एकमिले न होय औ नवीन होय तत्रापि अग्निके जलनेसे नभया होय सो साध्य इसके सेवाय और असाध्य होते हैं ॥ ३९ ॥ तथा जो गुह्य याने गुदा योनि लिंग पर भया होय अथवा हाथकी हथेली औ पायनके तरवौंमे तथा ओंठ मो औ जो बहुत दिनौंका होय उसकी औ किलासकी औषधि नकरै ॥ ४० ॥

अथ कुष्टस्यसं सर्गजत्व प्रसंगेनान्यान पिसंसर्गजान्रोगानाह

प्रसंगा द्गात्रसंस्पर्शान्निःश्वासा त्सहभोजनात् ॥
सह शय्याशना च्चापि वस्त्रमाल्या नुलेपनात् ॥ ४१ ॥
कुष्ठं ज्वरश्च शोषश्च नेत्राभि स्पंद एवच ॥
औप सर्गिक रोगाश्च संक्रामंति नरान्नरं ॥ ४२ ॥

इति रुग्विनिश्चये कुष्ठ निदानं

अब कुष्ठके संसर्गित्वके प्रसंगसे औरभी संसर्गी रोगौंको देखाते हैं प्रसंग याने मैथुन गात्रस्पर्श याने मिलिके बैठना छूना आपसमे श्वास उच्छ्वासका लगना एक पात्रमे भोजन करना एकआसन परसोना बैठना तथा उसका पहिरा भया वस्त्र वामाला औ चंदन धारण करना इत्यादिक कारणौंसे ॥ ४१ ॥ कुष्ठज्वर शोष नेत्रौंक दुखना ये रोग एकसे दूसरेको लगिजाते हैं ॥ ४२ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दिपिकायां कुष्ठ निदान प्रकाशः ॥ ५५ ॥

अथ शीतपित्तोदर्द कोठोत्कोठानां निदानं

शीत मारुत संस्पर्शात्प्रदुष्टौ कफमारुतौ ॥
पित्तेन सहसंभूय बहिरंत र्विसर्पतः ॥ १ ॥

अब शीत पित्त उदर्द कोठ औ उत्कोठ इनरोगोंका निदान कहते है जैसे कि ठंढे पवनके लगनेसे कफ औ वायु ये दोनौ दूषित व्हैके पित्तसे मिलिके बाहेर चर्ममे औ अंदर रक्तमे फैलि जाते हैं ॥ १ ॥

पूर्व रूपमाह

पिपासा रुचि हृल्लास मोह सादांग गौरवं ॥
रक्तलोचनता तेषां पूर्वरूपस्व लक्षणम् ॥ २ ॥

शीत पित्त उदर्द कोठ औ उत्कोठके होनेके प्रथम पिआस लगती है तथा अरुचि उबकाई मोह याने घबराहट अंगकी शिथिलता औ भारी पन तथा नेत्रौंमे ललामी ये लक्षण होते हैं ॥ २ ॥

अथैतेषां लक्षणान्याह

वरटी दष्ट संस्थानः शोथः संजायते बहिः ॥
सकंडू तोद बहुल च्छर्दिज्वर विदाहवान् ॥
वाताधिक तमं विद्या च्छीत पित्त मिमं भिषक् ॥ ३ ॥
सोत्संगैश्च सरागैश्च कंडूमद्भि श्चमंडलैः ॥
शैशिरः श्लेष्म बहुल उदर्द इति कीर्तितः ॥ ४ ॥
असम्य ग्वमनो दीर्ण पित्तश्लेष्मा न्ननिग्रहैः ॥
मंडलानि सकंडू निरागवंति बहुनिच ॥
उत्कोठः सानुबंधश्च कोठ इत्यभिधीयते ॥ ५ ॥

इति रु० शीतपित्तादिनां नि०

अब इनसबौंके लक्षण कहते हैं

जैसे बरैयोंके काटने से ददोरे पडतें हैं वैसे चर्म पर बाहेर ददोरे उठिके उनमे खाज औ सुई छेदने सरीखी अति वेदना होय तथा वांति ज्वर औ दाह होय उसको शीत पित्त कहते हैं वह रोग अति बात प्रधान है ॥ ३ ॥ जो ददोरे बीचमे गहिरे औ किनारौं पर ऊंचे रंगमे ललामी लिये होय उन ददोरौंमे खाज आती होय तौ वह रोग उदर्द शिशिर ऋतुमे कफकी अधिकतासे होता है ॥ ४ ॥ जो अछी तरहसे वमन न भया होय औ उस वमनसे निकलने पर भये जो पित्त कफ औ अन्न उनके रुकनेसे खाज औ ललामी युक्त बहुतसे ददोरे उत्पन्न होते हैं उस रोगको कोठ कहते हैं औ जो क्षण क्षणमे इसी तरह व्है व्हैके मिटिमिटि जाय सो उत्कोठ है ऐसा निश्चय करना ॥ ५ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पं० रघुनाथ प्रसाद विर० रुग्वि० दीपिकायां शीत पित्त उदर्दकोठोत्कोठ निदान प्रकाशः ॥ ५६ ॥

अथाम्ल पित्त निदानं

विरुद्ध दुष्टाम्ल विदाहि पित्त प्रकोपि पानान्नभुजो विदग्धं॥ पित्तंस्वहेतूपचितं पुरायत्त दम्लपित्तं प्रवदंति संतः॥ १ ॥

अब अम्ल पित्तका निदान कहते हैं पुरा याने वर्षाकालमे पित्त कारक पदार्थौंके सेवन करने से संचित भया हुआ जो पित्त सो विरुद्ध अन्न याने दूधमच्छी एक संग इत्यादिक दुष्ट जो वासी अभिलियाना इत्यादिक अम्लयाने अति खट्टा तथा दाह औ पित्तके करने वाले पदार्थ पान अन्नादिक दिनके अति सेवन करनेसे विगडा भया जो पित्त उसको अम्लपित्त कहते हैं ॥ १ ॥

अथास्य लक्षण माह

अविपाक क्लम क्लेद तिक्ता म्लोद्गार गौरवैः॥
हृत्कंठ दाहा ऽ रुचि भि रम्लपित्तं वदेद्भिषक्॥ २॥

जब अन्न न पचै घवडाहट होय उवकाई आवैं तथा कडुई औ-खट्टी डकौरें आवैं शरीर भारी रहै हृदय औ कंठमे जलनिपड़ै अन्नादिकौंपर रुचि न हो तब जानना कि इसको अम्लपित्त भया है॥ २॥

भेदमाह

अम्लपित्तं द्विधा प्रोक्त मधोगं चतथोर्ध्वगं॥ ३॥

अम्ल पित्त दोप्रकारका है एक अधोगामी भी दूसरा उर्ध्व गामी॥ ३॥

अथाधोगामिनोलक्षणं

तृड दाह मूर्च्छा भ्रममोह कारि प्रयात्य धो वा वि विध प्रकारं॥ हृल्लास कोठान लसाद हर्ष स्वेदांग पीतत्वक रंकदाचित्॥ ४॥

अधोगामी अम्ल पित्तसे पियास दाह मूर्च्छा भ्रम औ घवडाहट होता है तथा अनेक रंगका झाडा होता है औ कोई कोई वखत उवकाई पंला छूटना कोठ रोग अग्निमांद्य रोमांच पसीना ये रोग होते हैं औ कभी अंगकोभी पीला करिदेता है॥ ४॥

अथोर्ध्वगामि लक्षणं

वांतं हरित्पीत कनीलकृष्ण मारक्त रक्ताभ मतीव चाम्लं॥ मांसोदकाभं त्वतिपिच्छिलंच श्लेष्मान यातं विविधं रसेन॥ ५॥ भुक्ते विदग्धे प्यथवा प्य

भुक्ते करोति तिक्ताम्लमवमिंकदाचित्॥उद्गारमेवं विधमेवकंठहृत्कुक्षिदाहं शिरसो रुजश्च॥६॥

ऊर्ध्वगामी अम्लपित्तमे हरी पीली नीली काली गुलाबी लाल अति खट्टी मासके धोवन सरीखी अति चिकनी जिसके अंतमे अनेक रसौंके स्वाद युक्त कफ गिरै ॥ ५ ॥ कभी भोजन किये पीछे कभी अन्नके विदग्ध होनेसे अथवा भोजनके प्रथमही कडुई औ खट्टी वांति होती है डकारौंका अति आना तथा हृदय कंठ औ कोखि इनमे दाह तथा मस्तकमे पीडा होती है ॥ ६ ॥

करचरणदाहमौष्ण्यं महतीमरुचिं ज्वरंच कफपित्तं॥जनयति कंडूमंडल पिडिकाशतनिचित गात्ररोगचयं॥७॥

यह अम्लपित्त रोग हाथ पायनमे दाह देहमे उष्णता अरुचि ज्वर कफ पित्त खाज देहमे चकते औ सैकडौं फुंसी फोडे इत्यादि रोग समूहको उत्पन्न करता है ॥ ७ ॥

रोगोऽयमम्लपित्ताख्यो यत्नात्संसाध्यते नवः॥ चिरोत्थितो भवेद्याप्यः कृच्छ्रसाध्यः सकस्यचित्॥८॥

यह अम्लपित्त रोग जो नवीन होय तौ बडे प्रयत्नसे साधनेमे आवै औ बहुत दिनौंका होनेसे किसीका याप्य किसीका कष्ट साध्य व्है जाता है ॥ ८ ॥

अथाम्लपित्ते दोषसंसर्गमाह

सानिलं सानिलकफं सकफं तच्च लक्षयेत्॥

दोष लिंगेन मतिमान् भिषङ्मोहकरं हितत् ॥ ९ ॥

अब अम्ल पित्तमे दोषौका संसर्ग कहते है जैसेकि यह अम्ल पित्त रोग वात सहित वात कफसहित औ कफ सहित होता है इसको बुद्धि मान वैद्य वातादि दोषौंके चिन्हौंसे निश्चयकरै यह वैद्यौकेभी पहिचाननेमेबडे प्रयत्नसे आता है सववकि हृदय कंठ विदग्ध अजीर्णमे भी जलता है वांति छर्दि रोगमे झाडा अती सारादिकमेभी होता है इसवास्ते संदेह रहता है ॥ ९ ॥

तत्र सानिलमाह

कंप प्रलाप मूर्च्छा चिम चिम गात्रा वसाद शूलानि ॥ तमसो दर्शन विभ्रम प्रमोह हर्षाण्य निलयुते ॥ १० ॥

वात युक्त अम्ल पित्तमे कंपा बडवड बकना मूर्छा शरीरमे राई वगैरे लगाने सरीखा चिम चिमाहट अंगशिथिल शूल नेत्रौंमे अंधेरी आना चित्तभ्रम प्रमोह याने कार्याकार्यका अज्ञान अर्थात् घबराना औ रोमांच ये लक्षण होते हैं ॥ १० ॥

सकफाम्लपित्तल०

कफ निष्ठीवन गौरव जडता रुचि शीत साद वमि लेपाः ॥ दहन बलसाद कंडू निद्रा चिन्हं कफानु गते ॥ ११ ॥

कफ युक्त अम्ल पित्तमे कफ थूकना शरीरका भारी होना औ जकडना अरुचि ठंढलगना अंगशिथिल वांति होना मुखमे कफ लपटा रहना अग्नि औ बलकी मंदता खाज औ निद्रा ये लक्षण होते हैं ॥ ११ ॥

वात कफयुक्ता म्लपित्तल०

उभय मिदमेव चिन्हं मारुत कफसंभवे भव त्य म्ले॥ १२॥

इति रुग्विनिश्चये अम्ल पित्त निदानम्

जो अम्ल पित्त वात कफ युक्त होता है उसमे जो ऊपर वात औ कफके न्यारे न्यारे चिन्ह कहे ते वै सर्व होते हैं ॥ १२ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित [illegible]घुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां अम्लपित्त नि[illegible]प्रकाशः ॥ ५७ ॥

अथ विसर्प निदानं

लवणाम्ल कटूष्णा[illegible]ना द्दोष कोपतः॥
विसर्पः सप्तधा [illegible]ः परि सर्पणात्॥ १॥
पृथक्त्रय स्त्रि[illegible] सप्तसर्पा द्वंद्वजा स्त्रयः॥
वातिकः पैत्तिक[illegible]फजः सान्निपातिकः॥ २॥
चत्वार एते वीस[illegible]र्प्यंते द्वंद्वजास्त्रयः॥
आग्नेयो वातपित्ताभ्यां ग्रंथ्याख्यः कफवातजः॥ ३॥
यस्तुकर्दमको घोरः सपित्त कफसंभवः॥ ४॥

अथ विसर्प निदान कहते है

लवण खटाई चिरपिरा औ उष्ण पदार्थ इत्यादिकौंके अति सेवनसे वातादिक दोष कुपित होते हैं उस कोपसे सात प्रकारका विसर्प रोग होता है ॥ १ ॥ सो ऐसेकि वातादिक न्यारे न्यारे दोषौं करिके तीनि सन्निपातसे ॥ २ ॥ एक औ तीनि द्वंद्वज ऐसे सात तिनमे जो

आग्नेय नामका विसर्प है सो वातपित्तसे ग्रंथि विसर्प कफ वातसे ॥३॥ औ कर्दम पित्त कफसे ॥ ४ ॥

अथ विसर्पाणां दोष दूष्याणिसंगृह्याह

रक्तं लसीका त्वङ्मांसं दूष्यंदोषा स्त्रयोमलाः॥
विसर्पाणां समुत्पत्तौ विज्ञेयाः सप्तधातवः॥ ५॥

अब विसर्पोंके दोष औ दूष्य संग्रह करिके कहते हैं जैसे कि रक्त लसीका जो शरीरमे पानीका भाग जिसके [illegible] कहते हैं खजु आनेसे कभी कभी निकलता है उसव तथा त्वचा [illegible] ये दूष्य औ वातादिक तीनौं दोष ऐसे येसात विसर्पकी उत्प[illegible] होते हैं ॥ ५ ॥

अथ वातजादिविसर्पाणां लक्षणान्य[illegible]

तत्र वाता त्परीसर्पो वात ज्व[illegible] अंग[illegible]व्यथः॥
शोफ स्फुरण निस्तोद भेदाया[illegible]हर्षवान्॥ ६॥
पित्ताद्रुत गतिः पित्तज्वर लिंगो[illegible] लोहितः॥
कफा त्कंडूयुतः स्निग्धः कफज्वर समान रुक्॥
सन्निपात समुत्थश्च सर्वरूप समन्वितः॥ ७॥

अब वातज इत्यादिक विसर्पोंके लक्षण कहते हैं तिनमे से वातज विसर्पमे वातज्वर समान वेदना शोथका फरकना उसमे सुईटोंचने सरीखी औ चीरने सरीखी पीडा शोफ का पसरना दुःखना औ रोमांच येलक्षण होते हैं ॥६॥ पित्तसे जलदी फैलता है औ पित्तज्वरके समान चिन्ह युक्त अतिलाल होता है॥ कफसे खाज युक्त चिकना औ कफज्वरके समान लक्षण युक्त होता है ॥ जो सन्निपातिक होता है

उसमे ऊपर कहे भये वातजादिक विसर्पोंके सब लक्षण होते है ॥ ७॥

अथ वात पित्तजमाग्ने याख्यंवि सर्पल०

वात पित्ता ज्वर च्छर्दिमूर्छा तीसार तड्भ्रमैः॥
अस्थिभेदा ग्निसदन तमका रोचकैर्युतः॥ ८॥
करोति सर्वमंगंच दीप्तांगा राऽवकीर्णवत्॥॥
यंयंदेशं विसर्पश्च विसर्पति भवेत्ससः॥ ९॥
शांतांगारा सितो नीलो रक्तो वाशू पचीयते॥
अग्निदग्धनिभैः स्फोटैः शीघ्रगत्वा द्रुतंचसः॥ १०॥
मर्मानु सारी वीसर्पः स्याद्वातो ति बलस्ततः॥
व्यथेतांगंहरेत्संज्ञां निद्रांच श्वास मीरयेत्॥ ११॥
हिक्कांच सततो ऽवस्था मीदृशीं लभतेनरः॥
क्वचिच्छर्मा रतिग्रस्तो भूमिशय्या सनादिषु॥ १२॥
चेष्टमान स्ततः क्लिष्टो मनोदेह श्रमो द्भवां॥
दुःप्रबोधो ऽश्नुते निद्रां सोग्नि वीसर्प उच्यते॥ १३॥

जो वात पित्तसे आग्नेयनाम का विसर्प होता है उसके लक्षण कहते हैं॥ जो विसर्प वात पित्तसे होता है उसमे ज्वर वांति मूर्छा अतिसार पियास भ्रम हडफूटनि मंदाग्नि तमक श्वास औ अरुचि ये लक्षण होते हैं ॥ ८ ॥ औ शरीरको जलते अंगारोसे व्याप्त सरीखा करता है वह विसर्प जिसजिस अंगमे पसरता जाता है॥ ९ ॥ सोसो अंग जैसे बुझा भया अंगार तैसा काला नीला अथवा लाल्हैके जल्दी बढता है औ जैसे आगिके जले भयेमे फफोले होते हैं तैसे फो-

लौंकरिके वह विसर्प शीघ्रगामी पनेसे ॥ १० ॥ हृदयादिक मर्मस्थानौं-मे प्राप्त होता है इसीते अति प्रवल व्है जाता है उस प्रबलतासे अंगको पीडित करता है औ अचेतभी करता है फिरि निद्रा औ श्वासकोभी वढाता है ॥ ११ ॥ हुचकी कोभी पैदाकरता है ऐसी अवस्था को प्राप्त भया जो मनुष्य सो दुखसे पीडित जमीन विछौना औ आसन इत्या-दिकौं परभी कहीं सुखपाता नहीं ॥ १२ ॥ तब अतिदुखित चेष्टाकरता याने तलफता भया मन औ देहके परिश्रमसे उत्पन्न भई जो निद्रा उस निद्राके वश होता है फिरिजगानेसे भी अति कठिनतासे जागता है इस विसर्पको अग्नि विसर्प कहते हैं ॥ १३ ॥

अथ ग्रंथिविसर्प लक्षणं

कफेन रुद्धः पवनो भित्वातं वहुधा कफं ॥
रक्तं च वृद्धरक्तस्य त्वक्शिरा स्नायुमांसगं ॥ १४ ॥
दूषयित्वा चदीर्घाणु वृत्तस्थूल खरात्मनां ॥
ग्रंथीनां कुरुते मालां रक्तानां तीव्ररुग्ज्वराम् ॥ १५ ॥
कासश्वासाति साराम्य शोषहिक्का वमिभ्रमैः ॥
मोह वैवर्ण्य मूर्छांग भंगाग्नि सदनै र्युतां ॥
इत्ययं ग्रंथिवीसर्पः कफमारुत कोपजः ॥ १६ ॥

अव ग्रंथिविसर्पके लक्षण कहते हैं

जैसेकि जिस मनुष्यका रक्त अति वढाभया होता है उसके कुपित कफ करिके रुका भया कुपित वायु उस कफको औ रक्तको भी अनेक प्रकारसे भेदन करिके त्वचा याने चमडा शिरा याने मोटिनसैं

स्नायु याने पतरी नसें ॥ १४ ॥ तथा मांस इनमे रहे भये रक्तको दूषित करिके लंवी छोठी गोल मोटी खरखरी औ लाल ऐसी तरहकी गांठौंकी माला सरीखी पैदाकरता है इसमे ज्वर ॥ १५ ॥ श्वास कास अतिसार मुख शोष हुचकी वांति भ्रम मोह विवर्णता मूर्छा शरीर टुटना औ मंदाग्नि ये उत्पन्न होते है इसको अग्निविसर्प कहते हैं यह कफ औ वातके कोपसे होता है ॥ १६ ॥

अथ कर्दम विसर्प ल०

कफ पित्ताज्ज्वर स्तंभो निद्रा तंद्रा शिरोरुजा॥
अंगा वसाद् विक्षेप प्रलापा रोचक भ्रमाः॥ १७॥
मूर्छाग्नि हानि भेंदोस्थ्नां पिपासेंद्रिय गौरवं॥
आमो पवेशनं लेपः स्रोतसां सविसर्पति॥ १८॥
प्रायेणा माशयं गृह्णन्नै कदेशंन चातिरुक्॥
पिडिकै रवकी र्णोति पीतलोहित पांडुरैः॥ १९॥
स्निग्धोऽसितो मेचकाभो मलिनः शोफवान्गुरुः॥
गंभीर पाकः प्राज्योष्मा स्पष्टक्लिन्नोऽवदीर्यते॥ २०॥
पंकव च्छीर्णमांसश्च स्फुटस्नायु शिरागणः॥
शवगंधीच वीसर्पः कर्दमाख्य मुशंतितम्॥ २१॥

कर्दम विसर्पके लक्षण जैसेकि कुपित भये हुये कफ औ पित्त करिके विसर्प होनेमे ज्वर शरीरका जकडना निद्रा नेत्रौं पर झपकी मस्तकमे पीडा अंगौंकी शिथिलता औ इधर उधर हाथ पाय मस्तक पटकना बडबडवकना अरुचि भ्रम ॥ १७ ॥ मूर्छा मंदाग्नि हडफूटनि

पिआस सर्व इंद्रियौंमे गरुअई आमल पटाभया मलनाक इत्यादिक छिद्रौंका लिपना इत्यादि लक्षण होते हैं वह विसर्प बहुधा करिके ॥ १८ ॥ अकेले आमाशयहीको ग्रहण करता भया एक ठेकाने प्राप्त होता है औ पीडा भी अल्पही करता है तथा वह विसर्प पीली लाल औ पांडुवर्ण ऐसी बहुतसी फुंसिनसे व्याप्तरहता है ॥ १९ ॥ तथा चिकना काला अथवा सुरमाई रंगका अथवा मैला शोथ युक्त भारी भीतरही भी तर पकने वाला छूनेमे आगिसरीखा गरमलगै भी जाभया दीखै जिसतरहकी चड सूखनेसे फटिजाता है तैसा फटता होय ॥२०॥ ऐसे मांसके फटनेसे मोटी औ पतली नसैं खुलासा दीखने लगैं औ उसमे मुरदासरीखी दुर्गंध आवै उसका नाम कर्दम विसर्प है ॥ २१ ॥

अथ साध्यासाध्यादि ल०

सिध्यंति वातकफ पित्तकृता विसर्पाः सर्वात्मकः क्षतकृतश्च नसिद्धिमेति ॥ पित्तात्मको जनवपुश्च भवेदसाध्यः कृच्छ्रश्च मर्मसु भवंति हिसर्वएव ॥ २२ ॥

इति रुग्विनिश्चये विसर्प निदानं

विसर्पके साध्या साध्य लक्षण जैसेकि जो विसर्प न्यारे न्यारे एकही दोष जनित वात पित्त कफकृत होते हैं वैसाध्य हैं त्रिदोषज औ क्षतज असाध्य है औ जो पित्तज काले रंगका होयतौ वहभी असाध्य होता है औ जेतने मर्मस्थानौंमे होते हैं वैसब अतिकष्ट साध्य होते हैं ॥ २२ ॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामा त्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चय दीपिकायां विसर्प निदान प्रकाशः ॥ ५८ ॥

अथ विस्फोटक निदानं

कट्वम्ल तीक्ष्णोष्ण विदाहि रूक्ष क्षारै रजीर्णाध्य
शना तपैश्च ॥ तथर्तु दोषेण विपर्ययेण कुप्यंति
दोषाः पवनादयस्तु ॥ १ ॥ त्वच माश्रित्य तेरक्तं मां
सास्थीनि प्रदूष्यच ॥ घोरान्कुर्वंति विस्फोटान्स
र्वान् ज्वरपुरः सरान् ॥ २ ॥

अब विस्फोटक निदान कहते हैं जैसेकि कडुये खट्टे तीक्ष्ण गरम दाह कारक रूखे औ खारे पदार्थोंके अतिसेवन करने तथा अजीर्ण औ अध्यशन जो भोजन पर भोजन आतप जो घाम ऋतु औ वातादि दोषके विपरीत पनेसे वातादिक दोष कुपित होते हैं ॥ १ ॥ वै-त्वचामे रहिके रक्त मांस औ हाडौंको दूषित करिके प्रथम ज्वर औ उस ज्वरके साथही घोर विस्फोटौंको उत्पन्न करते हैं इसरोगको लोग शीतला कहते है ॥ २ ॥

रूपमाह

अग्निदग्ध निभाःस्फोटाः सज्वरा रक्तपित्तजाः ॥
क्वचित्सर्वत्र वादेहे विस्फोटा इतिते स्मृताः ॥ ३ ॥

विस्फोटौंका लक्षण जैसेकि देहमे एक दोठेकाने अथवा सर्व देहमे रक्त पित्तसे जो ज्वरके सहित अग्निसे जलनेसे फफोलौंके समान फफोले होते हैं उनको विस्फोट कहते हैं ॥ ३ ॥

वातज ल०

शिरोरुक् शूल भूयिष्ठं ज्वर तृट् पर्वभेदनं ॥

सकृष्ण वर्णताचेति वातविस्फोट लक्षणं ॥ ४ ॥

वातज विस्फोट रोगमे मस्तक रोग औ शूल अतिशय तथा ज्वर पियास संधिनमे ठनका औ फफोलौंका रंग काला पन लिये होता है ॥ ४ ॥

पित्तज लक्षणं

ज्वरदाह रुजा स्राव पाक तृष्णा भिरन्वितं ॥
पीतलोहित वर्णच पित्त विस्फोट लक्षणम् ॥ ५ ॥

पित्तज विस्फोटमे ज्वर दाह पीडा वहना पकना पियास युक्त फफोलौंका रंगपीलयस लिये लाला ये लक्षण होते हैं ॥ ५ ॥

कफ विस्फोट ल०

छर्घरोचक जाड्याति कंडु का ठिन्य पांडुताः ॥
अवेदन श्चिरात्पाकी सविस्फोटः कफात्मकः ॥ ६ ॥

कफजविस्फोटकयह वांति अरुचि जडता अतिखाज व्रणौंकी कठिनता औ पांडुता युक्त वेदना रहित औबहुत देरसे पकताहै ॥ ६ ॥

द्वंद्वजल०॥

वात पित्तकृतो यस्तु कुरुते तीव्रवेदनां ॥
कंडूदाहो ज्वरश्छर्दि रेतैस्तु कफपैत्तिकः ॥
कंडू स्तै मित्य गुरुभि र्जानीया त्कफवातजं ॥ ७ ॥

द्वंद्वज लक्षण जैसेकि जो विस्फोट वातपित्तसे होताहै उसमे वेदना तीव्रहोतीहै ॥ जोकफपित्तसे होताहै उसमे खाजदाह ज्वर औ वांति येलक्षणहोतेहैं ॥ जोकफ वातसे होताहै उसमे खाज आलस औगरुअई येलक्षणहोतेहैं ॥ ७ ॥

त्रिदोषजल०॥

मध्ये निम्नोन्नतों तेच कठिनो ल्प प्रपाकवान्॥
दाह रागतृषा मोह छर्दि मूर्च्छा रुजोज्वरः॥
प्रलापो वेपथु स्तंद्रासत्व साध्यस्त्रिदोषजः॥ ८॥

त्रिदोषज विस्फोटमे फफोले बीचमे गहिरे किनारौं पर ऊंचे कठिनअल्प पकने वाले तथा दाह तृषा मोह वांति मूर्छावेदना ज्वर बड वडाना कांपना औनेत्रौंपर झपकी येलक्षणहोतेहैं॥ ८॥

रक्तजलक्षणं॥

रक्ता रक्त समुत्थाना गुंजा फल निभा स्तथा॥
वेदितव्या स्तुरक्तेन पैत्तिकेन चहेतुना॥
नते सिद्धिं समायांति सिद्धैर्योग वरैरपि॥ ९॥

जो विस्फोटक रक्तदोषसे होतेहैं वै रक्त वरन घुंघुची सरीखे होतेहैं उनके होनेके कारण पित्तज सरीखे जानना वै सैकडौं सिद्ध उपाय कियेतौ भी मिटने केनहीं॥ ९॥

साध्यासाध्य लक्षण

एकदोषो त्थितः साध्यः कृच्छ्रसाध्यो द्विदोषजः॥
सर्वदोषो त्थितो घोर स्त्वसाध्यो भूर्युपद्रवः॥ १०॥

जो विस्फोट एकदोषसे होता है सोसाध्य द्विदोषज कष्टसाध्य जो त्रिदोषज होताहै सो औजो उपद्रव युक्त होता है सोघोर असाध्य होता है॥ १०॥

हिक्का श्वासो ऽरुचि तृष्णा अंग सांदो हृदि व्यथा॥
विसर्पज्वर हृल्लासा विस्फोटाना मुपद्रवाः॥ ११॥

इतिरुग्वि विस्फोटक निदानं

विस्फोटक रोगमे हुचकी श्वास अरुचि तृषा अंगमे सुस्ती हृदयमे वेदना विसर्प ज्वर औउबकाई ये उपद्रव होते हैं॥ ११॥

इति श्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांविस्फोटनिदानप्रकाशः॥ ५१॥

अथमसूरिकानिदानं

कट्वम्ल लवण क्षार विरुद्धा ऽध्यशनाःशनैः॥
दुष्टनिष्पाव शाकाद्यैः प्रदुष्टैः पवनोदकैः॥ १॥
क्रुद्ध ग्रहेक्षणा द्वापि देहे दोषाः समुद्धताः॥
जनयंतिशरीरेऽस्मिन् दुष्टरक्तेन संगताः॥ २॥
मसूरा कृति संस्थानाः पिडिकाः स्यु र्मसूरिकाः॥ ३॥

अब मसूरिका याने छोटीमाताका निदान कहतेहैं कडू खट्टा लोन खार विरुद्ध भोजन तथा भोजन परभोजन तथा दूषित अन्न औ मटरा शाग इत्यादि तथा दूषित पवन औजलसे॥ १॥ तथा कुपितग्रह की दृष्टिसे भी देहमै वातादि दोष कुपित्त भयेहुये दूषित रक्तसे मिलिके॥॥ २॥ मसूरके आकार फुंसियनको उत्पन्न करतेहैं उनको मसूरिका कहतेहैं॥ ३॥

पूर्वरूपमाह

तासां पूर्वंज्वरः कंडू गात्र भंगोऽरुचि र्भ्रमः॥
त्वचि शोथः सवैवर्ण्यो नेत्ररोग स्तथैवच॥ ४॥

मसूरिकाके पूर्वरूपमे प्रथम ज्वर आताहै तथा खाज शरीरका मरोरना अरुचि चित्त भ्रम चमडे पर सूजनि रंगबदरंग औ नेत्रौंमे ललामी येलक्षण होतेहैं ॥ ४ ॥

वातजा मसूरिका ल०

स्फोटाः कृष्णा रुणा रूक्षा स्तीव्रवेदन यान्विताः ॥
कठिना श्चिरपाकाश्च भवंत्य निलसंभवाः ॥ ५ ॥
संध्यस्थि पर्वणां भेदः कासः कंपो ऽरतिः क्लमः ॥
शोषस्ताल्वोष्ट जिव्हानां तृष्णा चारुचि संयुता ॥ ६ ॥

जो मसूरिका वातसे होती है उसके फफोले कालायस लिये लाल औ रूखे तीव्र पीडायुक्त कठिन देरसे पकने वाले ॥ ५ ॥ तथा संधि हाड औ पर्व याने अंगुरिनके पोर इनमे फूटनि कास कंपा अरति याने बेचैनी घवडाहट तालू ओंठ औ जीभका सूखना पिआस औ अरुचि इन लक्षण युक्त होती हैं ॥ ६ ॥

पित्तजा लक्षणं

रक्ताः पीताः सिताः स्फोटा स्तृष्णा दाह समन्विताः ॥
मृदवो ऽचिरपाकाश्च पित्तकोप समुद्भवाः ॥ ७ ॥
विड्भेद श्चा विपाकश्च तृषादाहा रुचि स्तथा ॥
मुखपाको ऽक्षिपाकश्च ज्वर स्तीव्रः सुदारुणः ॥ ८ ॥

पित्तज मसूरिकाके फफोले लाल पीले सफेद तृषा दाह औ पीडा युक्त कोमल जलदी पकने वाले होते हैं ॥ ७ ॥ उस मनुष्यका मल फूटा भया पतला अन्नका नपचना तृषा दाह अरुचि मुख औ नेत्रौंका पकनां तथा तीव्र ज्वर ये लक्षण होते हैं ॥ ८ ॥

रक्तजा मसूरिका ल०

विड्भेदश्चांगमर्दश्च दाहस्तृष्णाऽरुचिस्तथा ॥
मुखपाकोऽक्षिपाकश्च ज्वरस्तीव्रः सुदारुणः ॥
रक्तजायां भवंत्येते विकाराः पित्तसंभवाः ॥ ९ ॥

जो मसूरिका रक्त विकारसे होती हैं उसमे मल फूटा औ पतला अंगटूटना दाह तृषा अरुचि मुख नेत्रौंका पकना औ तीव्र ज्वर ये पित्तके लक्षण रक्तज मसूरिकामे होते हैं ॥ ९ ॥

कफजानां ल०

कफप्रसेकः स्तैमित्यं शिरोरुग्गात्रगौरवं ॥
हृल्लासः सारुचिस्तंद्रा निद्रालस्य समन्विताः ॥ १० ॥
श्वेताः स्निग्धा भृशं स्थूलाः कंडुरा मंदवेदनाः ॥
मसूरिकाः कफोत्थाश्च चिरपाकाः प्रकीर्त्तिताः ॥ ११ ॥

जो मसूरिका कफसे होती हैं उसमे मुखसे कफ गिरता है अंगभीजासा रहता है शिरमे पीडा शरीर भारी उबका इनका आना अरुचि नेत्रौं पर झपकी निद्रा औ आलस करिके युक्त ॥ १० ॥ तथा मसूरिका सफेद चिकनी अतिमोटी खाज औ मंद वेदना युक्त औ बहुत दिनौंमे पकने वाली होतीं हैं ॥ ११ ॥

त्रिदोषजानां ल०

नीलाश्चिपिटविस्तीर्णा मध्ये निम्ना महारुजाः ॥
चिरपाकाः पूतिस्रावाः प्रभूताः सर्वदोषजाः ॥ १२ ॥

जो मसूरिका त्रिदोषसे होती हैं वैनीले रंगकी चिपटी फैली भई

बीचमे गहिरी अति पीडा युक्त बहुत दिनमे पकने वाली दुर्गंधयुक्त पीबकी वहने वाली तथा बहुत होती हैं ॥ १२ ॥

चर्मपिडिका ल०

कंठरोधोऽरुचि स्तंद्रा प्रलापा रतिसंयुताः॥
दुश्चिकित्स्याः समुद्दिष्टा पिडिका श्चर्मसंज्ञिताः॥१३॥

जो चर्म पिडिका होती हैं उनमे कंठकारुक ना अरुचि झपकी बडबड वकना वेचैनी इन लक्षणों करिके युक्त होती हैं वे औषधके योग्य नही होती हैं ॥ १३ ॥

रोमांतिक ल०

रोमकूपोन्नति समा रागिण्यः कफ पित्तजाः॥
कासारोचक संयुक्ता रोमांत्यो ज्वर पूर्विकाः॥ १४॥

जो रोमांतिक मसूरिका होती हैं वे रोम छिद्र समान ऊंची लाल कास औ अरुचि युक्त इनके प्रथम ज्वर आता है वे कफ औ पित्त विकारसे होती हैं ॥ १४ ॥

अथ सप्तधातु गतासु मसूरिकासुरसगतानां लक्षणं तावदाह

तोय बुद्बुद संकाशा स्त्वग्गतास्तु मसूरिकाः॥
स्वल्पदोषाः प्रजायंते भिन्ना स्तोयं स्रवंतिच॥ १५॥

अब सातौ धातुनमे प्राप्तभई जो मसूरिका तिनमे से प्रथम रसगत मसूरिकौंके लक्षण कहते हैं ॥ जो मसूरिका रस धातुमे प्राप्तभई होती हैं वे पानीके बुलबुलाके आकार औ अति अल्प दोषसे होती हैं जब वे फूटती है तब उनमेसे पानी गिरता है ॥ १५ ॥

रक्तगतानां ल०

रक्तस्था लोहिता काराः शीघ्रपाका स्तनुत्वचः॥
साध्या नात्यर्थ दुष्टाश्च भिन्ना रक्तं स्रवंतिच॥ १६॥

जो मसूरिका रक्तगत होती हैं वै लाल जलदीसे पकनें वाली उनकी त्वचा पतली जो वै अतिदोष युक्त नहोयतौ साध्य होती हैं उनके फूटनेसे उनमेसे रक्त निकलता है॥ १६॥

मांसगतानां ल०

मांसस्थाः कठिनाः स्निग्धा श्चिरपाका घनत्वचः॥
गात्रशूलो रतिकंडू मूर्च्छा दाह तृषान्विताः॥ १७॥

जो मसूरिका मांसगत होती हैं

वै कठिन चिकनी बहुत कालसे पकने वाली औ उनकी त्वचा मोटी होती है तथा शरीरमे शूल बेचैनी खाज मूर्छा दाह औ तृषा युक्त होती हैं॥ १७॥

मेदोगतानां ल०

मेदोजा वर्त्तुलाकारा मृदवः किंचि दुन्नताः॥
घोर ज्वर परीताश्च स्निग्धाः स्थूलाः सवेदनाः॥
संमोहा रतिसंतापाः कश्चित्ताभ्यो विनिस्तरेत्॥ १८॥

जो मसूरिका मेदगत होती हैं वै गोल कोमल कुछ ऊंची घोर ज्वर युक्त चिकनी बडी तथा पीडा मोह बेचैनी संताप इन करिके युक्त होती हैं उनसे कोई एक अच्छा होता है॥ १८॥

अस्थि मज्जागतानां ल०

क्षुद्रा गात्रसमा रूक्षा श्चिपिटाः किंचि दुन्नताः॥

मज्जोत्था भ्रमसंमोह वेदना रति संयुताः॥ १९॥
छिंदंति मर्म धामानि प्राणानाशु हरंतिच॥
भ्रमरेणैवविद्धानिभवं त्यस्थीनि सर्वतः॥ २०॥

जो मसूरिका अस्थिगत औ मज्जागत होती हैं उनके लक्षण समान होते हैं जैसेकि वै मसूरिका छोटी छोटी रंगमे शरीर तुल्य रूखी चपटी कुछ ऊंची तथा भ्रम मोह पीडा॥ १९॥ औ बेचैनी युक्त होती हैं तथा सर्व भ्रमस्थानौंमे छेदने सरीखी पीडा करने वाली शीघ्रही प्राणनाशक औ जैसे भंवराकाटै तैसी हाडौमे पीडा होती है॥२०॥

शुक्रगतानांल०॥

पक्काभाः पिडिकाः स्निग्धाः श्लक्ष्णा श्चात्यर्थ वेदनाः॥
स्तैमित्या रतिसंमोह दाहोन्माद समन्विताः॥ २१॥
शुक्रजा सुमसूरीषु लक्षणानि भवंतिहि॥
निर्दिष्टं केवलं चिन्हं दृश्यतेनतु जीवितं॥
दोष मिश्राश्च सप्तैता द्रष्टव्या दोष शांतये॥ २२॥

जो मसूरिकाकी फुंसियां पकी सरीखी चिकनी बुलबुलित अति पीडायुक्त तथा सुस्ती अचैन मोह दाह औउन्माद लक्षण युक्तहोतीहैं॥२१॥उनको शुक्रगत जानना इनके लक्षण केवलदेखायेहैं परंतु इसशुक्रगत मसूरिका वाला जीतानहीं जो ऊपरसे सातौधातुगत मसूरिकोंमे दोष मिश्रित देखाये सोदोष की शांतिकरनेके वास्ते ही देखाये हैं॥ २२॥

साध्य ल०

त्वग्गता रक्तजा श्चैव पित्तजाः श्लेष्मजा स्तथा॥ २३॥

श्लेष्म पित्तकृता श्चैव सुख साध्या मसूरिकाः॥
एता विनापि क्रियया प्रशाम्यंति शरीरिणां॥ २४॥

जो मसूरिका रस रक्त पित्त कफ औ कफ पित्त कृत होती हैं ॥ २३ ॥ वै सुखसाध्य औषध क्रिया विनापि शांत होती हैं ॥ २४ ॥

कष्टसाध्य ल०

वातज़ा वात पित्तोत्था वातश्लेष्म कृताश्चयाः॥
कृच्छ्रसाध्या मतास्तास्तु यत्नादेता उपाचरेत्॥ २५॥

जो मसूरिका वात पित्त औ वात कफ से होती हैं वै कष्टसाध्य इनका बडे प्रयत्नसे उपाव करना ॥ २५ ॥

असाध्य ल०

असाध्याः सन्निपातोत्था स्तासांवक्ष्यामि लक्षणं॥
प्रवालः सदृशाः काश्चि त्काश्चिज्जंबूफलोपमाः॥ २६ ॥
लोहजा लतमाः काश्चि दतसी फलसन्निभाः॥
आसांबहुविधा वर्णा जायंते दोषभेदतः॥ २७॥

जो मसूरिका सन्निपात से होती हैं वै असाध्य होती हैं उनके लक्षण कहता हौं ॥ २६ ॥ सन्निपातज मसूरिका कोई तौ मूगा समान कोई जामुनिके फलसरीखी कोई लोहकी जालीके समान कोई अलसीके फलके समान इनके रंग दोष भेदौं करिके अनेक प्रकारके हैं ॥ २७ ॥

अथापरमसाध्य लक्षणमाह

कासो हिक्काऽथ मोहश्च ज्वरस्तीव्रः सुदारुणः॥

प्रलापारतिमूर्छाश्चतृष्णादाहोऽतिघूर्णता॥ २८॥
मुखेन प्रस्रवेद्रक्तं तथा घ्राणेन चक्षुषा॥
कंठे घुर्घुरकं कृत्वा श्वसित्यत्यर्थं दारुणं॥ २९॥
मसूरिकाऽभिभूतोयो भृशं घ्राणेन निःश्वसेत्॥
सभृशं त्यजति प्राणान् तृष्णार्त्तो वायुदूषितः॥ ३०॥

औरभी असाध्य लक्षण कहते हैं जैसेकि जिस मसूरिका वालेको खांसी हुचकी ॥ २८ ॥ मोह तीव्र ज्वर बडवड वकना बेचैनीमूर्छा पियास दाह अतिघुमनीका आना मुखसे रक्तका गिरना ॥ २९॥ तथा नाक औ नेत्रोंसेभी रक्तका गिरना कंठमे घुरघुराहट श्वास अतिशय आवै तथा जोमसूरिका वाला बडेवेगसे नाकन्हेके श्वासलेइ औजो वातदूषित तृषासे व्याकुल होय सो निश्चयमरै॥ ३०॥

उपद्रवानाह॥

मसूरिकांते शोफः स्यात्कूर्परे मणिबंधके॥
तथांसफलके वापि दुश्चिकित्स्यः सुदारुणः॥ ३१॥

इतिरुग्विनिश्चयेमसूरिकानिदानं॥

मसूरिकाके उपद्रव जैसेकि मसूरिकाके अंतमे जिसके पायंकी उपर जानूमे पहुंचामे औअथवा कांधोंपर सूजनि आवै सो उपद्रव अति कष्टकारक होता है॥ ३१ ॥ इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांमसूरिकानिदानप्रकाशः ॥

अथक्षुद्ररोगनिदानं॥ तत्रतावदजगल्लिकामाह॥

स्निग्धासवर्णा ग्रथितानीरुजा मुद्गसन्निभा॥

कफ वातोत्थिता ज्ञेया बालानामजगल्लिका ॥ १ ॥

अब क्षुद्ररोगोंका निदान कहते हैं तहां प्रथम अजगल्लिका कहते हैं जो फुंसी चिकनी देहके रंगसमानरंगवाली गांठि गठीली पीडा रहित कफ वात विकारसे मूंगके समान बालकोंके होती है उसको अजगल्लि-का कहते हैं ॥ १ ॥

अथ यवप्रख्या ल०

यवाकारा सुकठिना ग्रथिता मांस संश्रिता ॥
पिडिका श्लेष्म वाताभ्यां यवप्रख्येति सोच्यते ॥ २ ॥

जो फुंसी कफवातके विकारसे जवके आकार कठिन गांठि गठी-ली मांसाश्रित होती है उसका नाम यव प्रख्या ॥ २ ॥

अंधालजी ल०

घनामवक्त्रां पिडिकामुन्नतां परिमंडलां ॥
अंधालजीमल्पपूयांतांविद्या त्कफवातजां ॥ ३ ॥

जो फुंसी कफ वातसे कठिन मुखरहित ऊंची गोल थोडे पीब युक्त होती है उसको अंधालजी कहते हैं ॥ ३ ॥

विवृता ल०

विवृतास्यां महादाहां पक्को दुंवर सन्निभां ॥
परिमंडलां पित्तकृतां विवृतां नामतो विदुः ॥ ४ ॥

जो फुंसी पित्तके विकारसे फैले भये मुखकी अतिदाहयुक्त पकेगुलरफलके समान सब औरसे मंडल युक्त होय सो विवृता है ॥ ४ ॥

कच्छपिका ल०

ग्रथिता पंचवा षड्वा दारुणाः कच्छपोन्नताः॥
कफानिलाभ्यां पिडिका ज्ञेया कच्छपिका बुधैः॥ ५॥

जो पांच किंवा छ फुंसी कफ वात विकारसे गांठि गठीली दारुण कछुआके आकार ऊंची एक ठेकाने होय सोकच्छपिका॥ ५॥

बल्मीकल०

ग्रीवांसकक्षा करपाद देशे संधौगले वा त्रिभिरे वदोषैः॥ ग्रंथिः सबल्मीक वदक्रियाणां जातः क्र मेणैवगतः प्रवृद्धिं॥ ६॥ मुखै रनेकैः स्रुतितो दव द्भिर्विसर्पवत्सर्पति चोन्नताग्रैः॥ बल्मीकमाहु र्भिषजो विकारं निष्प्रत्यनीकं चिरजं विशेषात्॥ ७॥

गरदन कंधे कांख हाथ पांय संधियां अथवा गलेमे तीनौ दोषौं- से जो गांठि होती है सो उपाय न करनेसे अनुक्रमसे जैसे वांवी व- ढती है॥६॥ तैसे अनेक मुखौं करिके युक्त बढती है औ उनमुखौंसे सुई छेदने सरीखी पीडा युक्त पीब वहता है फिरि वह गांठि मुखौंकी ऊंची नोकौं करिके विसर्पकी तरह फैलती जाती है उसको वल्मीक कहते हैं वह अति कष्ट साध्य औ बहुत दिनौंका होनेसे फिरि असाध्य व्है जाता है॥ ७॥

इंद्रवृद्धा लक्षणं

पद्म कर्णिक वन्मध्ये पिडिकाभिः समाचितां॥
इंद्रवृद्धांतु तांविद्या द्वातपित्तोत्थितां भिषक्॥ ८॥

जोकि वात पित्तवि कारसे कमलकी करणिकाकी तरह एक बडी फुंसी वीचमे औ उसके चौ तरफ छोटी छोटी होयसो इंद्र-वृद्धा ॥ ८ ॥

गर्दभिका ल०

मंडलं वृत्त मुत्सन्नं सरक्तं पिडिका चितं ॥
रुजाकरीं गर्दभिकां तांविद्या द्वातपित्तजां ॥ ९॥

जो फोडा मंडलाकार गोल ऊंचा लाल औ औरभी छोटी छोटी फुंसियों करिके युक्त औ पीडा कारक होय सो गर्दभिका वह वात पित्तज होती है ॥ ९ ॥

पाषाण गर्दभ ल०

वात श्लेष्मस मुद्भूतः श्ववथु र्हनुसंधिजः॥
स्थिरोमंदरुजः स्निग्धो ज्ञेयः पाषाणगर्दभः॥ १० ॥

जो दाढकी संधिमे वात पित्तके विकारसे शोथ होता है औ वह अचल अल्प पीडा कारक तथा चिकना होय सो पाषाण गर्दभ ॥ १० ॥

अथ जालगर्दभ ल०

विसर्प वत्सर्पतियः शोथ स्तनु रपाकवान् ॥
दाह ज्वर करः पित्ता त्सज्ञेयो जाल गर्दभः ॥ ११ ॥

जो शोथ पतला पाकरहित पित्तसे भया हुआ विसर्प सरीखा पसरता होय औ दाह तथा ज्वरका करने वाला होय सो जालग-र्दभ है ॥ ११ ॥

पनसिका ल०

कर्णस्या भ्यंतरे जातां पिडिका मुग्रवेदनां ॥

स्थिरां पनसि कांतां तु विद्या द्वातकफो त्थितां ॥ १२ ॥

जो कानके भीतर वात कफके विकारसे उग्रपीडा युक्त औ अचल फुंसी भई होय उसको पनसिका नाम जानना ॥ १२ ॥

इरिवेल्लिका ल०

पिडिका मुत्तमांगस्थां वृता मुग्ररु जाज्वरां ॥
सर्वात्मिकां सर्वलिंगां जानीया दिरिवेल्लिकाम् ॥ १३ ॥

जो तीनौदोषौंसे मस्तकमे गोल फुंसी उग्र पीडा औ ज्वरयुक्त होय तथा उसमे लक्षण भीतीनै दोषौंके मिलते होयं सो इरिवेल्लिका ॥ १३ ॥

कक्षालक्षणं ॥

बाहु कक्षां सपार्श्वेषु कृष्णां स्फोटां सवेदनां ॥
पित्तकोप समुद्भूतां कक्षा मित्य भिनिर्दिशेत् ॥ १४ ॥

जो पित्तकोपसे बांह काख कांधे औ पंसुरिनमे पीडा औ फफोला युक्त काला फोडाहोय उसका नाम कक्षा कहते हैं ॥ १४ ॥

गंधनाम्नील०॥

एकामे तादृशीं दृष्वापिडिकां स्फोट सन्निभाम् ॥
त्वग्गतां पित्तकोपेन गंधनाम्नी प्रचक्षते ॥ १५ ॥

जो ऊंपर कही सरीखी त्वचामे पित्त कोपसे एकही फफोला सरीखी फुंसी दीख उसको गंधनाम्नी जानना ॥ १५ ॥

अग्निरोहिणील०

कक्षा भागेषु ये स्फोटा जायंते मांस दारुणाः ॥
अंत र्दाह ज्वर करा दीप्त पावक सन्निभाः ॥ १६ ॥

सप्ताहाद्द्वादशाहाद्वापक्षाद्वा हंति मानवं ॥
तामग्निरोहिणीं विद्यादसाध्यां सन्निपातिकीं ॥ १७ ॥

जो फोडे मांसके विदीर्ण करने वाले कांखके भागौंमे होते हैं तथा वैअंतर्दाह औज्वरके करने वाले प्रज्वलित अग्निके समान होते है ते ॥ १६ ॥ वै सातदिन बारहदिन कि वा पंद्रहदिनमे मनुष्यको मारिलेते- हैं उसको अग्निरोहिणी कहते है वह तीनौ दोषौंसे होती है ॥ १७ ॥

चिप्पलक्षणं

नखमांसमधिष्ठाय वातः पित्तंच देहिनां ॥
कुर्वाते दाहपाकौच तंव्याधिं चिप्पमादिशेत् ॥
तदेवाल्पतरै दोषैः कुनखं पुरुषं वदेत् ॥ १८ ॥

देहधारियोंके नखमांसौंमे कुपित भये वातपित्त दाह औपाक उत्पन्न करते है उसरोगको चिप्प कहते हैं वही रोगजिसके अति अल्प- दोषौं करिके होय उसको कुनख कहते हैं ॥ १८ ॥

अनुशयील०

गंभीरामल्पसंरंभां सवर्णामुपरिस्थितां ॥
पादस्यानुशयीं तांतु विद्यादंतः प्रपाकिनीं ॥ १९ ॥

जो फोडा पांयके ऊपर भी रही भीतर पकनेवाला अल्प सूजनि युक्त रंगमे देहके समान उसको अनुशयी कहते हैं॥१९॥

विदारिकाल०

विदारीकंदवद्वृत्ता कक्षावंक्षणसंधिषु ॥
विदारिका भवेद्रक्ता सर्वजा सर्वलक्षणा ॥ २० ॥

जो फोडा विदारीकंदसरीखा गोल काख अथवा पट्टेकी संधिमे होता है सो सर्व लक्षणयुक्त सर्वदोषज विदारिका लाल होती है ॥२०॥

शर्करालक्षणं

प्राप्य मांस शिरास्नायुः श्लेष्मा मेदस्तथा निलः॥
ग्रंथिं करोत्यसौ भिन्नो मधु सर्पि र्वसानिभं॥ २१॥
स्रवत्यास्राव मनिल स्तत्र वृद्धिंगतः पुनः॥
मांसं विशोष्य ग्रथितां शर्करां जनये त्ततः॥२२॥

कफमेद औ वायु ये तीनौ मांसशिरा औ स्नायुमे प्राप्तव्हैके एक गांठिपैदा करते हैं वह जब फूंटता है तब उसमेसे सहत घी औचरबी सरीखा पीब वहता है॥ २१॥ तब औरभी बढाभया वायु उसमे अनेक गांठैं उत्पन्न करता है तब उसको शर्करा कहते हैं॥ २२॥

शर्कराऽर्बुदल०

दुर्गंधि क्लिन्न मत्यर्थं नानावर्णं ततः शिराः॥
स्त्रजंतिरक्तं सहसा तद्विद्या च्छर्करा र्बुदं॥ २३॥

जोमोटी नसैं उसी शर्करासे दुर्गंध औसडे भये बहुतसे अनेक रंगके रक्तको यक वारगी वहाती हैं उसको शर्करार्बुद कहते हैं॥ २३॥

पाददारीलक्षणं

परिक्रमण शीलस्य वायु रत्यर्थ रूक्षयोः॥
पादयोः कुरुते दारीं सरुजां तल संश्रितां॥ २४॥

जो मनुष्य बहुत चलता रहता है तब जो उसके पाय अत्यंत रूखे होय तौ उन पायनके नीचे भागमे वायु दरारैं करता है औ उसमे

पीडा होती है उसको पाददारी कहते हैं लोकमे ब्यवाई प्रसिद्धहै॥२४॥

कदरल०

शर्करोन्मथिते पादे क्षतेवा कंटकादिभिः॥
ग्रंथिः कोल व दुत्सन्नो जायते कदरंतुतत्॥ २५॥

पायंमे कंकर अथवा कांटा वगैरे के लगनेसे छोटे बेरके समान जो गाठि उत्पन्न होय है उसको कदर कहते हैं लोग गुखुरु कहते हैं॥ २५॥

अलसल०

क्लिन्नांगुलि तलौ पादौ कंडूदाह रुजान्वितौ॥
दुष्टकर्दम संस्पर्शा दलसंतं विभावयेत्॥ २६॥

अंगुरिनके नीचे अतिभीजे रहनेसे तथा पायंनके अति भीजे रहनेसे अथवा दुष्ट कीचडके लगने से जो पायंसडते है औ उनमे दाह तथाखाज आतीहै वह अलसरोग याने खरवात॥ २६॥

इंद्रलुप्तल०

रोम कूपानुगं पित्तं वातेन सहमूर्च्छितं॥
प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः॥ २७॥
रुणद्धि रोमकूपांस्तु ततोऽन्येषा मसंभवः॥
तदिंद्रलुप्तंखालित्यं रुज्येतिच विभायते॥ २८॥

रोमकूपौंमे रहने वाला पित्त सोवायुकरिके कुपित्तभया हुआ रोमौंको गिराय देताहै फिरि रक्तसहित कफ॥ २७॥ उनरोमकूपौंको रोंकि दूसरे रोमौंको उत्पन्न होनेदेता नहीं उसको इंद्रलुप्त खालित्य औ रुज्याभी कहतें है॥ २८॥

दारुणल०

दारुणा कंडुरारूक्षा केशभूमिः प्रजायते॥
कफ मारुत कोपेन विद्या दारुणकं चतत्॥ २९॥

जो केश जमनेकी जगह कफ औवायुके कोपसे कर्कश खाज युक्त औ रूखी है जातीहै उसको दारुण कहते हैं॥२९॥

अरुंषिकाल०

अरुंषि बहु वक्राणि बहुक्लेदी निमूर्धिषु॥
कफा स्टक्कृमिकोपेन नृणांविद्या दरुंषिकां॥ ३०॥

मनुष्योंके मस्तकमे कफ रक्त औ कृमिनके कोपसे अनेक मुखा-वाले तथा अतिवहने वाले जो व्रण होते हैं वे अरुंषिका॥३०॥

पलितल०

क्रोध शोक श्रम कृतःशरीरो ष्माशिरोगतः॥
पित्तंच केशान्पचति पलितं तेन जायते॥ ३१॥

क्रोध शोक औ परिश्रमसे वढीभई जो सरीरकी गरमी सो औ-पित्त येदोनौं केशौंको पकाते हैं उनको पलित कहते हैं॥ ३१॥

तारुण्यपिडिकाल०

शाल्मली कंटक प्रख्याः कफ मारुत कोपजाः॥
जायंते पिडिका यूनां विज्ञेया मुखदूषिकाः॥ ३२॥

जो कफ औवायुके कोपसे जवान पुरुषौंके मुखौंपर सेमरके कां-टौं सरीखी फुंसियां होती हैं उनको मुखदूषिका औ तारुण्य पिडिका कहते हैं वे मुहासे औमुहरसे नामसे प्रसिद्ध हैं॥ ३२॥

पद्मिनी कंटकल० ॥

कंटकै राचितं वृत्तं मंडलं पांडु कंडुरं ॥

पद्मिनी कंटक प्रख्यै स्तदाख्यं कफ वातजं ॥ ३३ ॥

जो कमलके कांटौंके समान कंटकों करिके घेराभया मंडलाकार गोल फोडा किंचत् पीलासयुक्त सफेद रंगाका होता है उसको पद्मिनी कंटक कहते हैं सोकफ वातज होता है ॥ ३३ ॥

जंतुमणिल०

सममु त्सन्न मरुजं मंडलं कफरक्तजं ॥

सहजं लक्ष्म चैकेषां लक्ष्यो जंतुमणिः स्मृतः ॥ ३४ ॥

जो चौरससमान ऊंचा पीडारहित ऐसाकफ औ रक्त विकारसे एक मंडल होता है उसको जंतुमणि कहते हैं वह किसीके तौ जन्महीसे होता है औ किसीके नही उसको लोग लहसुन कहते है अंगभेदसे फलदायक चिन्हभी है ॥ ३४ ॥

माषल०

अवेदनं स्थिरं चैव यस्मिन् गात्रे प्रदृश्यते ॥

माषव त्कृष्ण मुत्सन्न मनिला न्माष मादिशेत् ॥ ३५ ॥

जो किसीके कोईसे भी अंगमे वातकोपसे वेदना रहित अचल उडदसरीखा मासका अंकुर काला औ ऊंचा दीखै उसको माष कहते हैं लोग मसा कहते हैं ॥ ३५ ॥

तिलकालक ल०

कृष्णानि तिलमात्राणि नीरुजानि समानिच ॥

वातपित्त कफोत्सेका त्तान्विद्या त्तिलका लकान् ॥ ३६ ॥

जो पीडा रहित काले तिलोंके समान चर्मके बरोबर मंडल होते है उनको तिलकालक कहते है वे तीनो दोषोंसे होते हैं॥ ३६ ॥

न्यच्छ ल०

महद्वायदिवा त्यल्पं श्यावं वा यदिवा सितं॥
नीरुजं मंडलं गात्रे न्यच्छमि त्यभिधीयते॥ ३७॥

जो वडा अथवा छोटा काला अथवा धूसर रंगका पीडा रहित मंडल कोईसे भी अंगमे होता है उसको न्यच्छ कहते है॥ ३७॥

व्यंगल०

क्रोधायास प्रकुपितो वायुः पित्तेन संयुतः॥
मुखमागत्य सहसा मंडलं विसृजे त्ततः॥
नीरुजं तनुकं शावं मुखे व्यंगं तमादिशेत्॥ ३८॥

क्रोध औ मेहनतसे कुपित्तभया जो पित्त युक्त वायु सो मुखपर प्राप्त व्हैके यक बारगी मुखपर पीडा रहित बारीक धूसर रंगका मंडल करता है उसको व्यंग कहते हैं वह छाया झाई औ छाहीं नामोंसे प्रसिद्ध है॥ ३८॥

नीलिका ल०

कृष्ण मेवं गुणोगात्रे मुखे वा नीलिकां विदुः॥ ३९॥

जैसा व्यंगकहा है ऐसाही जो कोईसे अंगपर अथवा मुखहीपर काले रंगका होतौ उसको नीलिका कहते हैं॥ ३९॥

परिवर्त्तिका ल०

मर्दना त्पीडना द्वापि तथैवा प्यभिघाततः॥

मेढ़्र चर्म यदावायु भंजते सर्वतश्चरन्॥ ४० ॥
तदावातो परस्पृष्टंतु तच्चर्म परिवर्त्तते॥
मणे रधस्ता त्कोशस्तु ग्रंथिरूपेण लंबते ॥ ४१॥
सवेदनं सदाहंच पाकंच व्रजति क्वचित्॥
परिवर्त्तिक तितां विद्या त्सरुजां वातसंभवां॥ ४२॥
सकंडूः कठिना वापि सैव श्लेष्म समुत्थिता॥ ४३॥

लिंगके अति मर्दन करनेसे अथवा दबने दबानेसे अथवा किसी-तरहकी चोटके लगनेसे लिंगके चर्ममे सब औरसे फिरता भया वायु प्राप्त होता है ॥ ४० ॥ तब मणिजो लिंगका मस्तक उसका चर्मवायु-के योगसे फिरिजाता है याने खालरी ऊपरको सिर्मिट जाती है औ उस सुपारीके नीचे गांठिसी व्हैके लटकने लगती है ॥ ४१ ॥ सो पीडा औ दाह युक्त तथा कोई कोई पकती भी है उसको परिवर्त्तिका कहते हैं जो वह वातज होती है तौ जादा पीडा करने वाली होती है ॥४२ ॥ औ जो कफज होती है तौ खाज युक्त कठिन होती है ॥ ४३ ॥

अव पाटिका ल०

अल्पी यस्वांयदाहर्षा द्वला द्गच्छेत् स्त्रियंनरः॥
हस्ताभिघाता दथवा चर्मण्युद्वर्तिते बलात्॥ ४४॥
मर्दना त्पीडना द्वापि शुक्र वेगविघाततः॥
पस्याव पाट्यते चर्म तांविद्या दवपाटिकां॥ ४५॥

जो कदाचित् पुरुष अल्पछिद्र योनि वाली स्त्रीसे मैथुन करै याने जो स्त्री रजस्वला नही भई होय उससे हर्ष औ जोरावरी करिके

प्रसंग करै तौ अथवा हाथमे मैथुन कर्म करै अथवा मुदे भये लिंगके मुखको जव रईसे खोलै ॥ ४४ ॥ अथवा मलै दवा वै अथवा निकलते भये वीर्यकोरोंकै इत्यादि कारणौंसे लिंग बंद करने वाला जो चर्म याने खालरीसो जव जगह जगहसे चिरि जाती है तव उसको अव पाटिका कहते हैं ॥ ४५ ॥

निरुद्ध प्रकाशल०

वातोपसृष्टे मेढ्रेतु चर्म संश्रयते मणिं ॥
मणि श्चर्मो पनद्धस्तु मूत्र स्रोतो रुणद्धिच ॥ ४६ ॥
निरुद्ध प्रकाशे तस्मि न्मंदधार मवेदनं ॥
मूत्रं प्रवर्त्तते जंतो र्मणिर्विव्रियते नच ॥
निरुद्ध प्रकाशं विद्या त्सरुजं वात संभवं ॥ ४७ ॥

लिंगमे जव वातकुपित होता है तव उसका चर्म उसलिंगके मस्तक पर चपटिके रहिजाता है फिरि वहमस्तक मूत्र मार्गको भी रोंकता है ॥ ४६ ॥ तव मूत्रकी धार धीरे धीरे औपीडारहित पडती है औ वहलिंगका मस्तक खुलता नहीं तव उसरोगको निरुद्ध प्रकाश कहते हैं वह वातज है औ उसमे चर्म हाथ लगानेसे दुखताभी है ॥ ४७ ॥

निरुद्ध गुदल०

वेग संधारणा द्वायु र्विहतो गुदसंस्थितः ॥
निरुणद्धि महत्स्रोतः सूक्ष्मद्वारं करोतिच ॥ ४८ ॥
मार्गस्य सौक्ष्म्या त्कृच्छ्रेण पुरीषं तस्यगच्छति ॥
संन्निरुद्ध गुदं व्याधि मेनं विद्या त्सुदारुणम् ॥ ४९ ॥

मलका वेग रोकनेसे गुदामे रहने वाला वायु मल निकलने वाले बडे छिद्रको रोंकिके मार्गको बारीक करता है ॥ ४८ ॥ तब उसते अति कठिनतासे मल उतरता है उसको निरुद्ध गुद कहते ॥ ४९ ॥

अहिपूतन ल०

शकृन्मूत्र समायुक्ते ऽधौते ऽपाने शिशो र्भवेत् ॥
स्विन्नेवा स्नाप्य मानेवा कंडू रक्त कफोद्भवा ॥ ५० ॥
ततः कंडूयनाक्षिप्रं स्फोटाः स्रावश्च जायते ॥
एकी भूतं व्रणं घोरं तं विद्यादहि पूतनं ॥ ५१ ॥

जो मल मूत्रकरिके भरे भये बच्चेके गुदाको नधोवै अथवा गुदामे पसीना आवै किंवा बालकको नहवाये विना राखै तौ ॥ ५० ॥ उसके गुदामे खाज आयके फफोले उठते हैं फिरि जब वै सब एकमे मिलिके एक घाउ करते हैं तब उस रोगको अहि पूतन कहते हैं ॥ ५१ ॥

वृषणकच्छूल०

स्नानो त्सादन हीनस्य मलो वृषण संस्थितः ॥
यदा प्रक्लिद्यते स्वेदा त्कंडू संजायते तदा ॥ ५२ ॥
कंडूयनात्ततः क्षिप्रं स्फोटाः स्रावश्च जायते ॥
प्राहु र्वृषण कच्छूंतां श्लेष्म रक्त प्रकोपजां ॥ ५३ ॥

जो मनुष्य स्नानादिक अच्छीतरहसे नही करता है उसके अंड-कोश का मैल पसीनासे उभरि आता है खाज होती है ॥ ५२ ॥ तब उसमे खाज आयके फफोले होते है औ उनमेसे पीव पानी वगैरे वहता है तब उसको वृषण कच्छू कहते हैं वह कफ रक्तके कोपसे होती है ॥ ५३ ॥

गुदभ्रंशल०

प्रवाहणातिसाराभ्यां निर्गच्छति गुदं बहिः॥
रूक्ष दुर्बल देहस्य गुदभ्रंशं तमादिशेत्॥ ५४॥

जो पुरष रूक्ष औ दुर्बल होता है उसके कांखनेसे औ अतिसारसे गुदा बाहेरको निकलता है उसको गुदभ्रंस कहते हैं ॥ ५४ ॥

शूकरदंष्ट्रल०

सदाहो रक्तपर्यंत स्त्वक् पाकी तीव्रवेदनः॥
कंडूमान् ज्वरकारीच सः स्याच्छूकर दंष्ट्रकः॥ ५५॥

इति रुग्विनिश्चये क्षुद्र रोगनिदानं

जो लाल किनारे वाला दाह युक्त औ त्वचाके भी पकाने वाला तथा तीव्र पीडा कारक खाज युक्त ज्वरकारक ऐसा जो शोथ उसको शूकरदंष्ट्र जानना॥५५॥ इति श्रीमत्सुकल सीतारामात्मज पंडित रघुनाथ प्रसाद विरचितायां रुग्विनिश्चये दीपिकायां क्षुद्ररोग निदान प्रकाशः

अथ मुखरोगनिदानं॥ तत्रसंख्यामाह॥

दंतेष्वष्टावोष्ठयोश्च मूलेषु दशपंचच॥
नवतालुनि जिव्हायां पंच सप्तदशामयाः॥
कंठेत्रयः सर्वसरा एकषष्ठि चतुः परे॥ १॥

अब मुखरोगौंका निदान कहते हैं तहां प्रथम संख्या कहते हैं जैसे कि दांतौंमे आठ औंठौंमे आठ दंतमलमे पंदरह तालूमे नव जीभमे पांच कंठमे सत्तरह औ सर्व सर याने सर्व मुखमे फैलेभये तीनि

एसे पैसठि औ इहां परे ऐसा पाठ है इसते दो और भी है वैयेकि भाव प्रकाशमे दंतमूलके १६ औ ओंठके १८ कहे हैं ॥ १ ॥

संप्राप्ति माह

अनूपपिशितक्षीरदधिमाषादिसेवनात् ॥
मुखमध्ये गदान्कुर्युः क्रुद्धा दोषाः कफोत्तराः ॥ २ ॥

संप्राप्ति कहते हैं जैसे कि जो जानवर पक्षी वगैरे जलके नजीक रहने वाले हैं उनके मास तथा दूध दही औ उडद इनके अति सेवनसे वातादिक दोष कुपित व्हैके मुखमे रोगौंको करते हैं ॥ २ ॥

अथाष्ट रोगे षुवातिक माह

कर्कशौ परुषौ स्तब्धौ कृष्णौ तीव्ररुजान्वितौ ॥
दाल्येते परिपाट्येते ओष्ठौ मारुतकोपतः ॥ ३ ॥

आठ ओंठ रोगौंमे वातिक रोगसे ओंठ खरखरे कठिन तने भये काले तीव्र वेदना युक्त औ चिरे फटे भी होते हैं ॥ ३ ॥

पैत्तिक ल०

चीयेते पिडिकाभिस्तु सरुजाभिः समंततः ॥
सदाह पाक पिडिकौ पीतभासौच पित्ततः ॥४ ॥

पैत्तिक औठ रोगसे औठौंपर सर्वत्र पीडा युक्त बहुतसी फुंसि यां होती हैं औ औठ दाह पाक फुंसी सहित पीला सयुक्त होते हैं ॥ ४ ॥

श्लैष्मिकल०

सवर्णाभिस्तुचीयेतेपिडिकाभिरवेदनौ ॥
भवतस्तु कफादोष्ठौ पिच्छिलौ शीतलौ गुरू ॥ ५ ॥

कफज ओंठ रोगसे ओंठौंके समान रंगकी फुंसियों करिके युक्त पीडा रहित चिकने ठंढे औ भारी रहते हैं ॥ ५ ॥

सान्निपातिक ल०

सकृत्कृष्णौ सकृत्पीतौ सकृच्छ्वेतौतथैवच ॥
सन्निपातेन विज्ञेया वनेक पिडिकान्वितौ ॥ ६

सन्निपातज ओंठरोगसे ओंठ कोई समय काले कोई समय पीले औ कोई समय सफेद तथा फुंसिन करिके युक्त रहते हैं ॥ ६ ॥

रक्तज ल०

खर्जूरी फलवर्णाभिः पिडिकाभि र्निपीडितौ ॥
रक्तो पस्रष्टौ रुधिरं स्रवतः शोणित प्रभौ ॥ ७ ॥

जो ओंठ रोग रक्त कोपसे होता है उसते खर्जूरिके फलाकार फुंसि यन करिके पीडित औ लाल तथा रक्त करते भये ऐसे ओंठ रहते हैं ॥ ७ ॥

मांसज ल०

मांसदुष्टौ गुरुस्थूलौ मांस पिंड वदुद्गतौ ॥
जंतव श्चात्र मूर्छंति नरस्यो भयतो मुखात् ॥ ८ ॥

मांस दूषित ओंठ रोगसे ओंठ भारी मोटे मांसके पिंड समान ऊंचे रहते हैं औ इसरोगमे मनुष्यके दोनौ गल फरौंसेकी डेभी निकलते हैं ॥ ८ ॥

मेदो दोषोत्थ रोग ल०

सर्पि मंड प्रतीकाशौ मेदसा कंडुरौ गुरू ॥

स्वच्छं स्फटिक संकाश मास्रावं स्रवतोभृशं॥
तयोर्व्रणं नसंरोहे न्मृदुत्वं नैवगच्छति॥ ९॥

मेदके दोषसे ओंठ घी औ मांडसरीखे दीखते हैं तथा खाज युक्त भारी रहते हैं औ वे ओंठ स्वच्छ स्फटिक मणि सरीखा बहुत सा स्रावसे रहते हैं उनका व्रणको मलभी नही होता है औ अच्छाभी नहीं होता है॥ ९॥

अभि घातज ल०

औष्ठौ पर्यव दीर्येते पीट्यते चाभिघाततः॥
ग्रथितौ च तदास्यातां कंडू क्लेदसमन्वितौ॥ १०॥

अभि घात याने चोट इत्यादिकके लगनेसे जो ओंठ चिरिजाते हैं अथवा फटिजाते हैं तव उनमे गांठि पडिके खाज औ भीजे पनकरिके युक्त रहते हैं याने सदा खजु आते औ ओदे रहते हैं॥ १०॥

इत्योष्टरोगाः अथ दंतमूल रोगा स्तत्र शीताद लक्षणं

शोणितं दंत वेष्टेभ्यो यस्या कस्मा स्रवर्त्तते॥
दुर्गंधीनि सकृष्णानि प्रक्लेदीनि मृदूनिच॥ ११॥
दंत मांसानि शीर्यंते पचंति चपरस्परं॥
शीतोदोनामस व्याधिःकफ शोणित संभवः॥ १२॥

अब दंतमूल रोग कहते हैं उनमेसे प्रथम शीतादके लक्षण कहते हैं

जिसके दांतौके वेष्टसे याने मसूढोंसे अकस्मात् रक्त गिरने लगता है तथा दुर्गंधि युक्त काले वहते भये कोमल ऐसे॥ ११॥ दंत मांस याने मसूडे सडि सडिके गिरने लगते हैं औ एकके लगनेसे दूसराभी

षकिके गिरहा होय ऐसे रोग को शीताद कहते हैं यह कफ रक्तके कोपसे होता है ॥ १२ ॥

दंतपुप्पुट ल०

दंतयो स्त्रिषु वायस्य श्वयथु जायते महान् ॥
दंत पुप्पुटको नाम सव्याधिः कफरक्तजः ॥ १३ ॥

जिसके दोदांतौंमे अथवा तीनि दांतनमे बडी सूजनि आवै उसको दंतपुप्पुट कहते हैं वह रोग कफ रक्तसे होता है ॥ १२ ॥

दंतवेष्ट ल०

स्रवंति पूयं रुधिरं चलादंता भवंहि ॥
दंतवेष्टः सविज्ञेयो दुष्टशोणित संभवः ॥ १४ ॥

जिस रोगमे दांतौंसे रक्त औ पीब गिरता है औ दांत हलने लगते हैं वह रोग दुष्ट रक्तसे होता है उसको दंत वेष्ट कहते हैं ॥ १४ ॥

सौषिरल०

श्वयथु दंतमूलेषु रुजावान् कफरक्तजः ॥
लालास्रावी सविज्ञेयः सौषिरो नाम नामतः ॥ १५ ॥

जो शोथ कफ औ रक्त दोषसे दांतौंकी जडौंमे याने मुस कुरौंमे होता है औ उसमे वेदना होती है औ लार पडने लगती है उसको सौषिर कहते हैं ॥ १५ ॥

महासौषिर ल०

दंताश्चलंति वेष्टेभ्य स्तालु चाप्य वदीर्यते ॥
यस्मिन् ससर्वजो व्याधि र्महा सौषिरसंज्ञकः ॥ १६ ॥

जिस रोगमे मसूढौंको दांत छोडिदेते हैं औ तालू फटिजाता है वह त्रिदोषज रोग महा सौषिर है ॥ १६ ॥

परिदर ल०

दंत मांसानि शीर्यंते यस्मिन् ष्ठीवति चाप्यसृक् ॥
पित्ता सृक्कफजो व्याधि र्ज्ञेयः परिदरोहिसः ॥ १७ ॥

जिस रोगमे रक्त थूकते दांतौंके मसूढे गलि गलिके गिरते हैं वह पित्त कफ औ रक्त विकार जनित परिदर है ॥ १७ ॥

उपकुश ल०

वेष्टेषु दाहः पाकश्चताभ्यां दंता श्चलंतिच ॥
आघट्टिताः प्रस्रवंति शोणितं मंद वेदनाः ॥ १८ ॥
आध्मायंते श्रुते रक्ते मुखे पूतिश्च जायते ॥
यस्मिन्नुप कुशोनाम पित्तरक्त कृतोगदः १९ ॥

जिस रोगमे दांतौके मसकुरौंमे दाह होता है औ वै पकते हैं औ उस दाह पाकसे दांत हालने लगते हैं जब उनको परस्पर दबावै तब उनमेसे रक्त गिरता है औ वेदना थोडी होती है जब रक्त निकलिजा-ता है ॥ १८ ॥ तब मुसकुर फूलि आते हैं औ मुखमे दुर्गंध आने लगती है सो उपकुश नाम रोग पित्त रक्त कोपसे होता है ॥ १९ ॥

वैदर्भ ल०

घृष्टेषु दंतमूलेषु संरंभो जायते महान् ॥
भवंति चपला दंता सवैदर्भोऽभिघातजः २० ॥

जिस रोगमे दतूनि अंगुरी इत्यादि घसनेसे मसकुरौंगमे वेदना

औ सूजनि होती है औ दांत भी हलने लगते हैं वह अभि घातज वै दर्भ रोग है ॥ २० ॥

खलिवर्द्धन ल०

मारुते नाधिको दंतो जायते तीव्रवेदनः॥
खलिवर्द्धन संज्ञोवै संजाते रुक् प्रशाम्यति॥ २१॥

वायूके दोषसे जो सबदांतोंसे अधिक एक दांत पीडा करता भया निकलता है उसको खलि वर्द्धन कहते हैं जब वह दांत निकसि आता है तब आपही पिडा शांत होती है ॥ २१ ॥

कराल ल०

शनैः शनैः प्रकुरुते वायु दंत समाश्रितः॥
कराला न्विकटा न्दंतान् करालः सन सिद्ध्यति॥ २२॥

दां तौं मे रहा भया वायु जिसरोगमे धीरे धीरे दांतौं को ऊंचे नीचे वेडौल करिदेता है वह कराल नामक रोग असाध्य होता है ॥ २२ ॥

अधिमांस ल०

हानव्ये पश्चिमे दंते महा न्शोथो महारुजः॥
लाला स्रावी कफकृतो विज्ञयो ह्यधिमांसकः॥ २३॥

चौहरके पिछिले दांतमे पीडा युक्त जो बडा शोथ उत्पन्न होता है औ उससे लारगिरने लगती है सो अधिमांस रोग कफज होता है ॥ २३ ॥

अथ नाडीराह

दंतमूल गता नाड्यः पंचज्ञेया यथेरिताः॥ २४॥

दांतौंकी जडौंमे पांच प्रकार की नाडी होती है याने नासूर होते हैं उनके लक्षण जैसे प्रथम नाडी व्रण निदानमे कहै वैसे ही जानना ॥ २४ ॥

अथ दंतगते ष्वष्ट रोगेषुतावद्दालन माह

दीर्यमाणे ष्विवरुजा यस्यदंते षुजायते ॥
दालनो नाम सव्याधिः सदागति निमित्तजः ॥ २५ ॥

जो दंतगत आठ रोग हैं उनमेसे दालनके लक्षण जैसे कि जिस रोगसे दांतौंमे चीरने सरीखी बेदना होती है सो रोग दालन नामका है वात निमित्तसे होता है ॥ २५ ॥

कृमिदंतल०

कृष्ण च्छिद्रश्चलः स्रावी स संरंभो महारुजः ॥
अनिमित्त रुजो वाता त्सज्ञेयः कृमिदंतकः २६ ॥

जोकि वायूके कोपसे दांतमे काला छेद परिजाय दांत हलने लगै वहने लगै सूजनि युक्त पीडा कारक तथा कारन विना पीडा होती रहै उसके कृमिदंत कहते हैं ॥ २६ ॥

भंजन ल०

वक्रं वक्र भवेद्यस्य दंतभंजश्च जायते ॥
कफवात कृतो व्याधिः स भंजनक संज्ञकः ॥ २७ ॥

जिसका मुख टेढा व्है जाय औ दांत टूटिजांय उसको दंतभंजन कहते हैं वह कफ वातजन्य होता है ॥ २७ ॥

दंत हर्ष ल०

शीत रूक्ष प्रवाताम्ल स्पर्शानाम सहाद्विजाः ॥

पित्तमारुत कोपेन दंतहर्षः सनामतः॥ २८॥

पित्त औ वायुके कोपसे दंतहर्ष रोग होता है उस रोमसे दांत शीत रूक्षवायु औ खटाई इनका स्पर्श सहन करिसकते नही हैं॥ २८॥

दंतशर्कराल०

मलोदंत गतोयस्तु पित्तमारुत शोषितः॥
शर्करेव खरस्पर्शा साज्ञेया दंतशर्करा॥ २९॥

दांतोंमे लगा भयाजो मैल सो पित्त औवातकरिके सूखाभया वालूसरीखा खरखरा लगता है उसको दंतशर्करा जानना॥ २९॥

कपालिकाल०

कपाले ष्विव दीर्णेषुदंतेषु समलेषुच॥
कपालिकेति विज्ञेया दंतच्छि द्दंतशर्करा॥ ३०॥

जिसदंत शर्करा रोगमे मैलयुक्त दांत ठीकरा सरीखे फटैं टूटैं उसको कपालिका कहते हैं वह दंत शर्करा दांतौंकी नाशक होती है॥ ३०॥

शावदंतल०

योऽस्टक्मिश्रेण पित्तेन दग्धो दंत स्त्वशेषतः॥
श्यावतां नीलतां वापि गतः सश्यावदंतकः॥ ३१॥

जो दांतरक्त मिश्रित पित्तकरिके जला भया समग्र पीलास युक्त काला अथवा नीला व्है जाता है उसको श्यावदंत कहते हैं॥ ३१॥

॥ इतिदंतरोगाः॥

अथ जिव्हागतान्रोगानाह

जिव्हाऽनिलेन स्फुटिता प्रसुप्ता भवेच्च शाक छद न प्रकाशा ॥ पित्तेन पीता परिदह्यते च दीर्घैः सरक्तै रपि कंटकैश्च ॥ कफेन गुर्वी बहुला चिताच मांसोच्छ्रयैः शाल्मलि कंटकाभैः॥ ३२॥

अबमुखरोगोंमेजिव्हागतरोगोंको कहते हैं

वायूके कोपसे जीभ फटी सरिखी होती शून्य और साग वृक्षके पत्रके समान खरखरी होती है पित्तसे पीली दाहयुक्त औलंबे लंबे काटौं करिके युक्त होती है कफसे भारी मोटी औ सेमरके कांटौं सरीखे कांटौं करिके व्याप्त होती है ॥ ३२ ॥

अलास ल०

जिव्हा तलेयः श्वयथुः प्रगाढः सोलास संज्ञः कफ रक्तमूर्त्तिः॥ जिव्हांसतु स्तंभयति प्रवृद्धो मूलेच जिव्हा भृश मेति पाकं॥ ३३॥

जीभके नीचे जोकठिन सूजनि उत्पन्न होती है उसको अलास कहते हैं वह कफ रक्तदोषसे होता है जबवह बढता है तब बोलना बंद करता है औ जीभ आपकी जडमे अतिशय पकि जाती है ॥३३॥

उपजिव्हा ल०

जिव्हाग्र रूपः श्वयथुः सजिव्हा मुन्नम्य जातः कफ रक्तमूर्त्तिः॥ लालाकरः कंडुयुतः सचोषः सातूप जिव्हा कथिता भिषग्भिः॥ ३४॥

जो जीभके नीचे जीभकी नोकसरीखी सूजनि उत्पन्न होती है

वहलारगिराने वाली खाज औ तपाने सरीखी पीडा युक्त होती है उस सूजनिको उपजिव्हा कहते है वह कफ रक्तके कोपसे होती है ॥३४॥

इतिजिव्हागतरोगनिदानं

अथतालुगतानूरोगानाह तत्रकंठशुंडी ल०

श्लेष्मासृग्भ्यां तालुमूला त्प्रवृद्धो दीर्घः शोथो ध्मातबस्तिप्रकाशः ॥ तृष्णा कास श्वास कृतं वदंति व्याधिं वैद्याः कंठशुंडीति नाम्ना ॥ ३५ ॥

अब जो तालूमे रोग होते हैं उनको कहते हैं तहां प्रथम कंठशुंडीके लक्षण कहते है जो कफ औ रक्तके कोपसे फूली मसकके समान तालूकी मूलसे बढी भयी लंबी सूजनि होती है औ वह पियास कास औ श्वासको करती है उसको वैद्य कंठशुंडी कहते है ॥ ३५ ॥

अथ तुंडकेर्यध्रुषयोर्लक्षणं

शोथः स्थूल स्तोद दाह प्रपाकी प्रागुक्ताभ्यां तुंडिकेरी मतातु ॥ शोथः स्तब्धो लोहित स्तालु देशे रक्ताज्ज्ञेयः सोऽध्रुषो रुग् ज्वराढ्यः ॥ ३६ ॥

जो तालूमे कफ रक्तसे सुई छेदने सरीखी पीडा औ दाह पाक युक्त कपास के फल समान बडी सूजनि होती है उसको तुंडकेरी कहते हैं जो तालूमे लाल खैंचाव युक्त तथा वेदना औ ज्वर युक्त सूजनि होती है उसको अध्रुष कहते हैं ॥ ३६ ॥

अथ कच्छपताल्वर्बुदयोर्लक्षणं

कूर्मोत्सन्नोऽवेदनोशीघ्रजन्माऽऽरक्तोज्ञेयः श्लेष्म

णा कच्छपाख्यः ॥ पद्माकारं तालुमध्ये तु शोथं विद्याद्रक्तादर्बुदं प्रोक्तलिंगं ॥ ३७ ॥

जो तालूमे कछुआ सरीखा ऊंचा वेदना रहित देरसे प्रगट होने वाला ललामी युक्त सफेद शोथ होता है सो कफज रोग कच्छप नामका होता है तथा जो कमलाकार लाल शोथ तालूमे होता है वह रक्तसे उत्पन्न अर्बुद रोग होता है उसके लक्षण प्रथम अर्बुद निदानमे कहे प्रमान जानना ॥ ३७ ॥

अथ मांस संघात तालु पुप्पुटयो र्लक्षणं

दुष्टं मांसं नीरुजं तालुमध्ये कफाच्छूनं मांससंघातमाहुः ॥ नीरुक्स्थायी कोलमात्रः कफात्स्यान्मेदो युक्तः पुप्पुटस्तालुदेशे ॥ ३८ ॥

अब मांस संघात औ तालु पुप्पुटके लक्षण कहते हैं तहां जो कफके कोपसे तालूमे दुष्ट मांस सूजि आता है औ वह पीडा रहित होता है उसको मांस संघात कहते हैं तथा जो तालूमे कफसे पीडा रहित अचल बेरके बरोबर मेद युक्त शोथ होता है उसको तालु पुप्पुट कहते हैं ॥ ३८ ॥

अथ तालु शोषतालु पाकयोर्लक्षणं

शोषोऽत्यर्थं दीर्यते चापि तालु श्वासश्चोग्रस्तालुशोषो ऽनिलाच्च ॥ पित्तं कुर्यात्पाकमत्यर्थःघोरं तालुन्येवं तालुपाकं वदंति ॥ ३९ ॥

अब तालुशोष औ तालुपाकके लक्षण कहते हैं तहां जो वायूके कोपसे तालू अति शय सूखता है औ उसमे फटने सरीखी

पीडा होती है औ उपश्वास चलती है उसको तालु शोष कहते हैं ॥ तथा जो तालूमे कुपित भया हुआ पित्त तालूको पकाता है उसको तालुपाक कहते हैं ॥ ३९ ॥

इति तालुगत रोग निदानं

अथ कंठगतानां सप्तदशरोगाणां निदानं तत्र रोहिणी लक्षणमाह

गलेऽनिलः पित्तकफौ चमूर्च्छितौ प्रदूष्यमांसं चत थैव शोणितं॥ गलोप संरोधकरै स्तथां कुरै र्निहं त्य सूंन्व्याधि रयंहि रोहिणी॥ ४० ॥

अब जो १७ कंठके रोग हैं उनमे रोहिणी कहते हैं गलेमे रहे भये जो वात पित्त कफ येकुद्धित व्हैके मांस औ रक्तको दूषित करते हैं तब गलके रोकने वाले मांसके अंकुरौं करिके गलेको रोंकिके प्राणौ का नाश करती है इसका नामरोहिणी है ॥ ४० ॥

वातजा रोहिणी ल०

जिह्वा समंता द्भृश वेदनास्तु मांसांकुराः कंठनि रोधनाये॥ सारोहिणीवात कृता प्रदिष्टा वातात्म कोपद्रव गाढ युक्ता॥ ४१ ॥

जो रोहिणी वातकोपसे होती है उसमे जीभके चौफेर अति पीडा कारक कंठके रोकने वाले मांसके अंकुर होते है औ वह वातज उप-द्रवौं करिके युक्त होती है॥ ४१॥

पित्तजा ल०

क्षिप्रो द्गमाक्षिप्र विदाह पाका तीव्र ज्वरा पित्त नि मित्तजा स्यात्॥

जो रोहिणी शीघ्रही व्हैके शीघ्रही दाह औ पाक करिके युक्त होती है औ तीव्रज्वर युक्त होती है सो पित्तज होती है

कफजा रोहिणी ल०

स्रोतो निरोधि न्यपि मंदपाका स्थिरांकुरा या कफसंभवा सा॥ ४२॥

जो रोहिणी कंठके रोकने वाली औ धीरे धीरे पकनेवाली अचल अंकुर युक्त होय सो कफजनित होती है॥ ४२॥

त्रिदोषजा रोहिणी ल०

गंभीर पाकिन्य निवार्य वीर्या त्रिदोष लिंगा त्रितयो त्थितासा॥

जो रोहिणी अंदर की अंदर ही पकने वाली त्रिदोष लक्षण युक्त होय उसको त्रिदोषज जानना वह असाध्य होती है॥

रक्तजा ल०

स्फोटैश्चिता पित्तसमान लिंगाऽसाध्या प्रदिष्टा रुधिरात्मिकातु॥ ४३॥

जो रोहिणी छोटे छोटे फोडौं करिके युक्त औ पित्त रोहिणी के समान चिन्हौं करिके युक्त होती है सो रक्तज असाध्य होती है॥ ४३॥

कंठशालूक ल०

कोलास्थि मात्रः कफ संभवो योग्रंथि र्गले कंटक शूक भूतः॥ खरः स्थिरः शस्त्र निपातसाध्यस्तं कंठ शालूक मिति ब्रुवंति॥ ४४॥

जो कफसे उत्पन्न झर वेरकी गुठलीके समान गांठि गलेमे होती है सो वह गलेमे कांटा औ सींकुरके समान गडती है तथा खरखरी अचल औ शस्त्र साध्य होती है उसको शालूक कहते हैं ॥ ४४ ॥

अधिजिव्ह ल०

जिह्वाग्ररूपः श्वयथुः कफात्तु जिह्वोपरिष्टादपि रक्तमिश्रात् ॥ ज्ञेयोऽधिजिह्वः खलु रोगएष विवर्जयेदागत पाकमेनं ॥ ४५ ॥

जो रक्तमिश्रित कफसे जीभके ऊपर जीभकी नोक सरीखी सूजनि होती है उसको अधिजिव्ह कहते हैं जो वह पकिजाय तो औषध करनेके अयोग्य होता है ॥ ४५ ॥

वलय लक्षणं

वलास एवायतमुन्नतंच ग्रंथिं करोत्यन्नगतिं निवार्य ॥ तं सर्वथैवाप्रतिवार्यवीर्यं विवर्जनीयं वलयं वदंति ॥ ४६ ॥

कंठमे रहने वाला कफ गलेमे लंबी चौडी औ ऊंची गांठि गलेके भीतर अन्नकी गतिको रोंकिके उत्पन्न करता है उसको वलय कहते हैं ॥ ४६ ॥

बलास ल०

गलेतु शोथः कुरुतः प्रवृद्धौ श्लेष्मानिलौ श्वास रुजोपपन्नं ॥ मर्मच्छिदं दुस्तर मेन माहुर्बलास संज्ञं निपुणा विकारम् ॥ ४७ ॥

स्वकारणों करिके बढे भये कफ औ वायु श्वास औ पीडा युक्त गलेमे सूजनि करते हैं उसको बलास कहते है अतिकठिनमर्मस्थानका छेदन करने वाला है ॥ ४७ ॥

एकवृंदल०

वृत्तो न्नतोंतः श्वयथुः सदाहः सकंडुरो पाक्यमृदु गुरुश्च ॥ नाम्नैक वृंदः परिकीर्तितो सौ व्याधि र्बला स क्षतज प्रसूतः ॥४८॥

कफ औ रक्तके कोपसे गलेमे एक गोल ऊंचे किनारोंकी सूजनि उत्पन्न होती है उसमे दाह औ खाज भी होती है वह पके पर भी कठिन रहती है तथा भारी मालूम पडती है उसका नाम एक वृंद है ॥ ४८ ॥

वृंदल०

समुन्नतं वृत्त ममंद दाहं तीव्रज्वरं वृंद मुदाहरंति ॥ तं चापि पित्तक्षतज प्रकोपा द्विद्या त्सतोदं पवना त्मकंतु ॥ ४९ ॥

जो गलेमे ऊंचा गोल तीव्रदाह औ ज्वर युक्त होता है उसका नाम वृंद है वह पित्त रक्तके कोपसे होता है जो कि उसमे सुई टोंचने सरीखी पीडा होती होयतौ उसको वातज जानना ॥ ४९ ॥

शतघ्नी ल०

वर्त्ति र्घना कंठ निरोधिनीया चितानि मात्रं पिशित प्ररोहैः ॥ अनेक रुक् प्राणहरी त्रिदोषा ज्ञेया शतघ्नी तु शतघ्निरूपा ॥ ५० ॥

जो गलेमे एक बत्ती सरीखी कंठरोकने वाली मांसके अंकुरौं करिके घेरी भयी अनेक तरह की पीडा करने वाली सूजनि उत्पन्न होती है सो शतघ्नी शतघ्नीरूपही है ॥ ५० ॥

गिलायु ल०

ग्रंथि र्गले चामलकास्थिमात्रः स्थिरोऽल्परुक् स्यात्कफरक्तमूर्तिः ॥ संलक्ष्यते सक्त मिवाशनं च सशस्त्रसाध्यस्तु गिलायु संज्ञः ॥ ५१ ॥

जो गलेमे कफ औ रक्तसे आंवले की गुठली प्रमाण एक गांठि उत्पन्न होती है वह अचल औ अल्प पीडा युक्त होती है औ जैसे कुछ खाया भया आहार गलेमे अटकि रहा होय तैसा मालूम पडता है उसको गिलायु कहते हैं वह शस्त्र साध्य है ॥ ५१ ॥

गलविद्रधि ल०

सर्वं गलं व्याप्य समुत्थितोयः शोथो रुजः संतिच यत्रसर्वाः ॥ स सर्वदोषो गल विद्रधिस्तु तस्यैवतुल्यः खलु सर्वजस्य ॥ ५२ ॥

जो शोथ सर्व गलेको घेरिके होता है उसमे पीडा सर्व प्रकारकी होती हैं सो गल विद्रधि सर्व दोषज होती है उसके लक्षण सन्निपात विद्रधिके समान होते हैं ॥ ५२ ॥

गलौघ ल०

शोथो महानन्नजलाव रोधी तीव्रज्वरो वायुगते र्निहंता ॥ कफेन जातो रुधिरान्वितेन गलेगलौघः परिकीर्तितोऽसौ ॥ ५३ ॥

जो बडा शोथ अन्न जलका रोकने वाला तीव्रज्वर युक्त वायु की गतिकाभी रोकनेवाला कफरक्तके कोपसे गलेमे होता है उसको गलौघ कहते हैं ॥ ५३ ॥

स्वरघ्नल०

यस्ताम्यमानः श्वसिति प्रसक्तं भिन्नस्वरः शुष्क विमुक्तकंठः॥ कफोपदिग्धेष्वनिलायनेषु ज्ञेयः स रोगः श्वसनात्स्वरघ्नः॥ ५४॥

जिस रोगमे वायूके निकसनेके रस्ते कफसे भरिजाते हैं उसते वह रोगी निरंतर श्वासलेनेमे दुखी होता है स्वरभंग कंठ सूखा वेस्वाधीन होता है उस रोगको स्वरघ्न कहते हैं वह वातज होता है ॥ ५४ ॥

मांसतान ल०

प्रतानवान्यः श्वयथुः सुकष्टो गलोपरोधं कुरुते क्रमेण॥ स मांसतानः कथितोऽवलंबी प्राण प्रणुत्सर्व कृतो विकारः॥ ५५॥

जो शोथ सर्व गलेमे फैलिके लटकता भया अति कष्ट कारक गलेको रोंकिले ताहै सो रोग त्रिदोषज मांसतानक नाम है वह प्राणनाशक होता है ॥ ५५ ॥

विदारी ल०

सदाह तोदं श्वयथुं सुतीव्रमंतर्गले पूति विशीर्ण मांसं॥ पित्तेन विद्याद्वदने विदारीं पार्श्वे विशेषात्सतु येनशेते॥ ५६॥

ते ष्वलासश्च तालुव्येष्वर्बुदं तथा ॥ ६० ॥ स्वरघ्नो वलयो वृंदो बलासश्च विदारिका॥ गलौघो मांस तानश्च शतघ्नी रोहिणी गले ॥ ६१ ॥ असाध्याः कीर्तिता ह्येते रोगानव दशैवतु ॥ तेषु चापि क्रिया वैद्यः प्रत्याख्याय समाचरेत् ॥ ६२ ॥

इतिरुग्विनिश्चयेमुखरोगनिदानं ॥

जो मुखरोगौंमे असाध्य हैं उनको गनाते हैं जैसे कि ओष्ठ रोगौंमे मांसज रक्तज औ त्रिदोषज असाध्य दंतमूल रोगौंमे सन्निपातज नाडी-व्रण औ सौषिर ॥ ५९ ॥ दंतरोगौंमे श्यावदंत दालन औ भंजन जिव्हारोगौंमे अलास तालु रोगौंमे अर्बुद ॥६०॥ गल रोगौंमे स्वरघ्न वलय वृंद बलास विदारी गलौघ मांसतान शतघ्नी औरोहिणी ॥ ६१ ॥ ये उन्नीस रोग मुख रोगौंमे असाध्य हैं जो इनकी औषध करना तौ अ-साध्य कहिके करना ॥ ६२ ॥ इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघु-नाथप्रसाद विरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांमुखरोगनिदानप्रकाशः ॥

अथकर्णरोगनिदानं ॥ तत्र तावत्कर्णशूलमाह ॥

समीरणः श्रोत्रगतोऽन्यथाचरन् समंततः शूलम तीव कर्णयोः॥ करोति दोषैश्च यथा स्वभावतः सकर्ण शूलः कथितो दुरासदः ॥ १ ॥

कोपको प्राप्तभया हुआ पवन कानमे जायके प्रतिलोम गतिसे सब और घूमिके तहां कफपित्तके भी साथ मिलिके वातादिक दोषानुरुप शूलको उत्पन्न करताहै उसको कर्णशूल कहते हैं वह शूल कष्टसाध्य होताहै ॥ १ ॥

कर्णनादल०॥

कर्णस्रोतः स्थिते वाते शृणोति विविधान् स्वनान्॥
भेरी मृदंग शंखानां कर्णनादःसउच्यते॥ २॥

कानके छिद्रमे कुपित वायुके रहनेसे भेरी मृदग औशंखवों के अनेक प्रकारके शब्द सुनताहै उसको कर्णनाद कहते है॥ २॥

बाधिर्यल०

यदा शब्दवहं स्रोतो वायु रावृत्य तिष्ठति॥
शुद्धः श्लेष्मान्वितो वापि बाधिर्यंतेन जायते॥ ३॥

जब शब्दके प्रकाशने वाले छिद्रमे कफयुक्त अथवा केवल वायु घेरिके प्राप्त होता है तब उस कर्णके बधिरता होतीहै॥ ३॥

कर्णक्ष्वेडल०

वायुः पित्तादिभि र्युक्तो वेणुघोष समंस्वनं॥
करोति कर्णयोः क्ष्वेडं कर्णक्ष्वेडः सउच्यते॥ ४॥

जो पित्तादिक करिके युक्त वायु कानमे जायके वंशी सरीखा शब्द करताहै उसको कर्णक्ष्वेड कहते हैं॥ ४॥

कर्णस्रावलक्षणं

शिरोभिघातादथवा निमज्जनाज्जले प्रपाकादथवापि विद्रधेः॥ स्रवेद्धिपूयं श्रवणो निलार्दितः सकर्ण संस्राव इति प्रकीर्तितः॥ ५॥

मस्तकमे चोटके लगनेसे अथवा जलमे डुबकी मारनेसे अथवा कर्ण विद्रधिके पकनेसे जोवायु करिके पीडित कान पीवको वहताहै उसको कर्ण स्राव कहते हैं॥ ५॥

कर्णकंडूल० ॥

मारुतः कफ संयुक्तः कर्णौ कंडूं करोतिच ॥

कफ युक्त वायु कानमे जायके खाज करताहै सो कर्ण कंडू ॥

कर्णगूथकल०॥

पित्तोष्म शोषितः श्लेष्मा जायते कर्ण गूथकः॥६ ॥

पित्तकी उष्णतासे सूखा भया जो कफ सोई कर्णगूथ होताहै ॥६॥

कर्णप्रतिनाहल०॥

स कर्णगूथो द्रवतां यदागतो विलायितोघ्राण मुखं प्रपद्यते॥ तदा सकर्ण प्रतिनाह संज्ञितो भवे द्विकारः शिरसोर्द्ध भेदकृत्॥ ७॥

जब वह कर्णगूथ तेल इत्यादिकौंके योगसे पतला व्हैके उसी जगह मिलिके नाक औ मुखमे प्राप्तहोताहै तब कर्णप्रतिनाहरोगको उत्पन्न करताहै वह अर्द्धावभेद कायाने आधा सीसीका पैदा करने वालाहै ॥ ७ ॥

कृमिकर्णकल०॥

यदाहि मूर्च्छं त्यथवापि जंतवः सृजंत्यपत्यान्य थवा पि मक्षिकाः ॥ तदंजनत्वा च्छ्रवणो निरुच्य ते भिषग्भि राद्यैः कृमि कर्णको गदः॥ ८ ॥

जब कानमे कीडे पडिजाते हैं तब अथवा मक्षिका वैठिके कीडौं को पैदाकरि देती है तब उस कृमिलक्षणसे कृमिकर्णक रोग कहते है ॥ ८ ॥

अथ कर्णप्रविष्टकीटपतंगादिलक्षणमाह

पतंगाः शतपद्यश्च कर्णस्रोतः प्रविश्यवै ॥ अरतिं व्याकुलत्वं च भृशं कुर्वंति वेदनां ॥ ९ ॥ कर्णौ निस्तुद्यते तस्य तथा कुरुकुरायते ॥ कीटे चरति रुक् तीव्रा निष्यंदे मंद वेदना ॥ १० ॥

अब जो कीडा पतिंगाइ त्यादिक कानमे प्रविष्ट होते हैं उसके लक्षण कहते हैं जैसेकि पतिंगा याने जो जानवर रातिको उडिके दीवामे पडते हैं वै शतपदी याने कनसैरे या कनखजूर ये जब कानके छेदमे पैठिजाते हैं तब वेचैन व्याकुलता औ अतिपीडा करते हैं ॥ ९ ॥ तब कानमे सुई टोंचने सरीखी पीडा होती है औ कान कुरकुराता है जब उसकानमे कीडा चलता है तब तीव्र पीडा होती है औ जब वैचलनेसे रहि जाते हैं तब पीडा कम होती है ॥ १० ॥

कर्णविद्रधि ल०

क्षताभि घात प्रभवस्तु विद्रधि र्भवेत्तथा दोषकृतोऽपरःपुनः॥ सरक्त पीता रुण मस्रमा स्रवे त्प्रतोद धूमायन दाह चोषवान्॥ ११ ॥

घावसे तथा चोटलगनेसे कानमे विद्रधि होता है तथा वातादिक दोषौं करिके भी होता है सोलाल पीला औ गुलाबी रंगके स्रावको स्रवतारहता है तथा सुई टोंचने सरीखी औ धुआं उगिलने सरीखी पीडा दाह औ चूसने सरीखी पीडा करिके युक्त होता है ॥ ११ ॥

कर्णपाकल०

कर्णपाकस्तु पित्तेन कोथ विक्लेद कृद्भवेत् ॥

कर्णविद्रधि पाकाद्वा जायते चांबु पूरणात्॥ १२॥

कर्णपाक रोग पित्तसे होता है जो कर्ण पाक कानके अंदर को वहाता रहता है अथवा कर्ण विद्रधिके पकनेसे किंवा कानमे पानीभरि जानेसेभी होता है॥ १२॥

अथ पूतिकर्ण कर्णशोथ कर्णार्बुद कर्णार्शसां लक्षणान्याह

पूयं स्रवति वापूति सज्ञेयः पूतिकर्णकः॥
कर्ण शोथा बुंदर्शांसि जानीया दुक्तलक्षणैः॥ १३॥

अब पूतिकर्ण कर्णशोथ कर्णार्बुद औ कर्णार्शों के लक्षण कहते हैं जो कानसे दुर्गंधयुक्त पीबगिरता है अथवा कानगंधाताहै सो पूति-कर्ण रोग तथा कर्णशोथ कर्णार्बुद औ कर्णार्श इनौंके लक्षण जो प्रथ-म शोथ अर्बुद औअर्श निदान मेकहि आये हैं वैसेही जानना॥१३॥

अथवातादिभेदेन चरकोक्तकर्णरोगचतुष्टयमाह

नादो ऽतिरुक्कर्ण मलस्य शोषः स्राव स्तनुश्चा श्रव णं चवातात्॥ शोथः सरागोदरणं विदाहः सपीत पूति स्रवणं च पित्तात्॥ १४॥ वैश्रुत्य कंडूः स्थिर शोथ शुक्ला स्निग्धा स्रुतिः श्लेष्म भवे निरुक्॥ सर्वाणिरूपाणिच सन्निपाता त्स्राव श्च तत्राधिक दोषवर्णः॥ १५॥

अब वातादिक दोषभेदौं करिके जो चारि प्रकारके कर्णरोग च-रकने कहे हैं उनरोगौंको कहते हैं॥ तिनमे जो वातज कर्णरोग है उ-समे कानमे एक तरहका गुंगाहट शब्द होता रहता है पीडा अधिक

कानके मैलका सूखना अथवा थोडा वहना सुनिन पडना ये लक्षण होते हैं ॥ पित्तजमे ललामी सहित सूजनि फटने सरीखी पीडा दाह औपीला पीब गिरताहै ॥ १४ ॥ कफसे उलटा सूनना वा नकहै कुछ सुनना कुछ कानमे खाज सूजनि कठिनता पीडाका अभाव तथा सफेद औ चिकना पीब वहता है ॥ सन्निपातज कर्णरोगमे तीनौं दोषौंके चिन्ह मिलते हैं औ वैसाही रंगरंगका पीब गिरता है तहांभी जिसदोषकी अधिकता होती है उसी सरीखा रंग होता है ॥ १५ ॥

अथ कर्णपालीगतान् रोगानाह

सौकुमार्याच्चिरोत्सृष्टे सहसा पि प्रवर्द्धिते ॥
कर्णशोथो भवे त्पाल्यां सरुजः परिपोटकः ॥ १६ ॥

सुकुमार जानिके कानके छेदको बहुत दिनौं तक बढाने विना रहने देय औ फिरि यक बारगी बडानेसे उस जगह सूजनि आती है उसमे किंचित् चर्म छिलासा होता है औ पीडा जादा होती है वह कालायस लिये लाल होता है उसको परिपोट रोग कहते हैं वह वातज है ॥ १६ ॥

उत्पातकल०

गुर्वाभरण संयोगा त्ताडना द्धर्षणादपि ॥
शोथः पाल्यां भवेच्छ्यावो दाह पाक रुजा न्वितः ॥
रक्तो वा रक्तपित्ताभ्या मुत्पातः सगदो मतः ॥ १७ ॥

भारी आभूषणके पहिरनेसे अथवा कुछ चोट लगनिसे घसनेसे रक्तपित्तका कोपव्हैके सूजनि आतीहै सो काले रंगकी तथा दाह पाक औ पीडायुक्त अथवा लालभी होती है ॥ १७ ॥

उन्मंथल०

कर्णं बलाद्वर्द्धयतः पाल्यांवायुःप्रकुप्यति॥
सकफं गृह्य कुरुते शोफं स्तब्ध मवेदनं॥
उन्मंथकः सकंडूकोविकारः कफवातजः॥ १८॥

जो बलात्कार कानको बढाते हैं तहां कानकी लौरमे वायु कोप करिके कफकोभी संग लैके कठिन ऐंचा व युक्त औ खाज सहित पीडा रहित सूजनि करता है उसको उन्मंथ कहते है वह कफ औ वातसे होता है॥ १८॥

दुःखवर्द्धनल०

संवर्द्धमाने दुर्विद्धे कंडूदाह रुजान्वितः॥
शोफो भवति पाकश्च त्रिदोषो दुःख वर्द्धनः॥ १९॥

जो कान बेढब छिदिगया होय उसके बढानेमे खाज दाह औ पीडा सहित सूजनि आयके पकता है सो दुःखवर्द्धन नामका रोग त्रिदोषज है॥ १९॥

परिलेहील०

कफा स्टक्कृमि संभूतः सविसर्पन्नितस्ततः॥
लिहेत्सशष्कुलीं पालीं परिलेही ति सस्मृतः॥ २०॥

इतिरुग्विनिश्चयेकर्णरोगनिदानं

कफ रक्त औकृमि इनसे उत्पन्न भया जो शोकसो इधर उधर फैलता फैलता कानकी लौरको चाटिजाता है उसरोगको परिलेही कहते हैं॥ २०॥ इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसाद विरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांकर्णरोगनिदानप्रकाशः

अथ नासा रोग निदानं तत्र पीनस लक्षणं

आनह्यते यस्य विशुष्यतेच प्रक्लियते धूप्यति चैव नासा ॥ नवेत्तियोगंधरसां श्चजंतु जुष्टं विवस्ये दिह पीनसेन ॥ तंचा निल श्लेष्म भवं विकारं ब्रूयात्प्र तिश्याय समान लिंगं ॥ १ ॥

अब नासिका गत रोगौंका निदान कहते हैं तहां प्रथम पीनसके लक्षण कहते हैं

जिसकी नासिका वारंवार भरिभरि आवै उसतें श्वास रुकि रुकि जाती होय औ सूखि सूखि जाती होय अथवा वहती ही रहती होय तथा तपती रहती होय औ वह मनुष्य सुगंध दुर्गंध तथा मधुर अम्लादिक स्वादौंको नजानै उसको जानै कियह मनुष्य पीनस रोगयुक्त भयाहै वह पीनस वात कफ जनित विकारसे होता है उसके लक्षण प्रतिश्यायके समान होते हैं ॥ १ ॥

अथ पूतिनस्य ल०

दोषै विंदग्धै र्गलतालुमूले संमूर्छितो यस्य समीरणस्तु ॥ निरेति पूतिर्मुख नासिकाभ्यांतं पूतिनस्यं प्रवदंतिरोगं ॥ २ ॥

कफ पित्त औ रक्त के दग्धहोनेसे जिसके गले औ तालूमे वायु बढिजाता है उसके मुख औनासिकासे दुर्गंध निकसने लगती है उस को पूतिनस्य कहते हैं ॥ २ ॥

नासापाकल०

घ्राणाश्रितं पित्तमरूंषि कुर्याद्यस्मिन्विकारे बल

वांश्च पाकः॥ तं नासिका पाक मिति व्यवस्येद्वि

क्लेद कोथाव थवापि यत्र॥ ३॥

नासिकामे रहाभया पित्त सो जिसरोगमे नासिकाके भीतर छोटी छोटी फुंसी उत्पन्न करता है औ अतिशय पकायभी देवै तथा उसमे भिजापन औ दुर्गंध भी होय उसको नासिका पाक जानना ॥ ३ ॥

पूयरक्तल०

दोषै विंदग्धै रथवा पि जंतो र्ललाट देशे भिहतस्य

तैस्तैः॥ नासा स्रवे त्पूय मस्र ग्विमिश्रं तं पूयरक्तं

प्रवदंति रोगं॥ ४॥

वातादिक दोषौं के दूषित होनेसे अथवा ललाटमे चोटलगनेसे उन उनदोषौं करिके नासिका से रक्त मिश्रित पीव गिरता है उसको पूयरक्त कहते हैं ॥ ४ ॥

क्षवथुल०

घ्राणाश्रिते मर्मणि संप्रदुष्टे यस्यानिलो नासिक

यानि रेति॥ कफानुयातो बहुशो ऽति शब्दं तं रोग

माहुः क्षवथुं गदज्ञाः॥ ५॥

घ्राण इंद्रियके आश्रित जो मर्मस्थान याने नासिका नेत्र औ भ्रुकुटि नका मध्य भाग उसमे दूषित भया जो वायू सो बहुधा करिके कफयुक्त अतिशब्द करता भया नासिकासे निकलता है उसको क्षवथु कहते हैं प्रसिद्ध नाम छीक है ॥ ५ ॥

दोषजमुक्त्वाऽऽगंतुजमाह

तीक्ष्णोप योगा दति जिघ्रतोवा भावा न्कटू नर्क निरीक्षणा द्वा ॥ सूत्रादिभि र्वातरुणास्थि मर्म ण्युद्घर्षिते न्यः क्षवथु र्निरेति ॥ ६ ॥

वातादि दोष ज क्षवथु रोगकहा

अब आगंतुज कहते हैं तीक्ष्ण पदार्थ जो राई इत्यादिक तिनके सेवनसे अथवा कटुक जो सोंठि मिरच इत्यादिक तिनके अति सूंघने से अथवा सूर्यांके देखनेसे अथवा सूत्र इत्यादिककी बत्ती करिके बां-सेके सोहरानेसे जो छींक आती है सो आगंतुकक्षवथु रोग होता है॥६॥

भ्रंशथुल०

प्रभ्रश्यते नासिक याहि य स्य सांद्रे विदग्धो लव णः कफश्च ॥ प्राक् संचितो मूर्द्धनि सूर्यतप्ते तंभ्रं शथुं व्याधि मुदाहरंति॥ ७॥

जिस मनुष्यके प्रथम का संचितभया हुआ कफ सो सूर्यकी तापसे मस्तक के तपनेसे गाढा विदग्ध औलोन खारा ऐसा छींकके संग गिरै उसरोगको भ्रंशथू कहते हैं॥ ७॥

दीप्तलक्षणं

घ्राणे भृशं दाह समन्वितेतु विनिश्चरे द्धूम इवेहवा युः॥ नासा प्रदीप्ते वचयस्प जंतो र्व्याधिंतु तंदीप्त मुदा हरंति॥ ८॥

जिस मनुष्यकी नासिका अतिदाह युक्त रहती होय औ वायु

धुआं सरीखा निकलता होय तथा नासिका ऊपर भी जलनीसी रहै उसरोगको दीप्त कहते हैं ॥ ८ ॥

अथप्रतीनाहनासास्रावयो र्लक्षणं

उच्छ्वास मार्गंतु कफः सवातो रुंध्या त्प्रतीनाह मुदाहरेत्तं॥ घ्राणा द्घनः पीत सित स्तनुर्वा दोषः स्रवे त्स्राव मुदाहरेत्तम्॥ ९ ॥

अब प्रतीनाह औनासा स्रावके लक्षण कहते हैं जैसे किवायु संयुक्त कफ उच्छ्वास मार्गको रोंकि लेता है उसरोगको प्रतीनाह कहते हैं जो नासिकासे गाढा पीला औ सफेद अथवा पतला कफ गिरता है इसरोगको नासा स्राव कहते है ॥ ९ ॥

नासा परिशोष लक्षणं

घ्राणा श्रिते स्रोतसि मारुतेन गाढं प्रतप्ते परिशोषितेच ॥ कृच्छ्राच्छ्वसे दूर्ध्व मधश्च जंतु र्यस्मिन्स नासा परिशोष उक्तः॥ १० ॥

जोनासिकाका छिद्र है उसको जव पवन अतिशय तप्त करता है औ सुखाय देता है तव मनुष्य ऊंचे नीचेको श्वास लेनेमे दुःखी होता है उसको नासा परिशोष कहते हैं ॥ १० ॥

अथ चिकित्सा भेदार्थं पीनसस्या मपक्व लक्षणं

**शिरो गुरुत्व मरुचि नासा स्राव स्तनुस्वरः॥
क्षामःष्ठीवे त्तथा भीक्ष्णमाम पीनस लक्षणं॥ ११ ॥
आमलिंगा न्वितः श्लेष्मा घनः खेषु निमज्जति॥**

स्वर वर्ण विशुद्धिश्च परिपक्वस्य लक्षणम् ॥ १२ ॥

अब चिकित्सा भेदके वास्ते पीनसके आम पक्क लक्षण कहते हैं कच्चे पीनस रोगमे शिर भारी अरुचि नाकका वहना स्वर बारीक मलीन औ बार बार थूकना ये कच्चे पीनसके लक्षण ॥ ११ ॥ तथा जो कफ आम चिन्हयुक्त होता है सो गाढा औ उसी जगह लगि रहता है औ स्वर तथा बोलनेकी जो शुद्धता सो पक्क पीनसके लक्षण जानना ॥ १२ ॥

अथप्रतिश्यायनिदानं

संधारणा जीर्ण रजोऽ ति भाष्यक्रोधर्त्तु वैषम्य शिरोऽभि तापैः ॥ संजागराति स्वपनां बुशीताऽ व श्यायकै मैथुन वाष्पसेकैः ॥ संस्त्यान दोषैः शिर शिप्रवृद्धो वायुः प्रतिश्याय मुदाहरेत्तु ॥ १३ ॥

तत्रास्य सद्यो जनक निदान पूर्विकां संप्राप्ति माह ॥

अब प्रतिश्याय रोगका निदान कहते हैं तहां प्रथम तत्काल जननिदान पूर्वक संप्राप्ति कहते हैं सो जैसेकि मल मूत्रादिकौं का रोंकना अजीर्ण होना नासिकामे धूरिका भरणा अतिबोलना क्रोधका करना ऋतु विपरीत आहार विहारादि कौं का करना जिसते मस्तक तपै ऐसे घामका सेवन करना रात्रिका अति जागरन औ दिनकी अति निद्रा नवीन जलका पीना शीत पदार्थनका अथवा शीत जगह इत्यादि कौं का अतिसेवन तुषार पडते मे खडे बैठे औ सोतेरहना अतिमैथुन करना नेत्रौंसे आसुनका गिरना तथा मस्तकमे कफके जमा होनेसे उसमस्तकमे वायु वढिके प्रतिश्याय रोगको उत्पन्न करता है ॥ १३ ॥

अथचयादिक्रमजस्यप्रतिश्यायस्य निदानमाह

चयं गतामूर्द्धनि मारुतादयः पृथक् समस्ता श्च
तथैव शोणितम्॥ प्रकुप्यमाना विविधैः प्रकोपनै
स्ततः प्रतिश्याय करा भवंति॥ १४॥

अब जो वातादिक दोषोंके संचयके क्रमसे प्रतिश्याय रोग होता है उसका निदान कहते हैं जैसेकि वातादिक दोष मस्तकमे संचित भये हुये न्यारे न्यारे तथा सर्व ऐसेही रक्त कोपकरने वाले अनेक पदार्थों-के सेवनसे रक्त कुपितव्है प्रतिश्याय को करते हैं॥ १४.॥

पूर्वरूपम्

क्षव प्रवृत्तिः शिरसोऽति पूर्णता स्तंभोंगमर्दः परि
हृष्टरोमता॥ उपद्रवा श्चाप्य परे पृथग्विधा नृणां
प्रतिश्याय पुरःसराः स्मृताः॥ १५॥

प्रतिश्याय होनेसे प्रथम छींकौंका आना मस्तकका भारी होना शरीरका जकडना औ ऐंठना रोमौंका खडाहोना तथा औरभी अनेक ऐसेही उपद्रवनका होना जैसे नाकमे धुआं इथिशिरके भीतर सरसरा-हट तालूमे तडक कंठमे कांसौं सरीखिनका जाना येचिह्न होते हैं॥ १५॥

अथवातप्रतिश्याय ल०

आनद्धा पिहिता नासा तनुस्राव प्रसेकिनी॥
गलताल्वोष्ट शोषश्च निस्तोदः शंखयोरपि॥
भवे त्स्वरोपघातश्च प्रतिश्याये ऽनिलात्मजे॥ १६॥

वातिक प्रतिश्यायमे नासिका भरीभरी औ वंद थोडा वहना

गला तालू औ ओठौंका सुखना कनपठिनमे सुई टोंचनेसरिखी पीडा औ स्वरभंग येलक्षण होते हैं ॥ १६ ॥

पैत्तिक ल०

उष्णः सपीतकः स्रावो घ्राणात्स्रवति पैत्तिके ॥ १७ ॥
कृशोति पांडुःसंतप्तो भवेद्तृष्णाभिपीडितः ॥
सधूममग्निं सहसा व मतीव वचनासया ॥ १८ ॥

पित्तज प्रतिश्यायमे नाकसे गरम औपीले कफका गिरना स्वरभंग होना वात्तिक जुषाममा ॥ १७ ॥ उसते मनुष्य कृश पांडु वर्ण संताप-युक्त उष्णतासे पीडित औनाकसे धुआंसहित अग्नि सरिखा निकसता मालूम पडनाये लक्षण होते हैं ॥ १८ ॥

कफजलक्षणं

घ्राणात्कफः कफकृते श्वेतः शीतः स्रवेन्मुहुः ॥
शुक्लाऽवभासः सूनाक्षो भवेद्गुरुशिरा नरः ॥
कंठताल्वोष्ठशिरसां कंडूभिरभिपीडितः ॥ १९ ॥

कफज प्रतिश्यायमे मनुष्य सफेद सरीखा दीखता है तथा सफेद ठंडा औ बहुतसा कफ नाकसे पडता है नेत्रौंपर सूजनि रहती है मस्तक भारी रहता है तथा कंठ तालू औ ओंठ इनकीं खाज करिके पीडित रहता है ॥ १९ ॥

सान्निपातिक ल०

भूत्वा भूत्वा प्रतिश्यायो यस्याकस्मान्निवर्त्तते ॥
संपक्वो वाप्यपक्वोवा सतुसर्वभवः स्मृतः ॥ २० ॥

जिसका प्रतिश्याय है के पक्का अथवा कच्चाही अकस्मात मिटिजाय औ फिरे होय उसका सान्निपातिक जानना ॥ २० ॥

दुष्टप्रतिश्याय ल०

प्रक्लिद्यते पुनर्नासा पुनश्च परिशुष्यति ॥
पुनरानह्यते चापि पुनर्विव्रीयते तथा ॥ २१ ॥
निःश्वासोवाति दुर्गंधो नरो गंधं नवेत्तिच ॥
एवंदुष्टप्रतिश्यायं जानीयात्कष्टसाधनम् ॥ २२ ॥

जिस प्रतिश्यामे नासिका वारंवार वहने लगै औ सूखि सूखि जायाकरैं तैसेही वारंवार बंद है के खुलि खुलि जाय ॥ २१ ॥ निश्वासमे दुर्गंध आवै उस मनुष्यको वास न आवै ऐसे लक्षणौं करिके कष्ट साध्य दुष्ट प्रतिश्याय जानना ॥ २२ ॥

रक्तज ल०

रक्तजे तु प्रतिश्याये रक्तस्रावः प्रवर्त्तते ॥
ताम्राक्षश्च भवेज्जंतुरुरोघात प्रपीडितः ॥
दुर्गंधोच्छ्वास वदनो गंधानपि नवेत्तिसः ॥ २३ ॥

रक्तज प्रतिश्यायमे नासिकासे रक्त गिरता रहता है नेत्र लाल छातीमे मारने सरीखी पीडा श्वास औ मुखमे दुर्गंध तथा उस मनुष्यको गंधका ज्ञानहोता नहीं ॥ २३ ॥

असाध्य ल०

सर्व एव प्रतिश्याया नरस्या प्रतिकारिणः ॥
दुष्टतां यांति कालेन तदाऽसाध्या भवंतिच ॥ २४ ॥

मूर्छंति कृमय श्चात्र श्वेताः स्निग्धा स्तथाणवः॥
कृमिजोयः शिरोरोग स्तुल्यं तेनास्य लक्षणं॥ २५॥

सर्व प्रकारके प्रतिश्याय उपाय नकरनेसे समय पायके दुष्टताको प्राप्तव्हैके असाध्यव्है जाते हैं ॥ २४ ॥ औ उसप्रतिश्यायमे सफेद चिकने तथा छोटे छोटे कृमि उत्पन्न होते हैं तब उसके लक्षण कृमि· जा शिरो रोगके समान होते हैं ॥ २५॥

अतःपरमपरान् यान्विकारान् प्रवृद्धाः प्रतिश्यायाः कुर्वंति तानाह

बाधिर्यमांध्य मघ्रत्वं घोरांश्चनयना मयान्॥शोथा
ग्नि सादका सादीन् क्रुद्धाः कुर्वंति पीनसाः॥ २६॥

अबजो क्रुद्धित भये प्रतिश्याय उपद्रवौंको करते हैं उनको देखते है जैसे कि क्रुद्धित भये हुए प्रतिश्याय बहिरापन अंधापन गंधका अ· भाव तथा घोर नेत्ररोग सूजनि मंदाग्नि औकास इत्यादिक रोगौंको उ· त्पन्न करते हैं ॥ २६ ॥

अथैक त्रिंशसंख्या पूरण्याया ऽन्यान् षोडश नासारोगानाह

अर्बुदं सप्तधा शोथा श्चत्वारो ऽर्शश्च तुर्विधं॥
चतुर्विधं रक्त पित्त मुक्तं घ्राणेपि तद्विदुः॥ २७॥

इतिरुग्विनिश्चयेनासारोगनिदानं ॥

जो नासिका के यकतिसरोग कहेहैं उनकी संख्या पूरण होनेके वास्ते औरभी सोरहरोग कह ते हैं जैसेकि सात प्रकारके नासार्बुद चारि प्रकारके शोथ चारि प्रकारके अर्श औजो नासिका गत रक्तपित्त होता है सो एक ऐसेए सौरह औपीनस सेलैके प्रतिश्वाय पर्यंत पंदरह ऐसे

यक्त तिस नासिकाके रोगकहे ॥ २७ ॥ इतिश्रीमत्सु कलसीतारामात्म जपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांनासारोगनिदान प्रकाशः ॥

अथनेत्ररोगनिदानं

उष्णाभितप्तस्य जलप्रवेशाद्दूरेक्षणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ॥ स्वेदाद्रजो धूमनिषेवणाच्छर्देर्विघाताद्वमनातियोगात् ॥ १ ॥ द्रवान्नपानातिनिषेवणाच्चविण्मूत्रवातक्रमनिग्रहाच्च ॥ प्रसक्तसंरोदनशोककोपात् शिरोभिघातादतिमैथुनाच्च ॥ २ ॥ तथा ऋतूनांहि विपर्ययेण क्लेशाभिघातादतिमद्यपानात् ॥ वाष्पग्रहात्सूक्ष्मनिरीक्षणाच्च नेत्रे विकारान् जनयंति दोषाः ॥ ३ ॥

अब नेत्र रोगनिदान कहते हैं जैसेकि धुपसे तपा भया तत्काल वैसाही जलमे प्रवेशकरै दूरकी वस्तुको देखै पानको सोवैरातिको जागै नेत्रमे पसीना धूरि किंवा धुआं प्रवेशकरै वमनको रोंकै अथवा अति वमनकरै ॥ १ ॥ अथवा पतले अन्न पानको अति सेवनकरै अथवा मल मूत्र औ अधो वायूकोरोंकैअथवा निरंतर रोवै शोककरै क्रोधकरै अथवा मस्तकमे चोटलगै अति मैथुन ॥२॥ ऋतु विपरीत आहार विहारा दिक करै इनका विस्तार हमने चर्या पद्माकरमे लिखा है तथा जिनका मौमेक्लेश होताहै तैसे कामकरै अति मद्यपान करै आंसुनको रोंकै बारीक पदार्थौको देरतक देख ताहै इत्यादिक कारणौं करिके वातादिक दोषनेत्रोंमे रोगौं को उत्पन्न करते हैं ॥ ३ ॥

अथ सर्वरोग मुख्यमभिष्पंदं तावदाह

वातात्पित्तात्कफाद्रक्तादभिष्यंदश्चतुर्विधः॥
प्रायेण जायते घोरः सर्वनेत्रामयाकरः॥ ४॥

अब जो सर्वनेत्र रोगौंमे मुख्य अभिष्पंद रोग यानें नेत्रौं का दुख-ना उसको प्रथम कहते हैं सो अभिष्पंद वात पित्त कफ औरक्त इनके भेदसे चारि प्रकारकाहै सोई रोग बहुधा करिके सब नेत्र रोगौंका कारणहोता है॥ ४॥

अथवाताभिष्पंदलक्षणं

निस्तोदन स्तंभन रोमहर्ष संहर्षपारुष्य शिरोऽभितापाः॥ विशुष्क भावः शिशिराश्रुताच वाताभिपन्ने नयने भवंति॥ ५॥

वात संबंधी अभिस्पंद रोगसे नेत्रौंमे सुई टोंचने सरीखी पीडा जडता रोमांच होना नेत्रौंका करकराना रूखा पन शिरका तपना कीचड वगेरे कान आना ठंढे आंसुन का आना येचिन्ह होते हैं॥ ५॥

पित्ताभिष्पंदल०

दाह प्रपाकौ शिशिराभिनंदा धूमायनंबाष्प समुछ्रयश्च॥ उष्ण श्रुता पीतक नेत्रताच पित्ताभिपन्ने नयने भवंति॥ ६॥

नेत्रौंमे दाह नेत्रौं कापकना ठंढे पदार्थौं पर इच्छा धुआं निकलने सरीखी पीडा आंसुनका अति आनावै आंसू गरम नेत्र पीलेपित्ताभिष्पंद मे येलक्षण होते हैं॥ ६॥

कफाऽभिष्यंद्ल०

उष्णाऽभि नंदा गुरुताऽ क्षिशोथः कंडूप देहा वति शीतताच॥ स्रावो बहुः पिच्छिल एवचापि कफो भि पन्ने नयने भवंति॥ ७॥

कफाभि ष्यंद रोगमे उष्ण पदार्थौं पर प्रीति नेत्रौं पर भारीपन औ सूजनि खाज चपटना ठंढई बहुत औजिकने कीचरका वहना येलक्षण होते हैं॥ ७॥

रक्ताऽभिष्यंद्ल०

ताम्रा श्रुता लोहित नेत्रताच्च राज्यः समंता दति लोहिताश्च॥ पित्त स्यालिंगानि च यानि तानिरक्ता भि पन्ने नयने भवंति॥ ८॥

रक्ताभिष्यंदरोगसे लाल आंसुनका निकसना तथा नेत्रभी लाल औनेत्रौंमे सब और अतिलाल रेखौंका दीखना तथा जोचिन्ह पित्ता भिष्पंदमे कहेहैं वैभी होते हैं॥ ८॥

अथाधिमंथानामभिस्पंदजत्वंतल्लक्षणंचाह॥

वृद्धै रेतै रभिष्यंदै नंराणा मक्रिया वतां॥
तावंत स्त्वधिमंथाः स्यु र्नयने तीव्रवेदनाः॥ ९॥
उत्पाट्य त इवात्यर्थं नेत्रं निर्मथ्यते तथा॥
शिरसोऽर्धं चतं विद्या दधि मंथं स्वलक्षणैः॥ १०॥

अब कहतेहैं कि अधि मंथौंकी उत्पत्ति अभिस्पंदौं से होतीहै

तथा उन अभिस्पंदोंके लक्षण भीकहते हैं ॥ जोमनुष्य अभिष्पंदोंके उपाय अच्छीतरह से नही करते हैं उनमनुष्योंकेवैचारौ अभिष्पंद वढिके तीव्रपी डायुक्त चारिही अधिमंथ रोगोंको उत्पन्न करते हैं ॥ ९ ॥ उन अधि मंथोंसे नेत्रोंमें उखारि डारने सरीखी पीडा तथा आधे मस्तकमे मथने सरीखी पीडा होती है औस सब लक्षण अभिष्पंदोके समा- नही होती है ॥ १० ॥

सचाधि मंथो यदात्मको यावता काले न चमिथ्या चाराद्दृष्टि हंति तदाह ॥

हन्या दृष्टिं श्लेष्मिकः सप्तरात्रा द्योधी मंथो रक्त
जो पंचरात्रात् ॥
षड्रात्रा द्वावातिको वैनिहन्या न्मिथ्याचारा त्पैत्ति
कः सद्यएव ॥ ११ ॥

सो अधि मंथ जिस दोषमयहो ताहै औ मिथ्या आचरणसे जेतने दिनोंमे दृष्टि का नाश करता है सो कहते हैं जैसे किमिथ्या आच- रणसे कफाधि मंथ सातदिनोंमे दृष्टिका नाश करता है रक्ताधिमंथ पांच दिनमे वाताधि मंथ छदिनसे औपित्ताधिमंथ तत्कालही दृष्टिका नाश- करता हैं ॥ ११ ॥

अथामपक्वलक्षणं ॥

उदीर्ण वेदनं नेत्रं रागो द्रेक समन्वितं ॥
घर्षनिस्तोद शूलाश्रुयुक्त मामान्वितं विदुः ॥ १२ ॥
मंदवेदनता कंडूः संरंभा श्रुप्रशांतता ॥

प्रसन्न वर्णता चाक्ष्णोः संपक्कं दोपमादिशेत्॥ १३॥

अब नेत्ररोगके आम पक्क लक्षण कहते हैं जो नेत्र तीव्र वेदना युक्त तथाललामी की अधिकता युक्त तथा करकता रहताहोय तथा टोचने सरीखी पीडायुक्त तथा शूल औआंसूवहना इनलक्षणों युक्त होय तौ रोग कच्चाजानना ॥१२॥ तबपकानेका उपायकरना शांति का उपाय नकरना तथा जिसमे पीडा अल्प खाज सूजनि औ आंसू इनकी शांति नेत्रौंका रंगसाफ इनलक्षणौं से पकाऐसे जानिके शांतिका- उपायकरना ॥ १३ ॥

अथसशोथाऽशोथनेत्रपाकलक्षणं

कंडू पदेहा श्रुयुतः पक्को दुंबर सन्निभः॥
संरंभी पच्यते यस्तु नेत्र पाकः सशोफजः॥
शोथही नानि लिंगानि नेत्र पाके त्वशोथजे॥ १४॥

अबशोथयुक्त औशोथरहितनेत्रपाककेलक्षणकहते हैं

जिन नेत्रौंमे खाज चिपकना औ आंसू परतेहाय तथा गूलरके फल समान लाल सूजनि युक्त जोपकाहोयसो नेत्ररोग शोफयुक्त जानना औ जो इनलक्षणौं करिके हीन होय सोशोथ रहित पाक जानना ॥ १४ ॥

अथहताधिमंथलक्षणं

उपेक्षणा दक्षि यदाधि मंथो वातात्मकः सादयति प्रसह्य॥ रुजाभि रुग्राभि रसाध्य एषो हताधि मंथः खलु नेत्ररोगः॥१५॥

जब अधि मंथरोगकी अछी तरहसे औषध उपाय नकिया॥

वह वातात्मक अधि मंथ अति उग्रपीडा करिके नेत्रका नाशकरताहै उसीको हताधि मंथकहतेहै वह असाध्य है ॥ १५ ॥

वातपर्ययलक्षणं ॥

वारं वारं चपर्यैति भ्रुवौ नेत्रौ चमारुतः॥
रुजश्च विविधा स्तीव्राः सज्ञेयो वातपर्ययः॥ १६ ॥

जिस नेत्ररोगमे वायु कोई समयमे भौंहनमे औ कोई समय नेत्रौंमे जाय जायके अनेक प्रकारकी तीव्र पीडोंको उत्पन्न करता है उसको वात विपर्यय कहते हैं ॥ १६ ॥

शुष्काक्षिपाकल०

यत्कूणितं दारुण रूक्ष वर्त्म संदह्यते चाविल दर्शनंच॥ सुदारुणं यत्प्रति बोधनेन शुष्काक्षि पाको पहतंत दक्षि ॥ १७॥

जो नेत्रमिचे रहैं नेत्रकी पलकैं कठिन औ रूखी तथा जरते रहैं साफ देखिन परै याने नेत्र ढवैले रहैं उसते वैसाही देखिपडै जागे पीछे नेत्रखोलना कठिन परै उसनेत्रको जानना ॥ कि यहशुष्काक्षिपाकसे पीडित भयाहै॥ १७॥

अन्यतोवातलक्षणं

यस्या वटूकर्ण शिरो हनुस्थो मन्यागतो वाप्य निलो न्यतो वा॥ कुर्या द्रुजो विभ्रु विलोचनेच तमन्यतो वात मुदा हरंति॥ १८॥

जिस मनुष्यके घांटी कान मस्तक दाढी अथवा गर्दन पीठ इत्या-

दिक स्थानौंमे रहा भया वायु नेत्र औभौंहनमे पीड़ाकरै उसको अन्य-
तो वात कहते हैं ॥ १८ ॥

अम्लाध्युषितल०

श्यावं लोहित पर्यंतं सर्वं चाक्षि प्रपच्यते ॥
सदाह शोथं सस्राव मम्लाध्युपित मम्लतः ॥ १९ ॥

जो नेत्ररोग खटाईके अतिसेवनसे वीचमे काला औ किनारोंपर
लालव्हैके सब नेत्रको पकाता है उसमेदाह सूजनि आंसू औकी च-
रभी झरै उसको अम्ला ध्युपित कहते हैं ॥ १९ ॥

शिरोत्पातलक्षणं

अवेदना वापि सवेदनावायस्याक्षि राज्यो हि भ
वंति ताम्राः ॥ मुहुर्विरज्यंति चयाःसतादृग् व्या
धिःशिरोत्पात इतिप्र दिष्टः ॥ २० ॥

पीड़ा रहित अथवा पीड़ासहित जिसके नेत्रौंकी नसैं लालहोयं
औ वारं वारं रंगवदलती रहैं उसरोगका नाम शिरोत्पात ॥ २० ॥

शिराप्रहर्ष०

मोहाच्छिरो त्पात उपेक्षितस्तु जायेत रोगस्तु शि
रा प्रहर्षः ॥ ताम्राश्रु गच्छं स्रवति प्रगाढंतथा नश
क्नो त्यभि वीक्षितुंच ॥ २१ ॥

जो कदाचित् शिरो त्पात रोगका उपाय न कियातौ शिरा प्रहर्ष
रोग उत्पन्नहोता है सोरोग ताम्र वर्ण रंगके आंसुनको वहता रहता है
उसते वह देखने को भीसमर्थव्हैसकतानहीं ॥ २१ ॥

अथव्रणशुक्रलक्षणं

निमग्नरूपंतु भवेद्धिकृष्णे सूच्येवविद्धंप्रति भा तियद्धै॥ स्रावं स्रवेदुष्ण मतीव यच्च तत्सव्रणं शुक्र मुदाहरंति॥ २२॥

जो नेत्रके काले भागमे फूल पडा भया गहिरा दीखै सो जैसे सुई से छेदकिया होय ऐसा दीखै औ जिसते अति उष्ण आंसूपडैं उसको सव्रण शुक्र कहते हैं ॥ २२ ॥ इहांवे देहसंहिताका श्लोक लिखते हैं यथा ॥ रक्तराजी निभं कृष्णो भिन्ना भंयत्र लभ्यते ॥ सूच्य- ग्रेणे वत च्छुक्र मुष्णा श्रुस्रावित द्व्रणं ॥ १ ॥ अर्थ जो नेत्रके काले भा- गमे लाल राईकी समान सुईसे छेदा सरीखा देखिपरै औ नेत्रसे गरम आंसूगिरै उसको सव्रण शुक्र जानना ॥ १ ॥ २२ ॥

दृष्टेःसमीपे नभवेच्चयत्तु नचावगाढं नच संस्रवे च्च॥अवेदनंवानच युग्म शुक्रं तत्सिद्धि मायाति कदाचिदेव॥ २३॥

जो फूली नेत्रकी पुतली से न्यारी होय औ गाढीन होय तथा बहुत वहै नपीडारहित औ क्षतसे भी नभयी होय कदाचित अच्छीव्है सकै नहींतौ असाध्यही होती है ॥ २३ ॥

अथाव्रणशुक्रलक्षणं

स्पंदात्मकं कृष्ण गतं सचोषं शंखेंदु कुंद प्रतिमाव भासं॥ वैहायसाभ्र प्रतनु प्रकाश मथाव्रणं सा ध्यतमं वदंति॥ २४॥

जो फूली नेत्र दुखनेसे कौले भागमे उत्पन्न भईहोय तथा चूसने सरीखी पीडायुक्त तथा शंख चंद्र कुंदका पुष्प अथवा आकाश मेघ सरीखीहोय सो अव्रण शुक्र सुख साध्य है ॥ २४ ॥

अथा व्रणस्याप्ये कावस्था भेदेन कृच्छ्र साध्यत्व माह॥

गंभीर जातंबहलं चशुक्रं चिरोत्थितं वापि वदंति कृछ्रं २५

जो अव्रण भी शुक्र है उसके एक अवस्था भेदसे कष्ट साध्यत्व कहते हैं ॥ जैसेकि जो फूली दूसरे परदे इत्यादिक मे भई होय मोटी तथा बडीहोय औ बहुत दिनौंकी होय सो कष्टसाध्य कहे जाती है ॥ २५ ॥

असाध्यलक्षणं ॥

विच्छिन्न मध्यं पिशिता वृतं वाचलंशिरा सूक्ष्म मदृष्टि कृच्च ॥ द्वि त्वग्गंत लोहित मंतत श्च चिरोत्थि तंचापि विवर्जनीयं ॥ २६ ॥

जिस फूलीके बीचमे छिद्र सरीखा दीखता होय अथवा उसके चौ तरफ मांस वढिके उसको घेरिलिया होय औ एक जगहसे दूसरी जगह पर ऐसे फिरती होय तथा बारीक नसौंमे व्याप्त दृष्टि नाशक दूसरे परदेमे किनारेपर लाल औ बहुत दिनौंका होयसो असाध्य होता है ॥ २६ ॥

उष्णाश्रु पातः पिडिका चनेत्रे यस्मिन् भवे न्मुद्र निभंचशुक्रम् ॥ तमप्य साध्यंप्र वदंतिके चिदन्यं च यत्ति त्तिर पक्ष तुल्यम् ॥ २७॥

जिस नेत्रसे गरम आंसू गिरते होय औनेत्रमे मूंगके समान फुंसी-

होय औ मूंग हीके समान फूली होय औ दूसरी जो तीतरके पंख स-
मान रंगकी फूली होयसो भी असाध्यहोती है ॥ २७ ॥

अथाक्षि पाकात्यय लक्षणं ॥

श्वेतः समा क्रामंति सर्वतो हि दोषेण यस्या सित
मंडलंतु॥ तमक्षि पाका त्यय मक्षिपाकं सर्वात्मकं
वर्जयितव्य माहुः॥ २८॥

जिस नेत्रके काले भागपर चौतरफ से सफेदी फिरिजाय उसनेत्र
पाकको अक्षि पाकात्यय कहते हैं वह त्रिदोषज असाध्यहोता है॥ २८॥

अजकाजातलक्षणं ॥

अजा पुरीष प्रतिमो रुजावान् सलोहितो लोहित
पिच्छिलाश्रुः ॥ विगृह्य कृष्णं प्रचयो ऽभ्युपैति त
च्चा जका जात मिति व्यवस्येत् ॥ २९ ॥

जो फूल वकरीकी लेंडीके समान पीडायुक्त लालरंगका औलाल
तथा चिकने आंसुनका वहने वाला तथा काले भागको ढांकिके वढै
उसको अजका जात कहते हैं ॥ २९ ॥

अथ दृष्टिगत रोगेषु प्रथम प्रथम पटलगत दोषलक्षणं ॥

प्रथमे पटले यस्य दोषो दृष्टिंव्यवस्थितः॥
अव्यक्तानि च रूपाणि कदा चि दथपश्यति॥ ३०॥

अब दृष्टिगत रोगौंमे प्रथम प्रथम पटल गतदोष के लक्षण कहते हैं
सो जैसेकि प्रथम पटल याने पहिले परदेमे दोषके प्राप्तहोनेसे कदाचित्
अव्यक्त रूपौंको देखता है जैसे कि वायुसे नीले काले सरीखे पित्तसे

पीले कफसे सफेद औ सन्निपातसे अनेक प्रकारके चित्र विचित्र वर्णोंको देखता है ॥ ३०॥

द्वितीयपटलगतलक्षणं ॥

दृष्टि र्भृशं विव्हलति द्वितीयं पटलंगते ॥
मक्षिका मसकान् केशान् जालका निच पश्यति॥३१
मंडलानि पताकाश्च मरीचान् कुंडलानिच ॥
परिप्लुवांश्च विविधान् वर्षमभ्रं तपांसिच ॥ ३२ ॥
दूरस्थानिच रूपाणि मन्यते हिसमीपतः॥
समीपस्थानि दूरेच दृष्टे र्गोचर विभ्रमात्॥
यत्नवानपि चात्यर्थं सूचीपाशं नपश्यति॥ ३३ ॥

जिसके दूसरे परदेमे दोष प्राप्तहोता है उसकी दृष्टि अति व्याकुल होती है औ मक्खी मच्छर केश औजाली सरीखा देखिपरता है ॥ ३१ ॥ तथा मंडल पताका किरण औ कुंडल से नानाप्रकारके झिलि मिलते भये देखिपरते हैं तथा वर्षा धूपऔमेघोंको देखता रहता है॥ ३२ ॥ तथा दूरकी वस्तुको नगीच औनगीचकी को दूर ऐसा दृष्टिके भ्रम सेमानता है औवडे प्रयत्न सेभी सुईका नाका नहींदीखता है ॥ ३३॥

अथतृतीयपटलगतलक्षणं ॥

ऊर्ध्वं पश्यति नाधस्ता तृतीयं पटलं गते॥
महांत्यपि चरूपाणि छादितानी वचांवरैः ॥ ३४॥
कर्ण नासा क्षि हीनानि विकृतानि चप श्यंति ॥

यथादोषं चर ज्येत दृष्टिर्दोषे वलीयसि ३५॥
अधस्थेतु समीपस्थं दूरस्थं चोपरि स्थिते॥
पार्श्वं स्थिते पुन दोषे पार्श्वस्थं नैव पश्यति॥ ३६॥
समंततः स्थिते दोषे संकुलानीव पश्यति॥
दृष्टि मध्यस्थिते दोषे महह्रस्वं च पश्यति॥ ३७॥
द्विधा स्थिते द्विधा पश्ये द्बहुधा चानव स्थिते॥
दोषे दृष्टि स्थिते तिर्यगे कं वै मन्यते द्विधा॥ ३८॥

तीसरे परदेमे दोषके प्राप्तहोनेसे ऊपरका दीखता है औ नीचेका नही अतिबडे रूपौंको भी जैसे मेघसे ढकेहोयं तैसै ॥ ३४ ॥ नाक कान विना मुंड मुंड दीखता है जो दोषबलवान होता है वैसाही रंगदीखता है ॥ ३५ ॥ जोदोष दृष्टिके नीचे भागमे प्राप्त होयतौ नजीक कीवस्तुनदीखै औ ऊपर दोषके रहनेसे दूरका नदीखै अगल बगलमे दोषके रहने से अगलबगलका नदीखै ॥ ३६ ॥ चौतरफ दोष प्राप्तहोनेसे सब-मिले भये दीखते हैं दृष्टिके मध्यमे दोष प्राप्तहोनेसे बडेका छोटा दीखता है ॥३७॥ दोनौ तरफ दोष प्राप्तहोनेसे रूप दो हरे दीखते हैं जोदोष-की थिरता न होयतौ अनेक प्रकारके रूप दीखते है जोदोष तिरछा स्थित होता हैतौ एक एक केदो दो देखता है ॥ ३८ ॥

चतुर्थ पटल गत दोष लक्षणं ॥

तिमिराख्यः सवै रोग श्चतुर्थ पटलं गतः॥
रुणद्धि सर्वतो दृष्टिं लिंग नाश मतः परं॥ ३९॥
अस्मिन्न पित मोभूते नाति रूढे महागदे॥

चंद्रादित्यौ सनक्षत्रा वंतरिक्षे च विद्युतः॥
निर्मलानिच तेजांसि भ्राजिष्णूनि चपश्यति॥४०॥

चौथे परदेमे जो दोष प्राप्तहोता है उसका नाम तिमिरहै सो जब दृष्टिको चौतरफ से रोंकि लेता है तब उसको लिंग नाश कहते हैं॥३९॥ उससे कुछभी दीखतानही जो उसीमे कुछ जादा अंधेरा नभया होय औ अति बढाभीनहोय तौ चंद्रसूर्य विजुली इनका गोला कार तेज दीखता है॥ ४०॥

अथलिंगनाशस्यैवलिंगांतरमाह॥

सएव लिंग नाशस्तु नीलिका काच संज्ञितः॥ ४१॥

जो तीसरे पठलमे काच संज्ञक रोगकहा है वही उपायन करने से चौथेपटलमे प्राप्त है केलिंग नाश औनीलिका संज्ञक होता है॥ ४१॥

दोष विशेषेण लिंगनाशे रूप दर्शन त्वमाह॥

तत्र वातेन रूपाणि भ्रमंती वहि पश्यति॥
आविला न्यरुणाभानि व्याविद्धा नीव मानवः॥४२॥
पित्तेना दित्य खद्योत शक्र चाप तडिद्गुणान्॥
नृत्यंत श्चैव शिखिनः सर्वं नीलंच पश्यति॥ ४३॥
कफेन पश्ये द्रूपाणि स्निग्धानिच सितानिच॥
सलिल प्लाविता नीव जालकानि च मानवः॥ ४४॥
सन्निपातेन चित्राणि विप्लुतानिच पश्यति॥
वहुधाच द्विधावापि सर्वाण्येव समंततः॥
हीनांगा न्यधिकांगानि ज्योतींष्यपिच पश्यति॥ ४५॥

पश्येद्रक्तेन रक्तानि विविधानि सितान्यपि॥
हरितान्यथ कृष्णानि पीतान्यपि च मानवः॥४६॥

लिंग नाशमे दोष भेद करिके जैसे जैसे रूपदीखते है तैसे कहते है॥ तहां वायूसे धूममैले अरुण कुटिल औभ्रमते सरीखे देखाते हैं॥ ४२॥ पित्तसे सूर्य खद्योत इंद्रधनुष विजुली नाचते भये मोर तथा सर्व प्रदार्थ नीले देखाते हैं॥ ४३॥ कफसे चिकने सफेद जलसे भीजे सरीखे औजाली सरीखे देखाते हैं॥ ४४॥ सन्निपातसे चित्र विचित्र रंगके बिपरीत अनेक अथवा एक एक केदोदो अथवा हीन अंगके किंवा अधिकअंगके अथवा तेज देखाते है॥ ४५॥ रक्तसे सफेद भी लालही देखाते हैं तथा अनेक प्रकारके हरे काले औपीले देखाते हैं॥ ४६॥

पित्तरक्तेनचापरंपरिम्लायिसंज्ञकंतिमिरमाह॥

पित्तं कुर्यात्परिम्लायि मूर्छितं रक्ततेजसा॥
पीतादिशस्तथोद्योतान् रवीनपि च पश्यति॥४७॥
विकीर्यमाणान् खद्योतैर्वृक्षांस्तेजोभिरेव च॥४८॥

पित्तरक्तसे उत्पन्न जो परिम्लायि तिमिररोग उसके देखा देते हैं॥ रक्तके तेज करिके युक्तजो पित्त सोपरिम्लायी नाम तिमिरको उत्पन्न करता है उसरोगसे मनुष्य दिशौं कोपीली तथा उदय भये हुएसूर्य औ जुगुनुनके समान देखता है॥ ४७॥ तथा अग्नितेजकरिके व्याप्त वृक्षौंको देखते है॥ ४८॥

वातादि भेदेन षड्विधं तिमिर मभिधाय रागैश्च षड्विध त्वमाह॥

वक्ष्यामि षड्विधं रागै र्लिंग नाशमतःपरं॥

रागोऽरुणो मारुतजः प्रदिष्टो म्लायीच नीलश्च तथैव पित्तात्॥ कफात्सितःशोणितजः सरक्तःस मस्तदोष प्रभवो विचित्रः॥ ४९ ॥

वातादिक भेदौंसे छ प्रकारके तिमिर कहे अवरंग भेदौंकरिके छ प्रकार कहते हैं तहां वायूसे गुलावी रंग दीखता है पित्तसे पीलायस युक्त नील वर्ण तथा केवल नीलवर्ण दीखता है कफसे सफेद रक्तसे लाल सन्निपातसे चित्र विचित्र वर्णदीखता है ॥ ४९ ॥

परिम्लायि तिमिररोगमाह ॥

अरुणं मंडलं दृष्ट्यां स्थूल काचा रुणप्रभं ॥
परिम्लायि निरोगेस्यान् म्लायीनीलं च मंडलं॥
दोषक्षया त्कदाचित्स्या त्स्वयं तत्र प्रदर्शनं॥ ५० ॥

जो दृष्टिमे स्थूलकाचके समान अरुण वर्ण मंडल होता है उसको परिम्लायी कहते है अथवा उसरोगमे नील वर्ण धुमैले रंगका मंडल होता है उसरोगमे कदाचि द्दोषौंके क्षयहोनेसे आपसे भी देखने लगता है ॥ ५०॥

अरुणं मंडल वाता त्परुषं चंचलं तथा॥
पित्ता न्मंडल मानीलं कांस्याभं पीतमेवच॥
श्लेष्मणा वहलं स्निग्धं शंख कुंदेंदु पांडुरं ॥ ५१॥
चल त्पद्म पलाशस्थः शुक्लो विंदुरिवांभसः॥
मृद्य मानेच नयने मंडलं तद्विसर्पति॥ ५२॥
प्रवाल पद्म पत्राभं मंडलं शोणितात्मकं॥

दृष्टिरागो भवे च्चित्रो लिंगनाशे त्रिदोषजे ॥
यथास्वं दोष लिंगानि सर्वेष्वेषु भवंति हि ॥ ५३ ॥

वायूसे लाल कठिन औ चंचल ऐसा मंडल होता है पित्तसे किंचित् नीलवर्ण कांसेसरीखा औ पीलाभी होता है ॥ कफसे अतिबडा चिकना तथा शंख कुंदपुष्प औ चंद्रमा सरीखा सफेद होता है ॥ ५१ ॥ तथा जैसे हलते भये कमलके पत्तेपर जलका सफेद बूंद डोलता रहता है तैसाही नेत्रके चलनेसे वह मंडलभी चलता है जो मंडल रक्तसे होता है ॥ ५२ ॥ सोमूंगा औ कमलकी पखुरीके समान होता है जो त्रिदोषज लिंगनाशहोता है उसमे दृष्टिका रंग चित्र विचित्र वर्णका होता है जो येसब कहे इनसबनमे जैसा रंगदेखनातैसीही दोषकी अधिकता निश्चयकरना ॥ ५३ ॥

अतः परमुक्तवक्ष्यमाणविकारयोः संख्याभिधानमाह ॥

तथापरः पित्त विदग्ध दृष्टिः कफेन चान्यस्त्वथ धूमदर्शी ॥ यो ह्रस्वजात्यो नकुलांध संज्ञो गंभीर संज्ञाच तथैव दृष्टिः ॥ ५४ ॥ षड् लिंगनाशाः षडिमे च रोगा दृष्ट्या श्रयाः षट्च षडेव चस्युः ५५ ॥

जो तिमिरादिक रोग कहे तथा जो पित्त विदग्ध दृष्ट्यादिक कहैंगे उन सबनकी संख्या कहते हैं जैसे तिमिर कहे तैसेही पित्त विदग्ध दृष्टि कफ विदग्ध दृष्टि धूमदर्शी ह्रस्वजात्य नकुलांध औ गंभीर दृष्टि ॥ ५४ ॥ ऐसे ये छ औ छ लिंगनाशरोग एलिंगनाशहीके भेद हैं ऐसे दृष्टिगतरोग बारह हैं ॥ ५५ ॥

पित्तविदग्धदृष्टिलक्षणं

पित्तेन दुष्टेन गतेन दृष्टिं पीता भवे द्यस्य नरस्य दृष्टिः॥ पीतानि रूपाणिच तेनपश्ये त्सवैनरः पित्त विदग्ध दृष्टिः॥ ५६ ॥ प्राप्ते तृतीयं पटलं च दोषे दिवा नपश्ये न्निशि वीक्षतेसः॥ रात्रौ सशीतानुग्रहीत दृष्टिः पित्ताल्प भावा दपितानि पश्येत्॥ ५७॥

जो पित्तदूषितव्है के वढाहोय उसपित्तके नेत्रमे रहनेसे मनुष्यकी दृष्टि पीली होती है औ उसते सर्व पदार्थोंके रूप पीले दीखते हैं उसको पित्तविदग्धदृष्टि कहते हैं इसरोगमे दोष पहिले औ दूसरे परदेमे रहता है ॥ ५६ ॥ जब इसीतरहका पित्त तीसरे परदेमे प्राप्त होता है तब दिनको दीखता नही रातिको दीखता है कारणकि रातिकी शीतलतासे पित्त अल्प रहताहै इसवास्ते नेत्रौंमे शीतलता प्राप्त होनेसे रातिको दीखता है इस रोगको दिवांध्य औ दिनौं धीभी कहते हैं ॥५७॥

कफविदग्धदृष्टिल०

तथा नरः श्लेष्म विदग्ध दृष्टि स्तान्येव शुक्लानिहि मन्यतेतु॥ त्रिषु स्थितोयः पटलेषु दोषो नक्तांध्य मापादयति प्रसह्य॥ दिवा ससूर्या ऽनुगृहीतदृष्टिः पश्येत्तुरूपाणि कफाल्प भावात्॥ ५८॥

जिसकी दृष्टि कफदूषित होती है वह कफविदग्ध दृष्टि मनुष्य सर्वरूपौंको सफेदही देखता है जब वह कफ तीनौं परदौंमे प्राप्तव्है जाता है तब वह कफ नक्तांध रोगको उत्पन्न करता है उसते दिनमे

सूर्यके तेजसे जब कफ कमती होता है तब दीखता है रात्रिको नहीं इसको लोग रतौंधी भी कहते हैं ॥ ५८ ॥

धूमदर्शिलक्षणं

शोक ज्वरायासशिरोऽभितापै रभ्याहता यस्य नरस्य दृष्टिः ॥ सधूमकान्पश्यति सर्वभावान्सधूम दर्शीति गदः प्रदिष्टः॥ ५९ ॥

शोक ज्वर परिश्रम औ मस्तक पीडा इनकरिके जिसकी दृष्टि पीडित होतीहै सोमनुष्य सर्वपदार्थोंको धुआं सहित देखताहै इसमे पित्त-कारण है वास्ते ऐसा हाल दिनहीमे होता है औ वहरोग बाहेरके ही परदेमे होता है ऐसे गदाधर कहते हैं ॥ ५९ ॥

ह्रस्वजात्यलक्षणं

यो ह्रस्वजात्यो दिवसेषु कृच्छ्रा द्ध्रस्वानि रूपाणिच तेन पश्येत् ॥ ६० ॥

जिसके ह्रस्वजात्य रोग होता है सो दिनको अति कष्टसे बडे बडे रूपौंकोभी छोटे छोटेसे दीखता है ॥ ६० ॥

नकुलांध्यलक्षणं

विद्योतते यस्य नरस्य दृष्टि र्दोषा भिपन्ना नकुलस्य तद्वत् ॥ चित्राणिरूपाणि दिवा सपश्येत्सवै विकारोनकुलांध्यसंज्ञः ॥६१॥

जिसमनुष्यकी दृष्टि दोषदूषितव्हैके मुंगसरीखी दृष्टि समान चमकती रहती है औ वहदिनको चित्र विचित्र रूपौंको देखता है उसरोगको नकुलांध्य कहते हैं ॥ ६१ ॥

गंभीरदृष्टिल०

दृष्टिर्विरूपा श्वसनोपसृष्टा संकोचमभ्यंतरतश्च याति ॥ रुजावगाढाचतमक्षिरोगं गंभीरकेतिप्रवदंतितज्ज्ञाः ॥ ६२ ॥

जिसमनुष्यकी दृष्टि वायुकरिके दूषित विरूपव्है के अंदरको संकुचित भई होय औअति पीडाकरै उसको गंभीरदृष्टि कहते है॥ ६२॥

आगंतुजलिंगनाशमाह ॥

बाह्यौ पुनर्द्वाविह संप्रदिष्टौ निमित्ततश्चाप्यनिमित्ततश्च ॥ निमित्ततस्तत्र शिरोऽभितापाज्ज्ञेयस्त्वभिष्यंदनिदर्शनैः सः ॥ ६३॥

बाह्ययाने आगंतुक तिमिर दो प्रकारका होता है एक निमित्तसे औ दूसरा अनिमित्तसे तिनमे जोनिमित्तसे होता है सो मस्तक पीडासे अभिष्यंदके लक्षणौं करिके निश्चय कियाजाता है याने उसीसे होता है ६३ ॥

अनिमित्तल०

सुरर्षिगंधर्वमहोरगाणां संदर्शने नापि च भास्करस्य ॥ हन्येत दृष्टिर्मनुजस्य यस्य सलिंगनाशस्त्वनिमित्तसंज्ञः ॥ तत्राक्षि विस्पष्टमिवावभाति वैदूर्यवर्णा विमलाच दृष्टिः ॥ ६४॥

देवता ऋषि गंधर्व बडी जातिके सर्प औ सूर्य इनके देखनेसे जो दृष्टि विगडती है उस लिंगनाशको अनिमित्त लिंगनाश कहते हैं उस-

रोगमे नेत्र सुंदर वैदूर्य मणिके समान रंगके शोभते हैं परंतु दीखता-नहीं ॥ ६४ ॥

अथ शुक्ल भागजान् रोगानाह तेषां नामानि संख्यां चाह ॥

प्रस्तारि शुक्ल क्षतजाधिमांसस्नाय्वर्म संज्ञाः खलु पंचरोगाः ॥ स्याच्छुक्तिका चार्जुन पिष्टकौच जालं शिराणां पिडिकाश्च याःस्युः ॥ रोगा बलासग्रथितेन सार्द्धमेकादशाक्ष्णोः खलुशुक्लभागे६५॥

जो रोग नेत्रकी सफेदीमे होते हैं उनको कहते हैं तहां प्रथम उनके नाम औ संख्या कहते हैं जैसेकि प्रस्तार्यर्म १ शुक्लार्म २ रक्तार्म ३ अधिमांसार्म ४ औ स्नाय्वर्म ५ एपांच अर्म तथा शुक्तिका १ अर्ज्जन२ पिष्टक ३ शिराजाल ४ शिरापिडिका ५ औ बलास ग्रथित ६ ऐसे ये ग्यारह रोगनेत्रके शुक्लभागमे होते हैं ॥ ६५ ॥

अथार्मणांक्रमेणलक्षणान्याह ॥

प्रस्तार्यर्म तनुस्तीर्णं श्यावं रक्तनिभं सिते ॥ १ ॥
सश्वेतं मृदुशुक्लार्मशुक्ले तद्वर्द्धते चिरात्॥ २॥६६॥
पद्माभं मृदु रक्तार्म यन्मांसं चीयते सिते ॥ ३ ॥
पृथु मृद्वधि मांसार्म वहलंच यकृन्निभं ॥४॥ स्थिरं प्रस्तारि मांसाढ्यं शुष्कं स्नाय्वर्म पंचमं॥५॥६७॥

जो पांच प्रकारके अर्म रोगकहे हैं तिनके लक्षण अनुक्रमसे कहते हैं तिनमे प्रस्तार्यर्म पतला विस्तीर्ण काला किंवा लाल ऐसा नेत्रके सफेद भागमे मंडल होता हैं॥ १ शुक्लार्म यह नेत्रके शुक्ल भागमे

सफेद औ कोमल मंडल होता है सो बहुतदिनौंमे वडाता है २ ६६ २ क्तार्म यह अरुण कमलवर्ण कोमल ऐसा नेत्रकी सफेदीमे मांस संचित व्हैके होता है ३ जो विस्तरित कोमल औ मोटा ऐसानेत्रकी सफेदी पर मंडल होता है वह ललाई लिये काला होता है सो अधिमांसार्म ४ जो स्थिर विस्तीर्ण मांसयुक्त औ सूखा याने भीजानही ऐसाहोता है उसको स्नाय्वर्म कहते हैं ऐसे ये पांच प्रकारके अर्म होते हैं ॥ ६७ ॥

अथशुक्तिकादीनांषण्णांक्रमेणलक्षणान्याह ॥

श्यावाःस्युः पिशित निभाश्च बिंदवो येशुक्त्याभाः सितनिचिताः सशुक्तिसंज्ञः ॥ १ ॥ एकोयःशश रुधिरोपमश्च बिंदुःशुक्लस्थो भवति तदर्जुनं वदंति ॥ २ ॥ ६८ ॥ श्लेष्म मारुत कोपेन शुक्ले मांसं समुन्नतं॥ पिष्टव त्पिष्टकं विद्धि मलाक्तादर्शसन्निभं ॥ ३ ॥ ६९ ॥ शुक्लस्थाः सितपिडिकाः शिरावृतायास्ताविद्यादसितसमीपजाःशिराजाः॥४॥ जालाभः कठिनशिरो महान्सरक्तः संतानःस्मृत इह जालसंज्ञितस्तु॥५॥ कांस्याभोऽमृदुरथवारि बिंदु कल्पो विज्ञेयो नयन सिते बलाससंज्ञः ॥ ॥ ६ ॥ ७० ॥

जोशुक्तिका दिक छ रोगकहे हैं अवउनके लक्षण अनुक्रमसे कहते हैं तहां जो नेत्रकी सफेदीमे काले औ शुक्तीके आकार मांस सरीखे बिंदुहोते हैं उसरोगको शुक्तिका कहते हैं १ जो नेत्रकी सफेदीमे शशके

याने खरगोसके रक्तसदृश एक बिंदुहोता है उसको अर्जुनकहते हैं २ ॥ ६८ ॥ जो कफ औ वातके कोपसे नेत्रकी सफेदीमे आंटा सरीखा मास ऊंचाव्है के मैल दर्पनके तुल्य दीखता है सो पिष्टक रोग३ ॥ ६९॥ जो फुंसिआं नेत्रके कालेभागके नजीक सफेदीमे नसोंकरिके आच्छादित औसफेद रंगकी होती हैं उनको शिरापिडिका कहते हैं ४ जो जालके समान कठिन नसन करिके युक्त वडा औलाल विस्तरित होता है सो शिराजाल ५ जो कांसेके पात्रके रंगका कठिन औ पानीके बूंदके समान नेत्रकी सफेदीपर होता है उसको बलास ग्रथित कहते हैं ६ ॥ ७० ॥

अथ संधिगतानांनवानांरोगानाह तत्र पूयालसकलक्षणं १

पक्वः शोथः संधिजोयः सतोदः स्रवेत्पूयं पूति पूयालसाख्यः॥ ग्रंथिर्नाल्पो दृष्टिसंधावपाकी कंडूप्रायो नीरुज स्तूपनाहः॥ २॥ ७१ ॥

जो नेत्रकी पुतलीकी संधिमे शोथव्है के पके औ उसमे टोचने सरीखी पीडाहोय औ दुर्गंध युक्त पीव निकसै उसको पूयालसक कहते हैं १ जो दृष्टिकी संधिमे किंचित् पकने वाली वडी खाजयुक्त औ पीडारहित ऐसी गांठि होती है सो उपनाह रोग २ ॥ ७१ ॥

नेत्रस्रावलक्षणं

गत्वा संधीनश्रुमार्गेण दोषाः कुर्युः स्रावान् लक्षणैः स्वै रुपेतान्॥तंहि स्रावं नेत्रनाडीति चैके तस्या लिंगं कीर्तयिष्ये चतुर्द्धा ॥ ७२॥ हारिद्राभं पीतमुष्णंजलंवा पित्तास्रावं संस्रवेत्संधिमध्यात्॥ श्वेतं

सांद्रं पिच्छिलं संस्रवेद्धि श्लेष्मास्रावोऽसौ विकारो मतस्तु ॥ ७३ ॥ रक्तास्रावः शोणिताद्यो विकारः स्रवेदुष्णं तत्ररक्तं प्रभूतं ॥ पाकः संधौ संस्रवेद्योहिपूयं पूयास्रावोऽसौगदः सर्वजस्तु ॥ ७४ ॥

अब नेत्रस्राव कहते हैं जैसेकि आंसुनके मार्गमे व्हैके वातादिक दोष नेत्र संधिनमे प्राप्त व्हैके आप आपके लक्षणों करिके युक्त नेत्र स्रावरोग उत्पन्न करते हैं उसनेत्र स्रावको कोई कोई आचार्य नेत्र नाडीभी कहते हैं उसके लक्षण चारि प्रकारके हैं सो कहताहौं ॥ ७२॥ जिस नेत्रसंधिसे हरदी सरीखे रंगका गरम अथवा केवल पानीसरीखा झरता हैसो पित्तास्राव १ जो सफेद गाढा औ चिकना वहता है सो कफास्राव २ ॥ ७३ ॥ जो गरम औ बहुतसा रक्तस्रवता है सो रक्तस्राव ३ जो संधिके पकनेसे अति दुर्गंधवाला पीब गिरताहै उसको पूयास्राव कहते हैं वह त्रिदोषसे होता है ॥ ७४ ॥

अथ पर्वण्यलजीकृमिग्रंथीनांक्रमेणलक्षणान्याह

ताम्रा तन्वी दाहपाको पपन्ना ज्ञेया वैद्यैः पर्वणी वृत्तशोथा ॥ जाता संधौ शुक्ल कृष्णेऽलजीस्यात्तस्मिन्नेवख्यापिता पूर्वलिंगैः ॥ ७५ ॥ कृमि ग्रंथि वर्त्मनः पक्ष्मणश्च कंडूं कुर्युः कृमयः संधिजाताः ॥ नानारूपा वर्त्मशुक्लांत संधौ चरंत्यंतर्नयनं दूषयंतः ॥ ७६ ॥

अब पर्वणी अलजी औ कृमिग्रंथि इनके अनुक्रमसे लक्षण

कहते है जो नेत्र संधिमे लाल दाह औपाक युक्त पतली तथा गोल सूजनि युक्त होती है सो पर्वणी जो सफेद औकाले भागकी बीच संधिमे प्रथम कहभये लक्षण युक्त उत्पन्न भई होयसो अलजी॥७५॥ जो पलक औवेरौनीकी संधिमे खाज पैदाकरते भये कीडे उत्पन्न होते है सो वैअनेक प्रकारके पलक औ सफेदी की संधिमे फिरते भये नेत्र-को दूषित करते हैं तिसरोगका नाम कृमिग्रंथि कहते है वह रोग त्रि-दोषज इनरोगौंमे पूपालस कफज उपनाह त्रिदोषज तथा जो चारौ स्रावकहे वै कफ रक्त औ पित्तज हैं ॥ ७६ ॥

अथवर्त्मजानूरोगानाहतत्रवर्त्मोत्संगिनीलक्षणं

अभ्यंतर मुखी ताम्रा बाह्यतो वर्त्मन श्रया॥
सोत्संगो त्संगपिडिका सर्वजा स्थूलकंडुरा॥७७॥

अब नेत्रकी पलकौंके रोगौंको कहते हैं तिनमे प्रथम उत्संगिनी-कें लक्षण कहते हैं नेत्रके पलकके भीतरको जिसका मुखलाल रंग औपलक वेरौनीके बाहेर ऊंची देखाय तथा उसके चौफेर गोदीमे दू-सरी भी छोटी छोटी पिरडकी होय ऐसीजो एकवडी खाजयुक्त फुंसी उसको उत्संगिनी कहते हैं वह तीनौ दोषौंसे होती हैं ॥ ७७ ॥

कुंभीकालक्षणं

वर्त्मांते पिडिका ध्माता भिद्यंते च स्रवंतिच॥
कुंभीक बीजसदृशाः कूंभीकाः सन्निपातजाः॥७८॥

पलक के किनारे जो सफेद कुह्मडेके बीज सरीखी फुंसी होती हैं औ वैफूटिके वहती हैं उनको कुंभीका कहते हैं वैत्रिदोपज हैं ॥ ७८॥

पोथकील०

स्राविण्यः कंडुरागुर्व्योरक्त सर्षप सन्निभाः ॥
रुजावत्यश्चपिडिकाः पोथक्य इतिकीर्तिताः ॥ ७९ ॥

जो फुंसिआं लाल सरसौंके समान वहने वाली खाजयुक्त भारी औ पीडाकारक होती हैं उनको पोथकी कहते हैं ॥ ७९ ॥

वर्त्मशर्कराल०

पिडिकाभिः सुसूक्ष्माभि र्घनाभि रभिसंवृता ॥
पिडिकाया खरास्थूला वर्त्मस्था वर्त्मशर्करा ॥ ८० ॥

जो पलकमे कठिन औ बडी ऐसी फुंसी होती है औ वह औरभी अनेक छोटी छोटी फुंसिन करिके युक्त होती है उसको वर्त्म शर्करा कहते हैं ॥ ८० ॥

अर्शोवर्त्मल०

उर्वारु बीजप्रतिमाः पिडिका मंदवेदनाः ॥
श्लक्ष्णाः खराश्च वर्त्मस्था स्तदर्शो वर्त्मकीर्त्यते ॥ ८१ ॥

जो ककडीके बीजके समान किंचित् पीडायुक्त चिकनी औ कठिन तथा नोकवाली फुंसिआं होती हैं उनको अर्शोवर्त्म कहते हैं॥८१

शुष्कार्शोल०

दीर्घांकुरः खरः स्तब्धो दारुणो ऽभ्यंतरोद्भवः ॥
व्याधिरेषो ऽभिविख्यातः शुष्कार्शो नामनामतः ॥ ८२ ॥

जिसफुंसीका अंकुर लंबा कर्कश कठिन दारुण दुखदायक पलकके भीतर होता है उसको शुष्कार्श कहते हैं ॥ ८२ ॥

अंजनाल०

दाह तोदवती ताम्रा पिडिका वर्त्म संभवा॥
मृद्वी मंदरुजा सूक्ष्मा ज्ञेया सांजन नामिका॥ ८३॥

जो फुंसी दाह पीडायुक्त लाल कोमल औ अल्प पीडाकारक याने जो कि सुई टोचने सरीखी पीडायुक्त होती है तौभी अल्पही पीडायुक्त होती है वह पिरकी नेत्रकी पलकमे होती है उसका नाम अंजना लोकमे अंखि अंजनी कहाती है ॥ ८३ ॥

बहलवर्त्मल०

वर्त्मो पचीयते यस्य पिडिकाभिः समंततः॥
सवर्णाभिः स्थिराभिश्च विद्या द्बहलवर्त्मतत्॥ ८४॥

जिसके नेत्रकी पलकैं सब ओरसे उस पलकके चर्मके रंगकी फुंसियों करिके पूरित होयं औ वै फुंसिआं अचल होय उसरोगको बहलवर्त्म कहते हैं ॥ ८४ ॥

वर्त्मबंधल०

कंडूमताल्पतोदेन वर्त्मशोथे नयो नरः॥ असमं
छादयेदक्षि यत्रासौ वर्त्मबंधकः॥ ८५॥

जिस नेत्रके शोथमे खाज आतीहोय औ टोचनि अल्पहोय औ शोथके सबबसे जिस रोगमे नेत्रौंको बरोबरि ढकि नसकै उसरोगकोवर्त्म बंधकहना ॥ ८५ ॥

क्लिष्टवर्त्मल०

मृद्वल्पवेदनं ताम्रं यद्वर्म सममेवच॥ अकस्माच्च
भवेद्रक्तं क्लिष्टवर्त्मेति तद्विदुः॥ ८६॥

जो नेत्रपलक कोमल किंचित् वेदनायुक्त औ अकस्मात् लाल-होजाय उसको क्लिष्टवर्त्म कहते हैं ॥ ८६ ॥

वर्त्मकर्दमल०

क्लिष्टं पुनः पित्तयुतं शोणितं विदहेद्यदा ॥
तदा क्लिन्नत्व मापन्न मुच्यते वर्त्मकर्दमः ॥ ८७ ॥

जो प्रथम क्लिष्ट वर्त्म कहा उसीको जब पित्तयुक्त रक्त दूषितक-रिके ओदाकरताहै तब उसको भीजेपन से वर्त्मकर्दम कहते हैं ॥ ८७ ॥

श्याववर्त्मल०

वर्त्म यद्बाह्यतोंतश्च श्यावं सूनं सवेदनं ॥
तदाहुः श्याववर्त्मेति वर्त्मरोग विशारदाः ॥ ८८ ॥

जो नेत्रके पलक बाहेर औ भीतरसे भी काले औ वेदनायुक्त सूजे भये होते हैं उसको श्याववर्त्म कहते हैं ॥ ८८ ॥

प्रक्लिन्नवर्त्मल०

अरुजं बाह्यतः शूनं वर्त्म यस्य नरस्य हि ॥
प्रक्लिन्न वर्त्मतद्विद्या त्क्लिन्न मत्यर्थ मंततः ॥ ८९ ॥

जिस मनुष्यके नेत्रका पलक पीडाविना बाहेर सूजा होय औ भीतर अत्यंत सूजा रहता होय उसको प्रक्लिन्नवर्त्म कहना ॥ ८९ ॥

अक्लिन्नवर्त्मल०

यस्य धौतान्यधौतानि संबध्यंते पुनःपुनः ॥
वर्त्मान्यपरिपक्वानि विद्या दक्लिन्न वर्त्मतत् ॥ ९० ॥

जिसके नेत्र पलक पकने पीडाविन धोनेसे औ नधोनेसेभी वारं-वार चिपकि चिपकि जाते होय सोरोग अक्लिन्नवर्त्म ॥ ९० ॥

वातहतवर्त्मल०

विमुक्त संधि निश्चेष्टं वर्त्म यस्य निमील्यते ॥
एतद्वात हतं वर्त्म जानीया दक्षि चिंतकः ॥ ११ ॥

जिस नेत्र पलककी संधि ढीलीव्है गइहोय औ उसने वै नेत्रखुलने मुदनेसे रहिके जैसे मिचिके रहिजाय सोरोग वातहतवर्त्म ॥ ११ ॥

अर्बुदल०

वर्त्मां तरस्थं विषमं ग्रंथि भूत मवेदनं ॥
आचक्षते ऽर्बुदमिति सरक्त मविलं बितम् ॥ १२ ॥

जिस नेत्रकी पलकौंके भीतर पीडा रहित टेढा मेढा औलाल पीडा रहित लटकाभी नही ऐसा जो ग्रंथिरूप रोग उसको अर्बुद कहते हैं ॥ १२ ॥

निमेषल०

निमेषणी शिरावायुः प्रविष्टो वर्त्म संश्रयः ॥
प्रचालयति वर्त्मांनि निमेषं नामतंविदुः ॥ १३ ॥

जिस नसते नेत्र खुलते मिचते हैं उस नसमे जब पलकमे रहने वाला वायु प्रवेशव्हैके उनकौ वारंवार चलाता रहता है सोनिमेष रोग ॥ १३ ॥

शोणितार्शोल०

वर्त्मस्थो यो विवर्द्धेत लोहितो मृदुरंकुरः ॥
तद्रक्तजं शोणितार्श श्छिन्नं छिन्नं प्रवर्द्धते ॥ १४ ॥

जो लाल औ कोमल मासका अंकुर पलकके अंतमे वढता रह-

ता होय वह शोणितार्श रोग रक्तज होता है औ काटनेसे वारंवार वढता है ॥ १४ ॥

लगणल०

आपाकी कठिनः स्थूलो ग्रंथि वर्त्मभवोऽरुजः ॥
सकंडूः पिच्छिलःकोल संस्थानोलगणस्तुसः॥ १५॥

जो पाकरहित कठिन पीडारहित बडीगांठि पलकमे खाजयुक्त चिकनी झरवेरके समान होती है उसको लगण कहते हैं ॥ १५ ॥

बिसवर्त्मल०

त्रयो दोषाबहिः शोथं कुर्यु श्छिद्राणि वर्त्मनोः॥
प्रस्त्रवत्यं तरुदकं बिसवद्बिसवर्त्मतत् ॥ १६ ॥

तीनौ दोषकुपितव्हैके नेत्रपलकके ऊपर छिद्रयुक्त शोथको उत्पन्न करते हैं उसरोगसे कमलमूलके समान पानी झरता रहता है उसको बिसवर्त्म कहते हैं ॥ १६ ॥

कुंचनल०

वाताद्यावर्त्मसंकोचं जनयंति यदामलाः॥
तदा द्रष्टुं नशक्नोति कुंचनं नाम तद्विदुः॥ १७॥

जब वातादिक तीनौ दोष नेत्रकी पलकको संकुचित करिदेते हैं तब मनुष्य देखि नही सकता है उसको कुंचन रोग कहते हैं ॥ १७ ॥

अथ पक्ष्मरोगयोः पक्ष्मकोपलक्षणं

प्रचालितानि वातेन पक्ष्माण्यक्षि विशंतिहि॥
घृष्यंत्यक्षि मुहुस्तानि संरंभं जनयंतिच॥ १८॥

असिते सितभागेच मूलकोशा त्पतंत्यपि ॥
पक्ष्मकोपः सविज्ञेयो व्याधिः परम दारुणः ॥ ९९ ॥
अन्यच्च तंत्रांतरात् ॥ यत्पक्ष्म देहलीं मुक्त्वावर्त्मनों
तःप्रजायते ॥ घर्षे त्यक्ष्मसिते श्वेते पक्ष्मकोपः सउ
च्यते ॥ १०० ॥

अब जो दो रोग वेरौनीके हैं उनमेसे प्रथम पक्ष्मकोपके लक्षण कहते हैं वायुकरिके चलाई भई वेरौनीके केश जबनेत्रमे घुसिके वारंवार उनके घसनेसे ॥ ९८ ॥ सफेदी अथवा काले भागमे सूजनि होती है औ किसीकिसीकी वेरौनी गिरी भीजाती हैं उसको पक्ष्मकोप कहतेहैं ॥ ९९ ॥ दूसरे तंत्रमे और प्रकारभी लिखा है जैसेकि जो वेरोने पलकके किनारेको छोडिके भीतर उत्पन्न व्हैके सफेदीमे खटकता रहता है उसको पक्ष्मकोप कहते हैं इसरोगको लोग परवालभी कहते हैं ॥ १०० ॥

पक्ष्मशातल०

वर्त्म पक्ष्माशय गतं पित्तं रोमाणि शातयेत् ॥
कंडूंदाहं चकुरुते पक्ष्म शातं तमादिशेत् ॥ १०१ ॥

इतिश्रीमाधवाचार्यविरचितेरुग्विनिश्चयेनेत्ररोगनिदानं ॥

पक्ष्मशात रोगजैसेकि पलकमे वेरौनीके स्थानमे प्राप्तभया पित्त कुपितव्हैके वेरौनीके रोमनको गिरावदेता है औ उसजगह खाज दाहभी करताहै उसरोगके पक्ष्मशात कहते हैं यहरोग लकमे बह्मनी करिके प्रसिद्ध है ॥ १०१ ॥ इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांनेत्ररोगनिदानप्रकाशः ॥

अथशिरोरोगनिदानं

शिरो रोगाश्च जायंते वातपित्तकफै स्त्रिभिः॥
सन्निपातेन रक्तेन क्षयेण कृमिभिस्तथा॥
सूर्यावर्त्तानंतवातार्द्धावभेदक शंखकैः॥ १॥

अब शिरोरोग निदान कहते हैं सो ऐसेकि वातपित्त औकफ करिके तीनि सन्निपातसे एक रक्तसे एक क्षयसे एक औकृमिसे एक ऐसे एसात तथा सूर्यावर्त्त अनंतवात अर्द्धावभेद औशंखक एचारि ऐसे मस्तकमे ग्यारह रोग होते हैं॥ १॥

अथवातजशिरोरोगलक्षणं

यस्या निमित्तं शिरसो रुजश्च भवंति तीव्रा निशि चाति मात्रं॥ बंधोपतापैः प्रशमश्च यत्र शिरोभि तापः स समीरणेन॥ २॥

जिस मनुष्यके कुछभी निमित्त विना मस्तकमे अतिवेदना होने लगै सोभी रातिको अधिक होय औ वहकुछ बांधनेसे तपानेसे शांतहोय सो मस्तक रोगवातसे है ऐसा जानना॥ २॥

पैत्तिकशिरोरोगल०

यस्योष्णमंगारचितं यथैव भवेच्छिरो दह्यतिचापिनासा॥ शीतेन रात्रौ प्रशमंचयाति शिरोऽभितापः सतुपित्तकोपात्॥ ३॥

जैसे मस्तक पर अंगारा चुनिदियाहोय ऐसा जलता मालूम होय नाक कानमेभी जलै रातिमे शीतके सबबसे शांतरहै उसमस्तकरोगको पित्तज जानना॥ ३॥

कफजल०

शिरोभवेद्यस्य कफोपदिग्धं गुरु प्रतिस्तब्धमथो हिमंच ॥ शूनाक्षिकूटं वदनं चयस्य शिरोभिताप: सकफ प्रकोपात् ॥ ४ ॥

जिसका मस्तक अंदर कफसे भरा औजड होय भारी औ ठंढा लगै नेत्रके गोलक औ मुखपर सूजनि होय सो मस्तक रोग कफको-पसे भयाहै ऐसे जानना ॥ ४ ॥

सन्निपातजरक्तजयोर्ल०

शिरोभितापे त्रितय प्रवृद्धे सर्वाणि लिंगानि समुद्भवंति ॥ रक्तात्मक: पित्तसमानलिंग: स्पर्शासहत्वं शिरसो भवेच्च ॥ ५ ॥

जो शिरका रोग सन्निपातसे होता है उसमे तीनौदोषके लक्षण होते हैं ॥ जो मस्तक पीडा रक्त कोपसे होती है उसके लक्षण पित्तज शिरो रोगके समान होती है औ मस्तकमे हाथ वगैरेकास्पर्श सह-नहीं जाताहै ॥ ५ ॥

क्षयजल०

असृग्वसाश्लेष्म समीरणानां शिरोगतानामिह संक्षयेण ॥ क्षवप्रवृत्तिः शिरसोऽभितापः कष्टोभवेदुग्ररुजोऽतिमात्रं ॥ संस्वेदन च्छर्दन धूम नस्यैरसृग्विमोक्षैश्च विवृद्धि मेति ॥ ६ ॥

मस्तकमे रहने वालेजो रक्त चरबी कफ औ वायु इनके क्षय होनेसे छींकें आतीं हैं मस्तक तपता है औ अतिकठिन पीड़ा होती है वह रोग पसीना निकालनेसे औ वमन धूमपान नास सूंघना तथा रक्तकाढनेसे जादा होता है उसको जानना कि यहरोग क्षयसे भया है ॥ ६ ॥

कृमिजल०

निस्तुद्यते यस्यशिरोति मात्रं संभक्ष्यमाणं स्फुरती व चांतः॥ घ्राणाच्च गच्छेद्रुधिरं सपूयं शिरोभिताप: कृमिभि: सघोर:॥ ७॥

जिसके मस्तकमे सुई टोंचनेसरीखी अति वेदना होती होय औ कीडोंके काटने सरीखी पीडा औ कीडे चलने सरीखी पीडा मालुमपरै औ नाकसे रक्त मिश्रित पीबगिरै उसमस्तक रोगको जाननाकि कृमि विकारसे भयाहै ॥ ७ ॥

सूर्यावर्तल०

सूर्योदयं या प्रति मंदमंद मक्षिभ्रुवं रुक् समुपैति गाढा॥ विवर्द्धते चांशुमता सहैव सूर्याप वृत्तौ विनिवर्त्ततेच॥ ८॥ शीतेन शांतिं लभते कदाचिदुष्णेन जंतुः सुखमा प्नुयाद्वा ॥ सर्वात्मकं कष्टतमं विकारं सूर्याप वृत्तंतमुदा हरंति॥ ९॥

जो मस्तकपीडा सूर्यके उदय कालसे प्रारंभव्है के नेत्र औ भौंहमे मंद मंद वेदना करने लगै फिरि सूर्यनके तेजके संग बढत औ कमती होती होती ॥ ८ ॥ सूर्यास्त समयमे शांत होती है यहरोग त्रिदोषज

अतिकष्टसाध्य है वास्ते इसमे मनुष्य कभी ठंढे उपायसे औ कभी गरम उपायसे सुखी होता है इसका नाम सूर्यापवृत्त है ॥ ९ ॥

अनंतवातल०

दोषास्तु दुष्टास्त्रय एवमन्यां संपीड्य गाढं स्वरुजां सतीव्रां ॥ कुर्वंति, साक्षिभ्रुवकंठदेशे स्थितिं करोत्याशु विशेषत स्तु ॥ १० ॥ गंडस्य पार्श्वेच करोति कंपं हनुग्रहं लोचनजांश्च रोगान् ॥ अनंतवातंतमुदाहरंति दोषत्रयोत्थं शिरसो विकारं ॥ ११ ॥

तीनौ दोष कुपितभये हुये गरदनिकी नसौंको पीडित करिके आप आपके लक्षणौं प्रमाण पीडा करते हैं वहपीडा विशेष करिके नेत्र भौंह औ कनपटी मे जादा रहा करती है ॥ १० ॥ उसते जो भाग गालके ऊपर औ कान नेत्रके वीचमे नीचेको ऊंचा दीखता है उसजगह फरकतारहताहै औ दाढीका जकडना तथा औरभी नेत्ररोगौंको उत्पन्न करता है उसको अनंतवात कहते है यह शिरका रोग त्रिदोषज कहै ११

अर्द्धावभेदल०

रुक्षाशना त्यध्यशन प्राग्वातावश्यमैथुनैः ॥
वेग संधारणायास व्यायामैः कुपितोऽनिलः ॥ १२ ॥
केवलःसकफो वार्द्धं गृहीत्वा शिरसो बली ॥
मन्या भ्रू शंखकर्णाक्षि ललाटेऽर्द्धेति वेदनां ॥ १३ ॥
शस्त्रारणि निभां कुर्या त्तीव्रां सोर्द्धावभेदकः ॥
नयनं वाऽथ वाश्रोत्र मभिवृद्धो विनाशयेत् ॥ १४ ॥

रूखे पदार्थोंका अतिसेवन अति भोजन पूर्व दिशाका पवन औ मैथुन इनका अतिसेवन करना तथा मलमूत्रादिकों के वेगका रोंकना खेद कसरत वगैरे मेहनत इनसे वायु केवल ॥ १२ ॥ अथवा कफसहित कुपितव्हैके वह बली वायु माथेके आधेभागको ग्रहण करिके आधी-गरदनि भौंह कनपटी कान नेत्र औ आधे लिलारमे अतिपीडाकरता है ॥ १३ ॥ सोऐसीकि जानौ शस्त्र औआरीसे काटता चीरता होय उसको अर्द्धावभेद कहते हैं लोग आधासीसीभी कहते हैं यहरोग अति वढाभया नेत्र अथवा कानका बिगाड करिदेता है ॥ १४ ॥

शंखकल०

पित्तरक्ता निला दुष्टाः शंखदेशे विमूर्छिताः ॥
तीव्र रुग्दाह रागं हि शोथं कुर्वंति दारुणं ॥ १५ ॥
सशिरो विषव द्वेगी निरुध्याशु गलं तथा ॥
त्रिरात्रा ज्जीवितं हंति शंखको नाम नामतः ॥
त्र्यहा ज्जीवति भैषज्यं प्रत्याख्यायास्य कारयेत् ॥ १६ ॥

इतिरुग्विनिश्चये शिरोरोगनिदानं

पित्तरक्त औवायु ये दूषित भये हुये कनपटी मे रहिके उसजगह तीव्र पीडा औ दाहयुक्त लालरंगकी सूजनिको उत्पन्न करते हैं वह कनपटीका सूजनि अतिवेग वाली ॥ १५ ॥ विषकी तरह शीघ्रही मस्तक औ गलेको जकडिके घेरिलेताहै वह शंखक रोग तीन ही रातिदिनौंमे मनुष्यको मारिडारता है जो कदापि तीनिराति जीवैतौ असाध्य है ईश्वराधीन औषध करते है जो ईश्वर कृपाकरैंगेतौ अच्छा होयगा ऐसे कहिके औषध उपाय करना ॥ १६ ॥ इतिश्रीमत्सुकलसीता-

रामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांशिरोरोगनिदानप्रकाशः

अथस्त्रीरोगनिदानंतत्रप्रदरमाह

विरुद्ध मद्याध्यशना दजीर्णा द्गर्भप्रपाता दति मैथुनाच्च ॥ यानातिशोकादतिकर्शना च्चभारा भिघाता च्छयना द्दिवाच ॥ तं श्लेष्म पित्ता निल सन्निपातैश्चतुः प्रकारं प्रदरं वदंति ॥ १ ॥

अबस्त्रियोंके रोगौंका निदान कहते हैं तहां प्रथम प्रदरका निदान कहते हैं सो ऐसे कि विरुद्ध आहार औ मद्यपान भोजन पर भोजन अजीर्ण गर्भपात अतिमैथुन अति सवारी अतिशोक लंघन उपवास भार उठाना चोटलगना औदिनका सोना इत्यादिक कारणौंसे प्रदर होता है सो वातपित्त कफ औ सन्निपात ऐसे भेदों करिके चारि प्रकारका होता है ॥ १ ॥

अस्यसामान्यरूपमाह ॥

असृग्दरं भवेत्सर्वं सांगमर्दं सवेदनं ॥ २ ॥

प्रदरके सामान्य रूप जैसेकि सर्वप्रदर अंगका ऐंठना औपीडायुक्तहोते हैं ॥ २ ॥

उपद्रवानाह ॥

तस्याति वृद्धौ दौर्बल्यं श्रमो मूर्च्छा मदस्तृषा ॥
दाहः प्रलापः पांडुत्वं तंद्रा रोगाश्च वातजाः ॥ ३ ॥

उस प्रदरके अति बढनेसे दुर्बलता थकवाय मूर्छा मदयाने नसा

कियेसरीखी गूंगी तथा पिआस दाह प्रलाप देहका रंगपिडोरसरीखा पीला नेत्रौंपर झपकी औ वातरोगभी होते हैं ॥ ३ ॥

अथ वातादि भेदेनास्य पृथग्लक्षणान्याह ॥

आमंस पिच्छा प्रतिमं सपांडु पुलाकतोयप्रतिमं कफात्तु ॥ सपीत नीला सित रक्त मुष्णं पित्तार्त्तियुक्तं भृश वेगि पित्तात् ॥ ४ ॥ रुक्षा रुणं फेनिल मल्प मल्पं वातार्त्ति वातात्पि शितोदकाभं ॥ सक्षौद्र सर्पिं हरिताल वर्णं मज्ज प्रकाशं कुणपं त्रिदोषं ॥ तच्चाप्य साध्यं प्रवदंति तज्ज्ञा नतत्र कुर्वीत भिषक् चिकित्सां ॥ ५ ॥

अब प्रदरके वातादिक भेदौं करिके न्यारे न्यारे लक्षण कहते हैं ॥ तिनमेजो प्रदर कफकोपसे होता है सो आंव सरीखा भातके माडसरीखा पांडुवर्ण तथा कोदईसाठिइत्यादिकौंके चांवलौंके धोवन सरीखा होता है जो पित्तसे होता है सो पीला नीला काला लाल गरम औ पित्तपीडायुक्त वडे वेगसे वहता है ॥ ४ ॥ जो वायुसे होता है सो रूक्षवर्ण गुलाबी फेन युक्त थोडा थोडा वात पीडायुक्त मांसके धोवन सरीखा वहता है जो सन्निपातसे होता है सो सहतघृत मिश्रित सरीखा हरिताल औ चरवी सरीखा दुर्गंधयुक्त औ त्रिदोष लक्षणयुक्त होता है सो असाध्य कहते हैं ॥ ५ ॥

शुद्धार्त्तवलक्षणं

मासान्निःपिच्छ दाहार्त्ति पंचरात्रा नुवंधिच ॥ नैवाति बहुलं नाल्प मार्त्तवं शुद्धमादिशेत् ॥ ६ ॥

शशासृक्प्रतिमं यच्च यच्चलाक्षारसोपमं॥
तदार्त्तवं प्रशंसंति यच्चाप्सु नविरज्यते॥ ७॥

इति प्र० नि०

जोरज महीनेके महीनेसे निकसै तथा उसमे चिकनई जलनि औ पीडान होय औ पांच दिनतक दीखै सोभी नबहुत न थोडा माफिक वहै सोशुद्ध॥ ६॥ तथा जो खरगोसके रक्तसरीखा अथवा लाख के रंग सरीखा होय औ पानीसे धोये पर कपडेमे रंग नरहै वह रज शुद्ध जानना॥ ७॥ इतिप्रदरनिदानम्

अथयोनिव्यापत्तिनिदानं

विंशति र्व्यापदो योने र्निर्दिष्टा रोगसंग्रहे॥
मिथ्याचारेणताः स्त्रीणां प्रदुष्टेनार्त्तवेनच॥
जायंते बीज दोषाच्च दैवाच्च शृणुताः पृथक्॥ १॥

अब योनि व्यापत्ति रोगनिदान कहते हैं सो ऐसाकि प्रारब्ध योगसे स्त्रियोंके वीस प्रकारके योनि व्यापत्ति रोग होते हैं वे ऐसेकि बेप्रमाण आहार औ विहारों का करना उसते दूषितभये हुए रजसे तथा जो गर्भरहने के समयमे माताका रज दूषित होय उसते होते हैं इसप्रकारसे रोग संग्रहमे कहा है अबउनके न्यारे न्यारे लक्षण कहते हैं सो सुनौं॥ १॥

अथतासांनामान्याह

उदावृत्ता तथावंध्या विप्लुताच परिप्लुता॥
वातला वातजा रोगा वातदोषेण पंचधा॥ २॥
पंचधा पित्त दोषेण तत्रादौ लोहितक्षरा॥

प्रस्रंसिनीवामिनीच पुत्रघ्नी पित्तला तथा॥ ३॥
अत्या नंदा कर्णिनीच चरणानंद पूर्विका॥
अतिपूर्वापि साज्ञे या श्लेष्मला च कफादिमाः॥ ४॥
षंढ्यं डिनीच महती सूचीवक्रा त्रिदोषिणी ॥
पंचैता योनयः प्रोक्ताः सर्वदोष प्रकोपतः॥ ५॥

अब उन वीसौंके नाम कहते हैं जैसेकि उदावृत्ता वंध्या विप्लुता परिप्लुता औ वातला ये पांचप्रकारकी योनी वातदोषसे दूषितहैं॥ २॥ लोहिताक्षरा प्रस्रंसिनी वामिनी पुत्रघ्नी औ पित्तला ये पांच पित्तदूषित॥ ३॥ अत्यानंदा कर्णिनी चरणा अतिचरणा औ श्लेष्मला ये पांच कफदूषित॥ ४॥ १ षंढी २ अंडिनी ३ महती ४ शूचीवक्त्रा ५ औ त्रिदोषिणी ये पांचौ त्रिदोषदूषित होती हैं॥ ५॥

अथवातजानांयोनीनांलक्षणान्याह

सफेनिल मुदा वृत्ता रजः कृच्छ्रेणमुंचति॥ वंध्यां दुष्टार्त्तवां विद्या द्विप्लुतां नित्य वेदनां ॥ ६॥ परिप्लुतायां भवति ग्राम्य धर्मेण रुग्भृशं॥ वातला कर्कशा स्तब्धा शूलनिस्तोदपीडिता॥ ७॥ चतस्त्रष्वपि चाद्यासुभवंत्य निलवेदनाः॥ ८॥

अब पांचौ वातज योनिनके लक्षण कहते हैं तिनमे जो उदावृत्ता है सो बडे कष्टसे फेन युक्त रजको छोडती है जिसकारज शुद्ध नही सोबंध्या॥ ६॥ विप्लुता मे निरंतर पीडा होती रहती है परिप्लुतामे मैथुन समय अतिपीडा होती है वातलायोनि रूखी कठिन औ सुई टोचने

सरीखी पीडायुक्त होती है ॥ ७ ॥ इसवातलामे वातवेदनाकी अधिकता होती है परंतु जो उदावृत्तादिक चारि प्रथमकहीं उनमे भी वातवेदना होती हैं ॥ ८ ॥

अथपित्तजानांलक्षणान्याह

सदाहं क्षरते रक्तं यस्मा त्सालोहितक्षरा ॥ सवात मुद्वमे द्वीजं वामिनी रजसा न्वितं ॥ ९ ॥ प्रस्रंसिनी स्रंसते तु क्षोभितादुःप्रजायिनी ॥ स्थितं स्थितंहं तिगर्भं पुत्रघ्नी रक्त संक्षयात् ॥ १० ॥ अत्यर्थं पि त्तलायोनिर्दाहपाक ज्वरान्विता ॥ चतस्व्व्पि चाद्यासु पित्त लिंगो च्छ्रयो भवेत् ॥ ११ ॥

अब पित्तज योनि व्यापत्ति रोगौंके लक्षण कहते हैं जैसेकि लोहितक्षरायोनिसे दाहयुक्त रक्त गिरता रहता है वामिनी यह वायु औ रजयुक्त वीर्यको उगिलि देती है ॥ ९ ॥ जो मैथुन समयमें अतिघर्षणसे योनि बाहेर निकसती है सो स्रंसिनी इसके संतान होनेमे बडा कष्ट होता है जो रक्तके क्षयसे रहे रहे गर्भको पाडि दिया करती है सो पुत्रघ्नी ॥ १० ॥ जो अतिशय दाह पाक औज्वर युक्त होती है सोपित्तला इन पांचौमे पित्तलक्षणौंकी अधिकता होती है तहां पित्तला सबसे अधिक पित्तयुक्त होती है ॥ ११ ॥

अथकफजानांलक्षणान्याह

अत्यानंदानसंतोषं ग्राम्य धर्मेण गच्छति ॥ कर्णि न्यां कर्णिका योनौ श्लेष्मा सृग्भ्यां प्रजायते

॥ १२ ॥ मैथुने चरणापूर्वं पूरुषाद् तिरिच्यते ॥ बहु
श श्चाति चरणा तयोर्बीजं नविंदति ॥ १३ ॥ श्ले
ष्पला पिच्छिला योनिः कंडु युक्ता तिशीतला ॥ च
तस्त्र ष्वपि चाद्यासु श्लेष्मलिंगो च्छ्रयो भवेत्
॥ १४ ॥

कफज योनि व्यापत्ति रोगोंके लक्षण जैसे कि जो मैथुनसे संतु-
ष्टहोती नही सोअत्यानंदा ॥ कर्णिनीकी योनिमे कफ औरक्तसे कमलके
चौफेर मासकी ककनी होती है ॥ १२ ॥ जो मैथुन करनेमे पुरुषसे
प्रथमही खलासव्है जातीहै सोचरणा जो बहुत बेर मैथुनकरनेसे खलास
होती है सो अतिचरणा इनदोनौको वीर्य प्राप्त होता नहीं औ गर्भ
रहता नहीं ॥ १३ ॥ जो योनि अति चिकनी खाजयुक्त ठंढी रहती है
सो श्लेष्मला इसमे कफकी अतिप्रबलता होती है औ जो अत्यानंदा-
दिक प्रथम कही उनमे भी कफलक्षण ही जानना ॥ १४ ॥

अथसन्निपातजानांलक्षणान्याह

अनार्त्तवा स्तनी षंढी खरस्पर्शा चमैथुने ॥ अति
काय गृहीताया स्तरुण्या अंडिनीभवेत् ॥ १५ ॥
विवृत्ता ति महा योनिः शूची वक्रा तिसंवृता ॥
सर्वलिंग समुत्थाना सर्वदोष प्रकोपजा ॥ १६ ॥
चतस्त्रष्वपि चाद्यासु सर्वलिंग निदर्शनं ॥ पंचा
साध्या भवंतीह योनयः सर्वदोषजाः ॥ १७ ॥

इतियोनिव्यापन्निदानं

जो स्त्रीरजस्वला नहोती होय औस्तन छोटे छोटे होय मैथुनकर-नेमे योनि खरखरी लगै सो स्त्री षंढी जिस स्त्रीसे अल्प अवस्थामे बडे लिग वाला पुरुष संगकरै उसते उसका योनि कमल अंडाके माफिक लटकि आवै सो अंडिनी ॥ १५ ॥ जो योनि फैलीकी फैलीरहै सोमह-ती जो योनि अति बारीक छेद वाली होय सो सूची वक्रा जिसयो-निमे तीनौ दोषौंके चिन्ह होय सो त्रिदोषिणी इसमे त्रिदोषकोप विशेष रहता है ॥ १६ ॥ औ जो षंढी आदिक चारि कहीं हैं उनमे भी त्रि-दोष रहतेही हैं ये पांचौ असाध्य हैं ॥ १७ ॥ इतियोनिव्यापन्निदानं

अथयोनिकंदनिदानं

दिवास्वप्नादतिक्रोधा द्व्यायामा दति मैथुनात् ॥
क्षताच्च नखदंता द्यैर्वाताद्याः कुपिता यथा ॥ १ ॥
पूयशोणित संकाशं लकुचा कृति सन्निभं ॥ जन
यंति यदायोनौ नाम्ना कंदः सयोनिजः ॥ २ ॥

दिनमे अति सोना अतिक्रोधका करना अतिमेहनत अति मैथुन तथा नख दांत वगैरे के लगनेसे जो व्रण होताहै उस व्रणसे कुपितभये वातादिक॥१॥ योनिमे पीबरक्त सदृश औ कटहर के फलाकार योनिमे गांठि उत्पन्न करते हैं उसको योनिकंद कहते हैं ॥ २ ॥

अथवातजादीनांयोनिकंदानांल०

रूक्षं विवर्णं स्फुटितं वातिकंतंविनिर्दिशेत् ॥ दाह
राग ज्वरयुतं विद्या त्पित्तात्मकं तुतं ॥ ३ ॥ नील
पुष्प प्रतीकाशं कंडुमंतं कफात्मकं ॥ सर्वलिंग
समायुक्तं सन्निपातात्मकं वदेत् ॥ ४ ॥ इ० यो० नि०

अब वातजादिक योनि कंदोंके न्यारे न्यारे लक्षण कहते हैं जैसे-कि जो योनिकंद रूखा विवर्ण फूटा फटा सरीखा होयसो वातिक जो दाह ललामी औ ज्वर युक्त होयसो पैत्तिक ॥ ३ ॥ जो अलसी इत्यादि कके नीले पुष्पके समान होये तथा खाजयुक्त होय सो कफज ॥ जो योनिकंद ऊपरकहे भये सबलक्षण युक्त होयसो सान्निपातिक जानना ॥ ४ ॥ इतियोनिकंदनिदानं

अथगर्भपातनिदानं ॥

भयाभिघाततीक्ष्णोष्णपानाशननिषेवणात् ॥
गर्भे पतति रक्तस्य सशूलं दर्शनं भवेत् ॥ १ ॥

भयसे चोटलगनेसे तीक्ष्ण औ उष्ण आहार औ पान करनेसे गर्भ पडने लगता है तब शूलयुक्त रक्त निकलने लगता है ॥ १ ॥

आ चतुर्थात्ततोमासात्प्रस्रवे द्गर्भविद्रवः ॥
ततः स्थिर शरीरस्य पातः पंचम षष्ठयोः ॥ २ ॥

जिसरातिमे गर्भ रहताहै उसते चारिमहीने पर्यंत गर्भगिरनेको गर्भस्रावेकहते हैं कारण यहकि वह कोमल होता है तिस पीछे पांचवे औ छठे महीनेमे जो गिरै उसको गर्भपात कहते हैं क्यौं कि इनमहीनोंमे शरीर गर्भका स्थिरव्है जाता है ॥ २ ॥

अथगर्भस्याचिरपातंसदृष्टांतमाह ॥

गर्भोभिघात विषमाशन पीडनाद्यैः पक्वं द्रुमादिव फलं पतति क्षणेन ॥ ३ ॥

जो गर्भका अति शीघ्र पडना होता है उसको दृष्टांत सहित कहते हैं ॥ जैसे पका फल वृक्षसे पडता है तैसेही चोटलगनेसे औ विषम

आहार करने से तथा पेटके अतिदबने से भीगर्भ पडता है ॥ ३ ॥

अथ मूढगर्भस्य सनिदान संप्राप्ति पूर्वकं लक्षण माह ॥

मूढः करोति पवनः खलुमूढगर्भं शूलं चयोनि जठरादिषु मूत्रसंगं ॥ भुग्नोऽनिलेन विगुणेन ततः स गर्भः संख्यामती त्यबहुधासमु पैतियोनिं ॥ ४ ॥ द्वारंनिरुध्य शिरसा जठरेण कश्चि त्कश्चिच्छरीर परिवर्त्तित कुब्जदेहः ॥ एकेन कश्चिद परेण भुज द्वये न तिर्यग्गतो भवति कश्चि दवा ङ्मुखोऽन्यः ॥ ५ ॥ पार्श्वापवृत्त गतिरेति तथैव कश्चि दित्यष्टधा गतिरियं हिपरा चतुर्द्धा ॥ संकीलकः प्रतिखुरः परिघोऽथबीज स्तेषूर्ध्व बाहु चरणैः शिरसा चयोनिं ॥ ६ ॥ संगीच योभवति कीलक वत्सकीलो हस्तैः खुरैःप्रतिखुरःसहिकाय संगी॥ गच्छे द्भुजद्वय शिराःसच बीजकाख्यो योनौस्थितः सपरिघः परिघेन तुल्यः॥७॥

अब मुढगर्भकी निदान संप्राप्ति पूर्वक लक्षण कहते हैं जैसेकि आपके कारणों करिके कुपित भयाजो वायु सो गर्भाशयमे रूकाभया गर्भकी गतीको रोकता है उसको मूढगर्भ कहते हैं उसमूढगर्भसे योनिपेट कमर वगैरे मे शूल उत्पन्न होता है तथा मूत्रकाभी अवरोध होता है तब वह गर्भदूषित वायूकरिके वक्र भयाहु आकहीभई संख्याका भी उल्लंघन करिके अनेक प्रकारसे योनि मुखपर प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

तब कोईतौ मस्तकसे योनि द्वारको रोकता है कोई आपके पेटसे को-
ई आपने शरीरको फिराय घुडायाके कुबबाव्हैके उस कूबडसे योनि-
द्वारको रोंकता है कोई एक हाथसे औ कोई दोनौ हाथौंसे योनिद्वारको
रोकता है कोई टेढाव्हैके औ कोई नीचेको मुखकरिके ॥ ५ ॥ कोई
पसुरियोंको टेढीकरिके योनिद्वारेको रोंकिलेता है ऐसीये आठगर्ती
कहीं इसीतरह चारिगती औरभी हैं वैऐसीकि कीलक प्रतिखुर परिघ
औ बीजक तिनमेसे जो हाथपांयं ऊंचेकरिके मस्तकसे योनिमुखको
कील सरीखा रोंकिलेता है सोकिलक ॥ ६ ॥ जो दोनौ हाथ पांव बा-
हेर निकारिके मध्य शरीरसे योनि मुखपर रुकिजाता है सो प्रतिखुर
जो दोनौं भुजौंके मध्यमे मस्तक करिके याने ऊंची बांहौंके बीचमे
माथा करिके योनि मुखपर अडता है सो बीजक जो परिघ जो
दरवाजेकी आगलकी तरह योनिद्वारेपर अडि रहता है सो परिघ नाम-
का मूढगर्भ होता है ॥ ७ ॥

अथा ऽसाध्य मूढगर्भ गर्भिण्यो लक्षणमाह ॥

अपविद्ध शिरायातु शीतांगी निरपत्रपा ॥
नीलोद्गतशिरा हंति सागर्भंस चतांतथा ॥ ८ ॥

अब मूढगर्भ औ गर्भिणोके असाध्य लक्षण कहते हैं जैसेकि
जिस गर्भिणीका मस्तक झुकि गयाहोय याने मस्तकको भी नसंभारिस
के औ शरीर ठंढाव्है गयाहोय लज्जारहित भीभईहोय तथा कोखिकी-
नसैं नीले रंगकीव्हैके दीखने लगी होय सो गर्भिणी. गर्भका औ वह
गर्भ गर्भिणीका नाश करैगा ॥ ८ ॥

अथगर्भिणी रक्षार्थे गर्भस्य क्रमेण कर्षणार्थं लक्षणमाह ॥

गर्भा स्पंदन मावीनां प्रणाशः श्याव पांडुता ॥

भवेदुच्छ्वास पूतित्वं शूलंचां तर्म्रते शिशौ॥ ९॥

अब गर्भिणी की रक्षाके वास्ते मरेभये गर्भके अनुक्रमसे निकासनेके वास्ते लक्षणकहते हैं जब गर्भ पेटमे मरिजाता है तब उसका हालना चालना औ प्रसूतिका लके जो चिन्ह कि वारंवार योनिसे मूत्र औ कफादिक कागिरना तथा पीडौंका आना इन सबनका बंदहोना तथा शरीरका रंग काला पीला मिश्रित अथवा सफेदीलिये पीला व्हैजाना उच्छ्वासमे दुर्गंध पेटमे शूल होना इत्यादिक लक्षण होते हैं॥ ९॥

अथ गर्भस्य मरणे हेतुमाह॥

मानसा गंतुभि र्मातु रुपतापैः प्रपीडितः॥
गर्भो व्यापद्यते कुक्षौ व्याधिभि श्चप्रपीडितः॥१०॥

गर्भके मरनेके कारन येकि मनके दुःखजो बंधु धनादिकौं कानाश वियोगादिक आगंतुक दुःखजो प्रहारादिक ऐसे माताके दुःखौं करिके तथा रोगौं करिके भी पीडित गर्भ कोखिमे मरता है॥ १०॥

अथ गर्भिण्याअपरमसाध्यलक्षणमाह॥

योनिसंवरणं संगः कुक्षौ मक्कल्ल एवच॥
हन्युः स्त्रियं मूढगर्भो यथोक्ता श्चाप्युपद्रवाः॥ ११॥

अब गर्भिणीके औरभी असाध्य लक्षण कहते हैं वै जैसेकि योनि संवरण यह एक प्रकारका रोग है इसके लक्षण नीचे लिखैंगे तथा गर्भका कोखिमे चपटना तथा मक्कल्ल रोग इसके भी लक्षण नीचे लिखेंगे इनलक्षणौं करिके युक्त जो मूढगर्भ तथा युक्त उपद्रवजा आक्षेपक श्वास कासादिक ये सर्व गर्भिणीके नाशहीके करने वाले हैं॥११॥

अथ योनिसंवरणलक्षणंतंत्रांतरात् ॥

वातला न्यन्नपानानि ग्राम्यधर्मं प्रजागरं ॥ अत्य
र्थं सेवमानायां गर्भिण्यां योनिमार्गगः ॥ १ ॥ मा
तरिश्वा प्रकुपितो योनि मार्गस्य संवृतिं ॥ कुरुते
ऊर्ध्वमार्गत्वा त्पुनरं तर्गतो ऽनिलः ॥ २ ॥ निरुण
द्ध्याशय द्वारं पीडयन् गर्भसंस्थितिं ॥ निरुद्ध वद
नो च्छ्वासो गर्भ आशु विपद्यते ॥ ३ ॥ विपन्नः
शून सर्वांगः सर्वाण्येवा यनानिच ॥ रुध्वा संरु
द्ध ल्हदयां नाशयत्याशु गर्भिणीं ॥ ४ ॥ योनि संव
रणं नामव्याधिमे नं सुदारुणं ॥ अंतक प्रतिम
घोरं नारभे त्तुचिकित्सितं ॥ ५ ॥

अब तंत्रांतरसे योनि संवरणके लक्षण कहते हैं जैसेकि जो गर्भ-वती स्त्री वातल अन्न पान मैथुन रात्रिका जागरण इत्यादिकौं का अ तिसेवन करती है ॥ १ ॥ उसके योनि छिद्रमे रहने वाला वायु कोपको प्राप्तभया हुआ योनि मार्गको संकुचित करिदेता है फिरि ऊर्ध्व गति को प्राप्तव्हैके कोठे मे जायके ॥ २ ॥ गर्भकी स्थिती को पीडित कर-ता भया गर्भाशयके द्वारे को रौंकि लेता है तब गर्भका मुख बंदहोनेसे श्वास बंदव्हैके गर्भमरिजाता है ॥ ३ ॥ जब वह मराभया फूलता है तब स्त्रीके सर्व मार्गौंको रोंकिलेता है उसते जब उसगर्भिणीका ल्हदय रुकि जाता है तब वहभी मरिजाती है ॥ ४ ॥ इसरोगको योनि संवरण कहते हैं यह रोग दारुण काल समान चिकित्सा के अयोग्य है ॥ ५ ॥

अथ मक्कल्लुलक्षणं ॥

वायुः प्रकुपितः कुर्यात्संरुध्य रुधिरं च्युतं ॥
सूताया हृच्छिरोबस्ति शूलं मक्कल्लसंज्ञितं ॥ ६ ॥

इतिमूढगर्भनिदानं

मक्कल्लके लक्षणये किजैसे प्रसूति भई हुई स्त्रीका जो रक्त गर्भाशयसे गिरताहै उसको कुपित भया हुआ वायु रोंकिके उससूतिका के हृदय मस्तक औ पेडूमे शूल उत्पन्न करता है उसको मक्कल्ल कहते हैं ॥ ६ ॥ इतिमूढगर्भनि०

अथसूतिकारोगलक्षणमाह

अंग मर्दो ज्वरः कंपः पिपासा गुरु गात्रता ॥ शोथः शूलाति सारौच सूतिका रोगलक्षणं ॥ १ ॥ मिथ्यो पचारात्संक्लेशा विषमा जीर्ण भोजनात् ॥
सूतिकाया श्च येरोगा जायंते दारुणा स्तुते ॥ २ ॥
ज्वरातिसार शोथाश्च शूला नाह बलक्षयाः ॥ तंद्रा रुचि प्रसेकाद्याः कफ वाता मयोद्भवाः ॥ ३ ॥
कृच्छ्र साध्याहिते रोगाः क्षीण मांस बलाग्नितः ॥
ते सर्वे सूतिका नाम्ना रोगास्ते चाप्यु पद्रवाः ॥ ४ ॥

इतिसूतिकारोगनिदानं

अब सूतिका रोगके लक्षण कहते हैं जैसे कि अंग टूटना ज्वर शरीर कांपना तृषा शरीर जड सूजनि शूल अतिसार येलक्षण होते हैं

॥ १ ॥ ये रोगमिथ्या आहार विहारसे क्लेशके करनेसे विषम औ अ-जीर्ण मे भोजन करनेसे उत्पन्न होते हैं ॥ २ ॥ ज्वर अतिसार सूजनि शूल पेट अफरना बलका क्षय नेत्रौंपर झपकी अरुचि पस्सीना छूटना इत्यादिक कफवात संबंधी रोग होते हैं ॥ ३ ॥ वै रोगमांस जठराग्नि औ बलके क्षयहोनेसे कष्ट साध्यव्है जाते हैं उन्हीको सूतिका रोगका उपद्रवभी कहते हैं॥ ४ ॥ इतिसू० रोगनिदानम् ॥

अथ स्तनरोग निदानं ॥

सक्षीरौ वाप्य दुग्धौवा दोषःप्राप्य स्तनौस्त्रियः॥ प्रदूष्य मांसरुधिरे स्तनरोगाय कल्पते॥ १ ॥ पंचा नाम पि तेषांहि रक्तजं विद्रधिं विना॥ लक्षणानि समानानि बाह्य विद्रधि लक्षणैः॥ २ ॥

इतिस्तनरोगतिदानं ॥

अबस्तनरोगकानिदानकहते हैं सदुग्ध अथवा अदुग्ध स्त्रीके स्तनौंमे दूषित भये हुए वातादि कदोष रक्त औ मांसको दूषित करिके स्तनमे रोग करते हैं वै वातपित्त कफ सन्निपात औ आगंतुक भेदौं करिके ॥ १ ॥ पांच प्रकारके होते हैं उन पांचौके लक्षण रक्तज विद्रधि विना बाह्य विद्रधिनके समान होते हैं ॥ २ ॥ इतिस्तनरोगनिदानं ॥

अथ स्तन्य रोग निदानं तत्र स्तन्य स्य प्रवृत्तौ हेतुं दर्शय न्नाह ॥

विशस्तेष्व पिगात्रेषु यथाशुक्रं नदृश्यते ॥ सर्वदेहाश्रितत्वाच्च शुक्र लक्षणमुच्यते ॥ १ ॥ तदेव चेष्ट युवते दर्शनात् स्मरणादपि ॥ शब्द संश्रवणात्स्पर्शात्संहर्षाच्च प्रवर्त्तते॥ २ ॥ सुप्रसन्नं मन स्त

त्र हर्षणे हेतुरुच्यते॥ आहारसम योनि त्वादेवं स्तन्यमपि स्त्रियाः॥ ३॥ तदेवा पत्य संस्पर्शा दर्शनात्स्मरणादपि॥ ग्रहणाच्चशरीरस्य शुक्रव त्संप्रवर्त्तेत॥ स्नेहो निरंतरं तत्र प्रस्रवे हेतु रुच्यते॥ ४॥

अब दूधके रोगेंका निदान कहते हैं तहां दूधके प्रवर्त्त होनेका निमित्त देखाते भये कहते हैं॥ जैसे पुरुषके शरीरमे सर्वत्र वीर्य रहता हैं परंतु काटनेसे नही दीखता है तैसेही स्त्रीके दूधभी रहता है॥ १॥ जिसतरहसे वह वीर्य परम प्रियास्त्रीके दर्शन स्मरन शब्द श्रवण औ स्पर्श इनकारणोंसे॥ २॥ मनकी प्रसन्नता होती है औ उसते वीर्य प्रवर्त्त होता है॥ ३॥ तैसेही दूधभी आहार समान कारण है इसवास्ते प्रियबालक के स्पर्शदर्शनादिकौ से स्नेह पैदाव्है के दूध प्रवृत्त होता है॥ ४॥

गुरुभि र्विविधै रन्यै दुष्टैर्दोषैः प्रदूषितं॥
क्षीरं धाव्याः कुमारस्य नाना रोगाय कल्पते॥५॥
कषायं सलिल प्लावि स्तन्यं मारुत दूषितं॥ कट्वम्ल लवणं पीत राजि मत्पित्तसंज्ञितं॥ ६॥ कफ दुष्टं घनं तोये निमज्जति सुपिच्छिलं॥ द्विलिंगंद्वंद्वंजंविद्यात्त्रिलिंगं चत्रि दोषजं॥ ७

जड पदार्थोंका सेवन तथा औरभी वातादिकौं के दूषित करानेवाले जो आहार विहारादिक उनके अति सेवनसे वातादिक दोष दूषितव्हैके माता औ दाईका दूध बिगाडते है वह दूध बालकौंके रोगौं-का करनेवाला होता है॥ ५॥ जो दूध स्वादमे कसैला औ पानीपर-

तरै सो वात दुष्ट ॥ जो कडु आ खट्टा नमकीन पीली रेखौं करिकैयुक्त सो पित्त दुष्ट ॥ ६ ॥ जो गाढा चिकना औ पानीमे डूवताहोय सोकफ दुष्ट ॥ जो दोदोष लक्षण युक्त होय सो द्विदोष दुष्ट औ जो सर्व लक्षण युक्त दीखैसो त्रिदोष दुष्ट ॥ ७ ॥

शुद्ध क्षीरल०

अदुष्टं चांबुनिःक्षिप्त मेकीभवति पांडुरं॥ मधुरं चाविवर्णं चतत्प्रसन्नं विनिर्दिशेत् ॥ ८ ॥

इतिस्तन्यरोग निदानं ॥ इतिश्रीमाधवाचार्यविरचितेरुग्विनिश्चये स्त्रीरोग निदानं ॥

जो दूध शुद्ध दोष दूषित नही सोपानीमे मिलिके सब एकरंग सफेदव्है जायगा तथा मीठा औ अपने रंगरूप युक्त होता है वह शुद्ध बालकका जीवन होता है ॥ ८ ॥ इतिश्री मत्सुकलसीतारामात्मजपंडि तरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांस्त्रीरोगनिदानप्रकाशः

अथबालरोगनिदानं ॥

त्रिविधः कथितो बालः क्षीरान्नो भयवर्त्तनः॥ स्वास्थ्यं ताभ्या मदुष्टाभ्यां दुष्टाभ्यां रोग संभवः॥ १॥

अब वाल रोगोंका निदान कहते हैं सो बालक तीनि प्रकारका होता है जैसे कि एकतौ केवल दूध पीने वाला दूसरा दूध औ अन्न खाने वाला तीसरा केवल अन्नही का खानेवाला तहां जवै अन्न औ दूध शुद्ध मिलेतौ बालक को आरोग्य प्राप्त होता है औ जौ दूषित मिलेतौ रोग उत्पन्न होता है ॥ १ ॥

वात दुष्टं शिशुः स्तन्यं पिबन्वात गदातुरः॥ क्षाम

स्वरः कृशांगः स्याद्बद्धा विण्मूत्र मारुतः ॥ २ ॥ स्विन्नोभि न्नमलो बालः कामला पित्त रोगवान् ॥ तृष्णालु रुष्ण सर्वांगः पित्त दुष्टंपयः पिबन् ॥ ३ ॥ कफ दुष्टं पिबन् क्षीरं लालालुः कफ रोगवान्॥ निद्रार्दितो जडः शून शुक्लाक्ष च्छर्दनः शिशुः ॥ ४ ॥

जो बालक वात दूषित दूध पीता है सो वात रोगौं करिके पीडित होता है औ उसकी आवाज पडीभई शरीर दुबरा औ मलमूत्र तथा अधो वायु का खुलासा होता नही ॥ १ ॥ जो पित्त दूषित दूध पीता है सो पसीना युक्त रहता है औ उसका मल पतला फूटासा रहता है तथा उसके शरीरमे कामला औ पित्त रोग रहते हैं उसको तृषा अधिक शरीर सबगरम रहता है ॥ २ ॥ जो कफ दूषित दूध पीता है उसके मुखसे लार गिरती रहती है औ कफ रोगौं करिके युक्त रहता है निद्रा करिके पीडित जड रहता है औ उसके मुख नेत्रौं पर सूजनि नेत्र सपेद रहती है औ वांतिभी करता रहता है ॥ ४ ॥

वक्तु रक्षमस्य बालस्यां तर्गत रोग ज्ञानो पाय माह ॥

शिशो स्तीव्रामतीव्रांच रोदना ल्लक्षये द्रुजं ॥ सयं स्पृशे द्भृशं देशं यत्रच स्पर्शनाक्षमः ॥ ५ ॥ तत्र विद्याद्रुजं मूर्ध्निरुजं चाक्षि निमीलनात्॥ हृदि जिव्हौष्ट दशन श्वास मुष्टि निपीडनैः ॥ ६ ॥ कोष्टे विबंध वमथु स्तन दंशांत्र कूजनैः॥ आध्मान पृष्ट नमन

जठरो न्नमनै रपि ॥ ७ ॥ बस्तौ गुह्येच विण्मूत्र संगो न्नास दिगीक्षणैः ॥ स्रोतांस्यं गानि संधींश्च पश्येद्यत्नान् मुहु र्मुहुः ॥ ८ ॥

जो बालक बोलने को समर्थ नही उसके अंदरके रोग जानना के वास्ते उपाय कहते हैं वे ऐसे कि बालककी पीडाका कम जास्ती पना उसके रोनेसे जानना औ जो जो अपने अंगौंको बालक स्पर्शकरै अथवा जिस अंगमे हाथ लगाने से रोवै याचम के ॥ ५ ॥ उसी अंगमे पीडा जानना जो नेत्र नखोलै तौ जानना किपीडा मस्तकमे है जो जीभ औ ओंठौंको दबावै दांतपीसै श्वासै लेई मूठी बांधैतौ हृदयमे पीडा जानना ॥ ६ ॥ मल मूत्रके अवरोधसे कोठेमे पीडा जानना तैसेही जो उलटी करै माताके स्तनौंको काटै उसकी आतैं कूजैं पीठफूलै पीठि नमिजाय पेट ऊंचाव्है के पीछे को नवै तौभी कोठेकी पीडा जानना ॥ ७ ॥ जो मल मुत्रका अवरोध होय औ बालक चौकन्ना व्है के चौतरफ को देखै तौ उसके पेडू अथवा इंद्रिय गुदादिक गुह्यस्थान मे पीडा जानना इन लक्षणौंके सेवाय बालक के कान नाक मुख नेत्र इत्यादिक इंद्रियौंको तथा हाथ पाय इत्यादिक अंगौंको औ सर्व संधिनको बडे प्रयत्नसे वारं वार देखिके रोगौंका निश्चय करना ॥ ८ ॥

कुकूणकलक्षणं ॥

कुकूणकः क्षीरदोषा च्छिशूना मेववर्त्मनि ॥ जायते तेन नेत्रं चकंडुरं प्रस्रवे न्मुहुः ॥ ९ ॥ शिशुः कुर्या ल्ललाटाक्षि कूट नासा विघर्षणं ॥ शक्तो नार्क प्रभां द्रष्टुं नवर्त्मो न्मील नक्षमः ॥ १० ॥

बच्चौंके दूधके दोषसे नेत्रकी पलकौंमे कुकूणक रोगहोता है उस करिके नेत्रमे खजु आते हैं औ उनमेसे वारं वार पानी वहता रहता है ॥ ९ ॥ तथा वह बालक ललाट नेत्रौंके पीठको औ नासिका को घसता रहता है तथा सूर्यके तेजको देखि नहीं सकता है औ नेत्रौंको भी खोलि मीचि सकता नहीं ॥ १० ॥

पारिगर्भिकलक्षणं

मातुः कुमारो गर्भिण्याः स्तन्यं प्रायः पिबन्नपि ॥ कासाग्नि साद वमथु तंद्रा कार्श्या रुचिभ्रमैः ॥ ११ ॥ युज्यते कोष्ट वृद्ध्याच तमाहुः पारिगर्भिकं ॥ रोगं परिभ वाख्यं च दद्यात्त त्राग्नि दीपनं ॥ १२ ॥

जो बालक गर्भवती माताका दूध पीताहै उसको कास मंदाग्नि उलटी नेत्रौंकी झपकी कृशता अरुचि औभ्रम येरोग होते हैं ॥ ११ ॥ पेटभी बढिजाता है उसरोगको पारिगार्भिक कहते हैं औ इसीको परिभवभी कहते हैं इसमे अग्नि दीपन उपाय कहना ॥ १२ ॥

तालुकंटकमाह

तालु मांसे कफः क्रुद्धः कुरुते तालु कंठकं ॥ तेन तालु प्रदेशस्य निम्नता मूर्द्धिजायते ॥ १३ ॥ तालु पातःस्तनद्वेषः कृच्छ्रा त्पानं शकृद्द्रवम् ॥ तृडक्षिकंठास्य रुजा ग्रीवा दुर्धरता वमिः ॥ १४ ॥

तालु कंटक रोग जैसे तालूके मांसमे कफ क्रुद्धित व्हैके तालु कंटक रोगको उत्पन्न करता है उसते तालूके ऊपर मस्तकमे गडहा पडि

जाता है ॥ १३ ॥ औ तालू नीचेको उतरि जाता है उसते माताके स्त-नौंको देखिले मुख फिराय लेता है जो कदापि पीने लगातौ भी बडे कष्टसे पीता है औ उसका मल पतला पियास नेत्र कंठ औमुख इनके रोग तथा वांति होती है औ वह बालक गरदनि भी सभारि सकता नहीं ॥ १४ ॥

महापद्मविसर्पलक्षणं

विसर्पस्तु शिशोः प्राण नाशनो बस्ति शीर्षजः॥
पद्मवर्णो महा पद्मो बाले दोष त्रयोद्भवः॥ शंखा
भ्यांहृदयं याति हृदयाद्वा गुदं व्रजेत्॥ १५॥

बालक के पेडु औ मस्तक मे महा पद्मनामका विसर्प रोग होता है सो उसका प्राण नाशकही होता है उसका आकार औवरन कम-लके समान होता है कनपटीसे हृदयपर्यंत जाता है अथवा हृदयसे गुदापर्यंत जाता है वह त्रिदोषसे होता है ॥ १५ ॥

क्षुद्र रोगे च कथिते अजगल्यहि पूतने ॥
ज्वराद्या व्याधयः सर्वे महतां ये पुरेरिताः॥
बालदेहे पि ते तद्वद्विज्ञेयाः कुशलैः सदा॥ १६॥

जो अजगल्ली औ अहित पूतना ये दोनौरोगक्षुद्र रोगौंमे कहे हैं वै बालकौं के भीहोते हैं तथा जो ज्वरा दिक रोग बडी अवस्था वालौं के कहते है तैसेही बाल कौंके भी जानना ॥ १६ ॥

अथबालग्रहजुष्टानांबालानांसामान्यलक्षणमाह ॥

क्षणादुद्विजते बालः क्षणा त्त्रस्यति रोदिति॥ नखै
र्दंतैर्दारयति धात्री मात्मान मेवच॥ १७॥ ऊर्ध्वं

निरीक्षते दंतान् खादेत्कूजति जृंभते॥भ्रुवौ क्षिप ति दंतोष्ठं फेनं वमति चा सकृत्॥१८॥ क्षामोऽति निशि जागर्ति शूनांगो भिन्न विट्स्वरः॥मांस शो णित गंधिश्च नचा श्नाति यथापुरा॥ सामान्यं ग्रह जुष्टानां लक्षणं समुदाहृतम्॥ १९ ॥

जो बालक बालग्रहकरिके ग्रसित होते हैं उनके समान्य लक्षण जैसे कि वह बालक क्षणमे उद्वेगको प्राप्त होता है याने चौं कता है औ क्षणमे डरायके रोहता है औ नख तथा दांतौं करिके आपना औ मा ता का भी शरीर विदीर्ण करता है ॥ १७ ॥ ऊपरको देखता रहता है दांत चबाइके कांखता है जमुहाई लेता है दात भौंह औ होढांको चला ता रहता है मुखसे वारं वार फेना उगिलता रहता है ॥१८॥ शरीर कृश रातिका जागना शरीरमे सूजनि मलफूटा स्वर वैठा देहमे मांस रक्त तुल्य दुर्गंध प्रथम सरीखा अहार नही करता है ये ग्रह ग्रस्त बालकौं के सामन्य लक्षण कहे अब विशेष कहते हैं ॥ १९ ॥

अथ स्कंद ग्रह ग्रहीत लक्षणं ॥

एक नेत्रस्य गात्रस्य स्रावः स्पंदन कंपनम्॥ऊर्ध्वं दृष्ट्या निरीक्षेत वक्रास्यो रक्त गंधिकः ॥ २० ॥ दंतान् खादति वित्रस्तः स्तन्यं नैवा भिनंदति ॥ स्कंदग्रह गृहीतस्यरोदनं चाल्प मेवच ॥ २१ ॥

जिस बालकको स्कंदग्रह ग्रसताहै उसके एक नेत्र वहता रहता

है तथा एकतरफका अंग फरकता औ कांपता रहता है ऊपरको मुख टेढा किये भये देखता रहता है देहमे रक्तकीबास आती है ॥ २० ॥ दांत कटकटात है शरीर शिथल दूध पर अरुचि तथा धीरेधीरे रोता है ॥ २१ ॥

स्कंदापस्मारग्रहीतलक्षणं ॥

नष्टसंज्ञोवमेत्फेनं संज्ञावान्नतिरोदति ॥
पूयशोणितगंधित्वं स्कंदापस्मारलक्षणं ॥ २२ ॥

जिस बालकको स्कंदापस्मार ग्रह ग्रसता है वह जब अचेतव्है के पडता है तब मुखसे फेना उगिलता है औ जब सचेत होता है तब अतिशय रोता है औ शरीरमे रक्त पीवसरीखी दुर्गंध आती है ॥ २२ ॥

शकुनि ग्रह ग्रही तलक्षणं ॥

स्रस्तांगो भयचकितो विहंगगंधिः सस्रावव्रण
परिपीडितः समंतात् ॥ स्फोटैश्च प्रचिततनुः सदा
हपाकै र्विज्ञेयो भवति शिशुःक्षतः शकुन्या ॥ २३ ॥

जिस बालकके अंग शिथिलव्है जाय औ वह भयसे चकित रहै शरीरमे पक्षीकी सरीखी वास आवै वहने वाले व्रणौं करिके सब ओरसे पीडितरहै तथा दाह युक्त पकने वाले फोडो करिके शरीर पूरि गया होय उसको शकुनि ग्रह करिके ग्रसित जानना ॥ २३ ॥

रेवतीग्रहगृहीतलक्षणं ॥

व्रणैः स्फोटैश्चित गात्रं पंक गंध मसृक्स्रवेत् ॥
भिन्नवर्चा ज्वरी दाही रेवती ग्रह लक्षणम् ॥ २४ ॥

जिस बालक को रेवती ग्रह ग्रहण करता है सौ बालक फूटे भये

पुराने फोडोंके जखम तथा नवीन फोडों करिके परि पुरित औ उनसे कीचडकी गंध युक्त रक्त गिरता है तथा उसका मल फूटा औ ज्वर दाह येलक्षण युक्त होता है ॥ २४ ॥

पूतनाग्रहगृहीतलक्षणं ॥

अती सारो ज्वर स्तृष्णा तिर्यक् प्रेक्षण रोदनं॥ नष्ट निद्र स्तथो द्विग्नो ग्रस्तः पूतनया शिशुः॥ २५॥

जो बालक पूतना ग्रहकरिके ग्रसित होता है उसको अती सार ज्वर तृषा तिरछा देखना निद्राका नाश येरोग होते है औ वह चक चौंधा रहता है ॥ २५ ॥

अंध पूतना ग्रह गृहीत लक्षणं ॥

छर्दिः कासो ज्वर स्तृष्णा वसा गंधो ऽतिरोदनं ॥ स्तन्यदोषो ऽतिसारश्चा प्यंध पूतनया भवेत्॥ २६ ॥

जो बालक अंध पूतना ग्रह गृहीत होता है सो वांति कास ज्वर औ तृषा करिके युक्त होता है तथा उसके शरीरमे चरबी की सरीखी बास आती है औ वह अति रोता है मनसे दूधभी पीता नही तथा अतीसार युक्त होता है ॥ २६ ॥

शीत पूतना ग्रह गृहीत लक्षणं

वेपते कासते क्षीणो नेत्र रोगी विगंधिता ॥ छर्द्यतीसार युक्त श्चशीतपूतन या शिशुः॥ २७॥

जो बालक शीतपूतना ग्रह गृहीत होता है वह कांपता औ कांखता रहता है तथा क्षीण नेत्र रोगी दुर्गंध युक्त उलटी औ अतीसार युक्त होता है ॥ २७ ॥

मुख मंडिका ग्रह गृही तलक्षणं

प्रसन्न वर्ण वदनः शिराभि रभिसंवृतः॥

बव्हाशी मूत्र गंधि श्चमुख मंडिकया भवेत्॥ २८॥

जो बालक मुख मंडिका ग्रहकरिके गृहीत होता है उसका मुख औ रंग प्रसन्न उभरी भई नसौ करिके व्याप्त खाता बहुत औ शरीमे मूत्रकी दुर्गंध आती है॥ २८॥

नैगमेय ग्रह गृहीत लक्षणं॥

छर्दि स्पंदन कंठास्य शोष मूर्छा विगंधताः॥

ऊर्ध्वं पश्ये द्दशेद्दंतान् नैगमेय ग्रहार्दितः॥ २९॥

जो बालक नैगमेय ग्रह गृहीत होता है वह वांति पसीना कंठ मुखका सूखना मूर्छा औ दुर्गंध इन करिके युक्त ऊपरको देखता रहता है औ दांतौंको चबाता है॥ २९॥

इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्च यदीपिकायांबालरोगनिदानप्रकाशः॥

अथ विषनिदानं तत्रविषस्य द्वैविध्य माह

स्थावरं जंगमं चैव द्विविधं विष मुच्यते॥

मूलात्मकं तदाद्यं स्यात्परं सर्पादि संभवं॥ १॥

अब विषका निदान कहते हैं तहां स्थावर औ जंगम भेदकरिके विषदो प्रकारका है तिनमे स्थावरतौ मूलात्मक याने वृक्षके अंग मूल फलादिक जंगम सर्पादिक संभव याने सर्प वीछू इत्यादिकौं से उत्पन्न होता है इनका विस्तार सुश्रुता दिक ग्रंथौं से निश्चय करना॥ १॥

अथजंगमविषस्यसामान्यलक्षणं

निद्रां तंद्रां क्लमं दाह मपाकं रोमहर्षणम् ॥
शोथं चैवा तिसारंच कुरुते जंगमं विषं ॥ २ ॥

अब जंगम विषके सामान्य लक्षण कहते हैं जैसे कि निद्राने त्रौंपर झपकी क्लम याने घबराहट दाह अन्नका नपचना रोमौं का खडाहोना सूजनि औ अतीसार ईतने लक्षणौंको जंगम विष उत्पन्न करता है ॥ २ ॥

स्थावर विषस्य सामान्यल०

स्थावरं तु ज्वरं हिक्कां दंतहर्षं गलग्रहं ॥
फेन च्छर्द्य रुचि श्वासं मूर्च्छां च कुरुते भृशं॥३॥

स्थावर विष यहज्वर हुसकी दांतौंका गुढिलाना गलेका रुकिजाना मुखमे फेना आना उलटी होना अरुचि श्वास औ मूर्छा इन उपद्रवनको करता है ॥ ३ ॥

अथ विषदातॄणां लक्षणं

न ददात्युत्तरं पृष्टो विवक्षुर्मोह मेतिच ॥
अपार्थं बहु संकीर्णं भाषते चापि मूढवत्॥ ४ ॥
हसत्य कस्मादास्फोट यत्यंगुलीर्विलिखेन्महीं॥ वे
पथु श्वास्य भवति त्रस्त श्चान्यो ऽन्यमीक्षते ॥ ५ ॥
विवर्ण वक्रो श्यामश्च नखैः किंचिच्छि नत्यपि ॥
आलभे ता सनंदीनः करेण चशिरोरुहं ॥ ६॥ वर्त्त
ते विपरीतंच विषदाता विचेतनः॥ इंगितज्ञो मनु

ष्याणां वाक्चेष्टा मुखवैकृतैः ॥ जानीयाद्विषदा तारमेतैर्लिंगैश्च बुद्धिमान् ॥ ७ ॥

अब विषदेने वालौंके लक्षण कहते हैं जो मनुष्य दूसरेको विष-दता है सो कुछभी पुंछने से उत्तर नही देता है जो कुछकहने को भी इरादा करता हैं तो बोलिसकता नही कदापि बोलता है तौ मूर्खसरीखा अट्टसट्ट बकता है ॥ ४॥ औ अंगुली मरोडता है जमीन नखौंसे खचा-ता है कांपता है औडरता भया परस्पर देखता है ॥ ५ ॥ मुखमलिन देह जले मुरदे सरीखा नखौं से घार वगैरे तो डता रहताहै दीन व्हैके असन औ केशौंका स्पर्श करता है॥ ६॥अचेतभया हुआ विपरीत कामकरता है इत्यादि चिन्हौंसे विषदेने वालेको पहि चानना ॥ ७ ॥

अथ मूलादि विषाणां नवानां प्रमादा दुपयुक्तानां प्रत्येक लक्षणं

उद्वेष्टनं मूल विषैः प्रलापो मोह एवच ॥ जृंभणंवेपनं श्वासो मोहः पत्र विषेणतु ॥ ८ ॥ मुखशोथः फलविषैर्दाहो ऽन्नद्वेषएवच॥भवत्पुष्पविषैश्छर्दिराध्मानं श्वास एवच ॥ ९ ॥ त्वक् सार निर्यास विषै रुपयुक्तै र्भवंति हि ॥ आस्य दौर्गंध्यपारुष्य शिरोरुक्कफ संस्रवाः ॥ १० ॥ फेनागमः क्षीरविषैर्विड्भेदो गुरु जिव्हता ॥ हृत्पीडनं धातुविषैर्मूर्च्छा दाहश्च तालुनि ॥ प्रायेण काल घातीनि विषाण्येतानि निर्दिशेत् ॥ ११ ॥

अब जो प्रमादसे मूलादिक विष भक्षण करनेमे आयेहों यंतौ

उनके न्यारे न्यारे लक्षण कहते हैं जैसेकि मूल विषयाने जिस वृक्षमे कंदनही मूलहीहै जैसे कनेर इत्यादिकौकी जर उनसे शरीरमे ऐंठनि जैसे कोई शरीरको जोरसे डंडा वगैरेसे दबाताहोय तैं से औ प्रलाप तथा मोह याने अविचार ये लक्षण होते हैं ॥ पत्र विषसे जमुहाई कांपना श्वास औमोह ॥ ८ ॥ फलविषसे अंडकोशौं मे सूजनि दाह औ अन्नपर द्वेष ॥ पुष्पविषसे उलटी अफरा औश्वास ॥ ९ ॥ त्वचा याने छाली सारजो मध्य का श्रेष्ट अंश निर्यास जो गोंद इनविषौंसे मुखमे दुर्गंध शरीरमे रूखापन मस्तकमे पीडा औ मुखसे कफका गि-रना ॥ १० ॥ क्षीरविषोंसे मुखसे फेनाका निकसना मलका फूटना औ जीभका जडहोना ॥ धातु विष याने हरिताल इत्यादिक धातु विषौंसे हृदयमे पीडा मूर्च्छा औतालू मेदाह ॥ ये विष बहुधा करिके कालां-तरसे मारते है तुरतभी मरैनेमनहीं परंतु बहुधा करिके कुछ दिन दुख-देके मारते हैं कंद विष जो दश वांहै सो तुरत ही मारता है ॥ ११ ॥

अथ विष लिप्त शस्त्र हतस्य लक्षणं

सद्यःक्षतं पच्यते यस्यजंतोःस्रवे द्रक्तं पच्यते चा प्य भीक्ष्णं॥ कृष्णी भूतं क्लिन्न मत्यर्थ पूति क्षता न्मांसंशीर्यते यस्यचापि॥१२॥ तृष्णा मूर्छा ज्वर दाहौ चयस्य दिग्धा हतंतं मनुजं व्यवस्येत् ॥ लिं गा न्येतान्ये वकुर्या दमित्रै र्व्रणेविषंयस्य दत्तं प्र मादात्॥१३॥

जो घाव जहरमे बुझाये भये शस्त्रका होता है उसके लक्षण जिसका घाव शीघ्र पकताहोय औ वारंवार रक्तपड़े फिरि पकै फिरि

रक्तपडै सो तथा जिसके घावसे काला व्हैव्है के भीजाभया दुर्गंध युक्त ऐसा मास गलि गलिके गिरता होय ॥ १२ ॥ तथा जिसको अति तृषा लगै मूर्छा आवै ज्वर औ दाहहोय तिस मनुष्यको जानना कि इसके विषका वुझाया शस्त्र लगाहै ऐसेही जोवे खबर दारीसे कोई शत्रुने घावपर विषडरवाया होयगा तौभी ये लक्षणहोयंगे ॥ १३ ॥

स्थावर विष मुक्त्वा जंगम माह तत्र सर्पाणा मति तीक्ष्णत्वे न तद्वि· षानाह

वात पित्त कफात्मानो भोगि मंडलि राजिलाः॥
यथा क्रमं समाख्याता द्व्यंतरा द्वंद्व रूपिणः॥ १४॥

स्थावर विषकहे औ अब जंगम विष कहते हैं तिनमे भी सर्पौंका विष अतितीक्ष्णे होताहै इसी वास्ते प्रथम सर्पौंके विष कहते हैं॥ जैसेकि भोगी मंडली औराजिल ये तीनौ जातिके सर्प क्रमसे वात पित्त औ कफात्म होते है वे जैसेकि भोगी वातात्मक मंडळी पित्तात्मक औ राजिल कफात्मक होते हैं भोगी वैजिनके फणारहती है मंडली वैजिनके अंगपर मंडलहोते हैं औ राजिल वैजिनके अंगपर चित्र विचित्र लंबी तिरछी रेखाहोयं जो इनके संकरत्वसे होयं वैद्वंद्वजात्मक हैं जैसे भोगी सर्प औ मंडलिनीसर्पिनी अथवा भोगिनी सर्पिनी औ मंडली सर्प उनसे जो उत्पन्न भया सर्प सोवात पित्तात्मक ऐसेही मंडली राजिलसे पित्त कफात्मक औ भोगीराजिलसे वात कफात्मक होते हैं॥ १४ ॥

अथभोग्यादिभिःकृतदंशेषु वातादिलक्षणान्याह

दंशो भोगि कृतः कृष्णा सर्ववात विकारकृत्॥ पीतो मंडलिजः शोथो मृदुः पित्त विकारवान्॥ १५॥

राजिलोत्थो भवेद्दंशः स्थिरः शोथश्चपिच्छिलः॥ पांडुः स्निग्धो तिसांद्रास्रक् सर्व श्लेष्म विकार वान्॥ १६॥

जोभोगी इत्यादिक सर्प काटते हैं उनके काटेभये दंश पर जोवातादिक दोषोंके चिन्हदीखते हैं उनको कहते हैं वैजैसे कि भोगी याने फणवाले काले इत्यादिक सर्पोंके काटेभये स्थानका रंग कालाहोता है औ सर्ववातरोगोंका करने वालाहोता है॥ मंडलीका पीला सूजा भया कोमल औ पित्त विकारौं का करने वाला होताहै॥ १५॥ राजिलका डंश स्थिरसूजा भया चिकटा सफेद चिकना भीजाभया रक्तयुक्त औकफ रोगकारक होता है॥ १६॥

अथ देश काल विशेषे दष्ट स्यासाध्यत्व माह

अश्वत्थ देवायतन श्मशान वल्मीक संध्यासुच तुःपथेषु॥ याम्ये चपैत्र्ये परि-वर्जनी याऋक्षे शि राममर्मसु येचदष्टाः॥ दर्वीकराणां विष माशुहंति सर्वाणि चोष्णे द्विगुणीभवंति॥ १७॥

जिसदेश औकालमे सर्पका काटा भया असाध्य होता है सोकहते हैं पीपरके नीचे देवालयमे श्मशानमे बांबीमे सायंकालमे चौराहेमे याम्य यानेभरणी पैत्र्ययाने मघा औचकारसे आर्द्रा श्लेषा मूल औकृत्तिका दिक नक्षत्र तथा पंचमी इत्यादि क तिथिनको जानना औजो नसौके मर्म स्थानौंमे काटाहो सो असाध्य जानना तहां फण-

वालेका विष तुरंतही मारताहै और सब उष्णके संयोगसे दूने वढते हैं ॥ १७ ॥

येष्वपरेषु विषमा शुमारकं भवति तानाह ॥

अजीर्ण पित्ता तपपीडितेषुबालेषु वृद्धेषु बुभुक्षितेषु॥ क्षीणे क्षते मेहिनि कुष्ठजुष्टे रूक्षे ऽबले गर्भवतीषु चापि॥१८॥शस्त्रक्षते यस्य नरक्तमस्ति राज्यो लताभिश्च नसंभवंति ॥ शीताभि रद्भिश्च नरोमहर्षो विषाभि भूतं परिवर्ज येत्तं॥ १९ ॥ जिह्मं मुखं यस्यच केशशांतो नासावसादश्च सकंठभंगः॥ कृष्णः सरक्तः श्ववथुश्चदंशो हन्वोः स्थिरत्वं चविवर्जनीयः॥ २० ॥ वर्त्ति घना यस्य निरेति वक्त्राद्रक्तं स्रवे दूर्ध्वमधश्च यस्य॥ दंष्ट्राभिघाताश्चतुरश्चयस्य तंचापि वैद्यः परिवर्जये द्वै॥ २१ ॥ उन्मत्त मत्यर्थ मुपद्रुतं वाहीनस्वरं वा प्यथवा विवर्णम् ॥ सारिष्ट मत्यर्थ मवेगिनं च जह्यान्नरं तत्र नकर्म कुर्यात्॥ २२ ॥

जिन औरभी मनुष्यों के विषयमे विष शीघ्र मारक होता है उनको कहते हैं ॥ जे मनुष्य अजीर्ण पित्त औ घामकरिके पीडित होय तथा बालक वृद्ध भूंखे क्षीण घायल प्रमेह वाले कुष्टी रूखे शरीर वाले निर्बल गर्भवती ॥ १८ ॥ जिनके शस्त्र लगानेसे रक्त नदीखै छडी मारनेसे जिसके रेखान उछरै ठंढे जलसे रोमन खडे होयं ॥ १९ ॥

जिसका मुख टेढाव्है गयाहोय केश खींचने से उखरि आवै नाक टेढीव्है जाय गरदनि झुकि झुकि परै जिसके डंशपर ललामी लिए भयी काली सूजनि होय दाढी जैसेकी वैसीरहिजाय नखुलै नबंद-होय ॥ २० ॥ जिस केमुखसै लारकी कठिन बातीसी गिरै ऊर्ध्व याने मुखनाक औ नेत्रादि कौंसे रक्तगिरै तथा नीचे से भी लिंग योनि गुदा इत्यादिकौं से रक्तगिरै जिसके बरोबर चारि दांत लगे होय॥२१॥जो अत्यंत उन्मत्त उपद्रव युक्त हीनस्वर बिवर्ण अरिष्ट जोमरण कारक चिन्ह तिनकरिकै युक्त मलमूत्रादि वेगरहित होय ऐसे विष युक्त मनुष्यौंकी असाध्यता जानिके औषध नकरना ॥ २२ ॥

अथदूषीविषमाह

जीर्णं विषघ्नौषधिभि र्हतंवादावाग्नि वाता तप शोषितंवा॥स्वभावतो वागुण विप्रहीनंविषं हिदूषी विषता मुपैति॥२३॥वीर्याल्पभावा न्ननिपा तये त्तत्कफान्वितं वर्षगणा नुबंधि॥ तेनार्दितो भिन्न पुरीष वर्णो विगंध वैरस्य युतः पिपासी॥मूर्छा भ्रमंगद्गद वाग्वमि त्वंबिचेष्ट मानो ऽरतिमाप्नुयाद्वा॥२४॥

दूषीविषलक्षण कहते है जो विष अति पुराना तथा विषघ्न औषधौं करिके निर्विष किया भया अथवा दवाग्नि वायु औधूप करिके सुखाया भया अथवा जो विष के दशगुण कहे हैं उनमे से एक दो किंवा तीनि गुणौं करिके हीन होय सो विष दूषी विषत्वको प्राप्त होता

है ॥ २३ ॥ वह अल्पवीर्य होता है इसवास्ते तुरत मारता नहीं बहुत वर्षोंका इसते कफयुक्त है इसकरिके पीडित मनुष्य विवर्ण पतले फूटे मलयुक्त तथा खरा बगंध औ विरसता औपियास युक्त मूर्च्छा भ्रम गद गद शब्द उलटी विपरीत चेष्टायुक्त औ उच्चाटकोप्राप्तहोता है२४

अथस्थानविशेषेणविशिष्टलिंगमाह

आमाशयस्थे कफवात रोगी पक्वाशय स्थेऽनिल पित्तरोगी ॥ भवेत्समुद्ध्वस्त शिरो रुहांगो विलून पक्षस्तु यथाविहंगः ॥ २५ ॥

अव स्थान विशेष करिके विशेष चिन्ह कहते हैं. जैसेकि जो दूषीतविष आमाशयमे रहाहोय तौ कफवातरोगी होताहै पक्वाशयमें स्थित होनेसे वात पित्त रोगी औ उसके केशगिरिजाते हैं जैसे पक्ष विनाका पक्षी तैसाव्है जाता है ॥ २५ ॥

अथ रसादि धातुगत लक्षणं

स्थितं रसादिष्वथ तद्यथोक्तान्करोति धातुप्रभवान्विकारान् ॥ कोपं च शीतानि लदुर्दिनेषु यात्याशु पूर्वं शृणुतस्य लिंगं ॥ २६ ॥ निद्रागुरुत्वं च विजृंभणंच विश्लेष हर्षावथ वांगमर्दः ॥ ततःकरोत्यन्न मदाविपाक वरोचकं मंडलकोठ जन्म ॥ ॥ २७ ॥ मांसक्षयं पादकर प्रशोथं मूर्च्छां तथा छर्दिमथातिसारं ॥ दूषी विषंश्वास तृषौ च कुर्यात् ज्वरं प्रवृद्धिं जठरस्य चापि ॥ २८ ॥ उन्माद म

न्य ज्जनये तथान्यद्दाहं तथान्यत्क्षपये च्चशुक्रं॥
गाद्गद्य मन्य ज्जनये च्च कुष्टं तांस्ता न्विकारां श्च्व
हुप्रकारान्॥ २९॥

रसादि धातुगत दूषी विषके लक्षण कहते हैं जैसेकि यह दूषी विष रसादि क धातुनमे रहा भया जो सुश्रुतने व्याधि समुद्देशीय अध्यायमे धातुजन्य रोगकहे हैं उनरोगौंको उत्पन्न करता है औशीत समयमे पवनके अति चलनेसे तथा दुर्दिन याने जो दिन कि मेघौंसे छाया होय उसदिनमे यह कुपितहोता है तिसके जो लक्षण होते हैं उनको कहते हैं सोसुनौं वै ऐसे कि॥ २६ ॥ निद्रा जडता जमुहाई अंगौंकी शिथिलता रोमांच अंगमे दबाने सरीखी पीडा येवात कफके विकार तिनको करताहै औरसा जीर्ण अन्नका नपचना अरुचि मंडल कोठ॥ २७॥ मांस क्षय हाथ पावनमे अति सूजनि मूर्छा वांति अतीसार श्वास तृषा ज्वर उदर वृद्धि॥ २८ ॥ उन्माद दाह वीर्यक्षय गाद्गद्या नहकलायके बोलना औकुष्ट तथा औरभी उनउन दोषौके अनेक प्रकार के रोगौं को करताहै॥ २९ ॥

अथ दूषी विष लक्षण माह

दूषितं देशकाला न्नदिवा स्वप्नै रभी क्ष्णशः॥
यस्मा त्संदूषये द्धातूं स्तस्मा दूषी विषंस्मृतं॥३०॥

जो विष देश काल अन्न औ दिनके सोनेकरिके वारंवार दूषितहोता है औ वह विषधातुनको दूषित करता है उसीसे उसको दूषीविष कहते हैं तहां दूषितकरने वाले देश जिनमे बहुत पवन शीत वर्षा औ घाम पडताहोय काल जोशीत पवन दुर्दिन युक्त अन्न मदिरा कुरथी

इत्यादि क ऐसेही व्यायाम क्रोधादि कौंसेभी जानना ॥ ३० ॥

अथ कृत्रिम विषस्य द्वैविध्य माह काश्यप संहितातः

संयोगजं चद्विविधंद्वितीयं विषमुच्यते॥दूषीविषंतु सविषम विषं गरउच्यते॥३१॥सौभाग्यार्थं स्त्रियः स्वेद रजोनानां गजा न्मलान्॥ शत्रु प्रयुक्तां श्च गरान्प्रय च्छंत्यन्नमिश्रितान्॥३२॥ तैःस्या त्पांडुः कृशोऽ ल्पाग्नि र्ज्वर श्चास्योप जायते॥ मर्म प्रधम ना ध्मानं हस्तयोः शोथ संभवः॥ ३३॥ जठरं ग्रह णीचैव यक्ष्मा गुल्म क्षयज्वराः॥ एवंविधस्य चा न्यस्य व्याधे र्लिंगानि दर्शयेत्॥ ३४॥

अब कृत्रिम विषका द्विविधत्वकहते हैं सो काश्यप संहिता मेलिखा है जैसे कि संयोगज विषयाने दोकि वातीन इत्यादिक पदार्थ मिलायके जो विष बनाते हैं सोदो प्रकारका है तिनमे जिसमे विष है वहदूषी विष औजो निर्विष है सोगर ॥ ३१ ॥ जो पुरुष के वशकरने के वास्ते स्त्रीलोग पसीना आपकारज तथा औरभी अनेक प्रकारके शरीरके मल तथा शत्रुनने दिये जो दूसरे कृत्रिम निर्विषजहर उनको अन्नादिकौं मे मिलायके दिया करती हैं उनको गर कहते हैं ॥ ३२ ॥ तिन विषौं करिके वह मनुष्य पांडु वर्ण कृश औमंदाग्नि होता है तथा उनगरौंसे उसके ज्वरभी उत्पन्न होता है तथा मर्मस्थानौंमे पीडा पेटका अफरा औहाथौं मे सूजनि होती है ॥ ३३ ॥ उदर रोग संग्रहणी राज यक्ष्मा गुल्म औक्षय ज्वर होता है इसप्रकारके और भीव्याधिके चिन्ह देखाते हैं ॥ ३४ ॥

साध्या साध्यलक्षणं

साध्यमा त्मवतः सद्यो याप्यं संवत्सरो षितं॥
दूषी विषम साध्यंतु क्षीणस्या हित सेविनः॥३५॥

जो मनुष्य पथ्य सेवन करने वाला उसके जो नवीन दूषी विष जनित विकार होता है सोसाध्य तथा ऐसेही मनुष्य के जो एक वर्षका व्है जाय सोयाप्य तथा जो क्षीण याने धातु क्षीण औकुपथ्य करने वाला होय उसको असाध्य जानना॥ ३५॥

लूताल०

यस्मा ल्लूनंतृणं प्राप्ता मुनेः प्रस्वेद विंदवः॥
तस्माल्लूताः प्रभाषंते संख्यया ता स्तुषोडश॥३६॥

जिस समयमे वशिष्ट जीकी काम धेनूको राजा विश्वामित्र बला-त्कारसे लैकै चले तव वशिष्ट जीको क्रोधभया उस क्रोधसे जो आया मस्तकमे पसीना सोलून तृण परयाने उस काम धेनूके वास्ते जोघास कटा भया धराथा उसपर गिरा तव जोसोरह बूंदपडेथे उनमे से सोरह प्रकारके लूता नामके जीव उत्पन्न भये उनके स्वरूप सुश्रुतादिक ग्रंथों-मे लिखे हैं तिनमे भी आठ साध्य औ आठ असाध्य हैं॥ ३६॥

तासां सामान्य दंश लक्षणमाह

ताभि र्दष्टे दंशकोथः प्रवृत्तिः क्षत जस्यच॥ ज्व
रो दाहो ऽतिसार श्चगदाः स्यु श्चत्रिदोषजाः॥
पिडिका विविधा कारामंडला निमहांतिच॥३७॥
शोथा महांतो मृदवो रक्त श्यावा श्चलास्तथा॥

सामान्यंसर्वलूताना मेतद्दंशस्य लक्षणं॥३८॥

जिसजगह वैलूता काटती हैं तहां रक्त निकलता रहता है तथा ज्वर दाह अतीसार और भी त्रिदोषज रोग होते हैं अनेक प्रकारकी फुंसिआं बडे बडे मंडला कार चकद्दे॥ ३७॥ वडे बडे सूजे वै कोमल ललामी लिए धूसर रंगके चंचल होते है यह सर्व लूतौंके काटनेका सामान्य लक्षण है॥ ३८॥

अथ दूषी विषलूता दंश लक्षणं

दंशमध्ये तुयत्कृष्णं श्यावं वाजालकावृतं॥ऊर्ध्वा कृतिभृशं पाक क्लेदको थज्वरान्वितं॥ दूषीविषा भिर्लूताभि स्तद्दष्ट मिति निर्दिशेत्॥ ३९॥

जोडंक मे काला धूसर अथवा जालीसे ढका सरीखा ऊंचा अतिशय पकना भिजारहना सफेद पीवका वहना औज्वर करिके युक्त होयसो जानना कि इसको दूषी विष लूतायाने जो लूता बहुत दिनसे पीडाकरै उसने काटाहै॥ ३९॥

असाध्यलूताल॰

शोफा:श्वेता सिता रक्ता पीताच पिडिका ज्वरः॥ प्राणांतिका भि श्वेच्छ्वासो मोहो हिक्का शिरोग्रहः॥४०॥

जिस लूताके काटने से सूजनि होय औउसपर सफेद वागुलावी अथवा पीली फुंसिआंहोयं औज्वर आवै तथा श्वासमोह हुचकी औमाथा जकडिजाय तौ जानना कि यह प्राणनाशक लूताने काटा है॥ ४०॥

अथान्यदसाध्यदूषीविषमाह

सर्पाणामेव विण्मूत्र शवकोथ समुद्भवं ॥
दूषीविषं प्राणहरं संक्षेपा दिति कीर्त्तितम् ॥ ४१ ॥

जो दूषीविष सर्पनके विष्टा मूत्र औसडे मुरदेसें पैदाहोता है सो-प्राण नाशक है ऐसे यह संक्षेपसे वर्णन किया ॥ ४१ ॥

मूषकविषलक्षणं

आदंशा च्छोणितं पांडु मंडला निज्वरो ऽरुचिः ॥
लोमहर्षश्च दाह श्चाप्याखु दूषी विषार्दिते ॥ ४२ ॥

मूसेके विषके लक्षण जैसेकि जिस काटे भये ठेकाने से तुरतही रक्त वहता होय औ पांडुवर्ण मंडल शरीरमे होय ज्वरहोय अरुचि रोमांच औदाहहोय तौ जानना किउसको दूषी विषवाले मूसेने काटा है ॥ ४२ ॥

प्राणहर मूषक विष लक्षणं

मूर्छांग शोथ वैवर्ण्य क्लेदो मंदश्रुति ज्वरः ॥
शिरोगुरुत्वं लालाऽस्तक् छर्दि श्चासाध्य मूषकैः ॥ ४३ ॥

असाध्य मूषकके काटनेसे मूर्च्छा अंगमे मूसेके आकार सूजनि विवर्णता उबकाई कमसुनना ज्वर मस्तकभारी लारका गिरना औरक्त-की उलटी होती है ॥ ४३ ॥

कृकलास दष्टल०

कार्ष्ण्यं श्यावत्व मथवा नाना वर्णत्व मेवच ॥
व्यामोहो वर्चसो भेदो दष्टेस्या त्कृकलासकैः ॥ ४४ ॥

गिर गिटके काटेसे काला अथवा धूसर अथवानानारंगका दंश तथा मोह मलका फूटना ये लक्षणहोते हैं ॥ ४४ ॥

वृश्चिकविषल०

दहत्यग्नि रिवादौतु भिनत्ती वोर्ध्वं माशुवै ॥
वृश्चिकस्य विषं याति पश्चाद्दंशे वतिष्ठति ॥ ४५ ॥

बिच्छूके डंकका प्रथम जैसै अग्नि जलाता है तैसे जलनि पडती है फिरिजैसे छेदता होय तैसे ऊपर को चढता है फिरि पीछेसे जहां डंकमारता है उसी जगह रहि जाता है ॥ ४५ ॥

असाध्यल०

दष्टोऽसाध्यस्तु हृद्घ्राण रसनो पहतो नरः ॥
मांसैः पतद्भि रत्यर्थं वेदनार्त्तो जहात्यसून् ॥ ४६ ॥

जिसके हृदय नाक औजीभमे बीच्छ डंकमारता है औ जिसके मांस अतिशय गिरने लगता है औ पीडा होती है सो मनुष्य मरिजाता है ॥ ४६ ॥

कर्णभ दष्टल०

विसर्पः श्वयथुः शूलं ज्वर श्छर्दि रथा पिवा ॥
लक्षणं कर्णभै र्दष्टेदंशश्चैव विशीर्यते ॥ ४७ ॥

कर्णभ नामका एक कीडा होता है उसके काटने से विसर्प सूजनि शूल ज्वर तथा वांति होती है औ वह डंशका स्थान फटि जाता है ॥ ४७ ॥

उच्चिटिंग विषल०

हृष्टरोमो च्चिटिंगेन स्तब्धलिंगो भृशार्त्तिमान् ॥

दष्टः शीतोदके नैव सिक्ता न्यंगानि मन्यते ॥ ४८ ॥

जिसको उच्चिटिंग काटता है उसके रोमां चहोते है तथा लिग खडा रहता है पीडा जादा औ जैसा ठंढापानी अंग पर छांटता होय तैसा मानता है ॥ ४८ ॥

मंडूक विषल०

एकदंष्ट्रार्दितः शूनः सरुजः पीतकः सतट् ॥
छर्दिर्निद्राच सविषै र्मंडूकैर्दष्ट लक्षणं ॥ ४९ ॥

जिसकौ विष वाला मेडूका काटताहै वह मनुष्य एक दाढके डंशकरिके पीडित सूजनि युक्त पीला औ तृषा वांति तथा निद्रा युक्त होता है ॥ ४९ ॥

सविषमत्स्यदष्टल०

मत्स्यास्तु सविषाः कुर्युर्दाहं शोथं रुजं तथा ॥

विष वाली मछीके काटनेसे दाह सूजनि औ पीडा होती है ॥

सविष जलौका दष्टल०

कंडूं शोथं ज्वरं मूर्छां सविषास्तु जलौकसः ॥ ५० ॥

विष युक्त जौंकके काटनेसे खाज सूजनि ज्वर औ मूर्छा होती है ॥ ५० ॥

गृहगोधाविषल०

विदाहंश्ववथुं तोदं स्वेदंच गृहगोधिका ॥

बाम्हनी के काटनेसे दाह सूजनि छेदने सरीखी पीडा औ पसीना आता है

शतपदी विषल०

दंशे स्वेदं रुजं दाहं कुर्याच्छतपदी विषं ॥ ५१ ॥

कनखजूराके काटनेसे उस जगह पसीना पीडा औ दाह होता है ॥ ५१ ॥

समकदष्टल०

कंडूमान्मसकै रीषच्छोथः स्यान्मंद वेदनः ॥

मच्छरके काटनेसे खाज युक्त किंचित् सूजनि मंद पीडा युक्त होता है ॥

असाध्यल०

असाध्य कीट सदृश मसाध्यं मसकक्षतं ॥ ५२ ॥

जैसे असाध्य कीटके लक्षण कहे उसा सरीखे जोलक्षण होय सो असाध्य जानना यह मच्छर-पहाडी होत है जिसको डांस कहते हैं ॥ ५२ ॥

सविष मक्षिका दष्टल०

सद्यः प्रस्राविणी श्यावा दाह मूर्छा ज्वरान्विता ॥
पिडिका भक्षिका दंशे तासांतु स्थगिका ऽसुहृत् ॥ ५३ ॥

जो सविष मकूखी काटैतौ तुरत ही वहने लगै धूसर वर्ण तथा उस जगह फुंसी होय सो दाह मूर्छा औ ज्वर युक्त होती है तिनमें स्थगिका नाम मकूखी अति दुखदाई होती है ॥ ५३ ॥

अथचतुष्पदऔदोपदौंविषकेलक्षण

चतुष्पाद्भि र्द्विपाद्भिर्वा नखदंत विषंच यत्
सूयते पच्यते वापि स्रवति ज्वरयत्यपि ॥ ५४ ॥

चारि पाय वाले औ दोपायवालों के याने वाघ मनुष्यादि कौं के नख औ दंत का जो विष उसते सूजनि पकना वहना औ ज्वर आता है ॥ ५४ ॥

अथोन्मत्तश्वादिदष्टस्यलक्षण

श्वश्रृगाल तरक्ष्वृक्ष व्याघ्रादीनां यदानिलः॥श्ले ष्मप्रदुष्टो मुष्णाति संज्ञां संज्ञा वहाश्रितः॥ ५५॥ तदा प्रस्नस्त लांगूल हनु स्कंधो ऽनिलालवान्॥ अव्यक्त बधिरोंधश्च सोन्यो न्यमभि धावति॥५६॥ प्रमूढो ऽन्यतम स्तेषां खादन् विपरि धावति॥ ते नोन्मत्ते नदष्टस्य दंष्ट्रिणा सविषेणतु॥ ५७॥ सुप्त ता जायते दंशे कृष्णं चाति स्रवत्य सृक्॥ दिग्ध विद्धस्य लिंगेन प्रायश श्चोपलक्षितः॥ ५८॥ ये न चापि भवेद्दष्ट स्तस्य चेष्टां रुतंनरः॥ बहुशः प्रति कुर्वाणः क्रियाहीनो विनश्यति॥ ५९॥ दंष्ट्रिणा ये नदष्टस्तु तद्रूपं यश्च पश्यति॥ अप्सुवा यदि वा दर्शे रिष्टं तस्य विनिर्दिशेत्॥ ६०॥ त्रस्यत्य कस्मा द्योऽभीक्ष्णं श्रुत्वा दृष्ट्वापिवा जलं॥ जल त्रासंतु विद्यात्तं रिष्टं तस्या पिनिर्दिशेत्॥ ६१॥ अदष्टो वा जलत्रासी नकथंचन सिद्ध्यति॥ प्रसुप्तोऽ थो त्थितो वापि स्वस्थ स्त्रस्तो नसिध्यति॥ ६२॥

अब बौरहे कुत्ता इत्यादिक के विषका लक्षण कहते हैं ॥ कुत्ता सियार जरख ऋच्छ वाघ औ चीता इत्यादि कौं के जब कफ करिके दूषित वायु संज्ञाके वहनी वाली नसोंमे प्रवेश करिके संज्ञाको भ्रष्ट करता है ॥ ५५ ॥ तब उसकी पूंछ नीचेको लटकिजाती है औ ठोढी भी लटकि जाती है एसेही गरदन भीलचिजाती है मुखसे लारबहने लगती है अंधा बहिरा सरीखा परस्पर दौरता है ॥ ५६ ॥ उनमेसे जो कोई भी मस्त होता है तौ दूसरौं को काटता फिरता है॥५७॥उस उन्मत्त सविष जानवरके काटे भये दंशपर शून्यता होती है औ काला रक्त निकलता है उसके लक्षण बहुधा करिके दिग्ध विद्धके समान होते हैं ॥ ५८ ॥ जिस जानवरने काठा होय उसीकी तरह वह मनुष्य बोलता औ चेष्टा करता भया मरता है ॥ ५९ ॥ जिस जानवरने काटा होय उसीका रूपजो जलमे औ दरपनमे देखैतौ मरण चिन्ह जानना ॥६०॥ जो जलके देखिके अथवा सुनिके डरता होय उसको जल त्रास कहते हैं वह असाध्य होता है वह रोग जानवरके काटे विना भी होता है ॥ ६१ ॥ सो परिशिष्ट निदानमे लिखैंगे जो सोता भया अथवा सोईके उठा भया किंवा स्वस्थ बैठा भया जल देखेविना जलकी शंका मानिके डराइ सो असाध्य जानना ॥ ६२ ॥

अथ निर्विष लक्षणं ॥

प्रसन्न दोषं प्रकृति स्थ धातुमन्नाभि कामं सम मूत्र विट्कं॥ प्रसन्न वर्णेंद्रिय चित्त चेष्टं वैद्योऽवं गच्छेद् विषं मनुष्यं॥ ६३॥

इतिरुग्विनिश्चयेविषनिदानं ॥

जिस मनुष्यके वातादिकदोष प्रकृतिके माफिक होय औ धातु सब आप आपके मर्यादा प्रमाण होय अन्नकी इच्छा होय मल मूत्रा दिक प्रमाणसे उतरै चित्तकी वृत्ति औ इंद्रियोंके विषय जिसके प्रसन्न होयं उसको जाननाकि यह निर्विषभया ॥ ६२ ॥ इतिश्रीमत्सुकलसी तारामात्मजपंडितरघुनाथप्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांविष निदानप्रकाशः ॥ ६९ ॥

अथरोगानुक्रमणिका ॥

ज्वरो ऽतिसारो ग्रहणी त्वर्शो जीर्ण विशूचिकाः ॥
अलसश्च विलंबी चक्रिमिरुक् पांडु कामलाः ॥ १ ॥
हलीमकं रक्तपित्तं राजयक्ष्मा प्युरः क्षतं ॥ कासो
हिक्का सहश्वासः स्वरभेद स्त्वरोचकः ॥ २ ॥ छर्दि
स्तृष्णाश्च मूर्छाच रोगाः पानात्यया दयः ॥ दाहो
न्मादा वपस्मारः कथितो ऽथानिलामयः ॥ ३ ॥
वात पित्त मुरुस्तंभ श्चामवातोऽ थशूलरुक् ॥ पंक्ति
जंशूल मानाह उदावर्त्तोऽ थगुल्म रुक् ॥ ४ ॥ हृ
द्रोगोमूत्रकृच्छ्रंच मूत्राघात स्तथाश्मरी ॥ प्रमेहो
मधुमेह श्च पिडिका श्चप्रमेहजाः ॥ ५ ॥ मेद स्तथो
दरं शोथो वृद्धिश्च गल गंडक ॥ गंड माला पची
ग्रंथि रर्बुदं श्लीपदं तथा ॥ ६ ॥ विद्रधि र्व्रण शोथ
श्चद्वौव्रणौ भग्न नाडिके ॥ भगंदरो पदंशौच शूक
दोषस्त्वगामयः ॥ ७ ॥ शीतपित्त मुदर्दश्च कोठश्चै

वाम्लपित्तकं॥ विसर्पश्च सविस्फोटाः सरो मांत्यो मसूरिकाः ॥ ८ ॥ क्षुद्रास्यकर्णनासाक्षि शिरः स्त्री बालक ग्रहः॥ विषश्चे त्ययमुद्देशो रुग्विनिश्चय संग्रहे॥ ९॥

इतिश्रीमन्माध वाचार्यविरचितोरुग्विनिश्चयोऽयंसमाप्तः॥

अथ माधवानुक्त परिशिष्ट निदान संग्रहः तत्र तावज्जल संत्रास रोगमाह ॥

बुद्धिस्थानं यदा श्लेष्मा केवलः प्रतिपद्यते॥ तदा बुद्धौ निरुद्धायां श्लेष्मणाधिष्ठितो नरः॥ १ ॥ जाग्रत्सु सोथ वात्मानं मज्जंत मिव मन्यते॥ सलिलात्रस्यति तदा जलत्रासंतु तंविदुः॥ २ ॥ श्लेष्मघ्नं तत्रकर्त्तव्यं शोधनं शमनादिकं॥ आहारस्य विधानेन याव त्सप्रकृतिंव्रजेत्॥ ३॥

जोनिदान माधवाचार्यने नहीलिखे उनको भी अनेक ग्रंथोंसे लायके लिखते हैं तहा प्रथम जलसंत्रास रोगकानिदान कहते हैं जब कि केवल कफ यह बुद्धिस्थानमे प्रविष्ट व्है जाता है तब कफ करिके ॥ १ ॥ बुद्धिके रुकनेसे वह मनुष्य जागते अथवा सोतेमे भीयह देखता है कि मैं पानीमे बूडताहौं तब पानीसे डरता हैं इसको जलसंत्रास रोग कहते हैं ॥ २ ॥ तहां जो शोधन शमनादिक कफ नाशक होयं वेई उपाय करना औ जब तक वह अपनी प्रकृतिके माफिक नहोय तब तक आहारभी कफनाशक करना ॥ ३ ॥

अथां डङ्कास निदानं शिवसंहितातः ॥

स्वनिदानैःप्रकुपितो वायुर्विगुणतां गतः॥ अंड
कोश वहानाडीः प्राप्योर्ध्वं प्रति कर्षति ॥ ४ ॥ समे
हनौ तदा दृश्यौ भवतो वृषणौ किल॥ अंडह्रास
इतिप्रोक्तो रोगोयं भृशदारुणः॥ ५ ॥

अब शिवसंहितासे अंडक्रासका निदान कहते हैं

आपके कारणों करिके कुपित भया हुआ वायु जब अंडकोशके धारण करने वाली नसोंमे प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ तब ऊर्ध्वगति व्है के लिग सहित अंडको शोंको ऊपरकोखीचिलेता है तबवे आदृश्य व्है जाते हैं उस रोगको अंडक्रास कहते है वह बडा दारुण है ॥ ५ ॥

अथनाभि भ्रंशनिदानं ॥

नाभि स्थाने शिरा ग्रंथि र्यश्च स्फुरति सर्वदा॥ ति
र्यगूर्ध्व मध श्चेत्सविचले द्वायुना यदा॥ ६ ॥ तदा
स्युर्वातजा रोग वांति रूर्ध्वं गते भवेत्॥ अधो गते
त्वतीसारो मंदाग्नित्वं ज्वरस्तथा ॥ ७ ॥ तिर्यग्गते
ऽग्निमांद्यंच वातजा श्चा परे गदाः॥ पिंडिको द्वेष्टनं
चैव भृशं स्या त्कटिवेदना॥ ८ ॥

अब नाभिभंशनिदान कहते हैं

नाभिभंश याने नाभिका टलना ॥ जो नाभिके स्थानमें नसों की गांठि सदा फरकती रहती है सो जब वायु करिके ॥ ६ ॥ ऊंची नीची अथवा तिरछी टरिजाती है तब वातरोग होते हैं तहां ऊर्ध्वको

याने ऊपरको जानेसे वांतिहोती है नीचे कोटरनेसे अतीसार मंदाग्नि औ ज्वर होता है ॥ ७ ॥ तिरछिटरनेसे मंदाग्नि तथा औ रभी वातज रोग औ पिडरिनका ऐंठना तथा कमरमे पीडा होती है ॥ ८ ॥

अथसुश्रुतात् शुक्रदोष निदानं ॥

वात पित्त श्लेष्म शोणित कुणपगंध्यनल्प ग्रंथि पूति पूय क्षीणरेतसः प्रजोत्पादने नसमर्था भवंति ॥ तत्र वातवर्ण वेदनं वातेन पित्तवर्ण वेदनं पित्तेन श्लेष्म वर्णवेदनं श्लेष्मणा शोणित वर्णपित्त वेदनं रक्तेन कुणप गंध्यनल्पंच रक्तेन ग्रंथिभूतं श्लेष्म वाताभ्यां पूयपूति निभं श्लेष्म पित्ताभ्यां क्षीणं शुक्रं प्रागुक्तं पित्तमारुताभ्यां मूत्रपुरीष गंधि सर्व वर्ण वेदनं सन्निपातेनेति तेषु कुणपगंधि ग्रंथि पूति पूय क्षीण रेतसः कृच्छ्रसाध्याः मूत्र पुरीष गंधि रेतसस्त्वसाध्याः साध्य मन्यच्चेति ॥

अबसुश्रुत ग्रंथसे वीर्यदोष का निदान कहते हैं

जैसेकि वात पित्त कफ रक्त कुणप गंधि याने जिसमे मुरदे सरीखी दुर्गंध होय अनल्प याने हद्दसे जादा ग्रंथि पूतियाने दुर्गंध वाला पूययाने पीब सरीखा औ क्षीणवीर्य ये ऐसे पुरुष प्रजा उत्पन्न करनेको समर्थ नहीहोते हैं तहां जो वात दूषित वीर्य है उसमे वात जन्य रंग औ पीडा भी होती हैं पित्त दूषितमे पित्त वर्ण औ पित्त पीडा कफ दूषितमे शुक्ल वर्ण औ कफपीडा रक्त दूषितमे रक्त वर्ण रक्तज पीडा मुरदे सरीखी वास औ बहुत होता है जो ग्रंथि भूत है सो कफ वातज है

दुर्गंधपीब सरीखा यह कफ पित्त दूषित क्षीण यह वात पित्तसे जो मूत्र मलकी गंध युक्त है सो सन्निपात दूषित है तिनमे कुणप गंधि ग्रंथि पूति जो दुर्गंध युक्त तथा पीबसरीखा औ क्षीण येकष्ट साध्य मूत्र मल दुर्गंध वीर्य वाला असाध्य औ बाकी के साध्य जानना ॥

आर्त्तवदोष निदानं ॥

आर्त्तव मपि त्रिभिर्दोषैः शोणित चतुर्थैः पृथग्द्वंद्वैः समस्तैश्चो पसृष्ट मबीजं भवति तदपि दोष वर्ण वेदना दिभिर्विज्ञेयं॥तेषु कुणप ग्रंथि पूति पूयक्षीण मूत्र पुरीष प्रकाश मसाध्यं साध्य मन्य द्भवति॥

आर्त्तव याने मासिक स्त्री धर्मका रक्त सोभी तीनौ दोष औ रक्त करिके न्यारे न्यारे दो दो औ सबकरिके दूषित होता है उसमेभी वीर्यकी तरह दोष वर्ण वेदना जानना वह प्रजा जनन योग नही होता है तिनमे कुणप ग्रंथी पूति पूय क्षीण औ मल मूत्र गंधि युक्त असाध्य इनकेसे वाय साध्य जानना ॥

अथनपुंसकानाह ॥

आसे क्य श्च सुगंधीच कुंभीक श्चेर्ष्यकस्तथा॥
अमीस शुक्रा बोद्धव्या अशुक्रः षंढ संज्ञकः॥ १॥

अबनपुंसककहते हैं ॥

वै नपुंसक पांच प्रकारके हैंयेकि आसेक्य १ सुगंधी २ कुंभीक ३ ईर्ष्यक ४ ये चारो वीर्य सहित होते है औ षंढ५यह निर्वीर्य होता है ॥ १ ॥

अथै तेषां लक्षणानि तत्रआसेक्यल•

पित्रोस्तु स्वल्पवीर्य त्वादासेक्यः पुरुषो भवेत्॥

सशुक्रं प्रास्य लभते ध्वजो न्नति मसंशयं ॥ २ ॥

अबउनपांचौंकेलक्षणकहते हैं

तहां आसेक्यके लक्षण जैसेकि माता पिताके अति अल्प रज वीर्यके सबब से आसेक्य पुरुष होता है सो शुक्रके पीनेसे लिंगकी चैतन्यताको प्राप्त होता है आप मुखमे दूसरेसे मैथुन करायके उसके वीर्यको जब आप पीजाता है तब उसका लिंग चैतन्य होता है इसका दूसरानाव मुखयोनिभी है ॥ २ ॥

सोगंधिकल०

यः पूतियो नौ जायेत सहि सौगंधिकोमतः ॥

सयोनि सेफ सोगंध माघ्राय लभते बलं ॥ ३ ॥

जो पुरुष दुर्गंध युक्त योनिमे पैदा होता है सो सौगंधिक नामका नपुंसक है वह जब योनि औ लिंगकी वास सूंघता है तब मैथुन शक्तिको प्राप्त होता है इसका दूसरानाम नासायोनिभी है ॥ ३ ॥

कुंभीकल०

स्वेगुदेऽब्रह्म चर्याद्यः स्त्रीषु पुंवत्प्रवर्त्तते ॥

सकुंभीक इति ज्ञेयो गुदयोनि श्चस स्मृतः ॥ ४ ॥

जो पुरुष आपके गुदामे दूसरेसे मैथुन करायके स्त्रीके समागममे पुरुष की तरह मैथुन करता है सो कुंभीककहाता है इसका दूसरानाम गुदयोनि भी है ॥ ४ ॥

ईर्ष्यकल०

दृष्ट्वा व्यवाय मन्येषां व्यवा येयः प्रवर्त्तते ॥

ईर्ष्यकः सहि विज्ञोयो दृष्टियोनि श्चसः स्मृतः ॥ ५ ॥

जो दूसरेको मैथून करते देखिके आपमैथुन करनेको समर्थ होता है सोईर्ष्य. कनामका नपुंसक है इसको दृष्टियोनिभी कहते हैं ॥ ५ ॥

षंढलक्षणं ॥

यो भार्यायामृतौ मोहा दंगनेव प्रवर्त्तते ॥
तत्र स्त्रीचेष्टिता कारो जायते षंढ संज्ञकः ॥ ६ ॥

जो पुरुष मोहसे याने अविचारसे स्त्रीके ऋतुसमयमे स्त्रीकी तरह प्रवर्त्त होता है याने आपनी चे औ स्त्रीकोऊपर वैढारिके मैथुन करता है उस समयमे जो गर्भ रहता है सो षंढ कहाता उसका आकार स्त्री सरीखा होता है याने पुरुषके चिन्ह जो दाढी मुछउन करिके रहित होता है औ चेष्टाभी स्त्रीसरीखी करता है याने चटक मटक स्त्रीसरीखी औ गुद मैथुनभी करवाता है अर्थात् दूस रेसे आपके गुदामे मैथुन कराता है वह वीर्य रहित होता है ॥ ६ ॥

षंढास्त्रील•

ऋतौ पुरुषवच्चैवं प्रवर्त्तेतां गनायदि ॥
तत्र कन्या यदिभवे त्साभवेन्नरचेष्टिता ॥ ७ ॥

जो ऋतुकाल समयमे स्त्री पुरूष सरीखा आचरण करै याने पुरूष को नीचे सोवायके आप ऊपरसे मैथुन करै तौ जो कदाचित् उस वख-तमे गर्भरहिके कन्या होय तौ वह पुरुष सरीखी सब चेष्टा करै याने बोल चालभी पुरुष प्रमाण औ दूसरी स्त्रीको भी सोवायके आप उसकी योनिसे योनि घसै ॥ ७ ॥

एवंजन्मतोनपुंसकानुक्त्वादोषमानसानाह ॥

क्लीबः स्यात्सुरताशक्त स्तद्भावः क्लैब्य मुच्यते ॥ तच्च सप्तविधं प्रोक्तंनिदानं तस्य कथ्यते ॥ ८ ॥ तत्रमान

समाहृ तैस्तै र्भावैः हृद्यैश्च रिरंसो र्मनसिक्षते ॥
ध्वजःपतत्यतो नृणां क्लैब्यं समुप जायते ॥ द्वेष्य स्त्री
संप्रसंगा च्चक्लैब्यं तन्मानसं स्मृतं ॥ ९ ॥

ऐसे जो जन्मके नपुंसक उनको कहिके अब जो वातादि दोषौंसे औ मनकी पीडासे होतें हैं उनको कहते हैं ॥ जो पुरुष मैथुन करनेमें अशक्त होता है उसको क्लीब कहते हैं उसक्ली बपनेको क्लैब्य कहते हैं ॥ वह क्लैब्य सात प्रकारका है उनके निदान कहता हौं ॥ ८ ॥ जो हृदयको प्रिय नही ऐसे भाव योन भयशोक क्रोध इत्यादिक तिनकरिके स्त्रीसे रमण करनेकी है इच्छा जिसके ऐसे मनुष्यके मनकी पीडाहोनेसे याने मनके विगडनेसें लिंग शिथिल व्है जाता है तथा जिस स्त्रीसें प्रीति नहोय औ उससे वैरहोय ऐ सीस्त्री संगरमण करनेसें क्लैब्य याने मैथुन की अशक्तता व्है जाती है इसको मानस क्लीबत्व जानना ॥ ९ ॥

दोषजमाह ॥

कटुकाम्लोष्ण लवणै रतिमात्रो पसेवितैः ॥
पित्ताच्छुक्र क्षयो दृष्टः क्लैब्यं तस्मा त्प्रजायते ॥ १० ॥

कड्ये खट्टे गरम औ नमकी ऐसे पदार्थौंके अतिखानेसे पित्त बढता है उसपित्तके बढनेसे वीर्यका क्षय होता है उस पित्तसे क्लीबता होती है ॥ १० ॥

अति व्यवाय शीलोयो नच वाजिक्रियारतः ॥
ध्वजभंग मवाप्नोति सशुक्र क्षय हेतुकं ॥ ११ ॥

जो पुरुष अतिमैथुन करता है औ वाजीकर औषधौंका सेवन नही करता है सो वीर्यकी क्षीणतासे नपुंक होता हैं ॥ ११ ॥

महतामेढ्ररोगेण चतुर्थी क्लीबता भवेत्॥ १२॥

जो बडाभारी गरमी वगैर कोई सा भी रोग लिंगमे होयतौ उसते भी क्लीबता होती है यह पंचमी ॥ १२ ॥

बलिनः क्षुब्ध मनसो निरोधा द्ब्रह्मचर्यतः ॥

षष्ठं क्लैब्यं स्मृतंतत्तु शुक्रस्तंभ निमित्तकं॥ १३॥

जो पुरुष बलवान है औ उसके मनमे मैथुन इच्छासे मनचंचल भया औ उसने मैथुननकियातौ उसको वीर्य निरोध निमित्तसे नपुंसकताहोती है यह छठी ॥ १३ ॥

जन्म प्रभृति यत्क्लैब्यं सहजं तद्धिसप्तमं॥

तद्भेदाः पूर्वमेवोक्ता आसेक्याद्यान पुंसकाः॥ १४॥

जो जन्महीसे नपुंसक है सो सहज कहाता है यह सातवां इसके भेद आसेक्य आदिक प्रथमही कहि आये हैं ॥ १४ ॥

अथस्नायुकनिदानं ॥

शाखासु कुपितादोषाः शोथंकृत्वा विसर्पवत् ॥

भिनत्ति तत्क्षते तत्र सोष्मा मंसं विशोष्यच॥ १५॥

कुर्यात्तंतु निभं जीवं वृत्तं सितद्युतिंबहिः ॥ शनैः शनैः क्षताद्याति छेदात्कोप मुपैतिच॥ १६॥ तत्पा ता च्छोपशांतिः स्या त्पुनः स्थानां तरेभवेत्॥सस्ना युक इति ख्यातः क्रियोक्तातु विसर्पवत्॥ १७॥ बाह्वोर्यदिप्रमादेन जंघयो स्त्रुट्यते क्वचित्॥ संकोचं खंजताचैव छिन्नोतंतुः करोत्यसौ॥ १८॥ वाते

नश्यावरूक्षः सरुगथ दहना न्नील पीतः सदाहोयः श्वेतः श्लेष्मणास्या पृथुगरिमयुतो दोष युग्माद्वि लिंगः॥रक्ता च्चारक्तकांतिः समधिक दहनः सर्वजः सर्वलिंगो रोगोऽ सावष्ट धेत्थं मुनिभि रभिहितः स्नायुकस्तंतु कीटः॥ १९॥

इतिपरिशिष्टनिदानंसमाप्तंसमाप्तोयंग्रंथः॥

स्नायुक याने नहारू कानिदान शाखा याने हाथपाय इत्यादिकौंमे कुपितभये हुऐवातादिकदोष वै बाहेर विसर्पकी तरह सूजन को उत्पन्न करते हैं याने कफोला करते हैं फिरि उसको फोरिक उसकी गरमी सहित उहांके मांसको सुखायके॥ १५॥ उसमे गोल सफेद डोरासरीखा जीव उत्पन्न करते हैं सोवह धीरे उस क्षतसे बाहेरको निकलता है जो टूटिगयातौ बहुत दुख देता है॥ १६॥ उसके पडिजानेसे सूजनिकी शांति होती है औ फिरिभी दूसरे स्थानमे होता है उसको स्नायुक कहते हैं उसमे औषधक्रिया विसर्प प्रमाणकरना॥ १७॥ जो कदापि बांह औ जांघमे पीडाकारक होय औटूटिजाय तौ बांहको सिकोदिना है आजांघमे भया हुआ खंजताको पैदा करै॥ १८॥ जो यह वात जहोयतौ श्याम वर्णरूखा औ पीडा युक्त होता है॥ पित्तसे नीला पीला औ दाह युक्त॥ कफसे सफेद मोटा औ भारी होता है॥ दो दोषयुक्त दो दोषचिन्ह युक्त॥रक्तसे गुलावी रंगका औ जलनि जादा कमी होय है त्रिदोषसे सर्व चिन्हयुक्त होता है ऐसे यह स्नायुकरोग आठ प्रकारका होता है॥१९॥ इतिश्रीमत्सुकलसीतारामात्मजपंडितरघुनाथ प्रसादविरचितायांरुग्विनिश्चयदीपिकायांपरिशिष्टनिदानप्रकाशः